Saurashtra University
Re – Accredited Grade 'B' by NAAC
(CGPA 2.93)

Dave, Meera G., 2009, *भीष्म साहनी के कथा - साहित्य में युग-बोध*, thesis PhD, Saurashtra University

http://etheses.saurashtrauniversity.edu/id/eprint/161

Copyright and moral rights for this thesis are retained by the author

A copy can be downloaded for personal non-commercial research or study, without prior permission or charge.

This thesis cannot be reproduced or quoted extensively from without first obtaining permission in writing from the Author.

The content must not be changed in any way or sold commercially in any format or medium without the formal permission of the Author

When referring to this work, full bibliographic details including the author, title, awarding institution and date of the thesis must be given.

Saurashtra University Theses Service
http://etheses.saurashtrauniversity.edu
repository@sauuni.ernet.in

© The Author

भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में युग–बोध

सौराष्ट्र विश्वविद्यालय की पीएच.डी. (हिन्दी) की
उपाधि के लिए प्रस्तुत

शोध–प्रबंध

✰✰✰

✰ *अनुसंधित्सु* ✰

मीरा जी. दवे

व्याख्याता,
हिन्दी विभाग,
गुरुकुल महिला कॉलेज,
पोरबंदर

✰✰✰

✰ *निर्देशिका* ✰

डॉ. तारा पटेल

अध्यक्षा – हिन्दी विभाग,
आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज
जाम–जोधपुर

फरवरी – २००६

प्रमाणपत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **मीरा जी. दवे** द्वारा सौराष्ट्र विश्वविद्यालय – राजकोट में पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि हेतु – **''भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में युग–बोध''** विषय पर प्रस्तुत शोध–प्रबंध मेरे निर्देशन में तैयार किया है ।

साथ ही, यह शोध–प्रबंध अथवा इसका कोई अंश न तो प्रकाशित हुआ है और न ही इसका कोई अन्य उपयोग हुआ है ।

केशोद
दिनांक :

निर्देशिका

डॉ. तारा पटेल
अध्यक्षा – हिन्दी विभाग,
आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज
जाम–जोधपुर

प्राक्कथन

✰ पूर्वसूत्र :

मानव ने जब से वाणी का वरदान पाया होगा तभी से कुछ कहने–सुनने की प्रवृत्ति का जन्म हुआ होगा । मानव की यह प्रवृत्ति विकसित होती गई होगी और कथा, किस्सागोई आदि की प्रथा, प्रचलित हुई होगी । वही प्रथा निरंतर विकसित होती हुई साहित्य का रूप धारण करती गई और आज कथा–साहित्य मानवजीवन के यथार्थ चित्रण का एक संबल, समर्थ माध्यम बना हुआ है ।

जब हम साहित्य के संदर्भ में अवलोकन करते हैं तो ज्ञात होता है कि साहित्य मूलतः काव्य में ही लिखा जाता रहा था, परंतु समय परिवर्तनशील है, और उस परिवर्तनशील, कालचक्र का प्रभाव सदा मानवजीवन पर पड़ता रहा है । जो संवेदनशील सर्जक रहे हैं, वे मानव की संवेदना से संवेदित होकर साहित्य–सर्जन करते रहे हैं । इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल के मध्य तक मूलतः साहित्य–सर्जना कविता में ही होती रही है । साहित्य–सर्जन के मूल में सदा मानव–कल्याण की भावना रही है । इसीलिए संस्कृत में इसका उल्लेख मिलता है – ‘‘हितेन सह साहित्यम्’’ तथा ‘‘सहितस्य भावः साहित्यम्’’ । अर्थात् जिसमें मानव की सर्वमंगल कामना निहित हो वही साहित्य है । इस प्रकार साहित्य और मानव का सदा अटूट संबंध रहा है । मानव या समाज–विहीन साहित्य की परिकल्पना संभव नहीं हो सकती । अर्थात् साहित्य में किसी न किसी रूप में मानव–जीवन संन्निहित है ।

जब हम आधुनिक साहित्य पर अवलोकन करते हैं तो ज्ञात होता है कि भारेन्दु जी ने हिन्दी गद्य साहित्य को जन्म देने का अपूर्व साहस किया । इसीलिए उन्हें हिन्दी गद्य–साहित्य का जनक कहा जाता है । हिन्दी गद्य के

प्रारंभिक काल में मूलतः कहानियाँ और उपन्यास लिखे जाते रहे । परंतु उनका रूप साहित्यिक, समुचित रूप में प्रस्थापित नहीं हो पाया था । क्रमशः विकास होता गया, कल, कारखानों, मशीनों का प्रचार–प्रसार बढ़ता गया और गद्य–लेखन की परंपरा को बल मिलता गया । इसप्रकार कहानी और उपन्यास के साथ निबंध, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, यात्रा–विवरण इत्यादि विविध प्रकार के गद्य–लेखन की परंपरा का आविर्भाव होता गया ।

कथा–साहित्य के अंतर्गत या गद्य–साहित्य के अंतर्गत कहानी और उपन्यास की ही प्रधानता रही है । सर्वप्रथम कहानी का ही जन्म हुआ होगा । जैसा कि राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है –

“माँ कह एक कहानी
बेटा समझ लिया क्या तूने
मुझको अपनी नानी”

अर्थात् कहानी का जन्म बूढ़ी माँ की गोद में हुआ होगा और बाद में उपन्यास ने जन्म लिया होगा । डॉ. गुलाबराय ने इस तथ्य को उजागर करते हुए लिखा है – “कहानी अपने पुराने रूप में उपन्यास की अग्रजा है और नये रूप में उसकी अनुजा है ।” इसका तात्पर्य यह है कि विकासक्रम की दृष्टि से आज उपन्यास साहित्य कहानी की अपेक्षा बहुत आगे निकल चुका है ।

जब हम हिन्दी कथा–साहित्य पर अवलोकन करते हैं, तो मूलतः कहानी और उपन्यास की ही चर्चा अपेक्षित होती है । कहानी और उपन्यास के उद्भव–विकास की गति को जानने के लिए हिन्दी के विद्वानों ने मुंशी प्रेमचंद को ही आधार स्तंभ बनाया है । इस प्रकार पूर्व प्रेमचंद युग, प्रेमचंद युग, प्रेमचंदोत्तर युग । इस प्रकार कहानी और उपन्यास का विभाजन करके हम इन दोनों विधाओं का अध्ययन करते हैं । प्रारंभिक अवस्था में कथा–साहित्य जहाँ राजा–रानी, सेठ–सठानी तक सीमित था, या कल्पना–लोक तक ही सीमित था, उसे सर्व प्रथम यथार्थ मानव–जीवन से जोड़ने का कार्य उपन्यास सम्राट मुंशी

प्रेमचंद ने किया । उन्होंने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से समाज की सारी विसंगतियों को प्रस्तुत किया । अन्याय, अनीति, शोषण, दुराचार, नारी–शिक्षा, विधवा–विवाह जैसे अनंत प्रश्नों और समस्याओं को उन्होंने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया । उन्होंने केवल समस्याओं को उठाया ही नहीं है, बल्कि अपने आदर्शवादी मूल्यों के आधार पर उसका सुखद समाधान प्रस्तुत किया । प्रेमचंद के पश्चात् यथार्थवाद की वह साहित्यिक परंपरा क्रमशः विलुप्त होती गई और मनुष्य के अंतरमन को साहित्य के माध्यम से खोजने का प्रयत्न किया जाने लगा । अर्थात् मनोवैज्ञानिक या मनोविश्लेषणात्मक कहानियाँ और उपन्यास लिखे जाने लगे ।

वैसे देखा जाय तो स्वतंत्रता के बाद कथा–साहित्य का प्रभूत मात्रा में विकास हुआ है । पर इसके साथ नवक्रांति और नवोत्थान का जो स्वप्न जुड़ा हुआ था, वह चूरचूर हो गया । सामान्य जनता ने आज़ादी के साथ खुशहाल जीवन की जो परिकल्पना की थी, वह स्वप्न बनकर रह गई । बेकारी, भूखमरा, मूल्य–विघटन आदि समस्याएँ जहरीले नाग के समान फन फैलाकर सामने आईं । समय–परिवर्तन के साथ साहित्य–जगत में पुनः एक परिवर्तन आया । और प्रेमचंद की जो यथार्थवादी परंपरा टूट चुकी थी, वह सन् १९६० के आसपास नई पीढ़ी के कथाकारों द्वारा पुनर्जीवित हुई । इन कथाकारों में कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी, शिवकांतसिंह, उमाकान्त, उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । देश–विभाजन के पश्चात् जो अराजकता चारों तरफ परिव्याप्त थी उसका बड़ा ही हृदय–द्रावक चित्र इन कथाकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है ।

साहनी जी अखंड भारत के प्रख्यात शहर रावलपिंडी में जन्मे थे । उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त की थी, परंतु घर के वातावरण ने उन्हें हिन्दी–लेखन की ओर आकृष्ठ किया और वे जीवन भर हिन्दी साहित्य की सेवा करते रहे ।

सर्जक भी तो एक सामाजिक प्राणी है । जिसका समाज की सम–विषम परिस्थितियों से प्रभावित होना स्वाभाविक है । उसका उर्वर मस्तिष्क उन सारे अनुभवों को आत्मसात् करके इतने कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है कि वह साहित्य समाज का दर्पण बन जाता है । साहनी जी ने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से अपने युग–जीवन की विषमताओं को बड़े यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है । वे एक संवेदनशील सर्जक थे । उनकी समूची संवेदना उनके कथा–साहित्य में प्रतिबिंबित है । उन्होंने अपने कथा–साहित्य में अपनी युगीन समस्याओं को इस रूप में प्रस्तुत किया है जो मानव मूल्य के प्रति एक प्रश्न चिह्न बन जाता है । शिक्षा–जगत के भ्रष्टाचार, अनमेल–विवाह की समस्याएँ, भ्रष्ट राजनीति की समस्या, सांप्रदायिक संघर्ष, वेश्या–समस्या, अनैतिकता, धार्मिक आडंबर, मानव के क्षीण होते हुए मूल्यों की समस्या एवं टूटते हुए बनावटी, पारिवारिक, सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं को उन्होंने बखूबी चित्रित किया है । उनके उपन्यासों या कहानियों को पढ़ते समय युगीन जीवन तादृश्य मूर्तिमंत हो उठता है । अर्थात् साहनी जी एक ऐसे ही संवेदनशील सर्जक थे । जिनके साहित्य में उनका युग बोलता हुआ दिखाई देता है । अर्थात् युग–बोध से पूर्णतः संवेदित साहित्यकार साहनी जी के साहित्य का मैंने एक अल्पज्ञ छात्रा के रूप में अध्ययन किया है । एक सहृदयशील, संवेदनशील, यथार्थवादी, मानवीय मूल्यों में विश्वास रखनेवाले, साहित्यकार भीष्म साहनी के कथा–साहित्य का अध्ययन–विश्लेषण करना एक गुरुतर कार्य है । फिर भी मैं गृहस्थ धर्म का परिपालन करती हुई, इस महान साहित्यकार के साहित्य का परिशीलन करने में कटिबद्ध रही हूँ । कितनी सफल हूँ – असफल हूँ यह विद्वत् मनीषियों को समर्पित करती हूँ ।

✰ प्रेरणा एवं विषय–चयन :

मैं एक ऐसी महिला हूँ जिसे घर–गृहस्थी के साथ–साथ अध्यापन कार्य का भी एक सुयोग प्राप्त हुआ है । बचपन से ही कथा–कहानियाँ तो सुनते रहे

हैं, परंतु उन कथा–कहानियों के प्रति बहुत आत्मीयता या लगाव इसलिए नहीं बन पाता है कि उनका उद्‌देश्य मूलतः मनोरंजन या कोई परीक्षा उत्तीर्ण करनी होती है । अनुस्नातक कक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् मेरे मन में शोध कार्य की एक सहज उत्कंठा उत्पन्न हुई, पंरतु उसे मैं वर्षो तक मूर्त रूप प्रदान नहीं कर सकी । यह सौभाग्य ही है कि मुझे अचानक कॉलेज में अध्यापन कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ । बचपन से ही सत् साहित्य वांचन की प्रवृति बनी हुई थी क्योंकि यह संस्कार तो मुझे माता–पिता से ही प्राप्त हुआ था । अध्यापन कार्य करते हुए मुझे भीष्म साहनी जी की कहानी ‘चीफ की दावत’ पढ़ाने का सुअवसर प्राप्त हुआ । वैसे तो इस कहानी को मैं कई बार पढ़ चुकी थी, परंतु उस कहानी के प्रति मैं न सजाग थी और न समझने के लिए प्रयत्नशील रही । अध्यापन कार्य करते हुए मुझे बार–बार वह कहानी पढ़ानी पड़ी तब मैं बहुत अधिक प्रभावित हुई । आज का पढ़ा–लिखा समाज अपने अनपढ़ माँ–बाप के संबंध में क्या विचार करते हैं, क्या सोचते हैं और किस प्रकार का व्यवहार करते हैं, यह एक विचारणीय प्रश्न है । इस प्रकार यह कहानी मुझे बहुत गहरे तक छू गई ।

यह संयोग की ही बात है कि मुझे कॉलेज के पुस्तकालय में अचानक साहनी जी का उपन्यास ‘तमस’ मेरे हाथ लग गया । उसे पढ़कर मैं इतनी अभिभूत हुई कि मानवीय संवेदना और जाति–पाँति की भावना के आधार पर देश के विभाजन को मानवता के लिए कलंक समझने लगी, और तब साहनी जी के समग्र साहित्य को पढ़ने की एक ललक उत्पन्न हुई । धीरे–धीरे यह ललक शोध–कार्य करने की प्रबल इच्छा के रूप में आकार लेने लगी । चिंतन–मनन का संस्कार तो बचपन से ही माता–पिता के द्वारा प्राप्त हुआ था, परंतु उसे प्रस्तुत करने का यह एक सुयोग प्राप्त हुआ । मुझे कविवर शिवमंगलसिंह ‘सुमन’ की यह पंक्ति स्मरण हो आती है –

“मैं न आया तेरे द्वार, पथ ही मुड़ गया था ।”

यह युक्ति मेरे जीवन में भी चरितार्थ होती है । पोरबंदर के गुरुकुल महिला कॉलेज में अध्यापन करते हुए मुझे शोधकार्य करने की इच्छा आकार लेने लगी, परंतु मार्गदर्शक का प्रश्न था । मेरा, स्नातक और अनुस्नातक – कक्षाओं में अध्यापक रहे भवन्स श्री ए. के. दोशी महिला कॉलेज – जामनगर के विभागाध्यक्ष डॉ. जी. आई सिंह का स्मरण हो आया । वे मेरे शिक्षा–गुरु रह चुके थे । परंतु संपर्क स्थापित करने पर ज्ञात हुआ कि वे निवृत्त हो चुके हैं और वे नियमानुसार मार्गदर्शक नहीं बन सकते । फिर भी मैंने एक छात्रा के रूप में मार्ग बताने का बार–बार आग्रह किया । अंत में उन्होंने डॉ. ताराबहन पटेल – अध्यक्षा ऑर्टस एण्ड कॉमर्स कॉलेज का परिचय करवाया । मैं उनकी ॠणि हूँ कि उन्होंने बड़ी सहृदयता से मुझे एक शिष्या के रूप में स्वीकार कर लिया । तब विषय–चयन का प्रश्न उत्पन्न हुआ । मैंने उनसे बड़ी विनम्रता के साथ निवेदन किया की मुझे भीष्म साहनी जी के कथा–साहित्य पर अध्ययन करना है । अंत में यह विषय "भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में युग–बोध" निश्चित् हुआ । यहीं से मेरा अवरुद्ध मार्ग प्रशस्त होता हुआ दिखाई देने लगा । सौराष्ट्र युनिवर्सिटी ने मुझे शोधकार्य करने हेतु स्वीकृति प्रदान कर, मुझे कृतार्थ किया है ।

यद्यपि शोधकार्य हेतु विषय का चयन करना और इस कार्य के लिए कटिबद्ध होना बड़ा कठिन कार्य है । फिर भी मुझे अपने मनोनुकूल विषय प्राप्त होने का आत्मीय सुख है, और डॉ. ताराबहन पटेल जैसे सहृदय चिंतनशील मार्गदर्शक पानेका परितोष है । मैं अपने शोधकार्य की परिपूर्णता की स्थिति में पहुँचने का हार्दिक सुख मान रही हूँ और विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत कर रही हूँ ।

✰ सामग्री संकलन :

वैसे तो शोधकार्य सुनने में जितना सुखद लगता है, करने में वह उतना ही कष्टप्रद है । अर्थात् शोधकार्य एवं सामग्री–संकलन की प्रक्रिया अपने आप में एक अति दुष्कर कार्य है । आज चारों तरफ वैज्ञानिक संसाधनो का विकास होता जा रहा है । फिर भी अहिन्दी प्रदेशों के कुछ अंचल तो ऐसे हैं, जहाँ विज्ञान की वह प्रगति बहुत कम पहुँच पाई है । गुजरात एक ऐसा प्रदेश है जहाँ हिन्दी का प्रचार–प्रसार तो बहुत लंबे अरसे से ही हो चुका है । फिर भी गुजरात के पोरबंदर जैसे अँचलों में हिन्दी भाषा का इस प्रकार प्रचार–प्रसार नहीं हो पाया है, कि शोध कार्य हेतु सामग्री बड़ी सहजता तथा सरलता से प्राप्त की जा सके या उपलब्ध हो सके । यह अपने आप में टेढ़ी खीर है । आज भी ऐसे क्षेत्रों को दिल्ली जैसे महानगरों के प्रकाशकों पर आधारित रहना पड़ता है । मुझे भी भीष्म साहनी जी की रचनाओं को प्राप्त करने के लिए दिल्ली के बहुत से प्रकाशकों से पत्राचार करना पड़ा है । जिनमें से मैं राजकमल प्रकाशन के प्रति अधिक कृतज्ञ हूँ । जिसने साहनी जी की लगभग सभी रचनायें उपलब्ध कराकर, मेरे इस भगीरथ कार्य को प्रशस्थ किया है ।

महात्मा गांधी ने अहमदाबाद में हिन्दी के प्रचार–प्रसार हेतु जिस गुजरात विद्यापीठ की रचना की वह आज एक विशाल वटवृक्ष बन पाया है । उसका पुस्तकालय एक अति समृद्ध पुस्तकालय है । जहाँ से मुझे आलोचनात्मक पुस्तकें सुलभ हो पाईं । इसके अतिरिक्त सौराष्ट्र विश्वविद्यालय – राजकोट के पुस्तकालय से भी मैं कुछ पुस्तकें प्राप्त कर सकी ।

डॉ. वी. आर. गोढणीया महिला कॉलेज तथा गुरुकुल महिला कॉलेज – पोरबंदर के पुस्तकालयों से भी मैंने कुछ पुस्तकें प्राप्त की । कुछ पुस्तकें भवन्स ए. के. दोशी महिला कॉलेज – जामनगर के पुस्तकालय से भी प्राप्त की । इसके अतिरिक्त मैंने डॉ. कान्तिभाई चोटलिया, अध्यापक जुनागढ से भी संपर्क

स्थापित किया, और उन्होंने बड़ी सहृदयता के साथ मुझे पुस्तकीय सहायता प्रदान की है ।

मुझे इस बात का बड़ा संतोष है कि मुझे दो बार गुजरात विद्यापीठ के पुस्तकालय – अहमदाबाद जाना पड़ा । मैंने दोनों बार हिन्दी के भीष्म पितामह समा परम् श्रद्धेय डॉ. अंबाशंकर नागर जी का साक्षात्कार किया । उनका स्नेह और आशीर्वाद मेरे इस कठिन यात्रा के लिए पाथेय बना रहा । वहाँ पर गुजरात विद्यापीठ के स्नातकोत्तर हिन्दी विभागाध्यक्षा परम् आदरणीया डॉ. मालतीबहन दुबे का भी शोध संबंधी आशीर्वाद प्राप्त होता रहा ।

इस प्रकार यह शोध सामग्री संकलन की कष्टपद यात्रा अंततोगत्वा एक सुखद अनुभूति बन गई । जिसके फलस्वरूप मैं अपना कार्य विद्वान–मनीषियों के समक्ष उपस्थित करने में सफल हो पाई हूँ ।

✪ पूर्ववर्ती शोधकार्य :

शोध सामग्री संकलन हेतु मैं जितनी गहरी उतरती गई उतना ही मुझे साहनी जी के साहित्य से संबंधित आलोचनात्मक एवं उपाधिहेतु लिखे गये शोध–प्रबंध तथा लघुशोध–प्रबंध मुझे प्राप्त होते गये । अभी तक साहनी जी के कथा–साहित्य से संबंधित जो पुस्तकें मुझे प्राप्त हो पाई हैं वे निम्न रूप में हैं –

(१) भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना – डॉ. राजेश्वर सक्सेना
(२) भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य – डॉ. रमाशंकर द्विवेदी 'विवेक'
(३) कहानीकार भीष्म भीष्म : डॉ. रीना पटेल
(४) भीष्म साहनी की कहानियों में यथार्थबोध : के. एस. चोटलिया
(५) 'तमस' एक अध्ययन : कु. अर्चना बी. जैन
(६) भीष्म साहनी कृत 'तमस' में युग–बोध : हेमंत जे. ओझा

(७) 'कथाकार' भीष्म साहनी संवेदना और शिल्प : डॉ. के. एस. चोटलिया (अप्रकाशित)

(८) हिन्दी कहानी में 'युग–बोध' : डॉ. मंजुलतासिंह

इनमें से प्रथम दो पुस्तकें वाणी प्रकाशन नई दिल्ली से प्रकाशित है । पहली पुस्तक एक आलोचनात्मक रचना है जिसमें मुख्य रूप से साहनी जी के व्यक्तित्व पर प्रबाध डालते हुए उनकी मुख्य कहानियों को ही आधार बनाया गया है । दूसरी पुस्तक एक शोध–ग्रंथ है, जिसमें साहनी जी के कुछ उपन्यासों पर प्रकाश डाला गया है । सभी उपन्यासों का सर्वांगी अध्ययन नहीं है । 'कहानीकार भीष्म साहनी' डॉ. रीना पटेल का पार्श्वनाथ पब्लिकेशन से प्रकाशित शोध–प्रबंध है । जिसमें साहनी जी के कुछ चंद कहानियों को आधार बनाकर, कहानीकार साहनी का विश्लेषण किया गया है ।

क्रम नंबर चार–पाँच–छः की रचनायें अप्रकाशित लघु शोध–प्रबंध हैं जो एम.फिल. के छात्रों द्वारा लिखे गये हैं । ये पुस्तकें मुझे गुजरात विद्यापीठ के ग्रंथालय में देखने को मिली । इनमें गहरी शोध–दृष्टि नहीं है । सातवें क्रम की पुस्तक एक शोध–प्रबंध हैं जो अप्रकाशित है । इसमें साहनी जी की संवेदना और शिल्प को महत्त्व दिया गया है । यह मुझे बहुत उपयोगी रही ।

आठवें क्रम की पुस्तक भीष्म साहनी से संबंधित तो नहीं है पर 'युग–बोध' से संबंधित है, जो मुझे उपयोगी बनी रही ।

इस प्रकार अभी तक मुझे एक भी ऐसा शोधप्रबंध प्रकाशित नहीं प्राप्त हो पाया है । जिसमें साहनी जी के पूर्ण कथा–साहित्य को एक साथ उसकी समग्रता में विवेचित करने का प्रयास किया गया हों । इस प्रकार मेरा विषय "भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में युग–बोध" अपने आप में एक नया मौलिक विषय है ।

✩ प्रस्तुत शोध–प्रबंध की विशेषताएँ :

(१) आलोच्य साहित्यकार के समग्र कथा–साहित्य का अध्ययन करने का प्रथम प्रयास है ।

(२) यह विषय अपने आप में एक मौलिक विषय है क्योंकि इस पर अभी तक कोई शोध–प्रबंध उपलब्ध नहीं हो पाया है ।

(३) भीष्म साहनी के समग्र कथा–साहित्य अर्थात् उनकी समग्र कहानियों और समग्र उपन्यासों का युगीन संदर्भों में देखने का यह प्रथम प्रयास है ।

(४) युग–बोध के संदर्भ में साहनी जी के कथा–साहित्य का परिशीलन करने का यह प्रथम प्रयत्न है ।

(५) कहानी और उपन्यास के शिल्प–सौंदर्य के साथ–साथ भीष्म साहनी के युगीन–बोध, राजनीतिक चेतना, धार्मिक चेतना एवं मानवतावादी सर्जक के रूप में देखने परखने का यह सर्वप्रथम कार्य है ।

(६) भीष्म साहनी जी बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार है । वे एक उच्च कोटि के कहानीकार थे, सफल शिल्प–सौंदर्य के धनी उपन्यासकार थे; तथा नाटककार, संपादक, अनुवादक एवं निबंधकार भी थे । उनके इन सारे पहलुओं को उजागर करने का मैंने यथा संभव प्रयत्न किया है ।

✩ प्रबंध सारांश :

प्रस्तुत शोध–प्रबंध कुल छः अध्यायों में विभाजित है ।

➢ प्रथम अध्याय में कथाकार भीष्म साहनी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व अर्थात् संपूर्ण रचना–संसार पर विचार किया गया है ।

➢ द्वितीय अध्याय में हिन्दी कथा–साहित्य पर प्रकाश डालते हुए, भीष्म साहनी के हिन्दी कथा–साहित्य में आगमन तथा उनके प्रदेय पर विचार किया गया है ।

- तृतीय अध्याय जो इस शोधप्रबंध का हृदयतत्त्व है, उसमें भीष्म साहनी जी के कथा–साहित्य का युगीन संदर्भों में विश्लेषण किया गया है । अर्थात् उनके युग–बोध को उजागर करने का प्रयत्न किया गया है ।
- चतुर्थ अध्याय में भीष्म साहनी के कथाशिल्प का विशद विवेचन किया गया है । अर्थात् कहानी और उपन्यास के तत्त्वों के आधार पर उनके कथा–साहित्य का मूल्यांकन किया गया है ।
- पंचम् अध्याय में भीष्म साहनी की साहित्यिक उपलब्धियों और उनकी यत्किंचित् सीमाओं पर भी प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है ।
- षष्टम् अध्याय में चंद पृष्ठों में इस पूरे शोध ग्रंथ का निष्कर्ष (उपसंहार) के रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

✰ कृतज्ञता ज्ञापन :

प्रस्तुत शोधप्रबंध परम् आदरणीया डॉ. ताराबहन पटेल, हिन्दी विभागाध्यक्षा, ऑर्टस एण्ड कॉमर्स कॉलेज – जामजोधपुर के कुशल एवं सहृदयपूर्ण निर्देशन में तैयार किया गया है । डॉ. ताराबहन पटेल – सौराष्ट्र विश्वविद्यालय की एक वरिष्ट अध्यापिका हैं । अपने अति व्यस्त जीवन में से थोड़ा सा समय निकाल कर उन्होंने विषय–चयन से लेकर, इसकी संपूर्णता तक जिस सरलता, सहृदयता और आत्मीयता का परिचय दिया है, उसके लिए मैं सदा ऋणी रहूँगी । उनके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ ।

मेरी इस साधना–यात्रा में परम् श्रद्धेय डॉ. अंबाशंकर नागर, प्रो. महात्मा गांधी हिन्दुस्तानी चेयर, गुजरात विद्यापीठ, अमदावाद का सदा आशीर्वाद मुझे मिलता रहा है । उस मनीषी के श्री चरणों में मैं श्रद्धा सुमन अर्पित करती हूँ ।

गुजरात विद्यापीठ की स्तानकोतर हिन्दी विभाग की अध्यक्षा, परम् आदरणीया डॉ. मालतीबहन दुबे के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ । जिनका महत्त्वपूर्ण सुझाव मेरे लिए प्रेरणा स्रोत बना रहा ।

गुरुकुल महिला कॉलेज, पोरबंदर के प्राचार्य परम् आदरणीय श्री देवेन्द्रभाई आचार्य तथा डॉ. वी. आर. गोढाणिया कॉलेज – पोरबंदर के सम्माननीय प्राचार्य डॉ. अनुपम नागर जी का सदा सहयोग और प्रोत्साहन मिलता रहा है । जिसके लिए मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ ।

गुरुकुल महिला कॉलेज के हिन्दी विभाग की अध्यक्षा परम् विदुषी शान्तिबहन मोढवाड़िया तथा गोढाणीया महिला कॉलेज की हिन्दी विभागाध्यक्षा डॉ. संगीताबहन पारेख के प्रति भी मैं आभार व्यक्त करती हूँ । जिनकी प्रेरणा सदा मुझे मिलती रही है ।

मैं जोशीपुरा कॉलेज, जुनागढ के डॉ. कान्तिभाई चोटलिया के प्रति विशेष आभार व्यक्त करती हूँ । जिन्होंने पुस्तकीय सहायता ही नहीं प्रदान की है, बल्कि एक सहृदय कुशल अध्यापक के रूप में मेरे आत्मबल को बलवत्तर बनाया है ।

वी. आर. गोढाणिया महिला कॉलेज के परम् आदरणीय ट्रस्टी श्री अर्जुनभाई मोढवाड़िया के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ । जिन्होंने अनायास भाव से ही मुझे अध्ययन–अध्यापन के प्रति बड़ी सहृदयता से प्रोत्साहित किया है ।

मैं डॉ. हरिप्रसाद जोशी, 'रीडर' ऐज्युकेशन विभाग, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय के प्रति भी श्रद्धावनत हूँ जिनकी प्रेरणा सदा सुलभ होती रही है । परम् आदरणीय प्राचार्य (प्राक्तन) सौजन्य मूर्ति श्री घनश्यामभाई मेहता के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ । जिनकी प्रेरणा ने मुझे शैक्षिक जगत में प्रवेश करने की शक्ति प्रदान की ।

सौराष्ट्र विश्वविद्यालय के निवृत प्राध्यापक डॉ. गीरीशभाई त्रिवेदी तथा पोरबंदर के पत्रकार माननीय श्री प्रकाशभाई जोशी के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ । क्योंकि इनकी सहृदयता मुझे सदा सुलभ होती रही है ।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध की सामग्री संकलन करने हेतु मैंने जिन ग्रंथालयों का उपयोग किया है उनमें गुजरात विद्यापीठ – अमदावाद, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय – राजकोट, भवन्स ए. के. दोशी महिला कॉलेज – जामनगर, गुरुकुल महिला कॉलेज, गोढाणिया महिला कॉलेज – पोरबंदर आदि ग्रंथालयों तथा ग्रंथपालों के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ । जिनका सदा सहृदयपूर्ण सहयोग मिलता रहा है ।

मैं अपने माता–पिता के प्रति अधिक कृतज्ञ हूँ जिनका अपार स्नेह एवं वात्सल्य सदा मेरा अभिसिंचन करता रहा है । मैं अपनी बहन ज्योत्स्ना दवे, भाई श्री किशोरभाई दवे तथा भाभी श्रीमती कृष्ना बहन के प्रति भी नतमस्तक हूँ । जिन्होंने कभी भी समय–असमय का ध्यान न रखते हुए भी मुझे सहयोग प्रदान किया है ।

मैं अपने श्वसुर जी जयशंकरभाई महेता तथा सासु जी श्रीमती कान्ता बहन महेता के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करके उनके गौरव को ओछा नहीं करना चाहती, क्योंकि उन्होंने सदा 'बेटा' कहकर मुझे पुकारा और इस रूप में देखने की सदैव शुभकामना व्यक्त की है । मैं अपनी परम् आदरणीया फूई जी के प्रति भी आभारी हूँ । जो सदा मुझे अध्ययन–अध्यापन के प्रति प्रेरित करती रही हैं ।

मैं अपने जीवनसाथी डॉ. कमल महेता जी के प्रति कैसे अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करूँ, क्योंकि वे तो मेरे हैं, मैं उनकी हूँ पर उनकी सदा इच्छा बनी रही कि मैं इस प्रकार शोधकार्य के प्रति अग्रसर बनूँ । मैं उनके प्रति श्रद्धावनत हूँ । पुत्र हार्दिक के प्रति भी मैं अपनी सहृदयता व्यक्त करती हूँ । जिसने अपनी अल्पआयु में भी मुझे सदैव सहायता की है ।

भवन्स ए. के. दोशी महिला कॉलेज के निवृत अध्यापक डॉ. जी. आई. सिंह को मैं कैसे भूल सकती हूँ जिनका अहेतुक सहयोग मेरे लिए अवलंबन बना रहा है ।

प्रस्तुत शोधप्रबंध के सुंदर, स्वच्छ टंकण कार्य–हेतु मैं श्री कमलेश कोमर्शियल सेन्टर – जामनगर के सभी सदस्यों के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ ।

अंत में मै उन सभी गुरुजनों, विद्वानों, सहकार्यकर मित्रों, सहृदय शुभचिंतको के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में मेरी इस कठिन यात्रा में सहायता प्रदान की है ।

विनीता

मीरा जी. दवे

अनुक्रमणिका

क्रम	अध्याय	पृष्ठ क्रमांक
प्रथम अध्याय : कथाकार भीष्म साहनी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व		१-३३
१	**भीष्म साहनी का व्यक्तित्व :** व्यक्तित्व का तात्पर्य, जीवन–परिचय, जन्म–स्थान एवं जन्म–तिथि, बचपन एवं शिक्षा–दीक्षा, पारिवारिक स्थिति एवं व्यवसाय, साहित्य–सर्जन की प्रेरणा, गृहस्थ–जीवन, व्यक्तित्व के विशेषगुण : अन्य विद्वानों की दृष्टि में	३
२	**कथाकार भीष्म साहनी का बहुआयामी व्यक्तित्व :** विनम्र एवं स्वाभिमानी व्यक्तित्व, बहुभाषा–विद भीष्म साहनी, लेखकीय ईमानदारी, यथार्थवादी दृष्टिकोण, सांप्रदायिक–सद्भावना सम्पन्न, संपादक भीष्म साहनी, कुशल अभिनेता भीष्म साहनी, प्राप्त पुरस्कार एवं उपलब्धियाँ, संस्कृति की बहुरंगी प्रतिभा :	१६
३	**भीष्म साहनी का रचना–संसार :** लेखनकार्य, प्रथम कृति, कहानीकार भीष्म साहनी, उपन्यासकार भीष्म साहनी, नाटक्कार भीष्म साहनी, अनुवादक भीष्म साहनी, संपादक भीष्म साहनी, निबंधकार भीष्म साहनी, बालोपयोगी कहानियाँ और भीष्म साहनी, मौलिक कृतिकार के रूप में भीष्म साहनी, निष्कर्ष :	२४

द्वितीय अध्याय हिन्दी कथा–साहित्य और भीष्म साहनी :		३४-९०
१	प्रस्तावना, कहानी की परिभाषा, उद्भव एवं विकास तथा भीष्म साहनी, कहानी की परिभाषाएँ – पाश्चात्य विद्वानों के मत, भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ :	३५
२	कहानी का उदभव और विकास : पूर्व प्रेमचंद युगीन कहानी, प्रेमचन्द युगीन कहानी, प्रेमचंदोतर युगीन कहानी, नई कहानी, कहानी–साहित्य और भीष्म साहनी, नई कहानी का नाम करण, नई कहानी और भीष्म साहनी :	४५
३	प्रमुख कहानी संग्रहों का अवलोकन : भाग्य रेखा, पहला पाठ, भटकती राख, पट्रियाँ, वाङ्चू, शोभायात्रा, निशाचर, पाली	५४
४	उपन्यास की परिभाषा, उदभव एवं विकास और भीष्म साहनी : उपन्यास की परिभाषाएँ, पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाएँ, भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ	६०
५	उपन्यास का उदभव एवं विास : पूर्व प्रेमचंद युगीन उपन्यास, प्रेमचंद युगीन उपन्यास, प्रेमचंदोत्तर युगीन उपन्यास, स्वातंत्रयोत्तर उपन्यास, उपन्यास साहित्य और भीष्म साहनी	६६

६	साहनी के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय : झरोखे, कड़ियाँ, तमस, बसंती, मय्यादास की माड़ी, कुंतो, निष्कर्ष :	८०
तृतीय अध्याय : भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में युग–बोध :		९१-१४६
१	युगबोध की परिकल्पना, युग का अर्थ, बोध का अर्च, युग–बोध की परिभाषा :	९३
२	कथा–साहित्य और युग–बोध का संबंध : युग–बोध का बर्हिजगत, युग–बोध का अंर्तजगत	९८
३	भीष्म साहनी की कहानियों में युग–बोध : आर्थिक विषमता, सांप्रदायिक संघर्ष, किसान–जीवन का उत्पीड़न, शिक्षा–जगत की भ्रष्टाचारिता, भ्रष्टाचार और अनैतिकता, विवाह–अनमेल–विवाह की समस्याएँ, वैधव्य जीवन की विडंबनाएँ, मूल्य–बोध, नारी–जीवन के प्रति स्वस्थ विचार, यौन–भावना एवं वेश्या–समस्या, भ्रष्ट राजनीति, वर्ग–भेद की विषमता, आडंबर पूर्ण धार्मिकता, निष्कर्ष :	१०३
४	साहनी के उपन्यासों में युग–बोध : सामाजिक युग–बोध, पारिवारिक युगबोध, दाम्पत्य–जीवन का प्रश्न, वैध–अवैध प्रेम का प्रश्न, यौन–कुंठा एवं नारी, राष्ट्रीय स्वतंत्रता एवं मोह–भंग, राजनीतिक दलों की भ्रष्ट राजनीति, शोषक–शोषित वर्ग की समस्या, आर्थिक समस्याएँ धार्मिक रुढ़ि की समस्या, जनसंख्या–विस्फोट की समस्या, निष्कर्ष :	१२३

चतुर्थ अध्याय : भीष्म साहनी के कथा–साहित्य का शिल्प–वैभव :		१५०-३०४
१	शिल्प की अवधारणा	१५१
२	साहित्य में वस्तु और कला–शिल्प की सापेक्षिक भूमिका	१५२
३	वस्तु कला और शिल्प	१५२
४	कथावस्तु : कहानी में कथा–वस्तु का महत्त्व :	१५२
४	साहनी की कहानियों के कथानक की विशेषताएँ : शीर्षक – संक्षिप्तता एवं स्वाभाविकता, प्रतीकात्मक शीर्षक, भावात्मक शीर्षक, उद्देश्य के आधार पर, घटना–ऐक्य और संबंध–निर्वाह, प्रारंभ और अंत में कौतूहल का समन्वय एवं वस्तु–संगठन निम्नवर्गीय कथानक, मध्यमवर्गीय कथानक, निष्कर्ष :	१५३
५	चरित्र–शिल्प : कहानी में चरित्र–शिल्प का महत्त्व तथा स्थान, पात्रों का वर्गीकरण, चरित्र के आधार पर, स्वभाव के आधार पर, अध्ययन की सुविधानुसार, चरित्र–चित्रण की प्रणालियाँ, साहनी की कहानियों के पात्र – आदर्श पात्र, यथार्थ पात्र, विद्रोही पात्र, उपेक्षित और पीड़ित पात्र, शोषित पात्र	१६१
६	साहनी की चरित्र सृष्टि कला की विशेषताएँ : आदर्श पात्र, यथार्थ पात्र, विद्रोही पात्र, उपेक्षित और पीड़ित पात्र, शोषित पात्र	१६५
७	कथोपकथन (संवाद) : साहनी की कहानियों में कथोपकथन की विशेषताएँ : पात्रों का चरित्रोद्घाटन करनेवाले कथोपकथन,	१७५

	कथावस्तु को गतिशीलता प्रदान करनेवाले कथोपकथन, भावानुकूल संवाद, कथोपकथन में रोचकता एवं उत्सुकता, एक पात्रीय कथोपकथन, पात्रो के पारस्परिक संबंध सूत्रों का स्पष्टीकरण, व्यंग्य प्रधान कथोपकथन, संक्षिप्ता	
८	**देश–काल वातावरण :** कहानी में देशकाल वातावरण का महत्त्व, साहनी की कहानियों में देशकाल–वातावरण विशेषताएँ, आँचलिक वातावरण, प्राकृतिक वातावरण, प्राकृतिक वातावरण, सामाजिक परिवेश, राजनीतिक परिवेश, आर्थिक परिवेश :	१८७
९	**भाषा–शैली :** भाषा–शैली का महत्त्व, कथा–साहित्य में भाषा–शैली का महत्त्व, भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में प्रयुक्त भाषा–शैली, **भाषा–पक्ष :** प्रसंगानुसार भाषा, सामान्य वर्ग की भाषा, नागरिक पात्रों की भाषा, पात्रानुकूल भाषा, भावानुकूल भाषा, साधारण बोल–चाल की भाषा, देशज भाषा के शब्द, संस्कृत तत्सम शब्द, अंग्रेजी–उर्दू के शब्द, भाषा की लाक्षणिकता–मुहावरें, कहावतें, सूक्तियाँ, बिम्ब–विधान, प्रतीक–योजना : **शैली–पक्ष :** वर्णनात्मक शैली, व्यंग्यात्मक शैली, नाटकीय शैली, सांकेतिक शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, काव्यात्मक शैली	१९६
१०	**उद्देश्य :** कहीन में उद्देश्य का महत्त्व, सहानी की कहानियों के उद्देश्य–संदेश,	२१६

११	**उपन्यास : कला–वैभव :** कथानक, प्रस्तावना, उपन्यास–कला के तत्त्व, उपन्यास में कथानक का महत्त्व	२१६
१२	**साहनी के उपन्यासों के कथानक की विशेषताएँ :** बृहदाकार उपन्यास, लघु आकार के उपन्यास, सत्याधारित कथानक, संवेदनशील कथानक, समस्या–प्रधान कथानक, कल्पना–प्रधान कथानक, घटना–प्रधान कथानक	२२२
१३	**चरित्र शिल्प :** उपन्यास में पात्र–सृष्टि का स्थान एवं महत्त्व, पात्रों का वर्गीकरण, चरित्र के आधार पर, स्वभाव के आधार पर, अध्ययन की सुविधानुसार,	२३०
१४	**साहनी के उपन्यासों के पात्रों का वर्गीकरण :** प्रमुख पात्र, गौण पात्र, प्रधान पुरुष पात्र, प्रधान स्त्री पात्र, पात्रों का विभाजन – उच्च वर्ग, निम्न वर्ग, पात्रों की चरित्रांकन विधियाँ – विश्लेषणात्म प्रणाली, नाटकीय प्रणाली, साहनी की चरित्र–सृष्टि कला की विशेषताएँ :	२३२
१५	**कथोपकथन (संवाद–कला) :** उपन्यास–रचना में कथोपकथन का महत्त्व, साहनी के उपन्यासों में प्रयुक्त कथोपकथन का स्वरूप, पात्रानुकूल कथोपकथन, दीर्घकथोपकन, संक्षिप्त कथोपकथन, भावानुकूल कथोपकथन, व्यंग्यात्मक कथोपकथन, नाटकीय कथोपकथन, हास–परिहासपूर्ण कथोपकथन, स्वार्थपूर्ण कथोपकथन, प्रसंगानुकूल कथोपकथन, उद्देश्यपूर्ण कथोपकथन, पात्रों के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति में प्रयुक्त संवाद :	२३६

१६	**देश–काल–वातावरण :** उपन्यास में देशकाल–वातावरण और स्थानीय रंग का महत्त्व, भीष्म साहनी के उपन्यासों में देशकाल और वातावरण, आँचलिक वातावरण, प्राकृतिक वातावरण, शहरी वातावरण, मानसिक वातावरण	२५१
१७	**भाषा–शैली :** भीष्म साहनी के उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा–शैली, **भाषा–पक्ष :** साधारण बोल चाल की भाषा, आँचलिक बोली के शब्द, अरबीशब्द, फारसी शब्द, अंग्रेजी शब्द, पंजाबी शब्द, साहित्यिक परिष्कृत भाषा, तत्सम शब्द एवं वाक्यांश, भाषा की लाक्षणिकता – मुहावरें, कहावतें सूक्तियाँ, हास्य व्यंग्य **शैली पक्ष :** वर्णनात्मक शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, स्मरण शैली, सांकेतिक शैली, रेखाचित्र शैली, भावात्मक शैली, कथोपकथन प्रधान शैली, तर्कप्रधान शैली :	२५६
१८	**उद्‌देश्य :** उपन्यासों में उद्‌देश्य का महत्त्व, साहनी के उपन्यासों के उद्‌देश्य, संदेश – सांप्रदायिक तनाव का चित्रण, राजनीति में फैले भ्रष्टाचार का चित्रण, धार्मिक अंधविश्वास का चित्रण	२७७
पंचम अध्याय : **कथकार भीष्म साहनी की उपलब्धियाँ, एवँ सीमाएँ,**		३०५-३५४
१	**उपलब्धियाँ :** कहानीकार के रूप में साहनी की उपलब्धियाँ	३०७

	नैतिकता, मानवतावाद, पाश्चात्य आधुनिकता के प्रति आक्रोश, मध्यमवर्गीय एवँ निम्नमध्यम वर्गीय जीवन का चित्रण, घटना की सहजता, विभिन्न सामाजिक समस्याओं का निदान, शोषक–शोषित वर्ग का चित्रण, धर्मान्धता–सांप्रदायिक संघर्ष, व्यंग्य की प्रधानता, राष्ट्रीय स्वाभिमान की भावना, निष्कर्ष :	
२	**उपन्यासकार के रूप में साहनी की उपलब्धियाँ :** अशिक्षा : परिणाम और निदान, प्रेम–वैध–अवैध–यौन–कुंठा एवं दलित वासना के प्रति आक्रोश, विविध समस्याओं से जूझती नारी एवं नारी की असहाय स्थिति का चित्रण, सांप्रदायिकता एक विकार – तलाश, पारंपारिक मूल्यों और आधुनिक विचारों के बीच द्वंद्व – मानवीय मूल्यों के हास का चित्रण, शोषक–शोषित समाज और व्यवस्था के प्रति व्यंग्य, राष्ट्रीय स्वाधीनता, वैश्विक समस्या जनसंख्या – विस्फोट एवं सांप्रदायिक संघर्ष – यथार्थ चित्रण, निष्कर्ष : सीमाएँ, संभावनाएँ :	३२७
षष्टम अध्याय : उपसंहार		३५५-३६८
परिशिष्ट : सहायक ग्रंथसूची : *(१) आधार ग्रंथ : कथाकार भीष्म साहनी की रचनाएँ* *(२) संदर्भ ग्रंथ : हिन्दी – संदर्भ ग्रंथ* *संस्कृत – संदर्भ ग्रंथ* *अंग्रेजी – संदर्भ ग्रंथ* *शब्द–कोश* *पत्र–पत्रिकाएँ*		३६९-३८४

प्रथम अध्याय
कथाकार भीष्म साहनी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

१. भीष्म साहनी का व्यक्तित्व :

- *व्यक्तित्व का तात्पर्य*
- *जीवन–परिचय*
- *जन्मस्थान एवं जन्मतिथि*
- *पारिवारिक स्थिति एवं व्यवसाय*
- *बचपन एवं शिक्षा–दीक्षा*
- *पारिवारिक स्थिति एवं व्यवसाय*
- *बचपन एवं शिक्षा–दीक्षा*
- *साहित्य–सर्जन–प्रेरणास्रोत*
- *गृहस्थ जीवन*
- *व्यक्तित्व के विशेषगुण : अन्य विद्वानों की दृष्टि में*

२. कथाकार भीष्म साहनी का बहुआयामी व्यक्तित्व

- *विनम्र एवं स्वाभिमानी व्यक्तित्व*
- *बहुभाषाविद भीष्म साहनी*
- *लेखकीय ईमानदारी*
- *यथार्थवादी दृष्टिकोण*

- सांप्रदायिक सद्भावना संपन्न
- संपादक भीष्म साहनी
- कुशल अभिनेता भीष्म साहनी
- प्राप्त पुरस्कार एवं उपलब्धियाँ
- संस्कृति की बहुरंगी प्रतिभा

३. भीष्म साहनी का 'रचना संसार'

- लेखन कार्य, प्रथम कृति
- कहानीकार भीष्म साहनी
- उपन्यासकार भीष्म साहनी
- नाटककार : भीष्म साहनी
- अनुवादक – भीष्म साहनी
- संपादक : भीष्म साहनी
- निबंधकार : भीष्म साहनी
- बालोपयोगी कहानियाँ और भीष्म साहनी
- मौलिक कृतिकार के रूप में भीष्म साहनी

४. निष्कर्ष

प्रथम अध्याय
कथाकार भीष्म साहनी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

१. भीष्म साहनी का व्यक्तित्व :

किसी भी साहित्यकार के समग्र साहित्य का अवलोकन करने के पूर्व उसके व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त करना आवश्यक होता है । क्योंकि व्यक्तित्व की झलक उसके साहित्य में किसी न किसी प्रकार प्रतिबिंबित होती है । साहित्य–सर्जन में साहित्यकार के चिंतन–मनन और व्यक्तित्व की प्रमुख भूमिका होती है । साहित्यकार एक संवेदनशील उर्वर मस्तिष्क का प्राणी है, जो समाज से प्रभूत मात्रा में प्रभावित होता है । समाज के सुख–दुःख, उत्थान–पतन का बहुत अधिक प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पड़ता है, और वही उसके साहित्य के माध्यम से प्रतिबिंबित होता है । अतः सर्वप्रथम साहनी जी के व्यक्तित्व पर विचार करना आवशयक है ।

❖ *व्यक्तित्व का तात्पर्य :*

व्यक्तित्व की व्याख्या सरल नहीं है । किसी को बाह्य रूप से देखकर व्यक्तित्व का अंदाजा लगाया जाना कठिन है । अर्थात व्यक्तित्व ऐसी इकाई है जिसे अंतरंग और बहिरंग पक्षों में विभाजित नहीं किया जा सकता । परंतु अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से उसकी आकृति और प्रकृति, व्यवहार और स्वभाव अथवा चरित्र और शील के आधार पर बहिरंग और अंतरंग भेद किये जा सकते हैं । आकृति, वेशभूषा, रहन–सहन, खान–पान, व्यवसाय व्यवहार, हास–परिहास, बोल–चाल आदि व्यक्तित्व के बाह्य उपकरण कहे जा सकते हैं । जब कि स्नेह, सद्‌भाव, औदार्य, विविध मनोवृत्तियाँ और स्वभाव आदि व्यक्तितव

के आतंरिक उपकरण हैं । मानव–मन पर व्यक्तित्व की जो छाप संपूर्ण रूप में पड़ती है, वह प्रायः अविभाज्य होती है ।[१]

व्यक्तित्व वस्तुतः 'व्यक्ति' शब्द की भाववाचक संज्ञा है । जिन गुणों और विशेषताओं का प्रभाव व्यक्ति विशेष पर पड़ता है उन सभी को व्यक्तित्व के अंतर्गत माना जाता है ।

''व्यक्तित्व से हमारा अभिप्राय केवल रंग या चेहरा की बनावट से ही नहीं अपितु उसकी छंदमय गति से भी है, जैसे कहा भी गया है कि ''वह भी क्या वनिता और क्या सविता जिसकी गति में छंद भी न हो ।''[२]

''व्यक्तित्व अंग्रेजी के 'पर्सनालिटी' शब्द का हिन्दी पर्याय माना जाता है । पर्सनालिटी की उत्पत्ति लैटिन के शब्द 'पर्सनो' से हुई मानी जाती है । जिसका अभिप्राय 'मुखौटा' होता है ।''[३]

व्यक्तित्व के विविध पक्ष होते हैं, जैसे दैहिक, बौद्धिक, भावात्मक, चारित्रिक पक्ष, प्रकृति एवं स्वभाव रुचि तथा चारित्रिक गुण इत्यादि । हमें इन्हीं बिंदुओं के परिप्रेक्ष्य में भीष्म साहनी जी के व्यक्तित्व का अवलोकन करना है ।

❖ *जीवन–परिचय :*

स्वातंत्र्योत्तर कथा साहित्य में भीष्म साहनी का नाम बड़े आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है । स्वतंत्रता के बाद के छठे दसक के सिद्ध हस्त उपन्यासकारों, नाटककारों एवं कहानीकारों में उनकी परिगणना की जाती है । साहनी हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग के साहित्यकारों में बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं । गुणों और परिमाण की दृष्टि से आधुनिक साहित्य में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है ।

भीष्म साहनी साहित्य और कला की सोदेश्यता स्वीकार करनेवाले सशक्त कलाकार थे । उन्होंने अपने स्वप्नों को साहित्य के माध्यम से साकार करने का भगीरथ प्रयत्न किया है । जीवन और मृत्यु, मुस्कुराहट और बेचैनी कला के

सीमांत बिंदु हैं । इन बिंदुओं की संवेदना और सहृदयता की रेखा से जोड़ देने की क्षमता ही कला के मूल्यांकन का आधार बन सकती है ।

कला की परख का आधार ज्ञान, नैतिकता पोथी और पुराण नहीं है । सचमुच मनुष्य की संवेदना शक्ति एवं सहृदयता ही हो सकती है । कला की चोट हृदय पर पड़ती है, वह मर्म को स्पर्श करती है और संवेदना को जगाती है ।

डॉ. अरुण प्रकाश मिश्र ने लिखा है – "साहित्य समाज का दर्पण है, दूसरा कि कलाकार की चेतना समाज का दर्पण है ।"[४]

डॉ. विवेक द्विवेदी ने कलाकार एवं साहित्यकार के रूप में साहनी के व्यक्तित्व विशेष के गुणों की सराहना इन शब्दों में की है – "'व्यक्ति कितनी ही ऊँचाई क्यों न छू ले, परंतु अगर वह एक अच्छा इन्सान नहीं बन सका तो उसकी सारी उपलब्धि एक दिन बेकार हो जाती है । इतिहास के पन्नों में इतने चरित्र भरे पड़े हैं, जिनकी उपलब्धि उन्हें ऐतिहासिक पात्र बनाती है । परंतु स्वभाव की जड़ता, असहयोग की भावना, खुद को सबकुछ समझना और तंगदिली ने उन्हें हाशियें में ला दिया है । लेखक व साहित्यकार होने की पहली शर्त है कि वह अच्छा इन्सान हो ? भीष्म जी जितने बड़े कलाकार है उससे भी बड़े इन्सान है ।"[५]

उत्कृष्ट कलाकार व साहित्यकार भी हैं । उन्होंने प्रेमचंद के आदर्श और यथार्थ का स्पष्ट चित्रण करते हुए, समकालीन मूल्यों का लेखा–जोखा एक संवेदनशील गहराई के साथ प्रकट किया है ।

जीवन–परिचय शीर्षक के अंतर्गत हम उनकी जन्म–तिथि, जन्म–स्थान, परिवार, शिक्षा प्रेरणा–स्रोत एवं पारिवारिक परिचय के साथ लेखकीय प्रेरणा सोच एवं व्यक्तित्व विशेष के गुणों आदि पर विचार करेंगे ।

❖ *जन्मस्थान एवं जन्मतिथि :*

हिन्दी साहित्य जगत में साहनी एक प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व को लेकर अवतरित हुए थे । किसी भी कवि, लेखक एवं साहित्यकार के विचार एवं साहित्य–साधना का परिचय प्राप्त करने के लिए उसके व्यक्तिगत जीवन एवं अनुभवों, परिस्थितियों आदि को देखना आवश्यक एवं अनिवार्य होता है । क्योंकि साहित्यकार युग की उपज हुआ करते हैं ।

भीष्म साहनी का जन्म उस समय हुआ, जब भारत एक अखंड राष्ट्र था । बर्मा, पाकिस्तान अलग राष्ट्र नहीं बने थे । उस समय रावलपिंडी शहर एक प्रख्यात एवं प्रसिद्ध था । जिसकी ख्याति चारों और फैली हुई थी । इस शहर में १९१५ में ८ अगस्त को साहनी परिवार में भीष्म साहनी का जन्म हुआ ।

❖ *पारिवारिक स्थिति एवं व्यवसाय :*

भीष्म साहनी के बड़े भाई बलराज साहनी थे जिन से वह दो वर्ष छोटे थे । परिवार में उनसे बड़ी पाँच बहने थीं । भीष्म जी की शादी २८ वर्ष की उम्र में हुई थी, पत्नी का नाम शीला देवी था जिन्होंने एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त किया था । उनकी दो संताने, जिसमें पुत्र का नाम वरुण है और पुत्री का नाम कल्पना है । पुत्री ससुराल में है और वरुण मोस्को में नौकरी करता है ।

❖ *बचपन एवं शिक्षा–दीक्षा :*

भीष्म जी का बचपन एक होनहार बालक के रूप में व्यतीत हुआ है । परिवार में सब से छोटी संतान होने के कारण माता–पिता का प्यार भी अधिक मिला । बाल्य जीवन की सुमधुर यादें वह भूल नहीं सके । अपने सुनहले बचपन को याद करते हुए उन्होंने लिखा है –

“मेरे भाई ने अपने संघर्ष द्वारा मेरा रास्ता साफ किया लेकिन यह संघर्ष उसके विकास का संघर्ष था, विद्रोह का नहीं था । मेरे मन में भाई के प्रति

गहरा आदरभाव था । साथ में मैं उनके साहस पहलकदमी निर्भीकता से ईर्ष्या भी करता था । यह भी सही है कि बचपन में यह बात मेरे अंदर घर कर गई थी कि वह एक उत्कृष्ट व्यक्ति हैं और मैं उनकी तुलना में निकृष्ट हूँ । घरवालों ने भी इसे दूर नहीं किया । वह गोरे रंग का था मैं साँवला था, वह बड़ा स्वस्थ और हृष्ट–पुष्ट था, जबकि मैं बहुत दुबला और अक्सर बीमार रहता था । वह पढ़ने में बहुत तेज़ था, जबकि मैं साधारण । स्कूल के उस्ताद भी हमारी तुलना करते हुए कहा करते थे कि लाला जी के दोनो बेटों में नार्थ पोल और साउथ पोल का अंतर है । हिन्दुओं के घरो में बड़े बेटे का स्थान और भूमिका भी कुछ अलग होती है । विशेषकर पाँच बेटियों के बाद बेटा हुआ हो । ऐसा नहीं कि मैं दब्बू स्वभाव का था । काफी शरारती था । खेल कूद का भी शौकीन, गली मुहल्लों में से गप्पे और गालियाँ सीख सीखकर आता था । लेकिन बाद में उसका असर भी मेरे मन पर उल्टा हुआ । भाई शरीफ कहा जाने लगा और मैं आवारा । और जब होश सँभाला तो मैं दब्बू स्वभाव का बन गया ।''[६]

भीष्म जी बचपन में बहुत अस्वस्थ रहते थे । बीमारी के दौरान कई दिनों तक खाट में ही पड़े रहते । परिवार के सब सदस्य अपने–अपने व्यवसाय में जुड़ जाते । शायद भीष्म जी को अकेलापन बहुत खटकता था । सोचते–सोचते भाई–बहनका इन्तजार करते–करते आँखे मूँद जाती । जब स्कूल से बड़े भाई–बहन लौटते तो माता–पिता का उनके प्रति अधिक स्नेह देखकर, इस समय की मनःस्थिति का चित्रण इन शब्दों में भीष्म साहनी ने व्यक्त किया है –

''भाई को देखकर दोनों बहने खिल खिलाकर हँसने लगी हैं, पर माँ ने उसे छाती से लगाकर चूम लिया है । भाई को मिलनेवाली सब चीजों में एक प्रकार का नयापन होता है । जब मेरी बारी आती है तो वह पहले से जानी–पहचानी होती है । उसमें कोई नयापन नहीं होता । भाई जैसे भविष्य की

ओर से नई–नई चीज़े उठाकर ले आता है । मुझसे दो वर्ष बड़ा होने की वज़ह से वह सारा वक्त मेरे आगे–आगे चलता हुआ जैसे नये–नये दरवाजे खोलता रहता है । वह अभी से मुझे एक विलक्षण व्यक्ति नज़र आने लगा है । जो होली खेल सकता है, जो पीली धोती पहनकर गुरुकूल में जा सकता है, जो गणित के सवाल करता है, इतनी मोटी कोपी में लिखता है, जिसे एक ऐसे मास्टर पढ़ाते हैं, जिनका नाम मित्र विलास है । मुझे इस नाम वाला अध्यापक क्यों नहीं पढ़ाता ।"[७]

इस आलोच्य साहित्यकार को उपर्युक्त चोट ने अधिक संवेदनशील बना दिया । जो प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार के लिए आवश्यक हुआ करती है ।

भीष्म जी को बचपन में ताँगे की सवारी का अनहद शौक था । जहाँ कहीं भी ताँगा देखते, भीष्म जी उसमें चढ़ जाते थे । अगर जगह नहीं मिली तो पायदान भी काफी होता । उन दिनों की याद करते हुए बताते हैं कि "ताँगे पर नहीं चढ़ता तो गलियों में घूमता । जहाँ मन आता निकल जाता और अक्सर रास्ता भटक जाता । पिता जी ने मेरे गले में एक गोल सा पतरा लटका रखा था, जिस पर पिता जी का नाम और पता अंकित था । रास्ता भटक जाने पर जब कभी किसी को सड़क पर डोलता नज़र आता तो कोई न कोई ख़ुदातर्स गोद में उठाकर घर छोड़ आता ।"[८]

❖ *पारिवारिक स्थिति एवं व्यवसाय :*

साहनी परिवार पेशे से व्यापारी था । वे थोक का माल दिलानेवाले कमीशन एजेन्ट थे । साहनी परिवार कट्टर आर्यसमाजी था । भीष्म जी का जब जन्म हुआ, उस समय हमारी समाज–व्यवस्था शिथिल पड़ चुकी थी । हमारे प्राचीन ऋषि, संत–महात्माओं ने हजारों साल की साधना के बाद जो नवनीत प्राप्त किया था, वे मूल्य हमारे लिए शाश्वत कल्याणकारी थे; परंतु स्वान्तः सुखाय की वृत्ति के कारण हमने वह उखाड़ फेंका । जिससे परंपरागत मूल्यों का ह्रास

हुआ । इसी कारण समाज अधर्म, पाखंड, अनाचार आदि से पीड़ित होता चला गया । ऐसी विकट परिस्थिति में राजा राम मोहनराय ने ब्रह्म समाज की, दयानंद सरस्वती ने आर्यसमाज की, केशवचंद्र सेन ने प्रार्थना समाज की स्थापना कर, समग्र भारत में आंदोलन चलाया था । साहनी परिवार भी इससे जुड़ा हुआ था । जब भीष्म जी का जन्म हुआ, उसका वास्तविक चित्रण इन शब्दों में प्रस्तुत है ।

"उन दिनों घर के माहौल में कट्टरत आर्यसमाजी थी.. बेशक लेकिन उग्र प्रकार की कट्टरता नहीं थी । पिता जी कट्टर आर्यसमाजी थे, पर समाज–सुधार में गहरी दिलचस्पी रखते थे । आर्यसमाज द्वारा संचालित अस्पताल, आश्रम, स्कूल, कालिज आदि में सक्रिय रूप से काम करते थे, जिसका असर अच्छा हुआ कि हम समाजोन्मुखी हुए । आर्यसमाज का आंदोलन उन दिनों जहाँ हिन्दू संगठन चाहता था, वहाँ हिन्दू समाज से अनेक कुरीतियों का विरोध भी करता था । जैसे बाल–विवाह, छुआछूत, जाँत–पाँत और विधवा–विवाह, अछूतोद्धार, स्त्री–शिक्षा आदि का समर्थन करता था । मूर्तिपूजन का खंड़न करता था । उसके अतिरिक्त पिताजी की दृष्टि मध्यम वर्ग के पढ़े–लिखे व्यापारी की दृष्टि थी जो अध्यवसायी भी हैं, और भौतिक दृष्टि से आगे भी उसके बच्चों का भविष्य आधुनिक शिक्षा के सहारे अधिक उज्जवल हो पायेगा । कुल मिलाकर उनका दृष्टिकोण उदारवादी अधिक और कट्टरपंथी कम था ।"[९]

❖ *बचपन एवं शिक्षा–दीक्षा :*

भीष्म जी की प्रारंभिक शिक्षा रावलपिंडी में हुई । एक औसत दर्जे के विद्यार्थी के रूप में वह जाने जाते थे । वे अपनी पढ़ाई के संबंध में स्वयं कहते हैं – "मैं पढ़ाई में अच्छा था, हालांकि उत्कृष्ट नहीं था । आठवीं जमात में मैं चौथे नंबर पर आया, जिसके लिए मुझे मैडल मिला ।"[१०] स्कूल तक की शिक्षा उनकी रावलपिंडी में ही हुई । इंटर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात्

वे बी.ए. की शिक्षा लेने लाहौर चले गये । उन्होंने १९३३ में एम.ए. अंग्रेजी विषय के साथ की । बाद में पंजाब विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में पी.एचडी. की डिग्री भी प्राप्त की ।

❖ *साहित्य–सर्जन–प्रेरणास्रोत :*

भीष्मजीने बचपन से ही अंग्रेजी, संस्कृत एवं उर्दू की शिक्षा प्राप्त की थी । साहनी जी की बुआजी की बेटी सत्यवती हिन्दी में लिखती थी । उनके जीजाजी चंद्रगुप्त विद्यालंकार और बड़े भाई बलराम साहनी की भी छोटी–छोटी कहानियाँ अखबारों में प्रकाशित होती थी । इन सब स्थितियों ने साहनी को हिन्दी के प्रति अधिक आकर्षित किया और उन्होंने हिन्दी में लिखना शुरु किया ।

इस साहित्यकार के पीछे एक बड़ी रोचक घटना छिपी हुई है । जिस घटना ने ही सबसे पहले भीष्म जी के भीतर पड़ी हुई संवेदना को झकझोरा । यही घटना है जो अपने पैतृक व्यापार में (व्यापार) पिताजी को सहायता करते थे । एक दिन शाम को जब अपने यापार से लौटकर घर की ओर जा रहे थे तो लोगों का बड़ा भारी जमघट देखा । बड़ी भारी भीड़ एकत्रित हुई थी । भीष्म जी दर्शक की भाँति देखने गये तो पता चला कि एक लड़की जबरदस्त अपराध करके खड़ी हुई थी । उसका चेहरा उतर आया था । वहाँ उपस्थित भीड़ ये तमाशा देख रही थी । एकत्रित भीड़ ठठा–मश्करी एवं व्यंग्य कर रही थी । लगता था दोनों युवक–युवती गाँव से भागकर शहर आये हुए थे । लड़की की आंखों में दर्दनाक करुणा फैली हुई थी । वह सिकुड़ी–सी जा रही थी । वहाँ उपस्थित भीड़ के लिए केवल मात्र एक तमाशा था ।”[9]

अतः इसी घटना से साहनी के हृदय को बड़ी चोट लगी, आघात पहुँचा, वे बेचैन हो उठे । वही बेचैनी जब तक शब्दों में व्यक्त नहीं हुई, तब तक वे सो नहीं सके । यह पहली बेचैनी एवं अभिव्यक्ति उनकी पहली कहानी थी

'नीली–आँखें' जो हंस पत्रिका में प्रकाशित हुई थी । यहीं से भीष्म जी की साहित्य यात्रा शुरु होती है ।

एम.ए. की पढ़ाई समाप्त हुई थी कि दूसरी एक और घटना घटित हुई । जिससे भीष्म जी गहरे प्रभावित हुए । वह थी अपनी पारिवारिक जीवन की त्रासदी । पढ़ाई समाप्त करके वे मजबूर होकर पैतृक व्यवसाय में जुड़ गये । बलराज साहनी का भी मन व्यापार में नहीं लग रहा था । वह व्यापार और पिता जी को छोड़कर अलग हुए । पिताजी भी अपना भार किसी पर लादना चाहते थे । यह सारी पारिवारिक जिम्मेदारी भीष्म जी पर आ पड़ी । वह कोल्हू के बैल की तरह उसमें जुड़ गये, परंतु मन उदास था । व्यापार में जी नहीं लगता था । चित की अशांति और मन की उदासी मिटाने के लिए वह फिर से बेचैन बन गये । उदास दिल–दिमाग को भरने के लिए उन्होंने स्थानीय नाटक मंडली की स्थापना की ।

वैसे तो माना जाता है कि कलाकार का आधा मन जमीन पर और आधा मन आसमान में विचरता रहता है । इस प्रवृत्ति के द्वारा वे अपने अंदर की उदासी को मिटा सके ।

इस लेखक को प्रेरणा–स्रोत के रूप में युगीन परिस्थितियों ने भी बड़ा भारी योगदान दिया । कलाकार की भी एक जिन्दगी होती है । उसमें, सुख–दुःख, आँधी–तुफान एवं संकीर्ण परिस्थितियों के बीच से उसे गुजरना पड़ता है । भीष्म जी का मन तो व्यापार में लगता ही नहीं था । बड़े भाई भी घर से निकलने के बाद वापिस लौटकर नहीं आए थे । परिवार की सारी जिम्मेदारी उनके सिर पर आ पड़ी थी । इस द्वंद्व का सामंजस्य नहीं मिल रहा था । इस द्वंद्वात्मक स्थिति का वर्णन भीष्म जी ने महसूस किया है । उनके ही शब्दों में –

''मैं व्यापार करता रहा पर साथ ही साथ स्थानीय कॉलेज में आनरेरी तौर पर पढ़ाने भी लगा । इससे व्यापार की कोफ्त कम हो गई । थोड़ा–बहुत

कॉंग्रेस में काम करने लगा । पर व्यापार किसी भी प्रकार से छूटता नहीं था । दस साल तक गले के साथ लटका रहा । इससे छुटकारा तब मिला जब देश का बँटवारा हो गया । तब मैने सचमुच बड़ा आज़ाद महसूस किया । फिर व्यापार की घूटन, नाटक में खेलने, कॉंग्रेस में काम करने और कॉलेज में पढ़ाने से बहुत कुछ कम हो गई थी ।''[१२]

भीष्म जी को प्रेरणास्रोत के रूप में युगीन राजनीति ने भी बड़ा भारी सहयोग दिया । वे १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन के सक्रिय सदस्य थे । उनका यह आंदोलन अलग ढ़ंग का था । सोई हुई भारतीय जनता में प्राणों का संचार करना था । भारत–पाकिस्तान–विभाजन की वह त्रासदी स्वयं उन्होंने देखी भी, एवं भोगी भी । इसलिए उनके वर्णन में शायद साहनी चलचित्र की तरह हमारे सामने वास्तविक दृश्य खड़ा कर देते हैं । 'तमस' उपन्यास में उस घुटन एवं त्रासदी का और दंगे फसाद का यथार्थ वर्णन किया है ।

भीष्म जी को जो विशेष प्रेरणा देनेवाले थे और जिनको वे अपना आर्द मानते थे, उनके संबंध में वे स्वयं लिखते हैं – ''मेरे अंग्रेजी के अध्यापक जशवंतराय बड़े सुंदर व्यक्तित्व के स्वामी थे । अंग्रेजी कविता पढ़ाते तो अक अद्‌भुत संसार आँखों के सामने खुलता था । उनसे बड़ी प्रेरणा मिली । इनके अतिरिक्त अपने बड़े भाई बलराज साहनी का प्रभाव मुझ पर गहरा पड़ा । मेरी फूफेरी बहनें सत्यवती, मल्लिका, जानी एवं पुरुषार्थवती का प्रभाव रहा ।''

❖ *गृहस्थ जीवन :*

मनुष्य के जीवन में बहुत कुछ घटनाएँ अनहोनी बनकर आती हैं । जिस प्रकार कहा जाता है कि ''होनी को कोई रोक नहीं सकता ।' साहनी को व्यापार करना पसंद नहीं था, फिर भी मजबूरी के रूप में करना पड़ा ।

इसी प्रकार जब उनके सामने विवाह का प्रश्न उपस्थित हुआ, तो पिताजी से ना कहने की हिम्मत नहीं, एवं औचित्यपूर्ण भी नहीं था । इसलिए अपने

मित्र से विरोध दर्ज करवाया, परंतु पिता के सामने एक भी नहीं चली । पिता जी ने भीष्म जी की सगाई अपने एक मित्र की लड़की से कर दी । वह बहुत कम पढ़ी-लिखी थी । भीष्म जी ने उसका विरोध किया । पिताजी मान गये । अपने इस अतीत को याद करते हुए कि जीवन-संगिनी बनकर किस तरह से आई । इस अतीत को याद करते हुए शीला जी के शब्दों में –

"भीष्म जी से पहलीबार आमने-सामने होने के संदर्भ में वह कहती हैं कि – रावलपिंडी में मेरे पिताजी पुलिस में थे । एकबार मुझे भीष्म जी के 'भूत-गाडी' नामक नाटक को दिखाने ले गये । इसी नाटक में मैंने भीष्म जी को पहली बार देखा । यह नाटक मुझे काफी अच्छा लगा । इसमें उन्होंने अभिनय भी अच्छा किया था ।

मैं रावलपिंडी में डी.ए.वी. कॉलेज में बी.ए. तृतीय वर्ष की छात्रा थी । वहीं अंग्रेजी क्लास में पढ़ाते हुए उनसे पहली मुलाकात हुई । उन्होंने बहुत अच्छा पढ़ाया था । अंग्रेजी के नाटक का पहले उन्होंने सारांश बता दिया । फिर रोचक ढंग से नाटक पढ़ाया । इससे मैं काफी प्रभावित हुई थी ।

उन दिनों में साईकिल से कॉलेज जाती थी । भीष्म जी बहुत सीधे-सादे बहुत चुप्प और गंभीर रहनेवाले प्राध्यापक थे, जबकि मैं काफी शरारती एवं चंचल थी । १९४४ में मैं बीस वर्ष की भी और भीष्म जी २८ वर्ष के थे । एम.ए. की परीक्षा देने के पाँच दिनों के बाद मेरी शादी हुई । भीष्म जी ने मुझे पसंद किया था ।"[१४]

इस तरह भीष्म जी शीला जी के साथ विवाह बंधन से जुड़ गए । उनका गृहस्थ जीवन सफल रहा है । इसी कारण वह उच्च दर्जे के प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार बन सके । अर्धांगिनी के रूप में हंमेशा शीलाजी ने उन्हें सहयोग दिया । शीला जी इस अतीत को याद करते हुए कहती हैं – "मुझे याद है 'तमस' इन्होंने गर्मियों में ऊपर के कमरे में लिखी थी मैं ऊपर जाकर

देखती कि वह काम में मग्न हैं और पंखा भी नहीं चल रहा । मैं चुपचाप पंखा ओन करके नीचे चली आती ।"[९५]

❖ *व्यक्तित्व के विशेषगुण : अन्य विद्वानों की दृष्टि में :*

साहित्यकार का दायित्व बनता है कि वह सरल सहज एवं अधिक संवेदनशील हो । कोई भी कलाकार पहले मनुष्य है और बाद में कलाकार मनुष्यत्व के गुण उसे एक कलाकार बनाते हैं । साहनी जी जितने बड़े कलाकार थे, उससे भी बड़े वे इन्सान थे । उनके व्यक्तित्व में सादगी, लजुता, एवं संवेदनशीलता पूर्णतः विद्यमान थी, उनमें कला है, भावनाएँ हैं, दर्द है, जोश है और कुछ ऐसा है जो सदा नवीन रहनेवाला है ।

भीष्म जी जैसे ऊँचे दर्जे के बहु आयामी प्रतिभा के धनी कलाकार बहुत कम पाये जाते हैं । उनकी पत्नी श्रीमती शीला साहनी अपने पति की सहजता इन शब्दों में व्यक्त करती हुई कहती हैं कि "ओ पति के रूप में तो बहुत अच्छे है, परंतु व्यावहारिक बिल्कुल नहीं है । इनकी अच्छाई का सभी नाजायज फायदा उठाते हैं । मैं तो इनकी विनम्रता से परेशान हूँ । इनकी विनम्रता का लाभ दूसरे लोग उठाते हैं – वे साधु है, कर्म–योगी है, निष्काम कर्म–योगी है, ये सारी बातें तो बड़ी ऊँची है, भीष्म जी को हुक्म लेना खूब आता है, देना नहीं आता ।"[९६]

उनका परिचय देते हुए वे आगे भी कहती हैं – भीष्म मेहनत बहुत करते हैं । एक बार लिखेंगे, फिर उसे ठीक करेंगे, फिर उसकी कॉपी बना देगे । एक ही ची़ को कई बार लिखते हैं । इनमें पैतेन्स बहुत ज्यादा है । कई बार कहती हूँ कि टाइप करवा लीजिए, तो कहते हैं – हाथ से फीयर करने में एक फायदा है कि नयी बातें सूझ जाती है ।"[९७]

भीष्म साहनी के व्यक्तित्व के संबंध में कुछ अन्य विद्वानो नेभी अपनी धारणाएँ व्यक्त की हैं जिनमें से कुछ विद्वानों की धारणाएँ यहाँ प्रस्तुत हैं –

डॉ. नामवरसिंह :

"भीष्म साहनी वर्तमान हिन्दी जगत के उन थोड़े से लेखकों में है, जो अच्छे अर्थों में धर्म निरपेक्ष और प्रतिबद्ध है । खास बात यह है कि वे अपनी रचनाओं में आस्था का ढोल नहीं पीटते । उनके सौम्य, शालीन, सहज और विनम्र व्यक्तित्व के साथ विचारों की दृढ़ प्रतिबद्धता इतनी घुलमिल गई है कि कभी-कभी उसके बारे में भ्रम भी होता है । बिना आक्रमक हुए भी कोई लेखक प्रतिबद्ध हो सकता है, इसकी सर्वोत्तम मिशाल भीष्म साहनी है ।[१८]

विष्णु प्रभाकर :

"भीष्म साहनी बहुत ही संवेदनशील व्यक्ति है । इनका असर भी उनके साहित्य में देखने को मिलता है । उनके इस सरल और सौम्य व्यक्तित्व के कारण ही उन पर मार्क्सवाद उस रूप में हानी नहीं है, जैसा अन्य वामपंथी लेखकों में देखने को मिलता है ।"[१९]

"भीष्म जी स्वभाव से बेहद नम्र है । मैंने उन्हें गुस्से में कम देखा है । अकारण गुस्से में रहने वाले साथी उन्हें गाँधीवादी कहते हैं । हमें मालूम हैं कि यह नम्रता न कायरता है और न नाटकीयता, वह स्वभाव की निर्भीकता है, वह ज्ञानात्मक संवेदना की झलक है ।"[२०]

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' :

इन्होंने भीष्म जी के संबंध में लिखा है – "भीष्म जी का शिल्प सीधा, भाषा सरल और जिंदगी हमारी जानी-पहचानी है । व्यंग्य और करुणा भीष्म जी के साहित्य के प्रमुख गुण है ।"[२१]

राजेश्वर सक्सेना :

इन्होंने भीष्म साहनी जी के साहित्य के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है – "भीष्म साहनी ने अपने कथा-साहित्य में भारतीय समाज की जिजीविषा को स्पष्ट किया है । उन्होंने सांस्कृतिक प्रदूषण को साफ किया

है । शहर के मध्यमवर्गीय जीवन में पूंजीवादी व्यवस्था और उससे उत्पन्न आधुनिकता बोध के कारण जो विसंगतियाँ और विकृतियाँ आ रही हैं, उनके आलोचनात्मक विश्लेषण के साथ जीवन की सच्चाईयों को ठोस आकृति में बाँधने के प्रयास में वे सफल रहे हैं ।'[२२]

कपिल तिवारी :

"भीष्म साहनी के कथा साहित्य में अंतर्विरोध या विसंगति और विडंबना की चर्चा के साथ ही व्यंग्य को भूलना असंभव है । उन्होंने कथा–साहित्य में गद्य के व्यंग्य को बहुत बारीक शक्ल दी है, जिससे व्यंग्य का एक नया आयाम खुलता है ।'[२३]

२. कथाकार भीष्म साहनी का बहुआयामी व्यक्तित्व :

भीष्म साहनी जी के साहित्यिक अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि वे बहुआयामी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे । उनकी उस बहु आयामी प्रतिभा को उद्‌घाटित करने का यहाँ प्रयत्न किया जा रहा है और यह देखने का प्रयत्न रहा है कि हिन्दी के युगीन श्रेष्ठ साहित्यकारों की पंक्ति में उनकी परिगणना कैसे की जा सकती है । उन्होंने अपने गहन चिंतन, मनन और अनुभवों के प्रभावों को अपनी कृतियों में इस प्रकार बिखेरा है कि उनका व्यक्तित्व अपने आप स्पष्ट हो उठता है ।

ये पंक्तियाँ उनके बहुआयामी व्यक्तित्व की परिचायक हैं – "भीष्म जी की तरह रचनाकार होना बहुत कठिन है । वर्षों तक चुपचाप और लगातार परिश्रम करते रहने से ही उनका प्रखर रचनाकार का व्यक्तित्व उभर कर आया है । चींटी की तरह वह मेहनती और संग्रही है । वे हमारे रास्ते से लगातार काँटे हटाते रहे हैं और रंगबिरंगी फूल चुनचुनकर हमें देते रहे हैं ।"[२४]

यहाँ भीष्म जी के बहुआयामी व्यक्तित्व का विविध परिदृश्य में अध्ययन करना आवश्यक हैं । जिस पुरुष में सामाजिक, धार्मिक, नैतिक एवं मूल्यनिष्ठ

आदर्श हों और वह उसका पूर्णतः निर्वाह करता हो, उसे ही संभवतः आदर्श पुरुष कहा जा सकता है । भीष्म जी को यह आदर्श बहुत कुछ बचपन से ही अपने दादा और पिता से मिला था । उन्हें एम.ए. की पढ़ाई के समय वे ही आदर्श अपने अंग्रेजी के अध्यापक जशवंतराय से भी मिले थे । इन लोगों के आदर्शों की छाप भीष्म जी पर भी पड़ी और जीवन पर्यन्त वे आदर्शवादी व्यक्ति बने रहे । 'महत्त्व भीष्म' के उद्घाटन के अवसर पर अपना लेख पढ़ते हुए अमृतराय ने उनके आदर्शों की सराहना इन शब्दों में की थी – "निश्चय ही भीष्म जी प्रथम कोटि के रचनाकारों में आते हैं । मुझे लगता है कि शुरु में भीष्म जी पर शायद सुदर्शन और टोल्सटोय तथा कहीं–कहीं यशपाल का प्रभाव रहा हो । इनमें कुछ हद तक आदर्शवादी सदिच्छाएँ है ।"[२५] ये ही आदर्श उन्हें जीवनभर उदात्त बनाए रखे । इस प्रकार यदि उन्हें एक आदर्श पुरुष की संज्ञा से विभूषित किया जाय तो कोई अत्युक्ति या अतिश्योक्ति नहीं होगी ।

❖ *विनम्र एवं स्वाभिमानी व्यक्तित्व :*

भीष्म जी बचपन से ही मृदु, गंभीर, स्नेही, विनम्र एवं स्वाभिमानी व्यक्तित्व के सर्जक थे । अमरकांत ने उनके व्यक्तित्व के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है – "भीष्म जी प्रकृति से भी बहुत स्नेही और विनम्र है । उनमें 'सेन्स ऑफ ह्यूमर' भी प्रचूर मात्रा में है । उनका यह गुण उनकी रचनाओं में भी विद्यमान है । वे एक प्रतिबद्ध कलाकार हैं और कुछ आदर्शों के प्रति उनको शायद निमर्मता की सीमा तक मोह है । उनमें जहाँ सब के प्रति सहानुभूति है, वहीं उनमें जातीय व राष्ट्रीय स्वाभिमान की आग भी है । यहाँ वे अपने इतिहास की एक श्रेष्ठ परंपरा से अपने को जोड़ते हैं । जो राष्ट्रीय गौरव व राष्ट्रीय स्वाभिमान की भावना है ।

भीष्म जी ने अपने कथा–साहित्य के अंतर्गत समाजवाद, क्रांति, असमानता, भ्रष्टाचार, शोषण, राष्ट्रप्रेम, गरीबी आदि पर बहुत विनम्रता से कलम चलाई है ।

राष्ट्रीय स्वाभिमान की प्रतिबद्धता का प्रखर रूप मिलता है । उनकी चर्चा हम अगले अध्याय में करेंगे । साहनी जी की निजी नम्रता तथा उनकी रचनाओं में मौजूद सा हर्ष, संकल्प, उत्साह और अमानवीय व्यवस्था के बीच यही अंतर संबंध है ।

❖ *बहुभाषाविद भीष्म साहनी :*

भीष्म जी का जन्म रावलपिंडी में हुआ, लाहौर में बी.ए. तथा एम.ए. की पढ़ाई पूर्ण की, अंग्रेजी साहित्य में ही पीएच.डी. पूरा किया । किसी भी साहित्य की समृद्धि विभिन्न भाषाओं के ज्ञान एवं उसके समुचित प्रयोग पर निर्भर है । भीष्म जी एकभाषी नहीं रहे, वे बहुआयामी लेखक हैं । बचपन में घर पर ही हिन्दी और संस्कृत के शिक्षक–पढ़ाने आते थे । अपनी बुआजी की बेटी के हिन्दी लेखन कार्य के कारण ही वह हिन्दी की ओर आकर्षित हुए । वे अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, पंजाबी आदि भाषाओं के बड़े ज्ञाता है । उर्दू की शिक्षा उन्हें स्कूल में ही प्राप्त हुई थी । बहुभाषाविद होने की वजह से ही वे मोस्को में सात वर्ष अनुवादक के रूप में रहे ।[२६]

इनके कथा–साहित्य में विभिन्न भाषाओं के शब्दों, वाक्यों, मुहावरों, लोकोक्तियों एवं सूक्तियों का सफल प्रयोग हुआ है । इसका विशद् विचार–विमर्श शिल्प के अध्याय में आगे किया जायेगा ।

❖ *लेखकीय ईमानदारी :*

भीष्म साहनी ने अपने कथा साहित्य में जो कुछ भी लिखा है, वह पूरी ईमानदारी और निष्ठा से लिखा है । उन्होंने समाज में जो कुछ भी देखा अनुभूत किया उसे ही यथार्थ रूप में पाठकों के समक्ष बड़ी ईमानदारी के साथ रखने का यथार्थ प्रयत्न किया है । उनके बड़े भाई बलराज साहनी के शब्दों में – "भीष्म न तो किसी साहित्यिक वाद–विवाद में पड़ता है और न ही किसी

सिद्धांत पर लिखता है । वह वही कुछ लिखता है जो कुछ उसे खुद अच्छा लगे, जो कुछ उसने आज तक लिखा है ईमानदारी से लिखा है ।"[२८]

❖ *यथार्थवादी दृष्टिकोण :*

भीष्म जी जीवन की जटिलताओं एवं जिजीविषाओं को समग्र प्रतिभा के माध्यम से मानव–मन की प्रत्येक प्रवृत्ति को खोलकर सामने रख देते हैं । साहित्य में इसे 'युग बोध' या 'यथार्थ बोध' कहते हैं । राजेश्वर सक्सेना ने ठीक ही लिखा है कि – "साहनी के यथार्थवाद में वैज्ञानिक समझ की शालीनता दर्शनीय है ।"[२९]

भीष्म जी स्वयं प्रामाणिकता को सबसे आवश्यक चीज़ मानते हैं । उनके अपने शब्दों में – "साहित्य रचना का सबसे बड़ा गुण मेरी नज़र में उसकी प्रामाणिकता ही है, उसके अंदर छिपी सच्चाई जो हमें जिंदगी के किसी पहलू की पहचान कराती है । तभी वह जीवन के यथार्थ को पकड़ सकते हैं ।"[३०]

❖ *सांप्रदायिक सद्भावना संपन्न :*

सैक्युलरिज्म या धर्मनिरपेक्षता की खोज इतिहास की भौतिक परंपराओं में ही संभव है । भीष्म जी ने बाल्यावस्था में ही भारत–पाकिस्तान की विभाजन–गाथा अपनी निगाहों से देखी थी । पिताजी कट्टर आर्यसमाजी थे । ऐसी युगीन परिस्थिति के मुताबिक भी उन्होंने अपने कथा–चिंतन में यथार्थवादी एवं समन्वयवादी दृष्टिकोण को ही प्रस्तुत किया है ।

इस प्रकार भीष्म जी का लेखकीय दृष्टिकोण मानवतावादी अधिक रहा है । उनके कथासाहित्य में मानवता एवं सद्भावना कूट–कूट कर भरी है । उन्हें मानव मात्र से काफी लगाव है । उनका सुप्रसिद्ध एवं प्रमुख उपन्यास 'तमस' में वह स्पष्ट है कि भारतीय जनता के मस्तिष्क में अभी भी सांप्रदायिकता का 'तमस' अभी तक छाया हुआ है । जिनका विशद विश्लेषण आगे के अध्याय में होगा । उन्होंने स्पष्ट किया है कि धर्मांधता कितनी अमानवीय और खतरनाक

सिद्ध हुई, इसी सामाजिक अनुभव को, जो हमारे हाल ही के इतिहास का एक हिस्सा है । भीष्म जी ने उसी को पुनः जीवित करने की चेष्टा की है । साहनी मनुष्य की वेदना में मोम की तरह द्रवित होते हैं और अत्याचार, अन्याय, अधर्म और अनीति के खिलाफ संघर्षों से फौलादी कड़ी की तरह कठोर भी हो सकते हैं ।

❖ *संपादक भीष्म साहनी :*

भीष्म साहनी पेशे से अंग्रेजी के अध्यापक थे, परंतु परिस्थितिवश आकस्मिक रूप से 'नई कहानियाँ' का संपादन उनके कंधे पर आ पड़ा । १९६५ से १९६७ तक बड़ी कुशलता से उन्होंने पवित्रता का संपादन कार्य किया । हंमेशा संपादक की अपनी दृष्टि होती है, वह दृष्टि अगर साफ, सजग है तो निश्चित रूप से पत्रिका के लिए लेखकों को मत प्रदान करने में सरलता रहती है । भीष्म जी में वे सभी गुण थे और वे एक कुशल संपादक के रूप में कार्य करते रहे थे ।"[३१]

❖ *कुशल अभिनेता भीष्म साहनी :*

भीष्म जी एक सफल अभिनेता के रूप में भी स्वीकार किये जाते हैं । उनके बड़े भाई बलराज साहनी फिल्म–जगत के सुप्रसिद्ध कलाकार थे । साहनी जी ने अपने बड़े भाई के साथ जहाँ कुछ फिल्मों में भी काम किया, वहीं कुछ अच्छे नाटकों में सफल अभिनय भी किया । भीष्म जी 'इप्टा' कंपनी से लंबे समय तक जुड़े रहे । उन्होंने स्थानीय नाटक मंडली की भी स्थापना की थी । उनका अभिनय के प्रति बचपन से ही लगाव रहा है । नाटक की दुनिया के प्रति वे बहुत आकर्षित रहे । असगर वजाहत के साथ बात–चीत में उन्होंने नाटक के प्रति अपने दिल खोल के बात की है – "नाटक की दुनिया बड़ी आकर्षक और निराली दुनिया है । किस तरह छोटे–छोटे एक नाटक रूप लेता है और रूप लेने पर कैसे एक नये संसार की जैसे सृष्टि हो जाती है । यह

अनुभव बहुत ही सुखद और रोमांचकारी होता है । यह दुनिया मुझे बड़ी हृदयग्राही लगी और मनचाहा कि सब काम छोड़कर नाटक खेलूँ ।"[३३]

जिन चर्चित फिल्मों एवं सिरियल्स में उन्होंने अभिनय किया है वे इस प्रकार है –

(१) शहीद मिर्जा द्वारा निर्देशित फिल्म 'मोहन जोशी हाजिर हो'

(२) गोविंद निहलानी द्वारा निर्देशित 'तमस' सिरियल

वे एक संवेदनशील अभिनेता थे, परंतु अभिनय प्रतिभावान पक्ष को उन्होंने प्राथमिकता नहीं दी । वे अपने आप में एक जागरुक कलाकार थे ।

❖ *प्राप्त पुरस्कार एवं उपलब्धियाँ :*

भीष्म साहनी विशेष रूप से पाठकों के स्नेह एवं उनकी स्नेह प्रदत्त लेखक की लोकप्रियता को ही सबसे बड़ा पुरस्कार मानते हैं । उन्होंने कभी भी यश, ख्याति, या पुरस्कार की कामना से न तो कलम चलाई और न साहित्य–सर्जन किया । वे 'राष्ट्रीय प्रगतिशील लेखक महासंघ' के महासचिव भी थे । आज उनके ही निर्देशन के अनुसार पूरे देशभर में 'राष्ट्रीय प्रगतिशील लेखक महासंघ' की सैंकडों इकाइयाँ सक्रिय हैं । उनका कथन है कि "नगरों, कस्बों और गाँवों में छोटे–छोटे आयोजनों से वर्ग–बोध विकसित होता है । समकालीन समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण बनता है, सक्रिय होने की ललक पैदा होती है । इन आयोजनों की शिरक्त से एक सही मनुष्य होने और बनने की इच्छा बलवती होने लगती है ।"[३४]

साहनी ने साहित्य और जीवन के अटूट संबंध को स्वीकार किया है, जो उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि है । साहित्य की भूमिका क्या है ? इसका उत्तर देते हुए वे लिखते हैं – "साहित्य जीवन में से ही जन्म लेता है । साहित्य का जीवन के साथ अटूट संबंध है । लेकिन जीवन कोई अमूर्त अवधारणा नहीं है, तरह–तरह के अनुभव, घटनाएँ, आपसी रिश्ते, मानव–समाज के भीतर,

तमकानेवाले संघर्ष, विसंगतियाँ और अंतर्विरोध, विडंबनाएँ आदि सभी जीवन की परिघि में आते हैं । ये सब लेखक के संवेदन को कही छूते हैं, उद्वेलित करते हैं ।"[३५]

भीष्म जी का पूरा व्यक्तित्व दायें–बायें का विस्तार नहीं है । उनकी सिकायत गहराई में पड़ी सादगी से अटी है । उनके पास कोई हासिया नहीं है । कोई पर्दा नहीं है । वह सादगी पसंद सादा मिजाज, नेक इन्सान है ।

इस प्रकार सिर्फ इतना ही कह सकते हैं कि उस श्रेष्ठ लेखक की कर्मभूमि ही लेखन है । लिखने का उन्हें जबरदस्त नशा है । वे सच्चाई, नैतिकता, ईमानदारी से आलोचकों की निंदा–स्तुति किये बगैर लेखन–कार्य में सतत संलग्न रहे हैं ।

जहाँ तक पुरस्कारों का सवाल है, तो उनके कुछ विशेष प्राप्त पुरस्कारों का ही उल्लेख किया है । जिससे उनकी यश और ख्याति में चार चाँद लगे हैं । पुरस्कार प्राप्ति की परंपरा तो बचपन से ही एक छोटे से मेडल से प्रारंभ हुई थी । वे स्वयं लिखते हैं – "आठवीं जमात में जिल्ले में चौथा नंबर आया, जिसके लिए मुझे मेडल मिला ।"[३६]

यहीं से निरंतर हिन्दी पाठकों ने उनका सम्मान किया है । कुछ विशेष पुरस्कार इस प्रकार है ।[३७]

(१) १९७५ ई.स. भाषा विभाग पंजाब द्वारा शिरोमणि लेखक पुरस्कार ।
(२) १९७६ ई.स. 'तमस' उपन्यास पर साहित्य अकादमी पुरस्कार ।
(३) १९८० ई.स. 'एफ्रो ऐशियाई लेखक संघ की ओर से 'लोदस' पुरस्कार ।
(४) १९७९–८० ई.स. दिल्ली साहिय कला परिषद द्वारा सम्मानित ।
(५) १९८३ ई.स. 'मय्यादास की माडी' उपन्यास के लिए हिन्दी अकादमी दिल्ली का सर्वश्रेष्ठ कथा पुरस्कार ।

(६) १९८५ ई.स. 'वसंती' उपन्यास पर हिन्दी उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत । लखनऊ का प्रेमचंद पुरस्कार तथा सोवियेत लेंग नेहरु पुरस्कार भी प्राप्त ।

(७) १९९० ई.स. में हिन्दी–उर्दू साहित्य पुरस्कार (लखनऊ)

(८) १९९० ई.स. में 'मय्यादास की माड़ी' के लिए दिल्ली से हिन्दी अकादमी पुरस्कार ।

(९) १९९८ ई.स. में अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा संस्थान (हैदराबाद) द्वारा मानद् 'डॉक्टरेट' की उपाधि ।

(१०) १९९८ ई.स. में राष्ट्रपति द्वारा 'पदमभूषण' अलंकरण से अलंकृत ।

इसके अतिरिक्त वे हिन्दी अकादमी दिल्ली के 'शलाका' सम्मान से भी सम्मानित हुए थे । मध्यप्रदेश सरकार द्वारा 'मैथिलीशरण' पुरस्कार से भी उन्हें सम्मानित किया गया था । वे भारतीय लेखक संघ के महासचिव एवं राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के उपाध्यक्ष भी रहे ।

इस प्रकार निष्कर्षतः भीष्म साहनी जी को पाठकों द्वारा तथा स्नेहशील सर्जकों द्वारा सदा स्नेह मिलता रहा । इसका मुख्य कारण उनके व्यक्तित्व की निजी नम्रता तथा रचना में मौजूद साहस, संकल्प, उत्साह और अमानवीय व्यवस्था को फोड़ती चली जाती धारा का आवेग दोनों के बीच यदि अंतर संबंध है । वे ऐसे लेखक थे, जिनमें किसी तरह का कोम्प्लेक्स नहीं दिखता । वे किसी से छीनते या इर्ष्या करते नज़र नहीं आते । उनमें सागठिक धैर्य और उदारता मौजूद है । वे एक ऐसे कलाकार हैं जिनकी कथनी और करनी में अन्यतम साम्य है । भले ही हरकदम नई चुनौतियाँ मुहफाड़े उनके सामने खड़ी रही, पर उस साहसी पुरुष ने कभी–भी उन चुनौतियों के आगे घूटने नहीं टेका, समजौता नहीं किया, बल्कि उन परिस्थितियों से शक्ति अर्जन करके, निरंतर वह सर्जक–संघर्ष के पथ पर आगे बढ़ता रहा ।

❖ *संस्कृति की बहुरंगी प्रतिभा :*

साहनी बचपन से ही एक होनहार लड़के के रूप में थे । पारिवारिक द्वंद्वात्मक स्थिति ने बहुत कुछ सिखाया । "साहनी मानवतावादी लेखक के साथ–साथ परंपरित मूल्यों एवं संस्कृति के पुजारी है । सम्प्रति सांस्कृतिक रचनात्मक और कलात्मक ह्रास के वातावरण में जहाँ जनसाधारण से कलाकारों, रचनाकारों का सरोकार नहीं के बराबर है । वहाँ इस अद्‌भुत कलाकार के जीवनानुभव के फैले विविध प्रसंगों, रेगीस्तानों, नरवलिस्तानों, ऊँचे–नीचे पहाडों, ठाठे मारते सागरों और जीवन के भरपूर जीने की ललक हमें निराश नहीं करती है । जहाँ उन ठोस तंतुओं को पकड़ कर हम पूरी लगन से विकास की अगली सीढ़ियों पर चढ़ सकते हैं ।"[३८] साहनी अपनी मानवता को विश्व की मानवता का ही एक अंग समझते हैं । ईश्वर और धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण वैज्ञानिक है । वे किसी भी अनिर्वचनीय, अलौकिक सत्ता पर विश्वास नहीं करते हैं और नहीं वे रुढ़िगत धर्मके उपासक हैं । मनुष्यता ही उनका सबसे बड़ा धर्म है अेर भारतीय संस्कृति की वह आधारशीला है ।

३. भीष्म साहनी का 'रचना संसार' :

भीष्म जी मृदु और गंभीर साहित्यकार के रूप में माने जाते हैं । अपने जीवन के थपेड़ों में से उन्होंने बहुत कुछ प्राप्त किया है । उनकी समग्र कृतियों की मूल संवेदना उनका जीवनानुभव है । बचपन से ही निरंतर संघर्ष झेलते झेलते, परिस्थिति ने उन्हें प्रेमचंद की कोटि के साहित्यकार बना दिया । डॉ. अमरकान्त के शब्दों में – "भीष्म की रचनाओं को सीमित ढंग से नहीं देखा जा सकता, क्योंकि उनकी रचनाओं में ऐसी कलात्मकता एवं संलग्नता है, ऐसी सोच एवं व्यापक चिंतन है, जिससे वे हमारे साहित्य की विशेष उपलब्धि बन गयी है ।"[३९]

राष्ट्रीय और आंतरराष्ट्रीय संदर्भों में साम्राज्यवाद, पूंजीवाद की क्या भूमिका रही है ? पूंजीवाद ने मनुष्य को किस प्रकार से भ्रष्ट किया है ? मध्ययुगीन सामंती व्यवस्था से समझौता करके पूंजीवाद ने नवोदित संस्कृति को किस तरह पनपाया है ? राष्ट्रीय जीवन के ऐतिहासिक, अंतर्विरोधो को किस प्रकार अपने लाभ के निमित बनाया है । इन तमाम समस्याओं की अभिव्यक्ति भीष्म साहनी के साहित्य में मिलती है ।

विशेष रूप से आलोच्य साहित्य का स्वतंत्रता के बाद, जो मूल्य विघटन की स्थिति हमारे सामने आयी । उसी को केन्द्र में रखकर कथा साहित्य को मर्मस्पर्शी बनाया है । साहनी के जीवन में घटी समय की घटनाओं, व्यक्तियों, परिस्थितियों या विचारों के बारे में अतीत को याद करते हुए लिखते हैं – ''ज्यों–ज्यों बालक अपने परिवेश पर आँखें खोलता है, जो कुछ वह देखता, सुनता है वही संस्कार बनता जाता है । आकाश की नीलिमा ठंड़ी हवा के झोंके, गली में घूमते भीखारियों की आवाजें, जहाँ कहीं कोई छोटी सी घटना, दिल को अथवा चेतना को छू जाती है, वही अपनी छाप छोड़ जाती है । स्वतंत्रता आंदोलन भी जोर पकड़ रहा था । जलसे–जलूसों का जमाना था । भावनात्मकता से भरा वातावरण हमारे चारों ओर था । उसका प्रभाव मुझ पर और मेरे लेखन पर जरुर पड़ा है ।''[४०]

❖ *लेखन कार्य, प्रथम कृति :*

भीष्म जी ने पढ़ाई के दौरान ही लिखना शुरु किया था । प्रस्तुत शोध प्रबंध का आलोच्य विषय कहानी एवं उपन्यास है । इसलिए हम इन दोनों विधाओं पर विशेष ध्यान केन्द्रित करेंगे । हम प्रस्तुत कर चुके हैं कि एक युवक–युवती की घटना ने तमाशा ने उनके संवेदनशील हृदय को जागृत कर दिया । उन्होंने उस घटना को देखकर 'नीली आँखें' नाम की पहली कहानी लिखी, जिसे अमृतराय ने 'हंस में छाप कर भीष्म जी का साहित्य में पर्दापण

करवा दिया । उनका पहला कहानी संग्रह है 'भाग्य रेखा' (१९५३) में प्रसिद्ध हुआ था ।

"स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास की शृंखला में छठवें दसक के उत्तरार्ध में भीष्म साहनी ने उपन्यास–साहित्य में प्रवेश किया । अपने प्रथम उपन्यास 'झरोखें' (१९६७) में एक बालक के जीवन की घूटन एवं त्रासदीपूर्ण बालमनोवैज्ञानिक उपन्यास लिखा ।"[४१]

❖ *कहानीकार भीष्म साहनी :*

साहनी के साहित्यिक व्यक्तित्व का आधार उनकी कहानियाँ ही है । उन्होंने अपनी कहानियों में विशेष रूप से मध्यम वर्ग की कुंठा, विवशता, लालसा तथा अभीष्ट, प्राप्ति का यथार्थ एवं संवेदनात्मक स्तर पर प्रस्तुत किया है । श्रीपत राय के शब्दों में "भीष्म साहनी एक सधे हुए कहानीकार है । उनकी रचना बहुत समय तक अंतस में घुमडती रहती है और जब पक कर तैयार हो जाती है, तो उसे भुलाया नहीं जाता ।"[४२] इनके कहानी संग्रहों में 'भाग्यरेखा' (१९५३), 'पहला पाठ' (१९५६), 'भटकती राख' (१९६६), 'पटरियाँ' (१९७३), 'वाङ्चू' (१९७८), 'शोभायात्रा' (१९८१), 'निशाचर' (१९८३), 'पाली' (१९८९) आदि हैं ।

भीष्म साहनी की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ प्रतिनिधि कहानियों में संकलित हैं । इतना तो स्पष्ट ही है कि उनका कहानी करने का कौशल ही निराला है जो उन्हें अन्य कथाकारों से पृथक् करता है । वे कहानी लिखते नहीं बल्कि कहानी या कथनी कहते हैं ।

❖ *उपन्यासकार भीष्म साहनी :*

भीष्म जी ने 'झरोंखे' (१९६७) के साथ उपन्यास जगत में प्रवेश किया । उनके उपन्यास निम्नलिखित है 'कड़ियाँ' (१९७०), 'तमस' (१९७२) इस कृति पर

गोविंद निहलानी के निर्देशन में टी.वी. सिरियल बनी, 'बसंती' (१९८०), 'मय्यादास की माडी' (१९८८), 'कुंतो' (१९९३) आदि है ।

❖ *नाटककार : भीष्म साहनी :*

भीष्म साहनी बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार हैं । ऐसे बहुत कम साहित्यकार होते हैं कि जिस विधा में कलम चलाई, उसमें सफल ही रहे हों । साहनी का व्यक्तित्व बहु आयामी है । कथा साहित्य की तीनों महत्त्वपूर्ण विधा उपन्यास, कहानी एवं नाटक में वे सफल रहे हैं । उन्होंने सफल रंगमंचीय नाटक हिन्दी साहित्य को दिये हैं । प्रसादोत्तर हिन्दी नाट्य साहित्य में जिन नाटककारों ने अपना योगदान दिया है, उसमें उदयशंकर भट्ट, हरिकृष्ण प्रेमी, गोपालचंद देव, आदि सुप्रसिद्ध नाटककारों में भीष्म जी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । स्वतंत्रता के बाद काव्य और दृश्यत्व का संतुलन निभाने का भी प्रयास किया गया । उनमें जगदीशचंद्र माथुर, रमेश बक्षी, लक्ष्मी नारायण लाल, गिरिराज किशोर, शंकर शेष, सुरेन्द्र वर्मा, बिपिन अग्रवाल, लक्ष्मीकांत वर्मा आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । इस कोटि के नयी शिल्प शैली और कथ्य को लेकर बहुरूपी और बहुरंगी रंग प्रयोग जीवन की गंभीर सच्चाइयों को स्पष्ट करने का प्रयास साहनी ने भी कुछ नाटकों में किया है ।

साहनी ने पहला नाटक 'हानुस' (१९७७) में लिख कर नाट्य साहित्य में प्रवेश किया । बाद में 'कबीरा खड़ा बाज़र में' (१९८१), 'मुआवज़े' (१९९३), 'माधवी' (१९८४) आदि में हैं ।

काव्य कुमार भी एक अच्छे मजे हुए कलाकार है । उन्होंने भी भीष्म जी के नाटकों में काम किया है । उनकी राय है कि – ''भीष्म जी का नाटक बहुत ही संतुलित होता है । उनके हर नाटक के दृश्य की अपनी उपयोगिता होती है । वे बड़ी ही सीधी–सादी भाषा में बहुत ही गूढ़ बातें कह जाते हैं ।

कुछ नाटक सिर्फ पढ़ने में अच्छे लगते हैं, करने में नहीं परंतु भीष्म के नाटक पढ़ने एवं करने में एक जैसा आनंद देते हैं ।"[४३]

साहनी ने मात्रा की दृष्टि से शायद बहुत कम नाटक लिखें हैं परंतु सफल नाटककार के रूप में उनका बड़ा भारी योगदान रहा है ।

❖ *अनुवादक – भीष्म साहनी :*

भीष्मजी का एक अलग व्यक्तित्व अनुवादक के रूप में भी है । भारत सरकार ने उनका चुनाव अनुवादक के रूप में मॉस्को (सोवियेत संघ) के लिए किया था । १९५७ से १९६३ तक मोस्को में रहें । वहाँ उन्होंने कई भारतीय कृतियों का अंग्रेजी में और सोवियत संघ की २५ कृतियों का अनुवाद किये हुए हैं । हिन्दी के प्रख्यात कहानीकारों – जैसे कि – यशपाल, अमरकांत, कमलेश्वर, रमाकांत, नवतेजसिंह, गुरुदयालसिंह आदि की कहानियों का भी हिन्दी से अंग्रेजी में अनुवाद किया है । उन्होंने विशेष रूप से भावानुवाद ही किया है । एक आदर्श अनुवादक के रूप में वह सफल रहे हैं । ऋषि पुस्तकों के अनुवादों के अतिरिक्त यशपाल के हिन्दी उपन्यास 'दिव्या' का भी अंग्रेजी में अनुवाद किया है । 'रिसिकझन' के 'पुनरुत्थान' 'शीर्षक से महत्त्वपूर्ण अनुवादित रचना है । 'जय जीवन', 'आहत मातोव' का 'पहला अध्यापक' आदि हैं ।

❖ *संपादक : भीष्म साहनी :*

भीष्म साहनी का पीरवार पेशे से व्यापारी था । परंतु व्यापार में उनका जी नहीं लगता था । लाहौर में एम.ए. की पढ़ाई पूर्ण करके व्यापार के साथ–साथ दिल्ली कॉलेज, में अध्यापकी शुरु की । इस समय 'नई कहानियाँ' पत्रिका ने हिन्दी साहित्य में घूम मचायी थी । इसके संपादक कमलेश्वर थे । 'नई कहानियाँ' का संपादन उनके कंधो पर आ पड़ । जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया । एक संपादक की हैसियत एवं जिम्मदारी के रूप में कई कहानीकारों को स्थान एवं प्रेरणा दी । वह उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

संपादक के रूप में उन्होंने सफलता एवं भावनात्मक दृष्टिकोण का परिचय दिया । उनके अपने शब्दं में "संपादक बनने पर दृष्टि अधिक वस्तुष्ठि होने लगती है अक्सर संपादक अपनी रचनाएँ छपवाना पसंद नहीं करते । वस्तुतः वह यह आरोप भी सुनना नहीं चाहते । संपादक बनना नई–नई चुनौतियों को स्वीकारने के बराबर होता है ।"[४४]

❖ *निबंधकार : भीष्म साहनी :*

इसमें साहनी की महत्त्वपूर्ण कृति 'अपनीबात' आदि महत्त्वपूर्ण निबंधों का संग्रह हैं ।

❖ *बालोपयोगी कहानियाँ और भीष्म साहनी :*

भीष्म साहनी ने बच्चों के बाल मनोविज्ञान के आधार पर कुछ भावात्मक कहानियाँ लिखी है । जिसमें 'गुलेल का खेल', 'वापसी' आदि सुप्रसिद्ध एवं रोचक कहानियाँ हैं ।

❖ *मौलिक कृतिकार के रूप में भीष्म साहनी :*

इसमें भीष्म जी की एक ही महत्त्वपूर्ण कृति है 'बलिराज भाई चंदर' ।

४. निष्कर्ष :

साहनी ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों को कथा में ढाल कर हिन्दी साहित्य को अत्यधिक सम्पन्न किया है । वे सफल कहानीकार, उपन्यासकार एवं नाटककार होने के साथ एक चिंतक भी हैं । जिन्दगी से उन्होंने सच्ची घटनाएँ उठाई और जिन्दगी के विभिन्न पहलुओं को वे न सिर्फ गहराई से आँकने में सफल हुए, बल्कि समकालीन भारतीय साहित्य की कुछ सर्वाधिक जीवंत कृतियाँ भी दे सके । बचपन में प्रेमचंद और सुदर्शन का उन पर गहरा प्रभाव रहा है । साहित्य, इतिहास, समाजशास्त्र आदि में उनकी अधिक रुचि है । मार्क्सवाद ने साहनी को अंतराष्ट्रीय भाईचारे के समर्थक और अनुयायी बनाया है । साहनी

को प्राप्त सम्मान एवं पुरस्कार वही है कि वे पाठकों के दिल में बसे हैं । वे अजातशत्रु थे । इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रतिभा और व्यक्तित्व के धनी भीष्म साहनी हिन्दी–जगत के गौरव स्तंभ है ।

संदर्भ संकेत :

क्रम	*पुस्तक का नाम*	*लेखक*	*पृष्ठ*
१	माखनलाल चतुर्वेदी एक अध्ययन	श्री रामनारायण मिश्र	७
२	मंजीर	शिवानी	४८
३	उपन्यासकार शिवानी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	डॉ. विपिनकुमार अप्रकाशित शोध प्रबंध	४४
४	साहित्य सिद्धांत और अवधारणाएँ	डॉ. प्रकाश मिश्रा	११
५	भीष्म साहनी : उपन्यास सहित्य	डॉ.विवेक द्विवेदी	३३
६	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	१६
७	सारिका	वर्ष १६६० सं. कनैयालाल मदन	४३
८	वही	वर्ष १६६० सं. कनैयालाल मदन	८८
६	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	३०
१०	भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य	डॉ. विवेक द्विवेदी	२१
११	वही	डॉ. विवेक द्विवेदी	२५
१२	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	३१
१३	भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य	वर्ष १६६० सं. कनैयालाल मदन	११
१४	सारिका	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	१८
१५	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	६८
१६	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	६६
१७	वही	वर्ष १६६० सं. कनैयालाल मदन	६६
१८	सारिका	वर्ष १६६० सं. कनैयालाल मदन	१३

१९	वही	वर्ष १९९० सं. कनैयालाल मदन	४४
२०	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	६६
२१	उपेन्द्रनाथ अश्क : हिन्दी कहानी एक अंतरंग	उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	२५०
२२	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	९०
२३	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	११०
२४	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	२५२
२५	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	२४५
२६	भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य	डॉ. विवेक द्विवेदी	२५
२७	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	२४६
२८	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	२४४
२९	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	१३६
३०	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	८१
३१	मेरी प्रिय कहानियाँ (भूमिका)	भीष्म साहनी	११४७
३२	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	१६
३३	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	४
३४	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	११
३५	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	२१
३६	भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य	डॉ. विवेक द्विवेदी	३५
३७	वही	डॉ. विवेक द्विवेदी	३५
३८	वही	डॉ. विवेक द्विवेदी	२४४
३९	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	११
४०	वही	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	३६

४१	भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य	डॉ. विवेक द्विवेदी	३७
४२	वही	डॉ. विवेक द्विवेदी	१४०
४३	समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि	श्रीपतराय	४७
४४	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	.

🕮.....✍

द्वितीय अध्याय
हिन्दी कथा साहित्य और भीष्म साहनी

- ❖ प्रस्तावना :
- १. कहानी की परिभाषा, उद्भव एवं विकास तथा भीष्म साहनी:
- ❖ *कहानी की परिभाषाएँ*
- ❖ पाश्चात्य विद्वानों के मत
- ❖ भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ
- २. कहानी का उद्भव एवं विकास
- ❖ *पूर्व प्रेमचंद युगीन कहानी*
- ❖ *प्रेमचंद युगीन कहानी*
- ❖ *प्रेमचंदोत्तर युगीन कहानी*
- ❖ *नयी कहानी*
- ३. प्रमुख कहानी – संग्रहो' का अवलोकन
- ४ उपन्यास की परिभाषा, उद्भव एवं विकास और भीष्म साहनी
- ५. स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास
- ६. साहनी के उपन्यासो का संक्षिप्त परिचय
- ७. निष्कर्ष

द्वितीय अध्याय
हिन्दी कथा साहित्य और भीष्म साहनी

❖ प्रस्तावना :

सदियों से भारत भूमि पर अनेकों साहित्यकारों ने जन्म लेकर माँ सरस्वती की साधना में अपने चिंतन द्वारा साधना की है । जिसे काल भी क्वलित नहीं कर सका । वह साहित्य अपने रचनाकाल से आज तक साहित्य रसिकों को, अपने सौंदर्य से अभिभूत करता रहा है । वह साहित्य अथ से शुरु होकर अनंत काल को अपने में समेटे हुए हैं और अपनी शाश्वतता से रसिकों सामाजिकों को प्रभावित करता रहा है । इस युग–संभूत साहित्य को इन सरस्वती के पूजारियों ने अनेकों रूपों में व्यक्त किया है । जिसे प्राचीन ऋषि मुनियों ने काव्य की संज्ञा दी है । क्योंकि प्राचीन काल में काव्य के द्वारा ही अभिव्यक्ति होती थी । इसलिए इसे काव्य कहना ही औचित्यपूर्ण माना गया ।

मध्यकाल तक मुख्यतः साहित्य–सर्जन का कार्य काव्य में ही होता रहा है । जिसे साहित्य कहा जाता रहा, किन्तु आधुनिक संदर्भ में काव्य शब्द केवल कविता में लिखे गए साहित्य का द्योतक बना है । आज साहित्य शब्द व्यापक बनकर गद्य और पद्य दोनों का वाचक बन गया है ।

आधुनिक युग में काव्य की जगह साहित्य शब्द का व्यापक रूप में प्रयोग किया गया । आँग्ल साहित्य में इसके लिए 'लिटरेचर' शब्द का प्रयोग होता रहा है । इस लिटरेचर शब्द का ही अनुवाद प्राचीन शब्द काव्य और आधुनिक शब्द साहित्य रहा है । यह साहित्य किसी भी रूप में रचा गया हो उसका मूल प्रयोजन संपूर्ण मानव–हित में या प्राणी–हित में निहित है । इसीलिए संस्कृत के आचार्योंने 'सहितस्य भावः साहित्यम्' कहा है । अर्थात् जिसमें हित यानी कल्याण का भाव विद्यमान हो उसे साहित्य कहते हैं । यह सही भी है । संस्कृत

साहित्य की परंपरा के प्रारंभ से आज तक जितना साहित्य जिस किसी विधा में लिखा गया है वह इसी कल्याण के भाव से परिपूर्ण है ।

साहित्य अपने आप में तभी सार्थक माना जायेगा जब उसमें दूसरे के हित (कल्याण) लाभ, विकास का लक्ष्य छिपा हुआ हो । इसे पढ़कर प्रत्येक मानव में उत्थान की भावना प्रस्फुटित होनी चाहिए । उसका परिमार्जन और परिष्कार करना ही साहित्य का केन्द्र बिन्दु है । साहित्यकारों ने इसीलिए साहित्य का सृजन बड़ी साधना, तपस्या के बाद किया है । साहित्यकार को ईश्वर का प्रतिनिधि माना गया है । ईश्वर तत्त्व है, वह अंशी है और साहित्यकार उसी काअंश । अतः अंशी और अंश में कोई भी अंतर होना नहीं चाहिए । यह निराकार तत्त्व जिस प्रकार सृष्टि का केवल कल्याण करता है उसी प्रकार साहित्यकार भी साहित्य में उन अनुभूतियों को व्यक्त करता है, जो मानव मात्र में व्याप्त है, जिन्हें पाकर अनुकरण कर वह अपने जीवन को सार्थक बनाता है ।

साहित्य के अध्ययन से मनुष्य विचारों, संस्कारों से भेजना है और उसमें एक दिव्य चमक उत्पन्न होती है । मनुष्य को मनुष्यता से पूर्ण करना ही साहित्य का एक मात्र परम उद्देश्य है । यदि ऐसा न हो तो सदियों से लिखा हुआ साहित्य कब का समाप्त हो गया होता और साहित्यकार भी फिर साधना नहीं करता । क्योंकि साहित्य को जन्म देना मातृत्व की साधना के समान है ।

जब उत्तम साहित्य निःसृत होकर जगत में जन्म लेता है तब ही साहित्यकार अपने श्रम को सार्थक मानता है । संस्कृत साहित्य में जो कुछ भी लिखा गया है वह आज इसलिए अनुकरणीय और पठनीय है कि उसमें जो कुछ व्यक्त किया गया है वह चिरंतन है, अपरिवर्तनीय है । उसको पढ़कर सामाजिक अपने आपको परिवर्तित एवं परिष्कृत करते हैं । इस क्रिया के द्वारा ही समाज विश्व परिवर्तित होता है । यह परिवर्तन रस के द्वारा होता है । क्योंकि रस ही मूल प्रकृति है । आचार्यो ने इसीलिए साहित्य में रस की उपादेयता स्वीकार की

है । इन रसों के उद्भव से ही मानव का विकास होता है । उसमें साधारणीकरण की स्थिति उत्पन्न होती है । यही साधारणी करण ही विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को उच्चतम स्थिति तक ले जाता है । उसे पावन बनाता है । इन्हीं प्रक्रियाओं के द्वारा ही मानव की परंपरा विकसित होती है, और बर्बरता समाप्त होती है ।

यह साहित्य अपने आप में इतना शक्तिशाली है कि वह मनुष्य को मनुष्य बनाता है, यदि मनुष्य–मनुष्य हो जाय तो यह पृथ्वी नया अलंकार ग्रहण कर लेगी, पशुता–समाप्त हो जायेगी, चारों ओर दिव्यता का ही प्रकाश दिखाई देगा । इसी स्थिति को भारतीय आचार्यो ने 'रसो वै सः कहा है ।' रस ही सार्वभौमिक है, दिग–दिगंत में व्याप्त है । जिसमें सराबोर होकर मनुष्य अपने प्रत्येक कर्म को करता है । इस 'कर्म' को ही 'गीता' में प्रधान माना गया है । 'कर्मण्ये वा धिकारस्ते मा फलेषु कदाचिन' अर्थात् कर्म ही सर्वप्रधान है । साहित्यकार भी इसी कर्म में संलग्न रहता है । उसकी प्रत्येक अभिव्यक्ति इसी कर्म शब्द में बँधी हुई है ।

साहित्य–सर्जन में प्रवृत प्रत्येक साहित्यकार, उसके प्रत्येक कर्म मानव के भावों को द्विगुणित करके, उसे देवत्व के मार्ग पर ले आता है । साहित्य के इस चिंतन–मनन से मनुष्य के हृदय में एक नया उल्लास, नयी स्फूर्ति, नयी चेतना जागृत होती है, उसमें निखार आता है । एक प्रकार से साहित्यकार एक ऐसा शिल्पी है, जो अपने साहित्य सृजन से मनुष्य को सजाता है, सँवारता है । अनगढ़ मनुष्य में संवेदना जगाने का कार्य करता है ।

हमारे कथा–साहित्य का जन्म भी मनुष्य जन्म के साथ हुआ होगा । हमारे प्राचीन सत्शास्त्रों, वेदों, वेदांगों, उपनिषदों, संहिताओं, ऋचाओं, अरण्यकों, रामायण, महाभारत, गीता आदि पद्यात्मक ग्रंथ भले ही रहे हो, परंतु कथा–साहित्य के विकास की कुछ महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में हैं ।

साहित्य सर्जन मूलतः दो विधाओं में होता रहा पद्य और गद्य ।

भारतेन्दु जी के आविर्भाव के साथ ही गद्य का सर्जन शुरु हुआ और कथा साहित्य चरमोत्कर्ष की ओर गतिशील हो गया । आलोचना के अंग में आचार्यो ने इन दोनों विधाओं को अलग–अलग रूपों में माना है । परंतु दोनों का लक्ष्य एक ही है ।

स्वतंत्रता के बाद के युग को विद्वानों ने आधुनिक युग की संज्ञा से विभूषित किया है । आधुनिक युग में गद्य का तीव्रतम विकास हुआ । इस युग में गद्य की विविध विधाओं का विकास हुआ है । इन सभी गद्य विधाओं में कथा–साहित्य की मुख्य दो धाराएँ कहानी एवं उपन्यास का विकास चरमसीमा पर पहुँचा हुआ है और अधिक विकास होता चला जा रहा है । आज इन दो विधाओं की जितनी अधिक उन्नति संसार की भाषाओं में हो रही है, उतनी अन्य किसी साहित्यांग की नहीं । इसकी लोकप्रियता ने संसार के सभी उच्च कोटि के साहित्यकों, विचारकों का ध्यान आकृष्ट किया है । उपन्यास एवं कहानी का सीधा संबंध मनुष्य जीवन से हैं ।

हमारा विषय कथाकार भीष्म साहनी है । अर्थात् भीष्म साहनी के कथा–साहित्य पर विचार करना है । भीष्म साहनी ने कहानी और उपन्यास दोनों ही विधाओं में अपनी लेखनी चलाई है । कहानी उपन्यास की अपेक्षा प्राचीन विधा है, उपन्यास उसके बाद की लेकिन दोनों का लक्ष्य मनुष्य ही है और मनुष्य को अपने आप से परिचित करना ही कथा–साहित्य का लक्ष्य रहा है ।

हिन्दी में यह कथा–साहित्य काव्य के माध्यम से भी लिखा गया है और गद्य के माध्यम से भी । आधुनिक काल में मनुष्य ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए गद्य को अधिक तीव्र सशक्त साधन माना गया है । इसलिए आधुनिक काल में इस विधा का अत्यधिक प्रणयन हुआ है, और काव्य–विधा इस क्षेत्र में पीछे रह गई है ।

पहले मनुष्य को कुछ कहना होता था, तो पद्य के माध्यम से अपनी बात कहता था । परंतु आधुनिक युग में उसे ऐसा करने में संतोष नहीं होता । भीष्म साहनी गद्य युग के छठवें दसक के सिद्धहस्त कलाकार एवं साहित्यकार हैं । काल क्रम में वे आधुनिक युग के उस चरण में आते हैं, जहाँ से हमारे कहानी, उपन्यास युग में नयापन प्रविष्ट हुआ ।

आगे हम गद्य के विकास क्रम में दोनों धाराओं के विकास क्रम को स्पष्ट करते हुए भीष्म साहनी का स्थान निर्धारित करने और उनका योगदान स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे ।

१. कहानी की परिभाषा, उद्भव एवं विकास तथा भीष्म साहनीः

भीष्म साहनी के कथा साहित्य से तात्पर्य इस शोध ग्रंथ, उनकी कहानियों और उपन्यासों से हैं । जैसा कि विषय है – ‘‘भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में युग बोध’’ यानी उनकी कहानियाँ और उपन्यासों का युगीन संदर्भ में अध्ययन भी अतिआवश्यक है । सर्वप्रथम देखना है कि कहानी की परिभाषा की निकष पर भीष्म की कहानियाँ कितनी खरी उतरती हैं, तथा कहानियों के युग–विभाजन में वे किस युग के कहानीकारों में स्थान रखते हैं ।

❖ *कहानी की परिभाषाएँ :*

जिस तरह प्रेम, ईश्वर, कविता आदि की अब तक निश्चित परिभाषा नहीं बन सकी, उसी भाँति कहानी की भी एक सुनिश्चित परिभाषा नहीं बन सकी । उस कहानी का संबंध कहने से हैं । इसीलिए कहानी में कहने भर के लिए अवकाश है । इस अवकाश को पकड़कर ही कहानी की परिभाषा गढ़ी गई है । कथा और गल्प जैसे शब्दों से इसे बाँधा गया है, परंतु कहानी की परिभाषा अभी तक निश्चित नहीं हो पायी । तथ्यों के अनुसार कहानी की परिभाषाएँ गढ़ी गई हैं । उनसे भी पूर्णता नहीं प्राप्त हुई, कहानी की परिभाषा को सुननेवाले तो अधिक है; किन्तु उसकी कठिनाई के कारण बोलनेवाले कम हैं, जो

चीजें दिन–प्रतिदिन देना कठिन है । इसी कारण कुछ अनुभवी आलोचकों ने परेशान होकर लोकप्रियता को उसका प्रमुख लक्षण माना है ।[२]

❖ पाश्चात्य विद्वानों के मत :

एडगर एलिन पो :

"कहानी वह रचना है, जो एक ही बैठक में पढ़ी जा सके, तथा पढ़नेवाले के हृदय पर एकही प्रभाव उत्पन्न करे । कहानी में उन सब बातों को निकाल दिया जाता है, जो कहानी के एक ही प्रभाव को आगे ले जाने में सहायक न हो, कहानी अपने में पूर्ण होनी चाहिए ।"[३]

उपर्युक्त परिभाषा में कहानी की संक्षिप्तता, एक ही बैठक में समाप्त होनी चाहिए तथा प्रभाव–ऐक्य एवं पूर्णता पर बल दिया गया है ।

सरह्यू बालपोल :

उन्होंने कहानी की रचना प्रक्रिया पर बल दिया है – "छोटी कहानी एक ऐसी कहानी होनी चाहिए, जिसकी घटनाएँ आकस्मिकता से भरी हुई हो, जिसमें उसी का तीव्र गति से अप्रत्याशित विकास दिखाया जा सके और जो कुतूहल सहित चरम बिन्दु का स्पर्श कर संतोष प्रदान करनेवाले उपसंहार दिखाएँ ।"[४]

जेम्स डबल्यू लीन :

"संक्षिप्त नाटकीय ढंग से किसी एक पात्र के जीवन में आनेवाले 'मोड़' का चित्रण ही कहानी है ।"[५]

इस परिभाषा में लीन महोदय ने कहानी में चरित्र का महत्त्व स्वीकार किया है । वास्तव में कहानी का स्वरूप लघु होने के कारण वह जीवन के एकाध मोड़ का ही चित्रण कर सकती है ।

हडसन :

पाश्चात्य आलोचक हडसन कहानी की संक्षिप्तता और उसकी आत्मा को परिभाषा में महत्त्व देते हैं, "लघुकथा में केवल एक ही मूल भाव रहता है ।"[६] इस परिभाषा में एक ही भाव की महिमा प्रस्थापित की गई है ।

एच. जी. वेल्स :

उन्होंने लिखा है कि – "कहानी आकार से अधिक इतनी बड़ी होनी चाहिए कि वह सरलता से बीस मिनिट में पढ़ी जा सके ।"[७] यहाँ वेल्स को ही लघुतम कहानी के प्राण तत्त्व के रूप में स्वीकारते हैं ।

एनसाक्लोपीडिया ब्रिटेनिका :

उन्होंने रचना की संगठितता पर बल दिया है, "स्वतंत्र साहित्य विधा के रूप में कहानी का वर्णन करते हुए इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है कि वह संक्षिप्त अत्यधिक संगठित तथा पूर्ण कथा रूप है ।"[८]

उपर्युक्त विद्वानों की परिभाषाओं में व्यक्त तथ्यों की दृष्टि से कहानी में एक ही घटना, संक्षिप्तता, एक ही भाव, नाटकीय ढंग, सरलता एवं प्रभावपूर्णता का होना अनिवार्य है । कुतूहल सहित चरम बिन्दु का स्पर्श हृदय को पुलकित कर सके वह कहानी है ।

❖ भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ :

मुंशी प्रेमचंद :

हिन्दी कहानी में प्रेमचंद का उत्कृष्ट स्थान हैं । कहानी की उनकी यह परिभाषा काफी हद तक पूर्ण है । "कहानी एक रचना है, जिसमें जीवन के किसी अंग या किसी मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है । उसके चरित्र उसकी शैली, उसका कथा–विन्यास अब किसी एक भाव की

पुष्टि करते हैं । वह एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है ।"[९]

यहाँ पर प्रेमचंद जी ने कहानीकार के उद्देश्य का उल्लेख करते हुए कहानी के स्वरूप की ओर संकेत कर दिया है । फिर उसके अन्य तत्त्वों का भी कार्य सुनिश्चित कर दिया है । यह सच्च है कि कहानी ऐसा रमणीय उद्यान नहीं है जिसमें भाँति–भाँति के फूल–बुटे–वेल सजे हुए हैं, बल्कि एक गमला है, जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है । कहानी की इतनी सुन्दर व्याख्या शायद ही किसी ने की हो ।

जैनेन्द्रकुमार :

"कहानी तो एक भूख है, जो निरंतर समाधान पाने की कोशिश करती रहती है ।"[१०]

जैनेन्द्र जी ने कहानी की परिभाषा अपनी दृष्टि से दी है, जो कहानी की नहीं, बल्कि कहानी के प्रेरणा–स्रोत की व्याख्या की हैं ।

जयशंकर प्रसाद :

प्रसाद जी ने चरित्र–चित्रण रस और सौंदर्य को महत्त्व देते हुए, कहानी की व्याख्या दी है – "सौंदर्य की एक झलक का चित्रण करना और उसके द्वारा रस की सृष्टि करना ही कहानी का उद्देश्य है ।"[११]

श्याम सुंदरदास :

"आख्यायिका एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को लेकर नाटकीय आख्यान है ।"[१२]

यहाँ पर श्याम सुन्दरदास ने नाटकीय घटना को महत्त्व दिया है, जो पाठकों के हृदय पर अविचल प्रभाव की छाप छोड़ते हैं ।

बाबू गुलाबराय :

गुलाबराय जी ने विद्वानों की दी गई परिभाषाओं के सार तत्त्वों पर आधारित परिभाषा देने का प्रयत्न किया है । जैसे "छोटी कहानी एक स्वतः पूर्ण रचना है, जिसमें एक तथ्य या प्रभाव को अग्रसर करनेवाली व्यक्ति–केन्द्रित घटना या घटनाओं के आवश्यक उत्थान, पतन और मोड़ के साथ पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालनेवाला वर्णन हो ।"[१३]

अज्ञेय :

"कहानी जीवन की प्रतिच्छाया है और जीवन स्वयं एक अधूरी कहानी हैं, एक शिखा है, जो उम्रभर मिलती है । कहानीकार मानसिक संघर्ष में जीता है । संघर्ष कला की जननी है ।"[१४]

अतः अज्ञेय जी कहानी में संघर्ष को अनिवार्य और जीवन की प्रतिच्छाया मानते हैं । अर्थात् कहानी व्यक्तिगत मनोवृत्ति की परिचायक है ।

चंद्रगुप्त विद्यालंकार :

विद्यालंकार जी ने अपनी परिभाषा में दो बातों पर विशेष बल दिया है – घटना एवं रस । "घटनात्मक इकहरे चित्रण का नाम कहानी है, और साहित्य के सभी अंगो के रस इसके आवश्यक गुण हैं ।"[१५]

रायकृष्णदास :

वे कहनी में एक ही घटना के माध्यम से रस की उद्भावना को ही कहानी का लक्ष्य मानते हैं । जैसे "कहानी मनोरंजन के साथ–साथ किसी न किसी सत्य का उद्घाटन करती है तथा आख्यायिका में सौंदर्य का रस है ।"[१६]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल :

शुक्ल जी ने संवेदना या मनोभाव गतिशीलता और संक्षिप्तता की ओर संकेत कर कहानी की परिभाषा दी है – "सादे ढंग से केवल कुछ अत्यंत

व्यंजक घटनाएँ और थोड़ी बात–चीत सामने लाकर शिघ्र गति से किसी एक गंभीर संवेदना या मनोभाव में पर्यवसित होनेवाली गद्य विद्या कहानी है ।"[१७]

भीष्म साहनी :

साहनी की दृष्टि में कहानी की प्रामाणिकता अति आवश्यक है । उनके शब्दों में कहानी का सबसे बड़ा गुण मरी नज़र में उसकी प्रामाणिकता ही है । उसके अंदर छिपी सच्चाई जो हमें ज़िदगी के किसी पहलू की सही पहचान कराती है, तभी वह जीवन के यथार्थ को पकड़ पाती है ।"[१८]

उपर्युक्त परिभाषाओं में कहानी की विभिन्न विशेषतायें उद्घाटित हो जाती हैं । "आकार, पात्रों की न्यूनता, कार्य–स्थानकाल की एकता, जीवन की घटना अथवा स्थिति विशेष का मार्मिक–चित्रण, एक मुख्यभाव, प्रभावपूर्ण चित्रण संकेतात्मकता, उद्देश्य, शैली, नाटकीय कथोपकथन, मनोरंजन के साथ–साथ मानवीय संदेश, मानव मन का मनोवैज्ञानिक चित्रण, मानव मन के शाश्वत संघर्ष की व्यंजना आदि सब चीज़े उद्घाटित होकर हमारे सामने आती हैं ।"[१९]

"कहानी निश्चित रूप से गतिशील विधा है । क्षण–क्षण में रूप बदलनेवाली वस्तु को भाषा के चौंखटे में बाँध रखना एक कठिन काम है । कहानी भी एक ऐसी ही साहित्य विधा है । इसलिए उसकी ठोस परिभाषा देना बहुत मुश्किल है क्योंकि कहानी का क्षेत्र विस्तृत है । विषय और शैली दोनों की दृष्टि से हम किसी दो–चार वाक्य में कहानी की परिभाषा के रूप में नहीं गढ़ सकते ।"[२०]

अतः पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों की दृष्टि से कहानी के लक्षण देने का प्रयास हुआ है । निष्कर्षतः कहानी एक वह कथात्मक लघु गद्य रचना है, जिसमें जीवन की किसी एक स्थिति का सरस, सजीव, चित्रण होता है । हिन्दी कहानीकारों का ध्यान कहानी के मूल आधार जीवन से बली नहीं हटा । हिन्दी आलोचकों ने कहानी में रस व्यंजना की अपेक्षा सर्वथा समीचीन ही है । क्योंकि

कहानी भी साहित्य की लघु किन्तु महत्त्वपूर्ण विधा है । जिसमें मनोरंजन के साथ–साथ उद्देश्य संदेश प्रधान हो ।

२. कहानी का उद्‌भव एवं विकास :

"साहित्य जीवन का प्रतिबिंध है । जीवन के विविध व्यापार, क्रियाकलाप एवं घात–प्रतिघात मानव–हृदय को उद्वेलित करके, जिन रागात्मक अनुभूतियों को जन्म देते हैं, उन्हीं की शब्दार्थमयी अभिव्यक्ति साहित्य है । इस अभिव्यक्ति के अनेक रूप है, जिनमें से एक कहानी भी है । कहानी कहना और सुनना मनुष्य का अपना सहजस्वभाव है । कहानी मनुष्य के साथ ही जन्मी हैं ।"[२१]

"वर्तमान लोकप्रिय साहित्यिक विधाओं में कहानी को मूर्धन्य स्थान प्राप्त है । साहित्य की समस्त विधाओं में यहीं एक ऐसी विधा है जो पाठक का चरम अनुरंजन करने के साथ–साथ चिरंतन रस का उद्‌घाटन करने में प्रयत्नवान रहती है । लोककल्याण की भावना और लोक रंजन तत्त्व का जितना सुंदर समन्वय इस विधा से होता है उतना साहित्य की किसी अन्य विधा में नहीं ।"[२२]

"जो देश कथा–वार्ताओं का घर रहा हो जहाँ क्या दर्शन, क्या धर्म, क्या राजनीति और क्या विज्ञान सभी क्षेत्रों में कथाओं का अंबार लगा हो, जहाँ आज से सत्रह सौ वर्ष पूर्व भी गुणाढ्य के 'बृहतकथा' जैसे कथा संग्रह का निर्माण हुआ हो और जहाँ इतने प्राचीन युग में सोतदेव भट्ट के 'कथा साहित्सागर' जैसे कथा–साहित्य के अनुपम ग्रंथरत्न की रचना संभव हुई हो वहाँ यह कहना कि उन देश के निवासियों को कहानी सुनने का शौक रहा है कोई नई बात न होगी ।"[२३]

"कहानी कहना और सुनना मनुष्य का अपना स्वभाव है । कहानी मनुष्य के साथ ही जन्मी है । भारत वर्ष में कहानी का आरंभ वैदिक युग में ही हो गया था । हमारे प्राचीन वाङमय में सैंकड़ों कहानियाँ विभिन्न रूपों में बिखरी

मिलती हैं । प्राचीन कहानियाँ नीतिविषयक और उपदेश प्रधान हुआ करती थी । ऋग्वेद में यम–यमी संवाद, पुरुरवा–उर्वशी सम्बाद, उपनिषदों के रूपात्मक आख्यान, नहुष एवं ययाति के उपाख्यान तथा ऋषिमुनियों की कथाएँ भारतीय कहानी के प्राचीनतम् रूप हैं । लौकिक संस्कृत में उपदेश और नीतिप्रधान कथाओं का प्राचुर्य मिलता है । 'बुद्ध कथा मंजरीह, 'कथा–साहित्यसागर', 'पंचतंत्र', 'हितोपदेश' आदि ग्रंथ तथा मुंज–भोज विक्रमादित्य आदि के शोर्य व प्रणय की गाथाओं को लेकर लिखी गई रचनाएँ भी कहानी के ही प्राचीन रूप हैं ।''[२४]

''संस्कृत के पश्चात् पालि भाषा के 'धम्मपद' एवं 'जातक' ग्रंथों में एवं अपभ्रंश भाषाओं में बौद्ध और जैन–धर्म संबंधी अनेकानेक कथाएँ लिखी गई हैं ।''[२५]

''हिन्दी में आधुनिक कहानी के उदय के पूर्व प्राचीनकाल में संस्कृत और प्राकृत परंपरा में कथा–साहित्य की रचना हुई । इसका आरंभिक रूप काव्यमय है । इस कथा–साहित्य की एक परंपरा चारणों तथा अन्य कवियों द्वारा विकसित हुई, जिसमें ऐतिहासिक, पौराणिक कथा नायकों में कल्पना का पुट देकर उनके चरित्र–श्रवण से पुण्य का लाभ दिखाया गया ।''[२६]

''कथा–साहित्य की दूसरी परंपरा सूफियों द्वारा विकसित हुई । 'मृगावती', 'मधुमालवी', 'पद्मावत', 'चित्रावली', 'ज्ञानदीप', 'इंद्रावती' आदि ऐसे ही प्रेमाख्यानक काव्य है ।''[२७]

''हिन्दी कहानियों का एक प्राचीन रूप ''फिस'', 'वृतांत आदि के रूप में मिलता है । भारतेन्दु युगीन पत्र–पत्रिकाएँ इस प्रकार की कहानियों से भरी पड़ी है । 'सिहासन बत्तीसी', 'बेताल पच्चीसी', 'राजा भोज का सपना', 'रानी केतकी की कहानी' आदि इस प्रकार की कहानियाँ हैं ।''[२८]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संस्कृत भाषा में कथा–साहित्य की जो पद्धति प्रारंभ हुई, वह किंचित परिवर्तन के साथ हिन्दी में भारतेन्दु तक चली

आई है । ये कहानियाँ कथा, आख्यायिका, वृतांत, वार्ता, किस्सा आदि अनेक रूपों में लिखी जाती रही है । ये कहानियाँ गद्य–पद्य दोनों में लिखी जाती थीं ।

जिस प्रकार हिन्दी उपन्यास का वास्तविक उदय बँगला और अंग्रेजी के उपन्यासों से प्रभावित रहा था, उसी प्रकार हिन्दी कहानी ने भी इन दोनों भाषाओं की कहानियों से प्रभाव ग्रहण किया है ।

इस प्रकार यह काल हिन्दी कहानी का प्रयोगकाल माना जा सकता है । कहानी का वास्तविक विकास प्रेमचंद जी के कहानी–क्षेत्र में पर्दापण के साथ ही हुआ । इसलिए प्रेमचंद को केन्द्र में रखकर ही कहानी केविकास को तीन कालों में विभाजित कर सकते हैं –

पूर्व प्रेमचंद युगीन कहानी (सन् १८८२ से १९१८ तक)
प्रेमचंद युगीन कहानी (सन् १९१८ से १९३७ तक)
प्रेमचंदोत्तर युगीन कहानी (सन् १९३८ से अब तक)

❖ *पूर्व प्रेमचंद युगीन कहानी :*

इस युग को प्रसाद युग भी कह सकते हैं । सन् १९१० के बाद हिन्दी कहानी–क्षेत्र में ऐसे कई नए प्रतिभाशाली कहानीकारों का प्रवेश हुआ जिन्होंने अनेक कलात्मक कहानियाँ लिखकर कहानी के भावी विकास का समारंभ किया । जिसमें जयशंकर प्रसाद (१८९७–१९३७) उनकी पहली कहानी 'ग्राम' (सन् १९११) में 'इन्दु' में प्रकाशित हुई थी (गुलेरी की पहली कहानी) 'सुखमय जीवन' सरस्वती में प्रकाशित हुई थी । इसी समय हास्यरसपूर्ण कहानी लेखक जी. पी. श्रीवास्तव की कहानी 'कानो में कँगना' और 'बिजली' बहुत लोकप्रिय रहीं । कौशिक की पहली कहानी 'रक्षाबंधन' (सन् १९१३) में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई ।

"इसी काल में हिन्दी में एक ऐसी कहानी लिखी गई जो हिन्दी कहानी साहित्य की प्रथम महान उपलब्धि मानी गई । यह कहानी पं. चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' जो (सन् १९१५) में प्रकाशित हुई थी । बद्रीनाथ भट्ट 'सुदर्शन' ने प्रथम कहानी 'हार की जीत' (सन् १९२०) में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई थी ।"[२९] मैथिलीशरण गुप्त की 'नकली किला' (सन् १९०९) में वृंदावनलाल वर्मा की 'राखीबंद भाई' (१९०९) में प्रकाशित हुई थी ।[३०]

यह समय हिन्दी कहानीकारों के लेखनकार्य की कहानियों के विकास का आरंभ कार्य रहा है । इन्होंने हिन्दी जगत को सिर्फ श्रेष्ठ कहानियाँ नहीं दी है, पर उसके विकास की संभावनाएँ और नई दिशाएँ भी खुलने लगी थीं। इसी समय के मुख्य कहानीकारों में रायकृष्णदास, चण्डी प्रसाद, हृदयेश, गोविंद वल्लभ पंत आदि कहानीकार उभरकर सामने आये । उसी दौरान हिन्दी–कहानी–जगत में प्रेमचंद का आविर्भाव हो गया था ।

उनका उर्दू में प्रसिद्ध कहानी संग्रह सन् १९०७ में 'सोजे वतन' का प्रकाशन हुआ था । उनकी हिन्दी की प्रथम कहानी 'पंचपरमेश्वर' सन् १९१६ में प्रकाशित हुई ।"[३१]

इस चरण में विशेष रूप से आदर्शवादी भावुकतापूर्ण, यथार्थवादी, घटनापूर्ण एवं हास्यरसपूर्ण कहानियाँ लिखी गईं । हिन्दी कहानी का यह काल प्रयोगकाल माना जाता है ।

❖ *प्रेमचंद युगीन कहानी :*

हिन्दी कहानी का प्रकार और परिमाण दोनों ही दृष्टियों से वास्तविक विकास प्रेमचंद काल में ही हुआ, यह एक निर्विवाद तथ्य है । जिस प्रकार प्रेमचंद उपन्यास साहित्य के एकछत्र सम्राट बने रहे, उसी प्रकार कहानी के क्षेत्र में उनका स्थान अद्वितीय हुआ । प्रेमचंद युग कहानी–साहित्य का सुवर्णयुग है । प्रेमचंद ने सबसे पहले कहानी को यथार्थ से जोड़ा है । जो वर्ग समाज के अंग

थे और साहित्य में अछूत माने जाते थे उनको स्थान दिया । ये उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जायेगी । सन् १९१६ में प्रेमचंद की 'पंच परमेश्वर' कहानी प्रकाशित हुई । वैसे तो प्रेमचंद जी की करीब तीन सौ कहानियाँ हैं । प्रेमचंद को कहानी सम्राट इसलिए कहा जाता है कि भाव और विचार, कला और प्रचार का सुंदर समन्वय, उनकी कहानी में हमें मिलता है । उनकी कहानियों में 'बड़े घर की बेटी', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'इदगाह', 'पूस की रात', 'कफन' आदि प्रचलित समस्यामूलक कहानियाँ हैं ।

"प्रेमचंद युग के दूसरे महान कलाकार प्रसाद में हमें प्रेम और करुणा का त्याग और बलिदान का दार्शनिकता और काव्यात्मकता का भावुकता और चित्रात्मकता का प्राधान्य मिलता है । उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ, 'आँधी', 'आकाशदीप' 'पुरस्कार' आदि हैं । श्री ज्वालादत्त शर्मा की 'भाग्यचक्र', 'अनाथ बालिका', 'जनार्दन प्रसाद सा', 'द्विज' के कहानी संग्रह 'किसलय', 'मृदुदल' आदि प्रकाशित हुए । सियाराम शरण गुप्त की 'झूठ-सच' आदि उल्लेखनीय कहानियाँ हैं । इस युग के विनोदशंकर व्यास, रायकृष्ण दास, गोविंद वल्लभ पंत, शिवपूजन सहाय आदि श्रेष्ठ कहानीकार हैं । अज्ञेय जी और जैनेन्द्र जी भी इस युग में पर्दापण कर चुके थे ।"[३३]

❖ *प्रेमचंदोत्तर युगीन कहानी :*

प्रेमचंदोत्तर युग में प्रेमचंद की परंपरा के नवीन आयाम देनेवालों में जैनेन्द्र प्रमुख हैं । उन्होंने प्रेमचंद के निकट संपर्क में रहने पर भी उनका अनुसरण नहीं किया, परंतु अपने लिए नयी दिशा की खोज की । उन्होंने कहानी को घटना के स्तर से उठाकर चरित्र और मनोवैज्ञानिक सत्य पर लाने का प्रयास किया । अज्ञेय जी, इलाचंद जोशी इस धारा के प्रवर्तक रहे । इस युग में प्रेमचंद की परंपरा को आगे चलाने का श्रेय यशपाल, रांगेय राघव, उपेन्द्रनाथ अश्क, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, प्रभाकर माचवे, रांगेय राघव, यशपाल

आदि को हैं । इसी युग में कथाकारों को झक–झोरनेवाली कई महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुई । जैसे बंगाल का अकाल, द्वितीय विश्वयुद्ध, भारत–विभाजन, भारत की आज़ादी और गाँधी जी की हत्या । इसलिए इसी युग में नीति–आचार, पाप और पुण्य, श्लील और अश्लील, वस्तु और शैली आदि में घोर परिवर्तन हुआ । जैनेन्द्र की 'पाजेब', 'चारे' जोशी की 'दुष्कर्मी' अज्ञेय की 'हीलीबोन की बतरवे' भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया' आदि महत्त्वपुर्ण कहानियाँ हैं ।

❖ *नयी कहानी :*

प्रेमचंद के बाद कविता और कहानी छायावादोत्तर काल की केन्द्रीय विधा रही है । सन् १९३६ में प्रगतिशील लेखक संघ ने साहित्य को निश्चयवादी, यथार्थवादी तथा उद्देश्यपूर्ण दिशा की ओर मोड़ा, अतिशय वैयक्तिकता का स्वर बुलंद हुआ । हिन्दी साहित्य के छठे दशक में यानी सन् १९५०–६० तक की कहानियों में दो विरोधी स्वर उभरकर सामने आये । मूल्यवादी परिवेश और विघटित मूल्य का परिवेश । लंबे अरसे के बाद मुक्त देश का जो नक्शा उभर आया । वह नवीन आकांक्षाओं से जुड़ा हुआ था । हिन्दी कहानियों में इस नये उल्लास की अभिव्यक्ति हुई । जिनमें शिव प्रसादसिंह, मार्कण्डेय, मोहन राकेश, कमलेश्वर, नरेश मेहता, धर्मवीर भारती, रघुवीर सहाय, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियवंदा, निर्मल वर्मा, ज्ञान रंजन, दूधनाथ सिंह, महीपतसिंह, सुधा अरोड़ा, भीष्म साहनी, रवीन्द्र कालिया आदि कहानीकार नये रूप में अभिव्यक्ति लाये ।

स्वतंत्रता के बाद कहानी का चरमोत्कर्ष हुआ । युगीन परिस्थितियाँ बदली । कहानी साहित्य विविध धाराओं में विभाजित हुआ । जिसमें अकहानी, समांतर कहानी, सक्रिय कहानी, सहज कहानी, जनवादी कहानी, आँचलिक कहानी सचेतन कहानी आदि ।

हमारे आलोच्य साहित्यकार भीष्म साहनी छठे दशक के, बदली हुई परिस्थिति के कहानीकार हैं । वे सन् १९६५ से १९६७ तक 'नई कहानियाँ' पत्रिका के संपादक भी रहे हैं । उनका पहला कहानी संग्रह 'भाग्य रेखा' (सन् १९५३) में प्रकाशित हुआ था । आगे हम नयी कहानी और भीष्म साहनी विषय के अंतर्गत नयी कहानी का परिप्रेक्ष्य एवं कहानीकार के रूप में भीष्म साहनी का स्थान विषय पर विचार करेंगे ।

कहानी साहित्य और भीष्म साहनी :

स्वंतत्रता के बाद कहानी का अभूतपूर्व विकास हुआ । युगीन परिस्थितियाँ बदली, देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ । इनके साथ नवक्रान्ति का सपना भी जुड़ा हुआ था । लेकिन सब के सब स्वप्न घूल घूसरित हो गये । बेकारी, भूखमरी, मँहगाई, गरीबी, वस्ती–विस्फोट, मोह भंग, मूल्य–विघटन आदि समस्याएँ जहरीले नाग के समान फन फैलाकर सामने आयी । मुंशी प्रेमचंद जी ने यथार्थवादी परंपरा के जो बीज बोए थे उनकी मृत्यु के बाद वह परंपरा टूट चुकी थी । इस टूटी हुई परंपरा को फिर से जागृत करने के लिए सन् १९५० के आसपास नई पीढ़ी का आगमन हुआ । इस नई पीढ़ी के कहानीकारों में कमलेश्वर, मार्कण्डेय, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी, शिव प्रसादसिंह, अमरकान्त, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती, ज्ञान रंजन आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है ।

नये कहानीकारों ने परंपरा से हटकर कहानी का सृजन किया । नयी कहानी का नयापन, यथार्थबोध, परिवेश, संवेदना, मनुष्य की तटस्थता और शिल्प के रूप में प्रकट हुआ है । कथावस्तु, रूप सौष्ठव, नया दृष्टिकोण, सांकेतिकता, कथ्य और भाषा के आधार पर नयी कहानी और पुरानी कहानी का अंतर स्पष्ट दृष्टिगत होता है ।

❖ *नयी कहानी का नामकरण :*

साहित्य की किसी भी विधा का नामकरण अकस्मात या एक झटके के साथ प्राप्त नहीं होता । अपितु नामकरण प्रवृत्तिमूलक होता है । नई कहानी के बारे में डॉ. इन्द्रनाथ मदान का विचार है – "चयन संपादक का, मूल्यांकन नामवरसिंह का, रचनाएँ मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी, श्रीपतराय आदि सब ने मिल–जुलकर नयी कहानी को जन्म दिया । इसका पालन–पोषण किया और अंत में आलोचकों से भिड़ने को छोड़ दिया ।"[३४]

"इस प्रकार 'नयी कहानी' नाम कहानी चर्चा सहज रूप में चल पड़ा । जिसका प्रयोग सुविधानुसार कहानीकारों और आलोचकों दोनों ने ही किया ।"[३५] "कमलेश्वर और रमेश बक्षी के अनुसार नयापन दृष्टि सापेक्षता में है ।"[३६]

डॉ. सुरेश सिन्हा के अनुसार मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक स्तरीयता में ।"[३७] मार्कण्डेय के मतानुसार यह जीवन, पहलू की वर्णनात्मकता में है ।"[३८]

"सबसे पहले नयी कहानी 'नयी' के संदर्भ में डॉ. नामवरसिंह ने 'कहानी' पत्रिका में यह प्रश्न किया था कि 'नयी कविता' के समान 'नयी कहानी भी हो सकती है । तब से लेकर नयी कहानी का नाम चल पड़ा ।"[३९]

नवीन, ताजा, नव, अभिनव आदि नये के ही पर्याय हैं । 'नयी कहानी' नामकरण अपने आप में सार्थक ठहरता है । क्योंकि स्वतंत्रता के बाद बदलाव शुरु हुआ है, जो हमारी दृष्टि में नया ही है और उनका यथा तथ्य चित्रण ही नयी कहानी की विषयवस्तु है । मीरा सीकरी के शब्दों में "आज की कहानी नयी इसलिए है, क्योंकि वह बदलती चेतना का प्रतिनिधित्व ईमानदारी से कर रही है ।"[४०]

डॉ. कु. प्रेमपाल के मतानुसार "नयी कहानी का नयापन जीवन दृष्टि का नया पन है, विवेक और संयम का नयापन है । सब मिलकर नयी कहानी वास्तव में नयी कहानी है ।"[४१] इस प्रकार नयी कहानी पुरानी परिपाटी की कहानी से सर्वथा मुक्त है । इसलिए नया शब्द न विशेषण है न संज्ञा । वह

मात्र उस प्रक्रिया का द्योतक है । जो सतत प्रवहमान और हर बार नयी होती चलती है ।"[४२]

निष्कर्षतः आलोचकों, विद्वानों और कहानीकारों ने नयी कहानी के संदर्भ में विविध मत दिये हैं । जिन बदली हुई परिस्थितियाँ में हम साँस ले रहे हैं, इनका यथा तथ्य एवं संवेदनात्मक धरातल पर चित्रण नयी कहानी में हुआ और हो रहा है । भीष्म साहनी ने इन बदली हुई परिस्थितियों का यथा तथ्य चित्रण किया है ।

नयी कहानी और भीष्म साहनी :

साहनी के साहित्यिक व्यक्तित्व का आधार उनकी कहानियाँ भी हैं । इनके द्वारा रचित कहानी संग्रहों में 'भाग्य रेखा', 'पहला पाठ', 'भटकती राख', 'पट्टरियाँ', 'वाङ्चू', 'शोभायात्रा', 'निशाचर', 'पाली' हैं ।

भीष्म जी ने अपनी कहानियों में विशेष रूप से मध्यम वर्ग की कुण्ठा, विवशता, लालसा तथा अभीष्ट प्राप्ति का चित्रण किया है । श्रीपतराय के शब्दों में "भीष्म साहनी एक सधे हुए कहानीकार हैं । उनकी रचना बहुत समय तक अंतस् में घुमड़ती रहती है और जब तैयार हो जाती है, तो उसे भुलाया नहीं जाता ।"[४३]

साहनी प्राचीन और नवीन पीढ़ी के मध्य के प्रगतिशील कहानीकार हैं । नयी पीढ़ी में आधुनिक और जिजीविषाओं के मोह में, भारतीय संस्कृति का ह्रास और मूल्यों का विघटन जिस प्रकार से हो रहा है, उनका यथार्थ चित्रण उनकी कहानियों में मिलता है । इनकी कहानियाँ ऊपर से सपाट और वर्णनात्मक दिखाई देनेवाली, कहानियाँ अपने में गहरा पैनापन और व्यंग्यात्मक चुभन लिए हुए होती हैं । इनकी कहानियों के शिल्प सीधा, भाषा सरल और जिन्दगी हमारी जानी पहचानी है । व्यंग्य और करुणा भीष्म की कहानियों का प्रमुख गुण और विशेषता है ।

विघटनकारी मूल्यों को उभारने के साथ ही संघर्ष पर विजयी होने की अटूट आस्था और जीवन के प्रति निष्ठा का स्वर, इनकी कहानियों और जीवन के प्रति निष्ठा का स्वर, इनकी कहानियों में स्पष्ट सुनाई देता है । ज्यों–ज्यों समय बदलता है, हमारे मूल्य बदलते जाते हैं । न इन्सान समाज से अलग हो पाता है और न ही कभी मूल्य हीनता की स्थिति आ पाती है ।"[४४]

साहनी ने अपनी अधिकांश कहानियों में प्राचीन मूल्यों की टूटी हुई स्थिति का चित्रण किया है । जिसे उन्होंने तोड़ने का प्रयत्न नहीं किया है किन्तु एक व्यंग्य के सार पर उन्हें टूटते हुए दिखलाया अवश्य है । कांता अरोड़ा के शब्दों में "वर्गीय चेतना और संघर्ष, सत्ता–लोलुप मनुष्य का मन, अंतर्वगीय घृणा और आक्रोश स्वाभिमान और वर्गीय प्रतिस्पर्धाएँ आदि सामाजिक आलोचना की व्यंग्यात्मक पृष्ठभूमि में बिना किसी नारेबाजी का सहारा लिए साहनी की कहानियों में प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है ।"[४५]

यहाँ उनके कहानी संग्रहों में संग्रहीत प्रमुख कहानियों का संक्षिप्त विचार–विश्लेषण अभीष्ट होगा ।

३. प्रमुख कहानी – संग्रहो' का अवलोकन :

'भाग्य रेखा' : (सन् १९५३ राज कमल प्रकाशन, दिल्ली)

यह साहनी का प्रथम कहानी संग्रह है । इस कहानी संग्रह के अंतर्गत चौदह कहानियाँ, संकलित हैं । जिसमें 'जोत', 'अशांत रुहें', 'शिष्टाचार', 'अनोखी हड्डी', 'तमगे', 'क्रिकेट मेच', 'मुर्गी की कीमत', 'नीली आँखे', 'उब', 'गंगा का जाया', 'भाग्य रेखा', 'घर–बेघर', 'खून के छीटे' एवं 'घर की इज्जत' आदि हैं ।

'जोत' कहानी में किसान जीवन की मजबूरियाँ, व्यथा, करुणा, अंधविश्वास, शोषण आदि का हूबहू चित्रण हुआ है । 'शिष्टाचार' कहानी में निम्नवर्ग के लोगों का संस्कृत प्रेम व्यक्त हुआ है । 'गंगा का जाया' कहानी में मजदूर वर्ग

की त्रस्त स्थितियाँ का चित्रण किया गया है । 'उब कहानी में प्रोफेसर की मनोव्यथा का निर्देश किया गया है ।

'नीली आँखे' साहनी की प्रथम कहानी एवं प्रेरणा–स्रोत कहानी है । जिसमें प्रेम की पराकाष्टा का वर्णन है । व्यक्ति स्वातंत्र्य की भावना के मुताबिक लड़का–लड़की अपनी मर्जी के अनुसार शादी तो कर लेते हैं, लेकिन परिस्थितियों के साथ लोहा लेने की ताकत का अभाव होता है । इसी कारण से जीवन दुरुह और बोझिल बन जाता है । इस कहानी में नायिका मंगू अपने प्रेमी से कहती है – "तू अस्पताल में मजे से हैं । तुझे तो वहाँ बिस्तर भी मिलता है, मैं तो बाहर सड़क पर क्या करूँ ? मैं पैसा कहाँ से माँगू ? मुझे देता कौन है ?" इस प्रकार के प्रेम की दुहरी मनःस्थिति का वास्तविक चित्रण इस कहानी में किया गया है ।"[४६]

" 'अनोखी हड्डी' कहानी लोक–कथा पर आधारित है और मनुष्यता के गौरव को व्यक्त करती है ।"[४७]

'पहला पाठ' (सन् १९५६ राजकमल प्रकाशन, दिल्ली) :

इस कहानी संग्रह के अंतर्गत पंद्रह कहानियाँ संकलित है । जिसमें 'चीफ की दावत', 'रानी मेहता', 'भाई–बन्द', 'पहला पाठ', 'प्रणय–लीला', 'पहिचान', 'ललिता', 'अकाल मृत्यु', 'छिपे चित्र' एवं 'फूलाँ' आदि प्रमुख कहानियाँ हैं ।

नई कहानी का आधार स्तंभ कहानी हैं 'चीफ की दावत' । दावत की घटना के माध्यम से लेखक ने परंपरागत मूल्य–विघटन की परिस्थिति का यथार्थ चित्रण किया है । पाश्चात्य जीवन–दर्शन के आकर्षक मोड़ में शामनाथ अपनी परंपरागत विरासत के रूप में निरक्षर लुंज–पुंज बूढ़ी माँ को अपनी अभिजात मंडली के सामने लाने से कतराते हैं । वहीं माँ उनके जीवन के लिए अधिक उपयोगी बनकर सामने आती हैं । शामनाथ घर के फालतू सामान ठीक कर

लेता है । लेकिन दावत के समय बूढ़ी माँ का क्या होगा ? इस चिंता में पड़ जाता है । माँ के द्वारा बनाई फूलवरी के माध्यम से साहब खुश होते हैं ।

"उसी तरह 'समधी भाई रामसिंह' कहानी में अंधविश्वासों का चित्रण है । 'प्रणयलीला' कहानी में स्त्री–पुरुष की विक्षुण्ण भावनाओं का चित्रण हुआ है । 'बाप–बेटा' कहानी में किसान–जीवन की विडंबना का चित्रण किया गया है । 'ललिता' कहानी में मध्यमर्गीय परिवार की स्त्री परिस्थतियों के अनुसार रूप बदल लेती है, इसका निरूपण हुआ है ।"[४८]

'भटकती राख' (सन् १९६६ राजकमल प्रकाशन, दिल्ली):

इस कहानी संग्रह में उन्नीस कहानियाँ संकलित हैं । "जिसमें 'माता–विमाता', 'यादे', 'बीवर', 'एक रोमांटिक कहानी', 'नयी हवेली', 'खून का रिश्ता', 'बात की बात', 'लेनिन का साथी, 'सिफारिशी चिट्ठी', 'सिर का सदका', 'कुछ और साल', 'इमला', 'पासफेल', 'प्रोफेसर', 'कठघरे', 'अपने–अपने बच्चे', 'सांये', 'सुनहरी किरण' एवं 'गीता रहस्यसार नाम' ।"[४९]

इस कहानी–संग्रह की कहानियाँ करुणा, व्यंग्य और अंतरंगता से ओत–प्रोत रसमयी कहानियाँ हैं ।

'सिर का सदका' कहानी में आधुनिक नारी किस प्रकार से दुहरी जिम्मेदारी निभा सकती है । 'एक रोमांटिक कहानी' में रुकमणि एक ऐसी पत्नी है, जिसका पति के प्रति उसका आकर्षण एक भिन्न स्तर पर प्रस्तुत किया गया है । 'सिफारिशी चिट्ठी' में मध्यम वर्गीय क्लर्क त्रिलोकनाथ की विडंबना को रोचक ढंग से व्यक्त किया गया है । 'यादें' कहानी में दो वृद्धाएँ भूतकालीन स्मृतियों को याद कर अपना शेष जीवन व्यतीत कर रही हैं, उसका वास्तविक चित्रण हुआ है । जैसे 'सरीकों के लेखे', 'बेटा', 'दुनिया से जाने का वक्त आ गया ।' मैंने कहा आँखें रहते एक बार अपनी गोमा को तो देख लूँ । कौन जाने, नसीब में फिर मिलना हो या न हो, मुझे उसके पास ले चल बेटा ।"[५०]

'पट्टरियाँ' (सन् १९७३ राजकमल प्रकाशन, दिल्ली) :

इस कहानी संग्रह में चौदह कहानियाँ संकलित है – जिसमें 'अभी तो मैं जवान हूँ', 'पट्टरियाँ', 'अमृतसर आ गया', 'ललक', 'नया मकान', 'तस्वीर', 'मौका परस्त', 'जराम', 'पैरों का निशान', 'रास्ता', 'इन्द्रजाल', 'डोरे', 'ढोलक' एवं 'भगोड़ा' ।

'अमृतसर आ गया' कहानी में मानवीय क्रूर तथा दयाहीन व्यक्तित्व का चित्रण है । हिन्दू–मुस्लिम दंगों से ग्रस्त परिस्थिति का यथातथ्य चित्रण हुआ है । इस कहानी में दया, त्याग, मानवता, सद्भाव आदि मूल्यों के टूटने का चित्रण निरुपित हुआ है । पट्टरियाँ कहानी में मुख्य पात्र केशोराम के द्वारा आधुनिक जीवन में व्यक्ति की विडंबनाओं तथा जिजीविषाओं का निरूपण हुआ है । 'तस्वीर' में विधवा नारी की मनोव्यथा और क्रूरता का सजीव आलेखन हुआ है ।''[५]

'वाङ्चू' (सन् १९७८ राजकमल प्रकाशन, दिल्ली)

इस कहानी संग्रह में ग्यारह कहानियों का संग्रह है । जिसमें 'ओ हरामजादे', 'साग–मीट', 'पिकनीक', 'मालिक का बन्दा', 'गुलमुच्छे', 'खंडहर', 'वाङ्चू', 'अहं ब्रह्मस्मि', 'राधा–अनुराधा', 'त्रास' एवं 'खूंटे' ।

ओ हरामजादे कहानी विदेशी प्रवास से लौटे भारतीयों की मनःस्थितियाँ प्रस्तुत करती है । कहानी का नायक पहले विदेश में अपने को एकाकी और अजनबी अनुभव करता है । उसे वहाँ दस–बारह साल बाद स्वदेश की याद रह–रहकर सताती हैं, जिसके कारण वह स्वदेश लौट आता है । स्वदेश आने पर उसे लगता है कि भाई का प्यार नहीं मिल रहा है । इस प्रकार यह कथानक विदेश और स्वदेश दोनों की धरती पर एक परायेपन की दृष्टि से ग्रसित है ।

'वाङ्चू' कहानी का मुख्य पात्र वाङ्चू नामक एक चीनी बौद्ध भिक्षु है, परंतु गलत राजनीति दो देशों के बीच के मानवीय और सांस्कृतिक संबंधों को नहीं देख पाती हैं । मानव मूल्यों की उपेक्षा का यथार्थ चित्रण हुआ है । 'साग मीट' कहानी में नौकर वर्ग की दयनीय दशा का चित्रण हुआ है । इस प्रकार ये कहानियाँ वर्ग विशेष की अमानवीयता को स्पष्ट करती है ।[५२]

शोभायात्रा (सन् १९८३) राजकमल प्रकाशन, दिल्ली :

इस कहानी संग्रह के अंतर्गत दस कहानियाँ संकलित हैं । जिसमें 'निमित्त', 'खिलौने', 'मेड इन इटली', 'लटकाव', 'फैसला', 'रामचंदानी', 'शोभायात्रा', 'धरोहर', 'लीला नन्दलाल' की एवं अनूठे साक्षात् ।

फैंसला कहानी में न्यायाधीश शुक्ला जी की व्यथा और विडंबनाओं का यथार्थ चित्रण हुआ है । 'निमित' कहानी हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य को प्रस्तुत करती हैं । 'भटकाव' कहानी में विक्षुब्ध यौन–भावनाओं पर व्यंग्य किया गया है । 'लीला नंदलाल की' कहानी में मध्यमवर्गीय व्यक्ति की विडंबनाओं, अकांक्षाओं तथा लालसाओं का यथातथ्य चित्रण हुआ है ।[५३]

'निशाचर' सन् १९८३ (राजकमल प्रकाशन, दिल्ली)

'निशाचर' कहानी संग्रह के अंतर्गत चौदह कहानियाँ संकलित है । जिसमें 'चाचा मंगलसेन', 'कंठहार', 'सलमा आपा', 'संभल के बाबू', 'मूर्ग मुस्ल्लम', 'दिया–स्वप्न', 'जहर बरुश', 'पोखर', 'सरदारनी', 'नदामत', 'अतीत के स्वर', 'दहलीज' एवं 'विकल्प' ।

'विकल्प' कहानी में पुरुष की दुहरी मनःस्थिति का यथार्थ चित्रण हुआ है । 'सरदारनी' कहानी में हिन्दू–मुस्लिम संघर्ष और भयावह स्थिति का यथार्थ चित्रण हुआ है । कहानी में केसरों और अपनी बेटी की दयनीय स्थिति का मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रण करके लेखक ने मजदूरों की दयनीय स्थिति पर, पूँजीपति लोगों पर व्यंग्य किया है । 'सलमा आपा' कहानी में मनुष्य की अंतः

प्रेरणाओं को वेधक वाचा मिली है । एवं दो राष्ट्रों की तनाव भरी स्थिति का भी वास्तविक चित्रण हुआ है ।[५४]

'पाली' (सन् १९८९ – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली)

इस कहानी संग्रह में ग्यारह कहानियाँ संकलित हैं । जिसमें 'पाली', 'प्रादुर्भाव', 'झुटपुटा', 'देवेन', 'मरने से पहले', 'सेमिनार', 'आवाजें', 'खुशबू', 'नौसिरबुवा', 'क्षुमर' एवं 'चोरी' आदि हैं ।

'पाली' कहानी संवेदना के स्तर पर एक मास्टर पीस रचना है । अन्य कहानियों में भी विशेष रूप से मध्यमवर्गीय समाज का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत हुआ है ।[५५]

निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि भीष्म साहनी एक सफल कहानीकार हैं । उन्होंने मध्यमवर्गीय परिवेश का यथातथ्य निरूपण अपनी कहानियों के अंतर्गत किया है । उन्होंने गहराई में जाकर इन समस्याओं की जड़ को टटोलने का भी प्रयास किया है । उन्होंने अपनी अधिकांश कहानियों में संस्कृति के प्रति अधिक लगाव प्रदर्शित किया है । प्रगतिवादी दौर के लेखक होते हुए भी इनकी कहानियों में मानव–संवेदना का अत्यंत गंभीर और गाढ़ा रूप मिलता है । उन्हें अपनी कहानियों में सामाजिक विषमता, सांप्रदायिक संघर्ष, मोहान्धता आदि की ओर बार–बार संकेत दिया है जो मानव जीवन के विकास में बाधक है ।

साहनी ने विशेषतः मध्यमवर्गीय जीवन–मूल्यों पर प्रहार किया है । इन्होंने व्यंग्य और तीखेपन से कृत्रिमता तथा खोखलेपन को उभारा है । डॉ. वासुदेव शर्मा के शब्दों में ''भीष्म साहनी की कहानी समाजगत चिंतन के आधार पर व्यक्ति की आत्म कहानी है । जो पूरे भारतीय समाज की संस्कृति तथा सभ्यता को उजागर करती है ।[५६]

इनकी कहानियों की रचना–प्रक्रिया, सरल, सहज और सपाट होने का आभास होती है । वे वैयक्तिक और सामाजिकता के बारे में पूरी तरह सजग

दिखाई देते हैं । उनकी कहानियाँ वर्तमान युग के साथ गतिशील हैं और इसमें संदर्भो की विविधता है आयामों की नहीं । उन्होंने आज के विषम परिवेश में जी रहे व्यक्ति की संगतियाँ, विसंगतियाँ तथा विद्रूपताओं का चित्रण किया है । इन सब विशेषताओं के कारण नई कहानी में साहनी का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है । जिस पर विशेष विचार हम अगले अध्याय में करेंगे ।

४ उपन्यास की परिभाषा, उद्‌भव एवं विकास और भीष्म साहनी

"वर्तमान युग को 'वैज्ञानिक युग की संज्ञा दी गई हैं । सब बातों को तार्किक ढंग से सोचना, उन्हें क्रमबद्ध युक्ति युक्त ढंग से कहना आज के युग की विशेषता है । विज्ञान की उपलब्धियों के साथ ही गद्य का उद्‌भव और उत्कर्ष हुआ । आज विज्ञान की चरमावस्था में गद्य का भी चरमोत्कर्ष है । भावोन्मेष से यदि कविता का जन्म होता है, तो विचार गांभीर्य में गद्य का परिमार्जन होता है । पद्य के उत्कर्ष में एक ओर लेख, निबंध, प्रबंध की रचना होती है तो दूसरी ओर कहानी उपन्यास आदि की रचना होती है । गद्य के चरमोत्कर्ष में ही उपन्यासयुग का चरमोत्कर्ष होता है । अतः विज्ञान के कारण आज का युग गद्य का रहा है और उपन्यास का बोल-बाला है । आज साहित्य में उपन्यास का स्थान मूर्धन्य है । उपन्यास की सर्वोपरीता में ही उसकी लोकप्रियता की मात्रा दृष्टिगत होती है ।"[५७]

स्वतंत्रता के बाद गद्य की अन्य विधाओं का चरमोत्कर्ष हुआ है । इन सभी विधाओं में उपन्यास सबसे अधिक लोकप्रिय एवं सशक्त विधा रही हैं । वर्तमान समय में उपन्यास विधा की जितनी अधिक उन्नति हो रही है, उतनी किसी और विधा की नहीं । इसका मूल कारण यह है कि उपन्यास का संबंध मानव-जीवन से हैं । मानव-चरित्र एवं उनके रहस्य उपन्यास में प्रधान है । उपन्यास की विस्तृत फलक पर चर्चा करते हुए विद्वानों ने ठीक ही कहा है – "यह गद्य साहित्य का अन्यतम रूप है, जिसका आधार कथा है – चाहे

वह सीधे मनुष्य की हो या मनुष्येत्तर जीव या निर्जीव प्रकृति का । वह सच्ची हो या कल्पित, उसे उपस्थित करने में कल्पना का प्रयोग आवश्यक है, कुतूहल की सृष्टि तथा मानवीय मनोपत्रों के उद्दीपन द्वारा रोचकता और किसी नीति या सिद्धांत संबंधी विचारों की उत्तेजना द्वारा इसमें गरिमा का समावेश वांछनीय है ?"[५८] उपन्यास जीवन का चित्र है, प्रतिबिंब नहीं ।

"उपन्यास एक प्रकार का जेबी थियेटर हैं । इसके लिए घर से बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है । उपन्यासकार विश्वामित्र की सी सृष्टि बनाता है, किन्तु ब्रह्मा की सृष्टि के नियमों से भी बधा रहता है । उपन्यास में मनुष्य की जन्मदत प्रवृत्तियाँ, सुख–दुःख, प्रेम, ईर्ष्या, आशा–अभिलाषा, चरित्र के उत्थान–पतन आदि का वास्तविक चित्रण करता है ।"[५९]

किसी भी परिवर्तित होती हुई साहित्यिक विधा को पूरी मात्रा में बाँधना कठिन कार्य है । उपन्यास के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ है । भिन्न–भिन्न विद्वानों ने तत्त्वो, परिवेश, कथ्य, शिल्प आदि को ध्यान में रखकर उपन्यास को परिभाषित करने का प्रयास किया है । परंतु आज तक ठोस, अंतिम परिभाषा नहीं बन पाई है । क्योंकि उपन्यास पूर्णतः गतिशील विधा है । फिर भी हम इस पर अवलोकन करेंगे –

उपन्यास की परिभाषाएँ :

"उपन्यास शब्द का मूल अर्थ है उप+न्यास अर्थात् निकट रखी गई वस्तु । उपन्यास आस्–अच धातु तथा प्रत्यय आदि के योग से बना है । किंतु आधुनिक युग में इसका प्रयोग साहित्य के ऐसे रूप विशेष के लिए होता है, जिसमें दीर्घ कथा का वर्णन गद्य में किया जाता है ।"[६०]

"प्राचीन काव्य शास्त्र में इस शब्द का प्रयोग नाटक की 'प्रतिमुख संधि' के एक उपभेद के रूप में किया गया है । भरत मुनि ने इसके लिए 'उपपतिकृतो ह्यर्थ' तथा 'उपन्यासः प्रसाद्नम' आदि विशेषण प्रस्तुत किए हैं –

जिसका अर्थ होता है – किसी अर्थ को युक्तिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करनेवाला तथा प्रसन्नता प्रदान करेनवाला ।''[६१]

''अमरकोष में इस शब्द की व्याख्या इस प्रकार है – ''उपन्यास : प्रसादनम्'' इसका अर्थ उन रचनाओं से है, जो मानव–आत्मा को प्रसादित, आनंदित करें ।''[६१]

''मनुस्मृतिकार के अनुसार उपन्यास का अर्थ विचार है – 'विश्व जन्यमिम' पुण्यमुपन्यासं संनिबोधन । कालिदास इस शब्द का प्रयोग अभिव्यक्ति के अर्थ में करते हैं 'आत्मनः उपन्यासपूर्वकम्' ।''[६३]

उपर्युक्त विवेचन से तो इतना स्पष्ट है कि साहित्यिक विधा के रूप में प्रयोगकर्ता का इस परंपरा से परिचय रहा होगा । क्योंकि आज का उपन्यास मनोरंजन का साधन है । जीवन के युक्ति–युक्त रूप में पाठकों के सम्मुख रखता है । इसका यह नाम पूर्णतः सार्थक है ।

अंग्रेजी भाषा–साहित्य में उपन्यास शब्द के लिए 'नॉवेल' शब्द का प्रयोग मिलता है । 'नॉवेल' शब्द इटालियन के 'नॉवेल' से निकला है । इस शब्द से एक नवीन प्रकार की प्रकूथन–प्रधान रचना का बोध होता है ।

भारत की प्राचीन भाषाओं में इस शब्द का प्रयोग भिन्न–भिन्न रूप में मिलते हैं । जैसे मराठी में यह शब्द 'कादम्बरी', बंगला भाषा में 'कथा' या 'आख्यायिका', तमिल भाषा में 'व्यासयान' या 'भाषण', गुजराती में 'नवलकथा' शब्द का प्रयोग होता है ।

''उपन्यास शब्द का वर्तमान अर्थ में सर्वप्रथम प्रयोग १६वीं शताब्दी में भूदेव मुकर्जी ने किया है ।''[६४]

अब हम उपन्यास के संबंध में पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं पर विचार करेंगे । पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं पर विचार करेंगे ।

पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाएँ :

"एच.जी. वेल्स ने उपन्यास की एक रिक्त मस्तिष्क और रिक्त समय के उपयोगी मनोरंजन की वस्तु माना है । उन्होंने अपनी परिभाषा में मस्तिष्क का दर्द और परिवेश की ओर संकेत किया गया है ।"[६५]

न्यु इंगलिश डीक्सनरी के अंतर्गत – "उपन्यास वह बड़े आकार का गद्यमय आख्यान या वृतांत है, जिसके कथानक में ऐसे पात्र और कार्य चित्रित होते हैं, जो वास्तविक जीवन के प्रतिनिधि होने का दावा करते हैं ।"[६६] इस परिभाषा में उपन्यास के आकार एवं प्रकृति पर निर्देश हुआ है ।

यूरोपीय विद्वान राल्फ फाल्क के मतानुसार "उपन्यास केवल गद्य में लिखी हुई कथा ही नहीं हैं – उपन्यास कला का प्रथम गद्य रूप है, जो मानव को समग्रता से अभिव्यक्त करने की चेष्टा करता है ।"[६७]

अर्नेस्ट ए. बेकर के अनुसार "उपन्यास कल्पित आख्यान द्वारा जीवन की व्याख्या करता है ।"[६८] उन्होंने कल्पित आख्यान द्वारा जीवन की व्याख्या माना है ।

वेस्ट के मतानुसार "उपन्यास एक ऐसा काल्पनिक दीर्घाकार एवं गद्यात्मक आख्यान है, जिसमें एक ही कथानक के अंतर्गत यथार्थ जीवन के निरूपण का प्रयास पात्रों और अनेक क्रिया कलापों का चित्रण हो ।[६६]

इस प्रकार पाश्चात्य विद्वानों ने मानव जीवन और उसके चारित्रिक द्वंद्व तथा रचना कालीन समाज और यथार्थ चित्रण पर बल दिया है । इन विद्वानों ने उपन्यास की काल्पनिक कथा को स्वीकारा है, और मनोरंजन के साथ–साथ, जीवन की व्याख्या को भी आवश्यक माना है ।

भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ :

आधुनिक उपन्यास के संघर्ष के महेन्द्र चतुर्वेदी का मानना है कि "उपन्यास संक्षेप में वह कल्पनात्मक गद्य साहित्य रूप है, जिसमें वास्तविक जीवन

का प्रतिनिधित्व करनेवाले चरित्रों एवं व्यापारों को कार्य कारण श्रृंखलाबद्ध एक अपेक्षाकृत विस्तृत कथानक के द्वारा निरुपित किया जाय और इस प्रकार मानव जीवन के सत्य की रसात्मक अभिव्यक्ति का प्रयत्न किया जाय।"[७०]

इस प्रकार उपन्यास मनुष्य जीवन का वास्तविक प्रतिनिधित्व करता है। जिसका कथानक विस्तृत होता है।

उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद जी ने उपन्यास की परिभाषा देते हुए लिखा है – "मैं उपन्यास को मानव–चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव–चरित्र पर प्रकाश डालना एवं उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व हैं।"[७१] इससे स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यास मानव–जीवन या उसके चरित्र का विश्वसनीय चित्र होता है। उपन्यास की कथावस्तु के केन्द्र में मनुष्य है। मनुष्य के जीवन में होनेवाले कार्य–कारण संबंधों को उपन्यासकार व्यक्त करता है। इसमें यह काल्पनिक घटनाओं की सहायता लेता है।

डॉ. देवराज उपाध्याय के अनुसार "उपन्यास गद्य साहित्य का अन्यतम् रूप है जिसका आधार कथा है चाहे वह सीधे मनुष्य की हो या मनुष्येत्तर जीव, और निर्जीव प्रकृति की, चाहे वह सत्य हो या कल्पित।"[७२] इस परिभाषा में उपन्यास का संबंध मनुष्य से जोड़ते हुए उपन्यास को कथा साहित्य का अन्यतम् रूप माना है। व चर–अचर का भेद नहीं मानते पर जहाँ सच्ची या कल्पित कथा हो उसे ही उपन्यास मानते हैं।

शिवदानसिंह चौहान के मतानुसार "अनेक विद्वानों ने उपन्यास की परिभाषा देते हुए उसे आधुनिक युग का महाकाय बताया है। इसीलिए कि इस रूप विधान के अंतर्गत रचनाकार को आधुनिक युग की संश्लिष्ट वास्तविकता के अनुरूप ही विषयवस्तु, कथानक, चरित्र–चित्रण और पात्रों की मनोवैज्ञानिक स्थितियों और प्रतिक्रियाओं, समग्र जीवन को कलात्मक रूप से प्रतिबद्ध करने का एक ऐसा साधन या माध्यम प्राप्त हुआ है।"[७३]

बाबू गुलाबराय ने "उपन्यास कार्य–कारण श्रृंखला में बँधा हुआ वह गद्य कथानक है, जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेचीदगी के साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्तियों से संबंधित वास्तविक काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सत्य का रहस्यात्मक उद्घाटन किया जाता है ।"[७४] ऐसा माना है ।

उन्होंने उपन्यास में कार्य–कारण का संबंध बताते हुए, मनुष्य के वास्तविक और काल्पनिक घटना के माध्यम से सत्य का सरस उद्घाटन माना है ।

श्याम सुंदरदास ने उपन्यास की परिभाषा देते हुए कहा है कि – "मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा को उपन्यास कहते हैं ।"[७५] वे उपन्यास को मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा मात्र मानते हैं । इन्होंने उपन्यास को जीवन और कविता के मध्यस्थिति माना है । उनका मानना है कि "उपन्यास एक और जीवन से और दूसरी ओर कविता से संबंधित हैं । इन्हें उपन्यास के दो छोर कह सकते हैं ।"[७६]

डॉ. रामचंद्र तिवारी ने उपन्यास को मानव जीवन से संबंधित बताते हुए लिखा है कि "उपन्यास मूलतः मनुष्य के जीवन में साहित्यकार की पड़ी हुई दिलचस्पी है ।"[७७]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार "वर्तमान जगत में उपन्यासों की बड़ी शक्ति है – लोक या किसी जन समाज के बीच काल की गति के अनुसार जो मूढ़ और चिंत्य परिस्थितियाँ खड़ी होती रहती हैं, उनको गोचर रूप में सामने लाना और कभी–कभी निस्सार का मार्ग भी प्रत्यक्ष करना उपन्यास का कार्य है ।"[७८]

डॉ. राम शोभित के अनुसार "उपन्यास आधुनिक युग का अति समादृत रूप है ।"[७९]

उपर्युक्त परिभाषाओं के विवेचन से यह स्पष्ट है कि वास्तव में कोई भी परिभाषा अंतिम एवं परिपूर्ण नहीं है । उपन्यास की संपूर्ण अभिव्यक्ति देने में

समर्थ नहीं है । निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि उपन्यास कायम रूप से गतिशील विधा है, और मानव जीवन का समग्र रूप से चित्रण करनेवाली कथा–साहित्य की विधा है ।

उपन्यास का उद्‌भव एवं विकास :

"मनुष्य जन्म से ही संघर्षमय एवं क्रियाशील प्राणी है, उसके लिए चुपचाप बैठे रहना असंभव है । वह कुछ करने और कुछ उत्पन्न करने के लिए व्याकुल रहता है । मनुष्य मात्र के स्वभाव की मर्यादा एवं विशेषता भी यह है कि वह अपने भाव एवं मर्यादा को छिपा नहीं सकता । शायद मनुष्य की इसी वृत्ति के मुताबिक ही प्राचीन सत्‌शास्त्रों का निर्माण हुआ होगा । मनुष्य की इस वृत्ति ने ही साहित्य को जन्म दिया ।"[८०]

स्वतंत्रता के बाद के युग को हिन्दी साहित्य में विद्वानों ने 'आधुनिक युग' की संज्ञा से विभूषित किया है । जिसको हम आगे देख सकते हैं । गद्य का आर्विभाव इस युग की सबसे बड़ी देन रही है । अतः उपन्यास गद्य साहित्य इस युग की देन है । कुछ लोगों का भ्रम है कि इस विधा का जन्म विदेशों में हुआ और विदेशों में से भारत ने अपना लिया । कुछ विद्वान उपन्यास को संस्कृत साहित्य की 'कादम्बरी', 'दशकुमार चरितम्', 'हितोपदेश' एवं 'पंचतंत्र' से जोड़ते हैं ।[८१] "अगर हम उपन्यास साहित्य का अभ्यास करेंगे तो पता चलेगा कि "उपन्यास साहित्य वर्तमान परिस्थितियों की उपज हैं ।"[८२]

१९वीं सती के उत्तरार्ध की भारत की स्थिति–परिस्थिति को देखते हुए लगता है कि अंग्रेज लोग यहाँ जम चुके थे । भारतीय जनता इससे त्रस्त हो चुकी थी । फल स्वरूप उसके शासन के विरुद्ध बगावत, विप्लव, क्रांति आदि स्वर गूँजना शुरु हो गया था । यूरोप की वैज्ञानिक एवं औद्योगिक क्रांति के फल स्वरूप एक नई लहर उत्पन्न हुई । जिसका प्रभाव विश्व साहित्यदर्शन, कला, जीवन एवं अन्य पर भी पड़ा । जिससे भारतीय जीवन दर्शन, साहित्य एवं कला

में भी परिवर्तन हुए । इस परिवर्तन ने जीवन और समाज के क्षेत्र में विषम परिस्थितियों ने जन्म दिया । जिसका साहित्य के क्षेत्र में व्यापक प्रभाव पड़ा । मानव जीवन तथा समाज की इन जटिलताओं, विषमताओं तथा नवीन समस्याओं को चित्रित कर एवं उनका समाधान प्रस्तुत कर, उन्हें आदर्श रूप में प्रस्तुत करने के लिए तथा मानव–कल्याण एवं मानव–हित की भावना का लोगों में संचार करने के लिए, उस समय एक नवीन साहित्य रूप की आवश्यकता महसूस होने लगी । इस अभाव की पूर्ति के रूप में उपन्यास का जन्म हुआ । अपनी इस अभिव्यक्ति के लिए शायद उपन्यास ने प्रेरणा कहीं से भी क्यों न प्राप्त की हो ।

उपन्यास का वास्तविक विकास संस्कृत, बंगला एवं अंग्रेजी भाषा के संमिश्रित साहित्य से हुआ ।

उपन्यास शब्द से आज हम जो अर्थ समझते हैं, वह आधुनिक साहित्य का नवीनतम रूप है । एक लम्बी अवधि तक भारत में अंग्रेजी शासन के फलस्वरूप पाश्चात्य साहित्य का जो प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ा है, हिन्दी उपन्यास संभवतः उसी का शुभ परिणाम है ।

उपन्यास अंग्रेजी शब्द 'नॉवेल' का हिन्दी पर्याय माना जाता है । कुछ विद्वान 'नॉवेल' शब्द की उत्पति भी संस्कृत साहित्य से मानते हैं ।[८३] नोवेल का अर्थ है 'नवलह, 'नया' यह शब्द जिस नवीन अवं विशिष्ट साहित्य रूप के लिए प्रयुक्त होने लगा, उसे ही उपन्यास की संज्ञा दी गई ।[८४]

इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि उपन्यासों को उद्‌भव काल से ही कटु आलोचना भी सहनी पड़ी । संभवतः यही कारण रहा होगा कि साहित्य की इस नई विधा को अपनाने में शर्म महसूस की जाती रही । लेकिन अपनी कतिपय विशेषताओं के कारण उपन्यास आज सबसे अधिक पढ़ा जाने वाला साहित्य है । डॉ. त्रिभुवन सिंह के शब्दों में 'मानव स्वभाव के विविध पक्षों का सर्वांगीण ज्ञान, विभिन्न जितनी सुंदर व्याख्या एवं चित्रण अत्यंत

चुनी एवं सशक्त भाषा में उपन्यासों के माध्यम से संभव है उतनी विश्व के किसी भी अन्य साहित्य रूप के माध्यम से संभव नहीं ।"[८५]

भारत में १९वीं शती में उसके उद्भव की परिस्थितियाँ अनुकूल बन गई थी । संस्कृत की कथा आख्यायिकाओं का प्रचलन, मध्ययुग में मुस्लिम सभ्यता से संपर्क फलस्वरूप संस्कृत और फारसी के प्रेमाख्यानों शिक्षित वर्ग का उदय, बंगला उपन्यासों एवं अंग्रेजी नॉवेल के सम्मिलित प्रभाव के फल स्वरूप प्रारंभिक हिन्दी उपन्यास लेखकों का कथा–रचना संसार निर्मित हुआ था । अपने क्रमिक विकास के फलस्वरूप आज हिन्दी उपन्यास अधिक लोकप्रिय एवं सशक्त विद्या बन चुकी है ।

उपन्यास की लोकप्रियता एवं विशेषता के कारण अनेक विद्वानों मे उपन्यास विधा को "आधुनिक युग का महाकाव्य स्वीकार किया है । उपन्यास को महाकाव्य मानने का आधार यही है कि जीवन के संपूर्ण पहलुओं की झाँकी इनमें दृष्टिगत होती है ।"[८६]

हिन्दी का उपन्यास साहित्य वह पौधा है, जिसे यदि सीधे पश्चिम से नहीं लिया गया है तो उसका कलम बंगला से तो लिया ही गया था, न कि संस्कृत के कथाकार सुबन्धु, दण्डी, बाण की लुप्त परंपरा पुनःजीवित की गई थी । हिन्दी उपन्यास का जनक भारतेन्दु युग ही रहा था । इसकी परंपरा वहीं से आरंभ होती है ।"[८७]

जिस समय हमारे देश में राष्ट्रीय जागरण की लहर उठी और हमारा अंग्रेजी शिक्षा–प्राप्त वर्ग पाश्चात्य साहित्य और संस्कृति के संपर्क में आया तो उस समय तक यूरोपीय उपन्यास साहित्य का अधिक विकास हो चुका था, परंतु फिर भी हिन्दी में उपन्यासों का विकास केवल पाश्चात्य उपन्यासों की देखा–देखी से नहीं हुआ और न पाश्चात्य देशों के श्रेष्ठ उपन्यासों की परंपरा से ही प्रेरणा ली गई, और न किसी लेखक ने किसी महान पाश्चात्य उपन्यास के पैमाने पर हिन्दी में प्रयोग करने का साहस ही किया । हिन्दी से पहले बँगला में अच्छे

उपन्यासों की रचना शुरु हो गई थी । इसीलिए उनकी देखा–देखी में हिन्दी में भी उपन्यास लिखे गए । साथ ही ढ़ेर के ढ़ेर बंगाली उपन्यासों का अनुवाद भी किया गया ।"[८८]

ये प्रारंभिक प्रयोग प्रेमचंद के आगमन तक बदस्तूर जारी रहे, और हिन्दी के उपन्यासकार आचार, धर्म, नीति और समाज सुधारक भावना से उपदेशात्मक या केवल मनोरंजन के लिए तिलस्मी और ऐयासी उपन्यास लिखते रहे । उनमें से कोई उपन्यास साहित्य की स्थायी संपदा बनाने योग्य नहीं है । अतः प्रेमचंद को वह प्रौढ़ता, गरिमा और अर्थवता प्रदान की जो बंकिम, रवीन्द्र और शरत् की कृतियाँ ने बंगला साहित्य को या महान पाश्चात्य लेखकों ने यूरोपीय उपन्यासों को प्रदान की थी । उपन्यास का वास्तविक विकास प्रेमचंद के आगमन से ही शुरु होता है । वस्तुतः प्रेमचंद से ही होता है । इसीलिए आचार्य नंददुलारे बाजपेयी का कथन है – "सन् १८८२ से लेकर सन् १९१८ तक हिन्दी उपन्यास का आरंभिक और संक्राति काल रहा है । इस आरंभिक युग को पार करते ही हम हिन्दी उपन्यासों के उस नये युग में प्रवेश करते हैं, जिसका शिलान्यास प्रेमचंद जी ने किया ।"[८९]

डॉ. कैलाश प्रकाश ने अपने शोधग्रंथ में निम्न प्रकार से उपन्यास साहित्य का काल विभाजन किया है ।[९०]

(१) पूर्व प्रेमचंद युगीन उपन्यास (सन् १८७७ से १९१८)

(२) प्रेमचंद युगीन उपन्यास (सन १९१८ से १९३६)

(३) प्रेमचंदोतर उपन्यास (सन् १९३६ से अब तक)

पूर्व प्रेमचंदयुगीन उपन्यास :

हिन्दी उपन्यास का वास्तविक प्रारंभ भारतेन्दु ने ही किया था । परंतु असमय में ही उनका स्वर्गवास हो जाने के कारण वह पूरा न हो सका । उन्होंने 'एक कहानी कुछ आपबीती कुछ जग बीती' नामक एक उपन्यास लिखना

आरंभ किया था । वह आत्मकथात्मक अधूरा उपन्यास है । उन्होंने 'पूर्ण प्रकाश' और 'चंद्रप्रभा' का अनुवाद भी किया था ।

हिन्दी साहित्य का वास्तविक मौलिक उपन्यास किसको माना जाय सचमुच एक विवाद का प्रश्न है । आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने पं. श्रद्धाराम फुल्लगौरी की रचना 'भाग्यवती' को हिन्दी का प्रथम उपन्यास कहा है । जो सन् १८७७ में प्रकाशित हुआ था । यह एक शिक्षाप्रद उपन्यास है । परंतु शुक्ल जी सन् १८८२ में लिखा गया 'परीक्षा गुरु' को भी मानते हैं । शायद शुक्ल जी कथावस्तु और वर्णन प्रणाली की दृष्टि से सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास स्वीकारते हैं ।

डॉ. श्री कृष्णलाल देवकीनंदन खत्री का सुप्रसिद्ध उपन्यास 'चंद्रकान्ता' (सन् १८९१) को मानते हैं । शिवनारायण श्रीवास्तव हिन्दी का पहला उपन्यास इंशाअल्लाखाँ रचित 'रानी केतकी की कहानी' को मानते हैं ।"[६१]

शिवदानसिंह चौहान हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास 'परीक्षा गुरु' को ही मानते हैं ।"[६२] हिन्दी उपन्यास कोश के संपादक गोपालराय का मानना है कि पं. गौरीदत्त द्वारा लिखित 'देवरानी जेठानी की कहानी' हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास है, जो सन् १८७० में प्रकाशित हुआ था ।

"संक्षेप में हम कह सकते हैं कि हिन्दी का प्रथम सफल और मौलिक उपन्यास लाला श्री निवास दास का 'परीक्षा गुरु' है, जिसका 'भारतेन्दु पत्रिका' ने रणधीर और प्रेम मोहिनी का सहोदर कहकर स्वागत किया था ।"[६४]

डॉ. प्रतापनारायण टंडन का मत है –"हिन्दी में मौलिक उपन्यासों की परंपरा का प्रवर्तन करनेवाले श्री निवासदास ही हैं । उन्होंने 'परीक्षा गुरु' नामक उपन्यास लिखा है जो अपने विषय की एक नवीन कृति थीं ।"[६५]

हिन्दी उपन्यास साहित्य का प्रथम उत्थान अनुवाद से शुरु होता है । जिसमें रामकृष्ण वर्मा उर्दू और अंग्रेजी के कुछ अनुवाद कर चुके थे । जैसे 'ठग वृतांतमाला' (सं. १९४६), 'पुलिस वृतांतमाला' (१९४७), 'अकबर' (१९४८)

आदि बाबू कार्तिक प्रसाद खत्री ने 'इला' (१९५२) और 'प्रेमीला' (१९५३), बाबू गोपालराम का 'चतुर चंचला' (१९५०), 'भानमती' (१९५१), बाबू गंगाप्रसाद गुप्त का 'हलचल', बाबू रामचंद्र वर्मा का 'छत्रसाल' आदि उत्कृष्ट उपन्यासों का हिन्दी में अनुवाद हुए । इस युग की सीमा रेखा सन् १८७७ से १९०० ई. तक माननी चाहिए ।[९६]

पहले मौलिक उपन्यास लेखक, जिनके उपन्यासों ने पाठकों के हृदय पर काल का जादू किया वह है देवकीनंदन खत्री । फारसी और उर्दू से इस परंपरा को हिन्दी में लाये । उन्होंने 'चंद्रकान्ता' और 'चंद्रकान्ता संतति' (सन् १८१७) में लिखे । बालकृष्ण भट्ट के 'नूतन ब्रह्मचारी' (१८८३), राधा कृष्णदास का 'निःसहाय हिन्दू' (१८९०), कार्तिक प्रसाद खत्री का 'जया' (१८८६), बाल मुकुन्द गुप्त का 'कामिनी' (१८९८), लज्जाराम मेहता का 'धूर्त रसिकालाल' (१८९४), राम गुलाम का 'सुवाया', रत्नचंद्र चकीड़र का 'नूतन चरित', देवदत का 'सच्चा मित्र' आदि ने ऐयारी, जासूसी, रोमांचकारी, सामाजिक एवं उपदेश प्रधान उपन्यास लिखे ।[९७]

इस युग में किशोरीलाल गोस्वामी ने सामाजिक, ऐतिहासिक तथा तिलस्मी ढंग के उपन्यासों की रचना की । उन्होंने पाँच दर्जन से भी अधिक उपन्यास लिखे जिसमें 'तारा', 'रजिया बेगम', 'लवंग लता' आदि सुप्रसिद्ध उपन्यास है ।

गोपालराम गहमरी ने दो सौ से भी अधिक उपन्यास लिखे जिसमें 'देवरानी-जीठानी', 'जासूस की चोरी', 'अंधे की आँख', आदि प्रचलित उपन्यास हैं ।

इस युग के अन्य उपन्यासकारों ने मदन मोहन पाठक, चन्द्रशेखर पाठक, जयरामदास गुप्त, काशीप्रसाद, लक्ष्मी नारायण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय, रामनरेश त्रिपाठी आदि प्रमुख उपन्यासकार है । इस युग में फिर से अनुवाद की परंपरा भी वेग के साथ आगे बढ़ी थी ।

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि इस काल में कल्पना की अपेक्षा को महत्त्व मिला था । वास्तव में पूर्व प्रेमचंदीय युग जन्म की अवस्था पार करके विकास के पथ पर अग्रसर हो रहा था । शैली का नवीन प्रयोग ही इनकी विशेषता मानी जा सकती है ।"[६८] वास्तव में यह युग पुनर्जागरण और नवजागरण का युग था । इस युग में उपन्यास साहित्य की रचना नवीन मूल्यों एवं पुराने मूल्यों की अभिव्यक्ति के लिए आरंभ हुई थी । इनकी रचनाओं में सामाजिक उत्थान के उद्देश्य निहित थे ।

पूर्व प्रेमचंद युग आरंभिक विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है । इस युगीन परिस्थितियों ने आगे चलकर प्रेमचंद को उपन्यास रचना के लिए पृष्ठभूमि तैयार की ।

प्रेमचंद युगीन उपन्यास :

प्रेमचंद के आगमन के साथ ही हिन्दी उपन्यास–साहित्य को एक नई दिशा दृष्टि संपन्न हुई एवं नये युग का श्री गणेश हुआ । प्रेमचंद के पूर्व तक हिन्दी उपन्यास मानो किसी अविकसित कलिका की भाँति मौन, निःस्पंद एवं चेतना हीन सा रहा था, दिवाकर की प्रथम रश्मियों की भाँति प्रेमचंद की पावन कला का पुनीत स्पर्श पाकर मानो वह जाग उठा, रिवल उठा और मुस्कराने लगा । राजा–रानियों और सेठ–सेठानियों के चार दीवारों में बंद रहनेवाला कथानक जन साधारण की लोकभूमि में उन्मुक्त विचरण करने लगा । लौह मूर्तियों की भाँति स्थिर रहनेवाला या कठ्पुतलियों की भाँति लेखकों के मौन संकेतों पर अस्वाभाविक गति से दौडने, फूदकने वाले पात्र, माँसल, सजीव ओर व्यक्तित्व संपन्न होकर सामान्य मनुष्यों के रूप में आत्म प्रेरणा से परिचालित होते दिखाई पड़ने लगे । इसी प्रकार कथोपकथन, देशकाल, शैली, उद्देश्य, रस अन्य औपन्यासिक तत्त्वों का विकास प्रथम बार प्रेमचंद जी की कृतियों में हुआ ।

उन्होंने केवल सस्ते मनोरंजन के स्थान पर जीवन की ज्वलंत समस्याओं को अपनी कला का लक्ष्य बनाया ।[९९]

प्रेमचंद की उपन्यास–यात्रा आदर्शवाद से यथार्थवाद तक की मंज़िल तय करने का इतिहास है ।

प्रेमचंद का असली नाम धनपत राय था । नवाब राय के नाम से उन्होंने सन् १९०५ के लगभग उर्दू में लिखना शुरु किया था । उन्होंने उर्दू में (सन् १९०५–०६ ई.स.) के लगभग 'जलाल इसार' और 'हेमखुर्मा व हमसाब' दो लघु उपन्यास लिखे थे । बाद को ये उपन्यास हिन्दी में 'वरदान' और 'प्रतिज्ञा' नाम से प्रकाशित हुए ।[१००]

हिन्दी में उनका पहला 'सेवासदन' (सन १९१८) में 'वरदान' (सन १९२०) में, 'प्रेमाश्रम' (१९२१) में 'निर्मला' (सन १९२२) में, 'काया कल्प' (सन १९२४) में, 'रंगभूमि' (सन १९२८) में, 'प्रतिज्ञा' (सन १९२९) में, 'गबन' (सन १९३१) में, 'कर्मभूमि' (सन (१९३२) में और 'गोदान' (सन १९३६) में प्रकाशित हुए ।

प्रेमचंद कालीन क्रियाशीलता और उत्कर्ष के फलस्वरूप अनेक छोटी बड़ी प्रतिभाएँ सजग होकर हिन्दी के उपन्यास साहित्य का भंडार भरने लगी । इनमें जयशंकर प्रसाद ने 'कंकाल' (सन १९२९) में, 'तितली' (सन १९३४) में और 'इरावती' उनका मरणोतर प्रकाशन (सन १९४०) में आदि । शिवपूजन सहाय ने देहाती दुनिया (सन १९२५) में चतुरसेन शास्त्री ने 'हृदय की परख' (सन १९१८) में 'व्यभिचार', 'अमर अभिलाषा', 'वैशाली की नगरवधू' आदि विश्वंभर शर्मा, 'कौशिक' ने 'माँ', 'भिखारिणी', पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'दिल्ली का दलाल' (सन १९२७) राधिका रमण प्रसाद सिंह ने 'तरंग' (सन १९२१), वृंदावनलाल वर्मा का 'गढ़ कुण्डार' एवं 'विराटा की पद्मिनी', भगवती बाजपेयी ने 'मिट्टी चुरकी' (सन १९२७) आदि उपन्यासकारों नें उपन्यास लिखें ।

इन सभी उपन्यासकारों ने सामाजिक समस्याओं का चित्रण करते हुए पेंमचंद जी की परंपरा को आगे बढ़ाया । जिन्होंने विभिन्न मनोवैज्ञानिक एवं

मनोविश्लेषण कर्ताओं के सिद्धातों के अनुकूल अपने औपन्यासिक पात्रों के चरित्र को सूक्ष्मता पूर्वक चित्रित किया है । जिसमें जैनेन्द्र कुमार ने 'परख' (सन १६३०) में एवं 'त्यागपत्र', 'कल्याणी', 'सुखदा', 'विवर्त' आदि लिखे । इलाचंद जोशी ने 'घृणामयी', 'पर्दे की रानी', 'प्रेत और छाया', 'सन्यासी', 'मुक्ति पथ' आदि गोविंद वल्लभ पंत ने 'मदारी', 'प्रगति की राह' आदि । सूर्यकांत त्रिपाठी ने 'अप्सरा' (सन १६३१) में अज्ञेय ने 'शेखर एक जीवनी' एवं 'नदी के द्वीप' आदि उपन्यासकारों ने उपन्यास साहित्य को समृद्ध किया है ।"[१०१]

'साम्यवादी दृष्टिकोण से लिखे गये उपन्यासों में श्री राहुल सांकृत्यायन के 'सिंह सेनापति' एवं 'वोल्गा से गंगा' । यशपाल के 'दादा कामरेड' (सन १६४१), 'देशद्रोही' (सन १६४३), 'दिव्या' (सन १६४५) आदि उपन्यासकारों ने वर्ग–वैषम्य का चित्रण करते हुए सामाजिक क्रांति का समर्थन किया है ।'[१०२]

प्रेमचंदकाल में ही कुछ देश–काल प्रधान या ऐतिहासिक उपन्यास भी लिखे गये । जिसमें वृंदावनलाल वर्मा के 'गढ़ कुण्डार', 'विराटा की पद्मिनी', 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई', 'मृगनयनी' आदि । ऐतिहासिक उपन्यास चतुरसेन शास्त्री एवं किशोरीलाल गोस्वामी ने भी लिखे हैं ।

तत्पश्चात् इनके अतिरिक्त कुछ अँचल विशेष को केन्द्र में रखकर आँचलिक उपन्यास लिखे गए । जिनमें फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल' (सन १६५४), 'परती परिकथा' (सन १६५७), उदयशंकर भट्ट का 'लोक–परलोक', ब्रह्मभट्ट का 'आदित्य नाथ' । श्यामू सन्यासी का 'उत्थान' आदि उपन्यासकारों के सशक्त उपन्यास प्रकाश में आए ।

प्रेमचंदोत्तर युगीन उपन्यास :

सन् १६३६ का समय हिन्दी उपन्यास साहित्य के इतिहास में विशेष महत्त्वपूर्ण हैं । मुंशी प्रेमचंद जी के निधन के साथ एक समृद्ध युग पर पटाक्षेप हुआ और दूसरे का समारंभ । प्रेमचंद के युग में ही उपन्यास के क्षेत्र में कुछ

नवीनता दिखाई देने लगी थी । शुरु के दिनो के एक आख्यान काव्य 'प्रेम पथिक' में प्रसाद जी लिखते हैं – "वर्तमान सुख–दुःख में पड़कर हर्ष–विषाद मानता जो, उपन्यास लेख है वह परिणाम स्थिति ही सच्ची है ।"

प्रेमचंद जी के बाद विषयवस्तु और शिल्पशैली दोनों ही में अपूर्व विविधता और विस्तार का समावेश हुआ । उपन्यास स्थूल–जगत को छोड़ मनो–जगत की ओर अधिकांश अग्रसर हुआ । प्रायः संपूर्ण साहित्य की प्रवृत्ति इस युग में स्थूल से सूक्ष्म की ओर रही । उपन्यास में भी यही प्रतिफलित हुई ।[१०३]

प्रेमचंद जी के बाद विश्व में ओर भारतवर्ष में बड़े–बड़े राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक परिवर्तन हुए । स्वतंत्रता की प्राप्ति, देश के कई हिस्से को टूकड़े के अंतर्गत विभाजन, सांप्रदायिक संघर्ष आदि के कारण देश में विघटनकारी मूल्य और क्रांति का उन्मेष हुआ । इसका सामूहिक प्रभाव उपन्यासकारों की रचना, प्रेरणा पर भी पड़ा । नारी–जागरण, नारी–स्वातंत्र्य, अछूतोद्धार, हिन्दू–मुस्लिम एकता, आदि साहित्यकारों की सृजनेच्छा को प्रभावित करती रही । इसी कारण उपन्यास साहित्यधाराओं में विभाजित हुआ । जिससे उपन्यासकार मानव मन की गहराई एवं संवेदना को पकड़ सके । जो इस समय की माँग थी । इन धाराओं में सामाजिक धारा, ऐतिहासिक धारा, मनोवैज्ञानिक धारा, प्रगतिवादी धारा, राजनीतिक धारा आदि अर्थात् सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, प्रगतिवादी, राजनीतिक इत्यादि उपन्यास लिखे गये ।

इन उपन्यासों में सियाराम शरण का 'नारी' अमृतलाल नागर का 'महाकाल' एवं 'खंजन नयन' उपेन्द्रनाथ 'अश्क' के 'सितारों का खेल' एवं 'गिरती दीवारें', रांगेय राघव के 'घरौंदे' एवं 'विषाद मठ', यशपाल के 'अमिता' (सन १९५६) एवं 'झूठा सच्च' (१९५८) ही वात्स्यायन 'अज्ञेय' के 'शेखर एक जीवनी' (सन १९४१) हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'बाणभट्ट की आत्मकथा' (सन १९४६) आदि उपन्यासकारों का विशेष योगदान रहा । इस युग के अन्य

उपन्यासकारों में भैरव प्रसाद गुप्त, गुरुदत, नागार्जुन धर्मवीर भारती, राजेन्द्र यादव आदि उल्लेखनीय उपन्यासकार है ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रेमचंदोतर स्वाधिनता पूर्व युग में उपन्यास साहित्य का चरमोत्कर्ष हुआ । उपन्यासों की भाषा में प्रतीकात्मकता, सांकेतिकता एवं व्यंग्यात्मकता आई । विभिन्न नवीन शिल्प एवं शैलियों का भी विकास हुआ ।

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास :

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास याने कि हिन्दी साहित्य का छठ्ठा दशक स्वात्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास का शिल्प विकास क्रम में पूर्ववर्ती परंपरा से संबंध होते हुए भी अपना पृथक अस्तित्व रखता है । स्वातंत्र्योत्तर काल की सामाजिक परिस्थितियों, राजनैतिक वातावरण तथा जन–जीवन की अनुभूतियाँ पराधीनता के काल से भिन्न प्रकार की हैं । उपन्यासकार अपनी कृति में जीवन को व्यक्त करता है । तथा वर्ण्यवस्तु के अनुरूप ही उसकी अभिव्यक्ति के प्रकार में भी परिवर्तन आना नितांत स्वाभाविक है । उपन्यास और सामंजस्य की दुनिया में मनुष्य बदलते और विकास करते हुए संसार में मनुष्य के आवेगो के मूल्यवान तथा जटिल क्षणों का अध्ययन करता है ।[१०४]

इस युग में हिन्दी उपन्यास की प्रगति तीव्र गति से हुई है । इस युग के प्रमुख उपन्यासकारों में अमृतलाल नागर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । इन्होंने 'बूंद और समुद्र', 'सुहाग के नुपूर', 'अमृत और विष', 'मानस का हंस' आदि । राजेन्द्र यादव ने 'सारा आकाश', डॉ. देवराज ने 'पथ की खोज', नरेश महेता के 'डूबते मस्तूल' मोहन राकेश के 'अँधेरे बन्द कमरे' (सन १९६१) मन्नू भंडारी के 'आप का बंटी', भीष्म साहनी के 'झरोखे' (सन् १९६७) 'कडियाँ' (सन १९७९), 'तमस' (सन १९७५), निर्मल वर्मा ने 'रुकेगी नहीं राधिका' कृष्णा के 'जिन्दगीनामा' आदि उल्लेखनीय उपन्यासकार हैं ।[१०५]

सन १९६० के अनन्तर हिन्दी उपन्यास में अनेक नई प्रवृत्तियों का उन्मीलन हुआ । जिसमें मुख्य व्यक्ति–चेतना, समाज–चेतना, राजनीतिक चेतना और सांस्कृतिक चेतना । उपन्यास का यह नवाँ दशक है जिसमें महिला उपन्यासकारों का भी बड़ा भारी योगदान रहा है ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि इन उपन्यासों पर समसामयिकता का प्रभाव सबसे अधिक है । इनमें सामयिक समस्याओं को ही प्रधानता दी गई है । आलोच्य काल के उपन्यासों में जीवन की व्यापकता और विस्तार के बदले सूक्ष्मता और गहनता देखी जाती है । अर्थात् समय के प्रवाह में उपन्यास लेखन की प्रेरणा में परिवर्तन होता रहा है । जो इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण है ।

उपन्यास साहित्य और भीष्म साहनी :

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास की श्रृंखला में छठवें दशक के उत्तरार्ध में भीष्म साहनी ने उपन्यास जगत में प्रवेश किया । साहित्य के क्षेत्र में यथार्थवाद स्वातंत्र्योत्तर काल की सबसे अधिक व्यापक प्रवृत्ति रही है । यथार्थवाद विशुद्ध रूप से जीवन के सत्य को देखने की एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें जीवन की कथा, है और होगा की समन्वित संपूर्णता में देखा जाता है ।

यथार्थवाद के संबंध में डॉ. त्रिभुवनसिंह ने लिखा है – "कविता यथार्थवाद की उपेक्षा कर सकती है, संगीत यथार्थ को छोड़कर भी जा सकता है, पर उपन्यास और कहानी के लिए यथार्थ प्राण है ।"[१०६]

जब विचार या जीवन–दर्शन की बात आती है तो प्रगतिवाद या मार्क्सवादी जीवन–दर्शन यथार्थवादी प्रवृत्ति के अंतर्गत ही मान्य दर्शन है । जो जीवन और जगत की द्वंद्वात्मक प्रगति में जीवन की प्रगति को लेकर स्वाधीनता से पूर्व ही जन्मा था और स्वाधीनता प्राप्ति के समय तक यह जीवन दर्शन

हिन्दी साहित्य के एक व्यापक फलक के रूप में स्वीकृत दर्शन हो गया । जिसके सबसे बड़े पोषक प्रेमचंद हुए ।

स्वातंत्र्योत्तर साहित्य में जिन्होंने इस परंपरा का निर्वाह किया है उनमें से प्रमुख है मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, फणीश्वरनाथ 'रेणु', अमृतलाल नागर, भैरव प्रसाद गुप्त, नागार्जुन, डॉ. रांगेय राघव, अमृतराय, भीष्म साहनी, कमलेश्वर, श्री लाल शुक्ल और विष्णु प्रभाकर आदि । जिनका साहित्य पूरी तरह से मार्कसवादी जीवन दर्शन से प्रभावित है । उसी परंपरा का निर्वाह भीष्म साहनी भी कहते हैं ।"[१०७]

भीष्म जी प्रारंभ में तो पूर्णतः प्रेमचंद का अनुकरण करते चलते हैं, परंतु बाद में यशपाल की तीव्र आक्रोशमयी यथार्थवादी विचारधारा को अपना लेते हैं । साहनी बहुमुखी प्रतिभा के धनी रहे हैं । हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने केवल पर्दापण ही नहीं किया परंतु अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय भी दिया है । स्वतंत्रता के बाद अखंड भारत में बँटवारे की स्थिति निर्माण हुई और दिल्ली आना हुआ, तब से लेकर आज तक, साहित्य मंदिर के आलोकित द्वार पर बैठकर अपनी अटूट साहित्य साधना निरंतर चलती रही । साहित्य समाज का दर्पण एवं युग का प्रतिबिंब होता है । बँटवारे के समय की स्थिति का उनका साहित्य सचमुच एक दर्पण के रूप में हैं ।

प्रेमचंद से पूर्व जो साहित्य लिखा जाता रहा वह केवल ज्ञानोपदेश एवं मनोरंजन तक सीमित था, परंतु प्रेमचंद साहित्य को केवल मनोरंजन का साधन मात्र नहीं मानते हैं । प्रेमचंद जी का मानना है कि "आज साहित्यकार को जीवन में साहित्य रचना करना होगा । आज हमारी साहित्यिक रुचि बड़ी तेजी से बदल रही है । अब साहित्य केवल मन बदलाव की चीज़ नहीं हैं । मनोरंजन के सिवा उसका और भी कुछ उद्देश्य है – अब यह स्फूर्ति या प्रेरणा के लिए अद्‌भुत आश्चर्यजनक घटनाएँ नहीं ढूँढता और न अनुप्रास का अन्वेषण करता है ।[१०८]

भीष्म साहनी प्रगतिशील लेखक हैं । उनकी रचनाओं में प्रेमचंद और यशपाल की तरह ही सामाजिक चेतना का यथार्थवादी विकास मिलता है । प्रेमचंद के बाद सामाजिक यथार्थ की तर्क–शक्ति को तोड़ने का प्रयास 'अज्ञेय', इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्र आदि ने किया और हिन्दी कथा को व्यक्ति मनोविज्ञान का विषय बना दिया । परंतु 'रेणु', 'नागार्जुन, यशपाल, भैरव प्रसाद गुप्त, अमृतलाल नागर आदि ने कथा की लोकधर्मिता की ओर उनकी जनवादी सृजन धर्मिता को नष्ट नहीं होने दिया । राजेश्वर सक्सेना के शब्दों में "भीष्म साहनी हिन्दी कथा की प्रगतिशील परंपरा के शक्तिशाली हस्ताक्षर हैं । इनके कथा–मानस पर प्रेमचंद और यशपाल की गहरी छाप है । परिवेश की समग्रता में वस्तु और पात्र के अंतः संबंधों को किस तरह खोला जाय तथा इन संबंधों में जनता के मुक्तिकामी संघर्षो को कैसे प्रतिपादित किया जाय, पर शिल्प भीष्म जी को प्रेमचंद के निकट पहुँचा देता है । परंतु परिप्रेक्ष्य और घटना दृष्टांतों की दृष्टि से भीष्म साहनी यशपाल के निकट दिखाई देते हैं ।

भीष्म जी की उपन्यासकार के रूप में सबसे बड़ी विशेषता तो यही है कि वे अपनी कथावस्तु का चयन बड़े धीरज से करते हैं । लेकिन सिर्फ कथावस्तु का चयन नहीं, परंतु वे अपनी कथावस्तु के लिए जीवन और उसमें बिखरे पात्रों के निकट भी जाते हैं । इस कच्चे माल को वह संवेदनशीलता के धरातल पर प्रस्तुत करते हैं ।

विवेक द्विवेदी के शब्दों में "भीष्म साहनी जैसे लेखक अपने उपन्यासों में अपने जटिल जीवन यथार्थ को नये–नये आयामों का उद्घाटन करते हुए उसका रागात्मक स्वरूप चित्रित करने में समर्थ हुए हैं ।"[१०]

साहनी ने द्वंद्वात्मक जीवन विकास में बाधक शोषण, कुण्ठा, विषमता, संघर्ष, असमानता आदि का यथार्थ चित्रण करते हुए उसका केवल निदान ही नहीं किया परंतु समाधान ढूँढने का भी प्रयास किया है ।

साहनी जी ने अपने उपन्यास साहित्य में अशिक्षा परिणाम, प्रेम, यौन कुण्ठा, नारी की दयनीय स्थिति एवं असमानता, सांप्रदायिक संघर्ष, शोषक–शोषित समाज और व्यवस्था, परंपरित मूल्य एवं विघटन, स्त्री–पुरुष के बदलते संबंध आदि समस्याओं पर अपनी संवेदना प्रकट की है ।

अब हम भीष्म साहनी की उपन्यास दृष्टि का संक्षप्ति परिचय प्राप्त करेंगे । इन संपूर्ण उपन्यासों की अगले अध्यायों में हम चर्चा करेंगे ।

६. साहनी के उपन्यासो का संक्षिप्त परिचय :

'झरोखे' : (सन् १९६७ राजकमल प्रकाशन, दिल्ली) :

साहनी का यह प्रथम उपन्यास है । जिसमें एक छोटे से बालक की आँखों से एक परिवार में घटनेवाली छोटी–छोटी घटनाओं को देखने और उनका उल्लेख करने का अविस्मरणीय प्रयोग किया गया है । इसमें इस बालक और तुलसी के माध्यम से कई झरोखें उपन्यासकार ने हमारे सामने खोले हैं । मध्यमवर्गीय जीवन के दुःख और उनकी बहुविध त्रासदियों का भी यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में हुआ है । वर्ग–विभेद पर आधारित समाज में परिश्रम करके भी साधारण व्यक्ति ऊपर नहीं उठ पाता । वही कुछ इस उपन्यास का प्रतिपाद्य है ।

'कड़ियाँ' : (सन् १९७० राजकमल प्रकाशन दिल्ली)

हमारे समाज में स्वतंत्रता के बाद पुराने मूल्यों का विघटन और नये मूल्यों का आविर्भाव बहुत तेजी से हो रहा है । वहीं बदलते नये मूल्यों ने विवाह जैसी संस्थाओं के लिए खतरा पैदा किया है । पश्चिमी सभ्यता के मोह में मोहभंग की स्थिति का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में हुआ है । इस उपन्यास के पात्रों में महेन्द्र नाथ, सुषमा, प्रेमिला आदि की मोहभंग स्थिति का यथातथ्य चित्रण हुआ है । साहनी परस्तुत उपन्यास में महेन्द्र के जीवन की विसंगति और विडंबना को उभारता है कि परिवार मूल्यों के टकराव के कारण

नहीं टूट रहा है परंतु महेन्द्र जैसे रीतिकालीन मानसिकता के कारण । यही कुछ इस उपन्यास का प्रतिपाद्य है ।

'तमस' : (सन् १९७१ राजकमल प्रकाशन, दिल्ली) :

साहनी का प्रस्तुत उपन्यास अखंड भारत के विभाजन के समय की त्रासदी पूर्ण परिस्थितियाँ और सांप्रदायिक संघर्ष का लेखा–जोखा प्रस्तुत करता है । यह उपन्यास बहु चर्चित उपन्यासों की श्रृंखला में अग्रगण्य है । इस समय की भयावह स्थिति वातावरण, दंगे–फसाद को उन्होंने 'तमस' में इतिहास बोध के साथ प्रस्तुत किया है । इस उपन्यास के नत्थू, जनटैल, हरनामसिंह, देवव्रत, देवदत्त, रघुनाथ आदि पात्रों की मानसिकता का परिचय कलात्मक ढंग से प्रस्तुत हुआ है । रचना, संरचना, शैली और क्राफ्ट आदि की कसौटी पर भी यह उपन्यास एकदम खरा उतरता है । यह कालजयी कृति 'यशपाल के 'झूठा–सच' उपन्यास से टक्कर लेती है । प्रस्तुत उपन्यास सांप्रदायिकता की देशव्यापी समस्या को एक गढ़ वैज्ञानिक यथार्थवादी दृष्टिकोण के साथ विश्लेषित संश्लेषित भी करता है । उपन्यास में आज़ादी पहले एवं बाद की कई घटनाएँ सूच्य और दृश्य रूप में प्रस्तुत हुई है । उस समय का परिवेश और प्रतिवेश एक परिप्रेक्ष्य के साथ ध्वनित हो उठा है । इसीलिए यह उपन्यास उस समय का एक प्रामाणिक, विश्वसनीय और सर्जनात्मक, दस्तावेज के रूप में है ।

'बसंती' : (सन १९८० – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली)

स्वतंत्रता के बाद मोहभंग की स्थिति निर्माण हुई, नये मूल्य गढ़े गये जो स्वान्तः सुखाय थे । इस उपन्यास की नायिका बसंती है जो परंपरागत मूल्यों से चिपकी रहती है, परंतु इस कुचक्र की स्थिति में से बाहर नहीं निकल पाती है । इसी चरित्र का भीष्म जी ने उपन्यास का केन्द्रीय पात्र बनाकर संवेदनशीलता से देखने का प्रयास किया है । वसंती अस्थिर जीवन जीते हुए भी रुढ़ियों और जर्जर हो चुके नैतिक मूल्यों से विद्रोह करती है । बसंती

परिसिथतियों से पिटकर भी हारती नहीं उसकी इस अजेय जिजीविषा को कथाकार ने प्रामाणिकता, विश्वसनीयता और अंतरंग के साथ चित्रित किया है ।

'मय्यादास की माडी' : (सन् १६८८ – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली)

'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास एक ऐसे कालखंड की कहानी कहता है कि अंग्रेज हकूमत यहाँ शिथिल होती जा रही थी । सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों में परिवर्तन हो रहे थे । भारतीय लोगों में कुछ ऐसे भी लोग थे जो परिस्थिति के साथ समझौता नहीं कर सकते थे । कुछ ऐसे थे जो समझौता करने के लिए संघर्षशील थे । इस उपन्यास के दीवान मय्यादास, दीवान धनपत, मलिक, पुरोहित रामदास आदि ऐसे ही पात्र हैं । वस्तुतः यह उपन्यास एक कस्बे की कहानी होते हुए भी समूचे युग को अपने में समेटे हुए हैं । निष्ठाएँ, परंपराएँ और कारगुजारियाँ बदल रही है । और उन पर नई रंगत चढ़ रही है । धूर्त और दयनीय दीवान धनपत, राष्ट्रप्रेमी लेखराज आदि चरित्र विश्वसनीय और प्रामाणिक बन पड़े हैं ।

'कुंत्तो' : (सन् १६६३ – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली)

भीष्म साहनी का 'कुंतो' उपन्यास एक ऐसे ही कालखंड की कहानी कहता है, जब लगने लगा था कि हम इतिहास के किसी निर्णायक मोड़ पर खड़े हैं, जब करवटे लेती जिंदगी एक दिशा विशेष की ओर बढ़ती जान पड़ने लगी थी । आपसी रिश्तें, सामाजिक सरोकार, घटना प्रवाह के उतार–चढ़ाव के विस्तृत फलक पर उसी कालखंड के जीवन का चित्र प्रस्तुत करते हैं । इस उपन्यास में मानवीय संबंधों, संवेदनाओं की करवट लेते परिवेश और मानव नियति के बदलते रंगों की ही कहानी कहता है ।

७. निष्कर्ष :

निष्कर्षतः साहनी के उपन्यास भारतीय जनता के मध्य विकसित होते हैं । यह उनकी ऐतिहासिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि है, जो सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक

तथा राजनैतिक सभी गतिविधियों को आत्सात करती चलती है । अपने पात्रों के द्वंद्व और अंर्तद्वंद्व के चित्रण में साहनी एक परिपक्व और जागरुक अंतदृष्टि संपन्न कलाकार का परिचय देते हैं । वे पूरे परिवेश और वातावरण के भीतर से जीवन की विसंगतियाँ तथा विडंबनाओं को खोज सके हैं । उनके उपन्यासों का प्रधान स्वर मँहगाई, बेरोजगारी, सांप्रदायिकता, जाँति-पाँति, धर्मान्धता, नारी का गौरव आदि का चित्रण बड़ी सादगी के साथ प्रस्तुत करके पूर्ण समानता के समर्थक है । कला कला के लिए नहीं किन्तु 'कला जीवन के लिए' सिद्धांत में उनकी आस्था है ।

द्वितीय अध्याय :

संदर्भ संकेत :

क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ संख्या
१	श्रीमद भगवदगीता श्लोक–४७	डॉ. अंबालाल एम. प्रजापति	१०६
२	साहित्य समीक्षा के सिद्धांत	चंद्रभानु मिश्र 'प्रभाकर'	१५६
३	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३५१
४	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३२
५	कहानी कुंज (भूमिका)	सं. डॉ. उमाकान्त शास्त्री	१.२
६	भारतीय काव्य समीक्षा	डॉ. देवराज भाटी	१६७
७	साहित्य समीक्षा के सिद्धांत	चंद्रभानु मिश्र 'प्रभाकर'	१५६
८	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३२
९	साहित्य विवेचन	क्षमेन्द्र सुमन	२०७
१०	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३२
११	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३२
१२	साहित्य विवेचन	क्षमेन्द्र सुमन	२०७
१३	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३२
१४	समालोचन व साहित्यशास्त्र	सुधाकर दीक्षित	६९

१५	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३२
१६	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३२
१७	कथाश्री	डॉ. विजयपालसिंह	७
१८	मेरी प्रिय कहानियां (भूमिका)	डॉ. भीष्म साहनी	११
१९	पालि साहित्य का इतिहास	डॉ. राजकिशोर सिंह	८०
२०	रामदरश मिश्र की कहानियाँ में यथार्थ चेतना और मूल्य बोध	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३३
२१	कहानी कुंज : एक विवेचन	डॉ. उमाकान्त शास्त्री	१.२
२२	कथाश्री (भूमिका)	डॉ. विजयपाल सिंह	१.२
२३	कथाश्री (भूमिका)	डॉ. विजयपाल सिंह	८
२४	साहित्यिक निबंध	गणपतिचंद्र गुप्त	३०१
२५	साहित्यिक निबंध	नगेन्द्र	४११
२६	हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास	रामस्वरूप चतुर्वेदी	१७०
२७	हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	गुलाबराय	२०५
२८	साहित्यिक निबंध	नगेन्द्र	४१५
२९	साहित्यिक निबंध	नगेन्द्र	४१४
३०	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	१९८
३१	साहित्यिक निबंध	गणपतिचंद्र गुप्त	३०३
३२	साहित्यिक निबंध	नगेन्द्र	४१७

३३	साहित्यिक निबंध	गणपतिचंद्र गुप्त	३०५
३४	हिन्दी कहानी अपनी जबानी	इन्द्रनाथ मदान	२३
३५	कहानी नई कहानी	डॉ. नामवरसिंह	३४
३६	नई कहानी की भूमिका	कमलेश्वर	५६
३७	हिन्दी कहानी का उद्भव विकास	डॉ. सुरेश सिन्हा	५५५
३८	हंसा आई अकेला (भूमिका)	मार्कण्डेय	४
३९	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य		३०
४०	नई कहानी	कु. मीरा सीकरी	२०
४१	नई कहानी वैयक्तिक चेतना	डॉ. कु. प्रेमपाल	३४
४२	नई कहानी	कमलेश्वर	४८
४३	समकालीन कहनी : दिशा और दृष्टि	श्रीपतराय	१४०
४४	मेरी प्रिय कहानियाँ (भूमिका)	डॉ. भीष्म साहनी	६
४५	हिन्दी कहानी का मूल्यांकन	कांता अरोडा – महेंदीरत्ता	२१०
४६	भाग्य रेखा	डॉ. भीष्म साहनी	८७
४७	भाग्य रेखा	डॉ. भीष्म साहनी	६८
४८	पहला पाठ	डॉ. भीष्म साहनी	६
४९	भटकती राख	डॉ. भीष्म साहनी	३०
५०	भटकती राख	डॉ. भीष्म साहनी	२२
५१	पट्टरियाँ	डॉ. भीष्म साहनी	
५२	वाङ्चू	डॉ. भीष्म साहनी	
५३	शोभायात्रा	डॉ. भीष्म साहनी	
५४	निशाचर	डॉ. भीष्म साहनी	

५५	पाली	डॉ. भीष्म साहनी	
५६	साठोत्तरी हिन्दी कहानी : मूल्यों की तलाश	वासुदेव शर्मा	१०२
५७	समालोचना व साहित्यशास्त्र	सुधाकर दीक्षित	६१
५८	हिन्दी साहित्य कोश भाग-१	सं. धीरेन्द्र वर्मा	१५५
५९	समालोचना व साहित्यशास्त्र	सुधाकर दीक्षित	७३
६०	साहित्यिक निबंध	गणपतिचंद्र गुप्त	४००
६१	नाट्यशास्त्र	भरतमुनी	११५
६२	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३७
६३	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३७
६४	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३७
६५	साहित्य शास्त्र एक विवेचन	डॉ. इन्दिरा अग्रवाल	४६
६६	साहित्य समीक्षा के सिद्धांत	चंद्रभानु मिश्र 'प्रभाकर'	१४८
६७	साहित्य समीक्षा के सिद्धांत	चंद्रभानु मिश्र 'प्रभाकर'	१४८
६८	साहित्य शास्त्र एक विवेचन	डॉ. इन्दिरा अग्रवाल	४६
६९	साहित्य शास्त्र एक विवेचन	डॉ. इन्दिरा अग्रवाल	४६
७०	हिन्दी उपन्यास एक सर्वेक्षण	डॉ. महेन्द्र चतुर्वेदी	३
७१	कुछ विचार	प्रेमचंद	४७
७२	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३३८
७३	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	१६३
७४	काव्य के रूप	गुलाबराय	१५५

७५	साहित्य लोचन	डॉ. श्यामसुंदरदास	११२
७६	साहित्य लोचन	डॉ. श्यामसुंदरदास	११२
७७	हिन्दी का गद्य साहित्य	डॉ. रामचंद्र तिवारी	१८३
७८	हिन्दी साहित्य का इतिहास	आ. रामचंद्र शुक्ल	५१३
७९	हिन्दी उपन्यास : प्रेमचंदोतर काल	डॉ. रामशोभित प्रसादसिंह	२५
८०	साहित्यालोचन	डॉ. श्यामसुंदर दास	२८
८१	हिन्दी उपन्यास : स्वातंत्र्य संग्राम के विविध आयाम	डी. डी. तिवारी	६६
८२	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	डॉ. त्रिभुवन सिंह	७६
८३	आधुनिक हिन्दी साहित्य में वस्तु विन्यास	डॉ. सरोजिनी त्रिपाठी	१८
८४	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	डॉ. त्रिभुवनसिंह	८२
८५	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	डॉ. त्रिभुवनसिंह	८१
८६	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३४३
८७	हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास	राजनाथसिंह शर्मा	७६३
८८	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	१६६
८९	आधुनिक साहित्य	नंददुलारे बाजपेयी	१३८
९०	प्रेमचंद पूर्व हिन्दी उपन्यास	डॉ. कैलास प्रकाश	७१

९१	हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास	राजनाथ शर्मा	७६३
९२	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	१६६
९३	हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास	रामस्वरूप चतुर्वेदी	१६१
९४	श्रीनिवास ग्रंथावली	सं. डॉ. कृष्णलाल	११
९५	हिन्दी उपन्यास में कथा शिल्प का विकास	डॉ. प्रतापनारायण टंडन	२७२
९६	हिन्दी साहित्य का इतिहास	आ. रामचंद्र शुक्ल	३४०
९७	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	१६८
९८	हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास	राजनाथ शर्मा	७७०
९९	साहित्यिक निबंध	गणपतिचंद्र गुप्त	४०६
१००	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	१७२
१०१	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	१७८
१०२	साहित्यिक निबंध	गणपतिचंद्र गुप्त	४२१
१०३	हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास	रामस्वरूप चतुर्वेदी	१६८
१०४	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपनयास का शिल्प विकास	डॉ. राधेश्याम कौशिक	४६
१०५	हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ. नगेन्द्र	६८४
१०६	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद (भूमिका)	डॉ. त्रिभुवनसिंह	१४५

१०७	भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य	विवेक द्विवेदी	३४३
१०८	कुछ विचार	प्रेमचंद	६
१०९	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	३४५
११०	भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य	विवेक द्विवेदी	३४६

📖.....✍

तृतीय अध्याय
भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में युग–बोध

१. युग–बोध की परिकल्पना
- *युग का अर्थ*
- *बोध का अर्थ*
- *युग–बोध की परिभाषा*

२. कथा साहित्य और युग–बोध का संबंध
- *युग–बोध का बर्हिजगत*
- *युग–बोध का अंतर्जगत*

३. भीष्मी साहनी की कहानियों में युग–बोध
- *आर्थिक विषमता*
- *सांप्रदायिक संघर्ष*
- *किसान–जीवन का उत्पीडन*
- *शिक्षा जगत की भ्रष्टाचारिता*
- *भ्रष्टाचार और अनैतिकता*
- *विवाह–अनमेल–विवाह की समस्याएँ*
- *वैधव्य–जीवन की विडंबनाएँ*
- *मूल्य–बोध*
- *नारी–जीवन के प्रति स्वस्थ विचार*

❖ यौन–भावना एवं वेश्या–समस्या
❖ भ्रष्ट राजनीति
❖ वर्ग–भेद की विषमता
❖ आडंबरपूर्ण धार्मिकता
❖ निष्कर्ष

४. साहनी के उपन्यासों में युग–बोध

❖ सामाजिक युग–बोध
❖ पारिवारिक युग–बोध
❖ दाम्पत्य जीवन का प्रश्न
❖ वैध–अवैध प्रेम का प्रश्न
❖ यौन–कुंठा एवं नारी
❖ राष्ट्रीय स्वाधीनता एवं मोह–भंग
❖ राजनीतिक दलों की भ्रष्ट राजनीति
❖ शोषक–शोषित वर्ग की समस्या
❖ आर्थिक समस्याएँ
❖ धार्मिक रुढ़ि की समस्या
❖ जनसंख्या विस्फोट की समस्या
❖ निष्कर्ष

तृतीय अध्याय
भीष्म साहनी के कथा-साहित्य में युग-बोध

१. युग-बोध की परिकल्पना :

युग-बोध की सामान्य परिकल्पना या अवधारणा युगीन परिस्थितियों से है । अर्थात् कोई भी साहित्यकार साहित्य-सर्जन करते समय अपने युग के साथ अर्थात् युगीन परिवेश और विविध परिस्थितियों - सामाजिक, आर्थिक, सांप्रदायिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों से कितना जुड़ा हुआ है यह देखने का प्रयत्न किया जाता है । कोई भी साहित्यकार अपने युग की विविध परिस्थितियों की उपेक्षा करके स्थायी, जीवंत साहित्य की सर्जना नहीं कर सकता । क्योंकि वह एक उर्वर मस्तिष्क का वह सहृदय प्राणी होता है, जो अपनी परिस्थितियों से अछूता नहीं रह सकता । युगीन परिस्थितियाँ उसे खट्टे-मीठे विविध प्रकार के अनुभव करवाती हैं और वे अनुभूतियाँ ही सर्जक की संवेदनशीलता बनकर वाणी का अभिधान करती हैं । अर्थात् युगीन संदर्भों की अनुभूतियाँ ही साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्ति प्राप्त करती हैं ।

"युगबोध दो शब्दों के संयोग से निष्पन्न वह शब्द युग्म शब्द है, जिसे सामान्य बोलचाल की भाषा में समसामयिक परिस्थितियों का परिज्ञान कहते हैं ।"[१]

❖ *युग का अर्थ :*

युग-बोध शब्द दो शब्दों से बना है - युग+बोध । अर्थात् अपने युग का ज्ञान । साहित्य की परिकल्पना और विवेचना युगीन संदर्भों में ही स्वस्थ रूप से की जा सकती है । "यदि इन शब्दों का कोषगत अर्थ ग्रहण किया जाय तो युग का अर्थ है समय, काल, बोध, प्रतीति, जानकारी, ज्ञान अथवा किसी के

अस्तित्व प्रकार स्वरूप आदि का परिज्ञान ।"[२] इस प्रकार युगबोध का सामान्य अभिप्राय किसी काल विशेष की परिस्थितियों अथवा विशेषताओं का सम्यक् ज्ञान अथवा मनुष्य के सामाजिक परिवेश में परंपरागत मूल्यों से भिन्न नूतन मानदंडो की स्थापना माना जा सकता है ।

सामान्यतः पारिभाषिक अर्थो में 'युग' बारह वर्ष का एक काल खंड माना जाता है । 'काल' वह संबंध सता है जिसके द्वारा भूत, भविष्य एवं वर्तमान की प्रतीति होती है । 'सम्वत' का तात्पर्य साल, वर्ष अथवा राजा शालिवाहन के समय से मानी गई वर्ष गणना है ।[३]

भारतीय विद्वानों के मतानुसार सामाजिक दृष्टि से काल को विद्वानों के मतानुसार सामाजिक दृष्टि से काल को व्यक्त करने की 'कल्प', 'मनवंतर' तथा युग महत्त्वपूर्ण इकाइयाँ मानी जाती रही हैं । 'युग' शब्द स्वयं में काल सापेक्ष है । क्योंकि परंपरागत मान्यता के अनुसार मनुष्य का युग देवताओं की एक रात और दिन होता है । तथा देवताओं का युग प्रजापति का एक अहोरात्र होता है ।[४]

युग का संबंध व्यक्ति, घटना तथा काल से माना जाता है । महापुरुषों के नाम पर भी युग का नामकरण किया जाता है । जैसे बौद्ध युग, जैन युग, युग, भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, गाँधी युग इत्यादि ऐसे ही घटना विशेष के नाम पर भी युग का नामाभिधान किया जाता है जैसे रामायण युग, महाभारत युग इत्यादि । काल के आधार पर भी युग का नामकरण किया जाता है । इस प्रकार बदलते संदर्भों एवं परिस्थितियों में नामकरण में भी परिवर्तन होता रहता है । 'युग' का तात्पर्य काल के सुदीर्घ परिणाम सत्युग, त्रेतायुग, द्वापर अथवा कल्युग से न लेकर काल विशेष के साहित्य का मूल्यांकन किया जाना चाहिए । साहित्य समाज का दर्पण है । जब हम युगीन संदर्भों में सर्जक विशेष के साहित्य का मूल्यांकन करेंगे तो उसके साहित्य में युगीन जीवन, आचार, विचार, धर्म, संस्कृति इत्यादि का सही ढंग से चित्रण किया हुआ मिल पायेगा ।

❖ बोध का अर्थ :

'बोध' शब्द संस्कृत की 'बुद्ध' धातु से बना है । जिसका अर्थ है जानना समझना या परिज्ञान । अंग्रेजी में बोध के पर्याय के रूप में 'अवेयरनेस', 'कांसियसनेस' तथा सेंसीबीलीटी इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया जाता है । बोध शब्द से तात्पर्य किसी वस्तु, विषय तथा धारा द्वारा व्यवहार का ज्ञान माना जाता है । 'बोध' शब्द अत्यंत व्यापक अर्थ का द्योतक है । इसे चेतना का समानार्थक कह सकते हैं । " 'बोध' अथवा 'चेतना' की प्रमुख विशेषता है निरंतर परिवर्तनशीलता । बोध स्वयं को और अपने आसपास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है ।"[५]

"बोध का प्रभाव हमारे अनुभव वैचित्र्य से प्रमाणित होता है, और बोध की अविच्छिन्न एकता हमारे व्यक्तिगत तादात्म्य के अनुभव से मानी जाती है ।"[६]

"बोध शब्द इन्द्रीयानुभूति के माध्यम से किसी वस्तु की स्थिति का परिज्ञान कराता है । जिसमें समय सापेक्षता अधिक रहती है ।"[७] "वैज्ञानिक भौतिकवाद के अनुसार मनुष्य प्रकृति की उपज है और बोध मस्तिष्क में नीहित पदार्थ का गुण है अतः प्रकृति के एक अंश का गुण है ।"[८]

बोध रूपी शक्ति मानव चेतना की देन है निरंतर परिवर्तनशीलता अथवा प्रवाह बोध का मूलाधार है । मनोविज्ञान के अनुसार बोध मानव में वह उपस्थित महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जिसके कारण ही उसे विविध प्रकार की अनुभूतियाँ प्राप्त होती है । मानवीय बोध में ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक चेतना का समावेश होता है । यह मनुष्य की विशेषता है जो उसे व्यक्तिगत तथा वातावरण के विषय में ज्ञान कराती है । इस प्रकार के ज्ञान को विचार या बुद्धि कहा जाता है । मनुष्य की सारी क्रियाओं और गतिशील प्रवृत्तियों का मूल कारण बोध ही है । बोध का विकास सामाजिक वातावरण के संपर्क से होता है । वातावरण के प्रभाव से मनुष्य नैतिकता, औचित्य तथा व्यवहार कुशलता प्राप्त

करता है । यह बोध का विकास कहा जाता है । इस प्रकार समय की गतिशील पृष्ठभूमि पर व्यक्ति की परिवर्तित अनुभूतियों को युगबोध की संज्ञा दी जाती है ।

❖ *युग–बोध की परिभाषा :*

'युग–बोध' से सामान्यतः युग की मान्यताओं, स्थितियों एवं संदर्भो का बोध होता है । युग–बोध की महत्ता उसके विकसित या परीवर्तित होने मे है । युग–परिवर्तन या युग का विकास मनुष्य की परिवर्तित होती हुई मान्यताओं एवं उसके बदलते हुए मूल्यों के कारण होता है । जब कोई मूल्य बहुत से समानधर्मा अर्थात् एक जैसे व्यक्तिओं को प्रभावित करता हैं तब वह बोध वृत्ति का रूप धारण करता है । इसीलिए युग विशेष के बोध का निर्माण स्वयं ही हो जाता है । प्रत्येक समाज और देश का अपना बोध होता है और युग परिवर्तन के साथ–साथ वह बोध भी परिवर्तित होता रहता है । इस प्रकार "किसी विशिष्ट काल खंड में अपने परिवेश में होनेवाले राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों के प्रति सजगता, जागरुकता, अनुभूति क्षमता तथा प्रतिक्रिया की समता युगबोध कही जा सकती है ।"[६]

यदि व्यापकता की दृष्टि से देखा जाय तो युग शब्द अपनी व्याप्ति में संपूर्ण मानव संस्कृति का कालसापेक्ष अर्थ प्रस्तुत करता है । इसमें व्यक्ति के दैनंदिन जीवन के मूल्य जो व्यक्ति की सीमा से ऊपर उठकर, सामूहिक संदर्भो में अर्थवान होकर किसी युग विशेष का द्योतक करने में समर्थ हो जाते हैं । जब किसी कालखंडमें कोई मूल्य विशेष या धारणा या मान्यता विशेष, बहुत से समानधर्मी व्यक्तियों को प्रभावित करने लगते हैं । तब 'बोधवृत्ति' की धारणा उत्पन्न होने लगता है । उस नये मूल्य बोध का भाव एक ही प्रकार की मान्यताओं से संबंधित संप्रदाय में विकसित होता है और वही कुछ समय के पश्चात् एक युग विशेष का रूप धारण कर लेता है ।

युग–बोध का कोई सुनिश्चित मापदंड नहीं है । जिससे उसे परीभाषित किया जा सके । युग–बोध एक धारा है, जो काल सापेक्ष है । जिसकी भाव चेतना मनुष्य, समाज और उसके परिवेश से बंधी हुई है । युग–बोध व्यक्ति से स्वयं उभर कर नहीं आता, बल्कि एक संवेदनशील कहानीकार या उपन्यासकार समाज की गतिविधियों से परिचित होकर अपनी अनुभूति को युगीन यथार्थ की चेतना के माध्यम से अपनी कृतिओं में प्रस्तुत करता है । जो कुछ युग की प्रवहमान धारा से संवेदनशील साहित्यकार अनुभूति के धरातल पर ग्रहण करता है, वह अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से संप्रेशित करता है । वहीं समय के मानव समाज के लिए युग–बोध बन जाता है ।

अनादिकाल से मानव समाज अपनी चिंतनशील प्रवृत्ति के कारण विकास करता रहा है । वह वर्तमान के संदर्भ में अतीत को देखता है, तो वह बहुत कुछ परिवर्तित अनुभव करता है । वर्तमान अतीत की फिर भी दोनों के बीच विरोध की एक रेखा दिखाई देती रहती है । वर्तमान में जीते हुए जहाँ कहीं भी मूल्यों या आदर्शों में कोई विरोध दिखाई देता है, वहीं पर उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप आधुनिकता के लक्षण पाये जाते हैं । युग–बोध की अवधारणा का संबंध आधुनिकता से जुड़ा हुआ है । काल की दृष्टि से प्रत्येक युग अपने वर्तमान रूप में आधुनिक होता है । इस प्रकार देखा जाय तो आधुनिकता, युग–चेतना तथा युगबोध ये सभी समानार्थी शब्द कहे जा सकते हैं । युग–बोध एक विकासमान क्रमिक प्रक्रिया है । जो व्यक्ति और परिवेश में संचारित रहती है । समाज और परिवेश की सामूहिक चेतना युगबोध का प्रारंभिक रूप है । इस प्रकार हम संक्षेप में कह सकते हैं कि "हमारे सीमित ज्ञान के क्षेत्र में जो कुछ भी है, हमारी अनुभूतियों का विषय है, अतः चेतना पर जिन भावों और तत्त्वों का दबाव पड़ता है, वही युग बोध है ।"[१०]

२. कथा साहित्य और युग–बोध का संबंध :

साहित्य समाज का दर्पण है । यह युक्ति कथा साहित्य और युग–बोध के संबंध में बहुत अधिक युक्ति युक्त प्रतीत होती है । वैसे तो प्रत्येक युग का साहित्य अपने युग का प्रतिनिधित्व करता ही है । फिर भी कथा साहित्य के साथ युग–बोध का विशेष संबंध जुड़ा हुआ है । वही साहित्य स्थायी या चिरंतन बन पाता है । जो अपने युग के मूल्यों के साथ जुड़े हुए होते हुए भी सामाजिक एवं साहित्यिक शाश्वत मूल्यों की प्रस्थापना करता है । कथा–साहित्य समाज के सामान्य वर्ग से लेकर उच्च वर्ग या यह कहें कि अशिक्षित वर्ग से लेकर शिक्षित वर्ग तक के सभी लोगों को आकर्षित एवं प्रभावित करता है तो कोई अत्युक्ति नहीं होती । क्योंकि कहानी और उपन्यास ये कथा–साहित्य के दो ऐसे अंग है, जो आज अधिक प्रचलित है । काव्य लेखन की परंपरा समय के साथ क्षीण बनती जा रही है । वैज्ञानिक युग के प्रभाव के कारण काव्य–जगत की चेतना निरंतर परिलुप्त होती जा रही है और कथा–साहित्य की सर्जना विकसित होती जा रही है ।

जब हम कथा–साहित्य और युग–बोध के संबंध पर अवलोकन करने जा रहे हैं, तो कथा–साहित्य के उद्‌भव और विकास की एक सूक्ष्म रेखा प्रस्तुत करना अनिवार्य बन जाता है । उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद जी एक ऐसे ही कथाकार थे जिन्हें आधार स्तंभ बनाकर हम कहानी और उपन्यास के युग का विभाजन करते हैं और अध्ययन–अध्यापन करते हैं । इस प्रकार पूर्वप्रेमचंद युग, प्रेमचंद युग और प्रेमचंदोत्तर युग का नामाभिधान करते हैं । कहानी और उपन्यास दोनों विधाओं के लिए प्रेमचंद ही आधार स्तंभ बनाये गये हैं । जब हम युग–बोध के संदर्भ में विचार करते हैं तो पूर्व प्रेमचंद की कहानियाँ किस्सा गोई थीं । जिनका उद्देश्य मात्र मनोरंजन था । क्योंकि साहित्यकार साहित्य को इस दृष्टि से ही देख रहे थे, परंतु प्रेमचंद जैसा एक ऐसा साहित्यकार हिन्दी जगत में आया जिसने संपूर्ण साहित्य–चेतना को बदल दिया और एक नये

युग–बोध को जन्म दिया । वह युग–बोध था – यथार्थ मानव जीवन का चित्रण । प्रेमचंद जी वे पहले कथाकार हैं जिन्होंने साहित्य को कल्पना लोक से हटाकर मानव जीवन के साथ जोड़ा और उसका यथार्थ चित्रण किया । उनकी कहानियाँ और उपन्यास अपने युग का सच्चा प्रतिनिधित्व करते हैं । उस समय की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक इत्यादि सभी परिस्तिथियों का अवलोकन प्रेमचंद के साहित्य में बड़ी सरलता, सहजता के साथ किया जा सकता है । वह सर्जक अपने युग–बोध से इतना संलिप्त था कि युगीन परिस्थितियों से हटकर साहित्य की परिकल्पना भी नहीं कर सकता ।

समय परीवर्तनशील है । समय के साथ मूल्य आदर्श, मान्यताएँ बदलती रहती हैं इसी प्रकार प्रेमचंद जी के बाद साहित्यिक चिंतन–परंपरा में युग परिवर्तन आया । और मनोवैज्ञानिक तथा मनोविश्लेषणात्मक कहानियाँ और उपन्यास लिखे जाने लगे । परंतु परंपरा लंबे समय तक नहीं टिक पाई । और १९६० तक आते–आते साहित्यिक जगत में जबरदस्त प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई । प्रेमचंद की विलुप्त होती हुई जो परंपरा भीष्म साहनी जैसे लेखकों ने जीवंत बनाये रखने का प्रयत्न किया । उसे और भी बलवत्तर बनाने का कार्य साठोत्तरी कहानीकारों एवं उपन्यासकारों ने किया । अर्थात् युग के साथ वैचारिक चेतना में परिवर्तन होता रहा और साहित्य–सर्जन में भी वह युगीन परिवर्तन अभिव्यक्त होता रहा । इस प्रकार कथा–साहित्य और युग–बोध का चोली–दामन का संबंध है जिसे विलग करके कभी मूल्यांकित नहीं किया जा सकता ।

जब हम भीष्म साहनी जी पर विचार करने जा रहे हैं तो सहज ही एक प्रश्न उठता है कि क्या वह सर्जक अपने युग के साथ जुड़ा रहा ? क्या उसका युग–बोध जीवंत बना रहा ? क्या उस सर्जक को अपने युग का परिज्ञान था ? अर्थात् क्या वह सर्जक अपने युग की अनुभूतियों के अनुरूप अभिव्यक्ति प्रदान कर पाया । हम जब इन प्रश्नों का उत्तर ढूढ़ने का प्रयत्न करते हैं तो बड़ी सहजता के साथ यह ज्ञात होता है कि विदेशी वातावरण में शिक्षा प्राप्त

करनेवाला वह सर्जक अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता, अपने आचार विचार और अपने रहन–सहन से आजीवन जुड़ा रहा । भारतीय संस्कृति और साहित्यिक चेतना की गरिमा उसके कथा–साहित्य में दिखाई देती है । भारत–विभाजन मानवता के इतिहास में एक अति कलंकित घटना है । जिस जाति और धर्म, संप्रदाय के नाम पर देश का विभाजन हुआ, नरसंहार हुआ उसे कभी भी कोई भी मानवतावादी सर्जक स्वीकार नहीं कर सकता । इन घटनाओं ने भीष्म साहनी को प्रभूत मात्रा में प्रभावित किया और उनकी वेदना 'तमस' जैसे उपन्यासों में एवं 'अमृतसर आ गया' जैसी कहानियों में द्रवित हो उठी है । जिसकी विवेचना आगे के अध्यायों में की है तथा इस अध्याय में भी व्यवहारिक पक्ष में की जाएगी ।

इसका तात्पर्य यह है कि कथा–साहित्य का युग–बोध के साथ बड़ा गहरा संबंध है । युग की उपेक्षा करके कहानियाँ और उपन्यासों की सर्जना चाहे साहित्यिक दृष्टि से कितनी ही मूल्यवान क्यों न बन सके परंतु मानवीय मूल्यों की दृष्टि से उन्हें स्वीकार करना संभव नहीं हो पायेगा । अर्थात् कल्पना प्रसूत साहित्य जो अपने युग की अवहेलना कर जाता है । वह वाणी विलास बनकर रह जाता है ।

❖ *युग–बोध का बर्हिजगत :*

जब हम साहित्य और युग बोध पर अवलोकन करते है जो मूलतः दो प्रकार के युगबोध का अध्ययन अपेक्षित होता है

(१) युग–बोध का बहिर्जगत

(२) युग–बोध का अन्तर्जगत

अर्थात् आंतरिक पक्ष और बहिर्पक्ष । जिस प्रकार जीवन के दो पक्ष हैं – बहिर्पक्ष और आंतरिकपक्ष उसी प्रकार युग–बोध के भी दो पक्ष स्वीकार किये जा सकते हैं । सामान्यतः युग–बोध के बर्हिजगत के अंतर्गत सामाजिक बोध,

राजनीतिक बोध, आर्थिक बोध एवं सांस्कृतिक बोध का अध्ययन किया जाता है । इसे हम यह भी कह सकते हैं कि युगीन विविध परिस्थितियों अर्थात् सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का अध्ययन किया जाता है । इस युग की अपनी अलग परिस्थितियाँ होती है, और साहित्यिक मूल्यांकन करते समय उन परिस्थितियों के संदर्भ में ही उस साहित्य का मूल्यांकन किया जाना चाहिए ।

जब हम भीष्म साहनी के साहित्य का अवलोकन करने जा रहे हैं तब हमें इन परिस्थितियों का अवलोकन करना चाहिए । वैसे देखा जाय तो भीष्म साहनी के युग में देश के विभाजन ने चारों तरफ अफड़ा–तफड़ी और अराजकता फैला दी थी । मानवीय मूल्य ध्वसं होते जा रहे थे । जाति–हिन्दू और मुसलमान की चेतना प्रबल बनती जा रही थी । मिथ्या धार्मिक और सांस्कृतिक भावों के परिवेश में दिन–रात हिन्दू–मुस्लिम दोनों संस्कृतियों का संघर्ष चरम–बिंदु पर बढ़ता जा रहा था । जहाँ पूरे देश में अनिश्चितता की स्थिति हो वहाँ आर्थिक स्थिति की संपन्नता की परिकल्पना तो मृग मरीचिका सी बात है । राजनीति के स्तर पर हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों अपने आप को प्रस्थापित करने में लगे हुए थे । कहीं भी न्याय, नीति, ज्ञाति दिखाई नहीं देती थी । इन सबका चित्रण भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में दिखाई देता है । उस समय की भ्रष्ट राजनीति, आर्थिक दृष्टि से टूटते हुए परिवार और मानवीय दृष्टि से टूटते हुए समाज का बड़ा हृदय द्रावक चित्र इनके कथा साहित्य में उपलब्ध होता है ।

❖ *युग–बोध का अंतर्जगत :*

जिस प्रकार जीवन के दो पक्ष की परिकल्पना साहित्यकारों ने की है – बाह्य जीवन और आंतरिक जीवन । ठीक उसी प्रकार बोध अर्थात् परिज्ञान की परिकल्पना भी दो प्रकार से की गई है, बहिर्जगत और अंतर्जगत । एक ऐसा

जीवन है जो बाह्य रूप से दिखाई देता है जिसको समझन अपेक्षाकृत सरल है । इसे बाह्य जीवन कहते है, परंतु एक ऐसा भी जीवन है जिसे केवल बाह्य रूप से देखकर समझना कठिन कार्य हो जाता है । क्योंकि उसका संबंध हमारे जीवन के आंतरिक मूल्यों से जुड़ा हुआ है । जैसे आधुनिक–बोध, मूल्य–बोध, नैतिक–बोध, आदर्श–बोध, यथार्थ–बोध, अस्तित्व–बोध, विसंगति संत्रास बोध, अध्यात्म एवं ईश्वरीय बोध इन सारे मूल्यों, आदर्शों जिन्हें हम परिज्ञान के स्तर पर बोध कह सकते हैं । इनका अध्ययन इसके अंतर्गत किया जाता है ।

मनुष्य केवल रोटी–पानी खाने वाला और श्रम करने वाला प्राणी ही नहीं है, बल्कि सभी प्राणियों में वह एक श्रेष्ठ प्राणी है । इसीलिए हमारी स्मृतियाँ कहती हैं – ‘‘नहि श्रेष्ठतरं हि किंचित् मानुषात् ।’’ अर्थात् मनुष्य से बढ़कर कोई श्रेष्ठ प्राणी नहीं है । मनुष्य में भी जो शिक्षित व्यक्ति है, सहृदय व्यक्ति है, जागृत व्यक्ति है वह समाज के उन्नयन के लिए कार्य कर सकता है । इसीलिए देखा जाता है कि समाज के कुछ प्रबुद्ध लोग कुछ ऐसे, कार्य कर जाते हैं जिसकी परिकल्पना भी संभव नहीं हो पाती है । यदि धार्मिक दृष्टि से देखा जाय तो महात्मा बुद्ध, तुलसी, महर्षि दयानंद सरस्वती जैसे महापुरुषों को याद किया जा सकता है । इन्होंने एक व्यक्ति के रूप में भी जो समाज हित का कार्य किया वह सदैव मानवता के इतिहास में याद किया जाता रहेगा । ऐसे ही राजनीतिक दृष्टि से आधुनिक युग में महात्मा गाँधी ने जो काम किया, नैतिकता तथा आदर्श मूल्यों का जो पाठ पढ़ाया वह कभी नहीं भुलाया जा सकता ।

इस विवेचन का तात्पर्य इतना ही है कि मनुष्य जीवन को प्रतिष्ठित सम्मानित करने के लिए या जीवंत बनाये रखने के लिए अन्न जल की जितनी आवश्यकता है उससे कहीं बहुत आवश्यक उसके जीवन के लिए आदर्श मूल्यों की आवश्यकता है । उन्हीं मूल्यों का अध्ययन इस युग–बोध के अंतर्गत किया जाता है ।

मेरा विषय भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में 'युग–बोध' है । अतः युगबोध के बहिर्जगत और अंतर्जगत का मूल्यांकन करना मेरा धर्म है । परंतु स्फीति भय के कारण मैंने भीष्म साहनी के युग बोध को बहिर्जगत और अंतर्जगत इन दो भेदों में बाँटकर अध्ययन न करने की अपेक्षा एक साथ जोड़कर अलग–अलग मुद्दो में देखने परखने का काम किया है । भीष्म साहनी एक ऐसे कथाकार थे, जो सांप्रदायिकता से कभी समझौता नहीं कर सकते थे । भ्रष्टाचार और अनैतिकता के प्रति उनके मन में जबरदस्त घृणा थी । आदर्श मूल्यों के प्रति उनके मन में अपार भावना थी, तो आडंबर पूर्ण धार्मिकता के प्रति उनके मन में घृणा थी । संयुक्त परिवार के प्रति आदर की भावना थी, तो भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के प्रति आक्रोश था । अर्थात् वे एक ऐसे सहृदय कथाकार थे जिनकी कहानियों और उपन्यासों में तत्कालीन जीवन अपनी समग्रता में अभिव्यक्त हो पाया है । उस समय की पीड़ा उनकी कहानियों और उपन्यासों में मुखरित हो पाई हैं जो बरबस पाठक को बाँध लेती है ।

मैंने इस अध्याय में भीष्म साहनी के युग–बोध को भीष्म साहनी की कहानियों में युग–बोध तथा भीष्म साहनी के उपन्यासों में युग–बोध इस प्रकार विभाजन करके अध्ययन करना समुचित समझा है और इसी रूप में उनके युग बोध का अध्ययन किया जा रहा है ।

३. भीष्मी साहनी की कहानियों में युग–बोध :

साहनी स्वतंत्रता के पश्चात् छठ्वें दशक के एक सिद्ध हस्त कहानीकार हैं । स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय जन–जीवन में बहुत अधिक बदलाव आया है । बढ़ते हुए विज्ञान के प्रभाव ने मनुष्य को आवश्यकता से अधिक बुद्धिवादी बना दिया है । परिणाम स्वरूप आस्था और विश्वास जैसे गुण मृत–प्राय होते जा रहे हैं । दुर्भाग्य की बात तो यह है कि आज सूर्यलोक और चंद्रलोक की यात्रा करने वाला व्यक्ति अपने परिजनों, स्वजनों तथा समाज के प्रति अपने

दायित्व को भूलता जा रहा है । सारी वैज्ञानिक एवं भौतिक सुख सुविधाओं के होते हुए भी मनुष्य सुख–शांति की जिंदगी नहीं जी रहा है, बल्कि कहीं अभावग्रस्त होकर अकेलेपन के टूटन में भटक रहा है । छठ्वें दशक के कहानीकारों के सामने यही स्थिति थी । आर्थिक–विसंगति, मूल्यविघटन की स्थिति तथा अधिक सुखी होने के मोह भंग ने हमें और अधिक मृतप्राय किया है । परिणाम स्वरूप हमारे सारे मानवीय संबंध मृतपाय होते जा रहे हैं । नैतिकता, मानवता, सहृयता, औदार्य जैसे शब्द अपनी सार्थकता खोते जा रहे है । इन सब का चित्रण स्वातंत्र्योत्तर कहानी ने बड़े ही यथार्थ रूप में मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है ।

“आज का कहानीकार न तो शास्त्रज्ञ होने का दावा करता है और न कहानी द्वारा समाज में क्रान्ति लाने का । उसे तो आज़ादी के बाद की हमारी अर्थ–व्यवस्था और राजनीति ने सामान्य आदमी को कहाँ और किन–किन तरीकों से तोड़ा है, उसे संवेदना के धरातल पर उभारने की कोशिष किया है ।”[११]

स्वातंत्र्योत्तर कहानी को ‘नई कहानी’ की भी संज्ञा दी गई है । स्वतंत्रता के बाद जो नई चीजें उभरकर हमारे सामने आई थी । वे अपने आप में ‘नई’ या ‘नयापन’ थी । साहनी जी ने सन् १९३४ से कहानी लिखना शुरु किया था । तत्कालीन समस्याएँ हमारे सामने जहरिले सर्प की तरह फन फैलाकर खड़ी थी । जिनका बड़ी बखूबी से निरूपण साहनी ने किया है ।

साहनी जी की अपनी विशिष्ट साहित्यक अवधारणा थी । उनका मानना था – “साहित्य जीवन से ही जन्म लेता है । साहित्य का जीवन के साथ अटूट संबंध है, तरह–तरह के अनुभव, घटनाएँ, आपसी रिस्ते, मानव–समाज के भीतर चलनेवाले संघर्ष, विसंगतियाँ, अंतर्विरोध विडंबनाएँ आदि सभी जीवन की परिधि में आते हैं । ये सब लेखक के संवेदन को कहीं छूते हैं, उद्वेलित करते हैं । जहाँ तक साहित्य द्वारा सामाजिक परिवर्तन लाने का सवाल है, यह प्रक्रिया बडी जटिल है, धीमी है ।”[१२] अर्थात्साहित्य और जीवन के अभिन्न संबंध को

स्वीकार करते हुए, साहनी जी विविध समस्याओं के परिस्कार की कल्पना करते हैं । वे साहित्य का धर्म सामाजिक सुधार मानते हैं । यही उदात्त विचार उनकी कहानियों में व्यक्त हुए हैं ।

साहनी की कहानियाँ स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज के समग्र परिवर्तित रूप को मानवतावादी और मार्क्सवादी दृष्टि द्वारा मानव के अस्तित्व को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और यत्र–तत्र मनोवैज्ञानिक संदर्भ में उभारती है । कहीं–कहीं उनकी कहानियों में कमजोर और निम्न वर्ग के पात्रों में भी नवीन चेतना, संवेदना और निम्न वर्ग के पात्रों में भी नवीन चेतना, संवेदना और संघर्ष के प्रति जागृति दिखाई देती है । आज कहानी, साहित्य की एक मुख्य विधा बन चुकी है । क्योंकि आज की कहानी में समकालीन यथार्थ को मूर्तिमंत करने का प्रयास हो रहा है । कहानीकार अपनी पूरी प्रतिभा के माध्यम से मानवमन की प्रत्येक प्रवृत्ति को खोल देना चाहता है । इसे ही साहित्य में युग बोध या यथार्थ–बोध कहते हैं । कहानीकार को कल्पना लोक से कोई सरोकार नहीं है ।

साहनी जी प्रगतिशील कहानीकार हैं । जिनका दृष्टिकोण मानवतावादी है । अधिकांशतः इनकी कहानियों के पात्र मध्यम वर्ग से लिये गये है । लगता है कि मध्यम वर्ग उनका अधिक जाना–पहचाना है । साहनी ने कहानी की संरचना में प्रामाणिकता को अधिक महत्त्व दिया है । उन्हीं के शब्दों में ‘‘कहानी का सबसे बड़ा गुण मेरी नज़र में उसकी प्रामाणिकता है उनके अंदर छीपी सच्चाई जो हमें जिंदगी के किसी पहलू की सही पहचान कराती है तभी वह जीवन के यथार्थ को पकड़ पाती है ।’’[१३]

साहनी ने अपनी कहानियों के माध्यम से आधुनिक समाज की विभिन्न समस्याओं को उद्‌घाटित किया है । आर्थिक–विषमता, मूल्य–विघटन की समस्या वर्ग–भेद की विषमता, विवाह–समस्या, अनमेल–विवाह की समस्या, भ्रष्ट राजनीति तथा भ्रष्टाचार की समस्या, धार्मिक–सांप्रदायिक अंधविश्वास की समस्या, वेश्या

समस्या आदि को युगीन संदर्भो में व्यक्त किया है । हम लेखक के उस जीवंत युग–बोध की विचारसरणी को प्रस्तुत करेंगे ।

❖ *आर्थिक विषमता :*

स्वतंत्रता के पश्चात् जीवन सुखमय होगा, नये प्रभात का उदय होगा, हम नयी रोशनी में नये जीवन का मंगलमय प्रभात मनायेंगे । परंतु ये सारे स्वप्न स्वप्न बनकर ही रहे गये । स्वतंत्रता के बाद बढ़ती हुई भयावह जन संख्याने बहुविध समस्याओं को जन्म दिया । जिनके मूल में आर्थिक विषमता है । साहनी की कहानियों में निम्नवर्ग, मध्यमवर्ग एवं उच्चवर्ग के बीच की विषमता का बड़ा प्रामणिक चित्रण है । जो उनके युग–बोध का परिज्ञान कराता है । 'पट्टरियाँ' कहानी में केशोराम एम.ए. पास है लेकिन अर्थाभाव के कारण उसे ठोकरे खानी पड़ती है । मित्रमंडल, परिवार के सदस्य, रिश्तेदार सब उन्हें तिरस्कार और घृणा की दृष्टि से देखते है । केशोराम कहता है – "सबसे बड़ी चीज़ दुनिया में पैसा है । पोजीशन है बाकी सब ढकोसला है, सब बकवास है । ताकत, पैसा और रोष–दोष इनसे बढ़कर कोई चीज़ दुनिया में नहीं है ।"[१४]

व्यक्ति के मन में सफलता के न मिलने पर निराशा उत्पन्न होने पर किस स्थिति का अहसास होता है । केशोराम के शब्दों में देखिए – "उसे अपनी स्थिति के बारे में सोच कर वितृष्णा हुई, पहले भी मैं पैर घसीटता था, आज भी घसीटता हूँ । वर्षो से घसीटता चला आ रहा हूँ । जिंदगी में कुछ बना बनाया नहीं है । सारी जिंदगी मिट्टी में खो गई है.. ।"[१५]

धन–संपत्ति से समृद्ध तथा कथित उच्च वर्ग के लोग किस प्रकार निम्न वर्ग के लोगों को अपनी स्वार्थ–वृत्ति तथा अहम् भावना का शिकार बनाते हैं इसका जीता–जागता चित्र 'साग–मीट' कहानी में प्रस्तुत हुआ है । नौकर जग्गो मालिक के घर में बीस वर्ष तक इमानदारी से नौकरी करता है । तथा घर

दफ्तर में परिवार के सदस्य की तरह सब लोगों की सेवा करता है । मालिक का छोटा भाई कुकर्म करके जग्गो की पत्नी को फँसा लेता है और जग्गो को आत्म हत्या करनी पड़ती है । इस कहानी के मुख्य पात्र जग्गो के लिए व्यक्त ये वाक्य सदा सत्य हैं – "कहने लगे सो पचास देदो तो गरीब का मुँह बंध हो जाता है ये सब का भला ही सोचते हैं । किसी का बुरा नहीं सोचते । हर किसी की मदद ही करेंगे ।"[९६] इस कथन के माध्यम से साहनी ने साधन सम्पन्न और निम्नवर्ग के बीच की आर्थिक विषमता और उससे उत्पन्न विवशता का यथार्थ चित्रण किया है ।

'खून का रिश्ता' कहानी में पारंपरिक मूल्यों के विघटन के कारण उत्पन्न होती हुई, आर्थिक विषमता का चित्रण मिलता है । कहानी का मुख्य पात्र मंगलसेन पचास साल का बूढ़ा बुजुर्ग है, लेकिन निर्धनता के कारण परिवार के सभी सदस्य इसका तिरस्कार करते हैं भला–बुरा कहते हैं और घृणा से देखते हैं । जब भतीजे की सगाई में जाने का अवसर आता है, तब उसे साफ इन्कार कर देते हैं । तब वीरजी कहता है – "माजी अभी तो आप कह रही थी कि खून का रिश्ता है । किधर गया खून का रिश्ता ? चाचाजी गरीब है इसलिए ।"[९७] इस प्रकार आर्थिक विषमता को निरुपित किया गया है ।

साहनी ने आर्थिक विषमता के चित्र को 'झूमर', 'आवाज', 'मरे से पहले', तथा 'अनूठे साक्षात' आदि कहानियों में बड़ी सच्चाई के साथ उठाया है । अर्थात् उनकी सच्ची अनुभूति अभिव्यक्त हो पाई है ।

❖ *सांप्रदायिक संघर्ष :*

आधुनिक कहानीकार ने सांप्रदायिक संकीर्णता की दीवारों को अपने ढंग से गिरा देने की चेष्टा की है । देश विभाजन के समय दोनों सिमाओं के पार जिस भयावह स्थिति का अनुभव साहनी ने किया है उसका बड़ा ही दुःखद चित्र उपस्थित किया है । 'सरदारनी' कहानी हिन्दू–मुस्लिम–सांप्रदायिक संघर्ष को व्यक्त

करती है – "उधर हिन्दुओं के मुहल्ले में ये बात तेजी से फैल रही थी कि जामा मस्जिद में लाठिओं के ढेर लग रहे हैं और घडाघड असला इकट्ठा किया जा रहा है, दो दिन से पहले नदी पार से एक पीर आया था और रात को वकील के घर में साजिषें पकाई जा रही हैं ।"[१८]

'अमृतसर आ गया है' कहानी में सांप्रदायिकता का कितना भयावह चित्र प्रस्तुत हुआ है – "बहुत बुरा किया है तुम लोगों ने बुढ़िया उचा–उचा बोल रही थी । तुम्हारे दिल में दर्द मर गया है । छोटी सी बच्ची उसके साथ थी । बेरहमों तुमने बहुत बुरा किया है, धक्के देकर उतार दिया है ।" ओबे पठान के बच्चे नीचे उतर तेरी माँ की ... नीचे उतर तेरी उस पठान बनाने वाली की मैं..।"[१९]

इस प्रकार जाति और संप्रदाय के नाम पर उस समय जो भयावह स्थिति चल रही थी । उसका बड़ा ही दर्दनाक चित्र साहनी ने प्रस्तुत किया है, जो पाठकों को सोचने के लिए विवश कर देते हैं ।

❖ *किसान–जीवन का उत्पीडन :*

भारत गाँवों का देश है । जहाँ की अधिक से अधिक जनता गाँवों में निवास करती है और कृषि पर अपना जीवन निर्वाह करती हैं । दुर्भाग्य की बात है कि आज़ादी के इतने वर्षों के बाद भी किसानों के जीवन में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आ पाया । आज भी अंधविश्वास, शोषण, गरीबी आदि समस्याएँ पूर्ववत् बनी हुई हैं । जहाँ भारतीय नगरों, महानगरों का विकास हुआ है । वहां ग्रामीण प्रजा आज भी कसमकस में जीवन यापन कर रही है । आज भी किसान, उत्पीड़न के कारण आत्महत्या के लिए विवश होते जा रहे हैं । यह समस्या भीष्म साहनी के युग में भी थी और आज भी उसी रूप में बनी हुई है । साहनी ने 'जोत' कहानी में इस प्रकार के ग्रामीण किसान–जीवन का बड़ा ही यथार्थ हृदयद्रावक चित्रण उपस्थित किया है । इस कहानी का नायक किसान

जानकू गरीब है, तो भोला अंधविश्वासी है । उनका मनचाहा शोषण करनेवाले पटवारी, पंडित, पुरोहित, पुजारी तथा अफसर आदि आज भी जीवित हैं । गाँव का पूरा शोषक वर्ग अपने संकुचित स्वार्थो के लिए अनपढ़, अशिक्षित, अभावग्रस्त किसानों का शोषण करते हैं । अर्थात् ये शोषक वर्ग ही उनकी इस दयनीय दशा के लिए उत्तरदायी हैं ।

'बाप–बेटा' कहानी में जमींनदार बाप अपना कर्ज भरपाई करने और अपनी जमीन बचाये रखने की लालसा से अपने बेटे को फौज में भरती करवा देता है । बाप बेटे से कहता है कि तुम्हारे तनख्वाह सीधे ही भेज देना वरना जमीन हाथ से निकल जायेगी । जमीन किसान को अपनी जान से भी प्यारी है । बाप के शब्दों में किसान–जीवन की आर्थिक विडंबना के संकेत मिलते हैं – ''बस सिर्फ मोहलत बाकी है अगर उसे वक्त में पैसे नहीं मिले तो जमीन छिन जायेगी ।''[२०]

इस प्रकार की उत्पीड़न की परिस्थिति किसानों के साथ कल भी थी और आज भी उसी रूप में बनी हुई है । आज भी किसान पीढ़ियों तक जमींदारों से ऋण मुक्त नहीं हो पाता है । और बहुत सारी लालसाओं, इच्छाओं और कल्पनाओं का दमन करके दयनीय विडंबनापूर्ण जीवन जीता है । भारत सरकार ने उन किसानों के प्रति सहृदयता तो व्यक्त की है परंतु उसका शुभ परिणाम आज भी किसानों को नहीं मिल पा रहा है । समाज के धनी वर्ग के लोग, जमींदार, शाहूकार आदि उनका निरंतर शोषण कर रहे हैं । भीष्म साहनी जी प्रेमचंद की परंपरा के परिपोषक कथाकार थे । अतः उन्होंने इन किसानों के प्रति अपनी सहृदयता व्यक्त की है । उनका मानना है कि जिस प्रकार 'गोदान' का होरी किसान–जीवन का परित्याग कर मजदूरी करने के लिए विवश होता है, तो गोबर ग्रामीण जीवन से भाग कर शहरी जीवन को अंगीकार करता है । ठीक उसी प्रकार की परिस्थिति का शिकार आज का किसान बना हुआ है । वह कृषि–जीवन से पलायन करना चाहता है और नौकरी को महत्त्व देने लगा

है । एक समय यह उक्ति प्रचलित थी “उत्तम खेती, मध्यम बान, नीच चाकरी” अर्थात् नौकरी करना हेय कार्य था और खेती करना उत्तम कार्य था । परंतु आज किसान–जीवन का उत्पीड़न इतना अधिक बढ़ गया है कि वह अपने महत्तम कार्य को छोड़कर निष्कृष्ट कार्य के प्रति उत्कट बनता जा रहा है । परिणाम स्वरूप गाँव खाली होते जा रहे हैं और शहरों की समस्याएँ विकट बनती जा रही हैं । इनका बड़ा जीता जागता चित्र साहनी की कहानियों में सुलभ होता है ।

❖ *शिक्षा जगत की भ्रष्टाचारिता :*

भारत वह देश था, जहाँ पश्चिमी दुनिया के लोग ज्ञानार्जन के लिए आया करते थे । यह गुरुणाम गुरु देश था, परंतु विविध विदेशी आक्रमणों के कारण देश की शिक्षा–दीक्षा मृत–प्राय होती गई । अंग्रेजो ने इस देश में जिस शिक्षा–पद्धति का प्रवर्तन किया उसमें भारतीय संस्कृति कहीं भी दिखाई नहीं देती । हमारी शिक्षा–नीति, नियमों, आचारों, आदर्श–विचारों और उदात्त मानवीय मूल्यों की सम्वाहिका थी, परंतु दुर्भाग्य है कि आज की शिक्षा–पद्धति में करनी और कथनी में कहीं साम्य नहीं है । छात्रों को उच्च्व आदर्शों की शिक्षा तो दी जाती है पर जीवन–व्यवहार में कहीं उसका महत्त्व नहीं दिखाई देता ।

साहनी जी ने जहाँ समाज की अनेकानेक बुराइयों को अपनी कहानियों में स्थान दिया है वहाँ शिक्षा–जगत की बुराइयों को भी मुखरित किया है । “पहला पाठ” कहानी के बालक देवव्रत को पढ़ाया जाता है कि मानव मात्र से प्रेम करना चाहिए । लेकिन जब वह छात्र एक अछूत लड़के को गले से लगा लेता है तब गुरुजी उसे डाटते हैं । “यह अछूत है ? यह तुझे अछूत नज़र आता है ? यह तो मुसलमान है ।”[२१]

‘इमला’ कहानी के माध्यम से साहनी जी ने शिक्षा–संबंधी मूल्यनिष्ठा पर करारा व्यंग्य किया है । हमारी प्राचीन शिक्षा–परंपरा लुप्त होती जा रही है ।

उसके प्रति अब हम जागरुक नहीं है । इस कहानी के मुख्य पात्र रामदास मास्टर को वफादारी और आदर्श भावना के कारण ठोकरे खानी पड़ती हैं । उसे कोई भी स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं । रामदास के इन शब्दों को देखिए – "नहीं, मगर इस तरह से तो नहीं चलेता, हेड मास्टर साहब । यदि लड़के को बेइज्जती करने दी गई तो, स्कूल में किसी मास्टर की भी इज्जत नहीं रहेगी ।"[२२] शिक्षक और विद्यार्थी के बीच में जो मर्यादा की आदर्श दिवाल होनी चाहिए वह आज कहीं दिखाई नहीं देती । रामदास मास्टर स्कूल के प्रधान पुत्र को डाँटते हैं, तो उनका लड़का मुँह तोड़ उत्तर देता है । मास्टर जी जब प्रधान के पुत्र की शिकायत लेकर उनके पास जाते हैं तो प्रधान जी का रोष–दोष देखकर अपना बयान बदल देना पड़ता है । क्योंकि उन्हें भय है कि कहीं प्रधान जी मुझे नौकरी से ही न निकाल दे । इस तरह शिक्षा–जगत की इन संकीर्णताओं, शिथिलताओं, अविवेकी विचारों, निर्णयों आदि का बड़ा ही यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है । साहनी जी तो भारतीय शिक्षा पद्धति की इस परंपरा के 'सा विद्या या विमुक्तये' के परिपोषक थे, परंतु पश्चिमी शिक्षाकरण ने हमारी बुद्धि, विवेक, संयम और आचरण को कितना दयनीय बना दिया है, इसका उल्लेख साहनी जी की कहानियों में बड़े ही यथार्थ रूप में दिखाई देता है ।

❖ *भ्रष्टाचार और अनैतिकता :*

भारत वह देश है, जहाँ सदा से नैतिकता का पाठ पढ़ाया जाता रहा है । जहाँ के लोग अनीति, अन्याय और भ्रष्टाचार को पाप कहकर उसकी उपेक्षा करते थे । वहीं आज भ्रष्टाचार की चेतना सर्वत्र एक आवश्यक अंग बन गई है । भ्रष्टाचार और अनैतिकता समाज के लिए दूषण या अवगुण न होकर एक गुण बन गये हैं । साहनी जी जैसे नैतिकवादी, मानवतावादी, उदात्त मूल्यो से, परिपोषककहानीकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से भ्रष्टाचार और अनैतिकता का खुलकर विरोध किया है । दुर्भाग्य यह है कि इस देश में

पूँजीपति वर्ग के लोग ही भ्रष्टाचार का आचरण करते हुए दिखाई देते हैं। 'फैसला' कहानी में साहनी ने न्याय के क्षेत्र में पूँजीपतियों के भ्रष्टाचार का यथार्थ चित्रण किया है। न्यायधीश शुक्ल जी न्याय के क्षेत्र में बड़े नेक और ईमानदार व्यक्ति है, लेकिन पूँजीपति वर्ग के सामने उन्हें झुकना पड़ता है। वर्तमान समय की विध्वंसकारी परिस्थिति में नैतिकता और आदर्श के मूल्यों को बनाये रखना बड़ा कठिन कार्य है। 'फैसला' कहानी का नायक हीरालाल कहता है – "सरकारी नौकरी का उसूल ईमानदारी नहीं है। दफ्तर का फाइल है। सरकारी अफसर को दफ्तर की फाइल के मुताबिक चलना चाहिए। न एक इंच इधर, न एक इंच उधर। यह जानने की कोशिश नहीं करनी चाहिए कि सच क्या है और झूठ क्या है, यह उसका काम नहीं।"[२३] यही कारण है कि शुक्ल जी जैसे व्यक्ति अनैतिकता के सामने आँख तो उठाते हैं, पर सफल नहीं हो पाते हैं। क्योंकि पूरे समाज–जनित मूल्यों में अनैतिकता ही परिव्याप्त है।

न्याय मंदिर की तुला ही जब असंतुलित और भ्रष्ट हो गई है, तब सामान्य प्रजा न्याय की अपेक्षा और परिकल्पना कैसे कर सकती है। इसके अभाव में सामाजिक जीवन का उत्थान कैसे संभव हो सकता है ? इस प्रकार साहनी जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज में परिव्याप्त, भ्रष्टाचार और अनैतिकता पर बड़ा कठोर प्रहार किया है। परतुं तथाकथित, उच्चवर्ग उसकी दरकार नहीं करता।

❖ *विवाह–अनमेल–विवाह की समस्याएँ :*

भारतीय जनजीवन में विवाह का बड़ा महत्त्व रहा है। दाम्पत्यजीवन की एकसूत्रता बनाये रखना ही उसकी सफलता है; परंतु समय–परिवर्तन के साथ दाम्पत्य जीवन में जो एक दूसरे के प्रति विश्वास और समर्पण की भावना थी, वह क्षीण होती गई है। पश्चिमी सभ्यता संस्कृति ने हमें इतना अधिक प्रभावित किया है कि हम दाम्पत्य जीवन के गौरव को ही भूल बैठे हैं। आज विवाह

एक तमाशा बन कर रह गया है । उसमें अनमेल–विवाह तो जीवन के लिए अभिशाप बन जाता है ।

वर्तमान परिदृश्य में स्त्री–पुरुष का विवाह संबंधी दृष्टिकोण पूरी तरह बदल चुका है । आज विवाह में प्रेम, भावात्मक संवेदना या पारस्परिक आस्था विश्वास को महत्त्व न देकर आर्थिक सम्पन्नता को महत्त्व दिया जाने लगा है । इसमें मध्यमवर्गीय परिवार की युवतिओं के लिये योग्य साथी ढूढ़ने की समस्या जटिल बनती जा रही है । दहेज–प्रथा, सौदाबाजी प्रवृत्तिओं के कारण आज वैवाहिक संबंध द्विधात्मक बनते जा रहे हैं ।

साहनी ने इस तथ्य को देखा और अनुभव किया है । उनकी कहानियाँ इसकी प्रत्यक्ष उदाहरण है । 'पास–फैल' कहानी में लेखक ने इस तथ्य को बड़े यथार्थता के साथ निरुपित किया है । इस कहानी की नायिका मुन्नी पढ़ी लिखी और संगीत में प्रवीण युवती है, परंतु उच्च घराने के लोग उसे पसंद नहीं करते, यह युग की सच्चाई है, जो रघुनाथ के शब्दों में स्पष्ट हुई है – "तुम्हें इससे बढ़ियाँ लड़की मिल सकती है । यह लड़की ढाई–तीन सौ तनख्वाह पाने वालों के लिए ठीक है । तुम तो साढ़े पाँचसो पाते हो ।"[२४]

ऐसे ही अनमेल विवाह की समस्या भी समाज के लिए एक जटिल समस्या बन गई है । अक्सर यह देखा जाता है कि एक योग्य लड़की किसी अयोग्य पुरुष के हाथों में आर्थिक कमजोरी के कारण सोंप दी जाती है, और उसका जीवन कितना दयनीय और विडंबनापूर्ण बन जाता है । इसका संकेत साहनी जी ने 'राधा–अनुराधा', में व्यक्त किया है । इस कहानी के माध्यम से निम्नवर्ग की संकीर्ण मनोवृत्ति का बड़ा यथार्थ परिचय दिया है । राधा की शादी एक गूँगे के साथ होती है, जो होस्टेल में काम करता है । राधा का पिता एक बूढ़े से शादी करवाना चाहता था, परंतु राधा ने अपनी मरजी से उस बूढ़े की अपेक्षा गूँगे को पसंद किया क्योंकि बूढ़े के साथ उसका जीवन दाम्पत्य सुख को कभी भी भोगने में समर्थ नहीं हो पाता । देखा जाय तो इन दोनों ही

परिस्थितियों में उस युवती का कोई जीवन नहीं है फिर भी वह विवशता वश उस गूँगे को स्वीकार कर लेती है ।

इस प्रकार समाज में न जाने कितनी 'मुन्नी' और 'राधा' हैं जो इस अनमेल विवाह की विभीषिका में संतृप्त होती हुई दिखाई देती है । साहनी जी के युग में यह मध्यमवर्गीय समाज की नियति बन चुकी थी । जिसका बड़ा ही करुण चित्र उनकी लेखनी से अभिव्यक्त हो पाया है ।

❖ *वैधव्य–जीवन की विडंबनाएँ :*

भारतीय समाज में वैधव्य जीवन एक अभिशाप माना जाता रहा है । परिवार कुटुंब में या समाज में एक विधवा नारी को न हँसने का अधिकार होता है न समुचित आनंदपूर्ण जीवन जीने का । वह समाज में उपेक्षित, तिरष्कृत होकर जीवन व्यतीत करती है । उसके जीवन की सारी खुशियाँ मृतप्राय हो जाती हैं । किसी मांगलिक शुभ प्रसंग में उसकी उपस्थिति परिवार कुटुंब या समाज द्वारा हँसकर स्वीकार नहीं की जाती है । उसे एक अपशकुन के रूप में देखा जाता हैं । साहनी ने अपने समय के समाज उनके रहन–सहन और सोच–विचार को बड़े नज़दीक से देखा और अनुभव किया है । वही अनुभूति की सच्चाई उनकी कहानियों में अभिव्यक्त हुई है ।

'तस्वीर' कहानी इस दृष्टि से विशेष रूप से उल्लेखनीय है । इस कहानी के मुख्य पात्र के रूप में लेखक ने एक परिवार के लोग तथा श्वसुर आदि सभी उसे तिरस्कार और घृणा की दृष्टि से देखते हैं । उसे भला–बुरा कहते हैं । जब वह श्वसुर गुजरान चलाने के लिए उसे घर की सारी चीजें बेच देने के लिए आदेश देते हैं । तब वह विधवा स्तब्ध रह जाती है । साहनी जी विधवा के प्रति सहानुभूति रखने वाले सुधारावादी दृष्टिकोण के कहानीकार थे । उन्होंने इस प्रसंग को इस विधवा नारी के मुख से इस रूप में प्रस्तुत कराया है । "जी नहीं, मैं छोटा–मोटा काम ढूँढ लूँगी ।"[२५] यहाँ पर साहनी जी ने

उस विधवा के प्रति थोड़ी सहानुभूति व्यक्त करते हुए, यह बताने का प्रयत्न किया है कि परिजनों के आतंक के साथ कर्मठ बनकर अपने बच्चों का पालन और जीवन यापन करना चाहती है । फिर भी यह तो स्वीकार करना ही होगा कि विधवा जीवन की विडंबना एक समस्या बनी हुई है ।

❖ *मूल्य–बोध :*

साहनी जी की शिक्षा–दीक्षा तो पश्चिमी ढंग से हुई थी, परंतु वे भारतीय संस्कृति और मूल्यों के पोषक थे । भारतीय प्राचीन स्वस्थ प्रंरपरा के प्रति उनका अधिक लगाव था । परंतु आज़ादी के प्रश्चात् परंपरागत मूल्यों के विघटन की जो स्थिति पैदा हुई है उसके प्रति उनके मन में गहरी पीड़ा है । वे सदा माता–पिता की सेवा, आदरभाव, सम्मान आदि के पक्षधर थे, परंतु इन सारे मूल्यों के टूटने की स्थिति से वे अधिक दुःखी हैं । 'चीफ की दावत' कहानी संक्रांति युग के प्रमुख अंतर विरोधो को प्रस्तुत करती है । मध्यमवर्गीय जीवन के अंतर्विरोध को इस कहानी में बड़ी सूक्ष्मतापूर्वक उद्घाटित किया गया है । मि. शामनाथ अपनी महत्त्वाकांक्षा की तृप्ति के लिए दावत देते हैं । दावत के अवसर पर घर की साफ–सफाई की जाती है । घर का फालतू सामान एक घर में बंध कर दिया जाता है । तभी शामनाथ के सामने एक बड़ी सी अड़चन खड़ी हो जाती है – "मां का क्या होगा ? रामनाथ कहते हैं – "तो इन्हे कह देंगे कि अंदर से दरवाजा बंध कर दे । मैं बाहर से ताला लगा दूँगा । या माँ को कह देता हूँ कि अंदर जाकर सोये नहीं, बैठी रहे और क्या ? माँ आज जल्दी सो नहीं जाना तुम्हारे खुराटों की आवाज दूर तक जाती है ।"[२६]

यहाँ पर साहनी ने ये बताने का प्रयत्न किया है कि शामनाथ परंपरागत संस्कृति के मूल्यों की अवहेलना करके, पाश्चात्य जीवन–दर्शन के मोह में आधुनिकता का जामा पहने स्वयं को हास्यास्पदी स्थिति में डाल देता है ।

'जख्म' कहानी में भी साहनी ने मूल्यविघटन की स्थिति का संकेत किया है । आज युवा वर्ग वृद्ध जनों के प्रति आदर का भाव न रखकर तिरस्कार और घृणा व्यक्त करते हैं । वृद्धों को भला बुरा कहते हैं । उनकी बातें हँसी मज़ाक में उडा देते हैं । इतना ही नहीं बल्कि युवक आवेश में आकर वृद्ध को गाल पर दो–तीन तमाचे लगा देता है और महत्त्वपूर्ण कागज फाड़कर फैंक देता है । तब वृद्ध करुण, भाव से कहता है – "शायद तुम ठीक कहते हो बूढ़ों को जिंदगी से किनारा कर लेना चाहिए । बेहतर है ये अंधकार में डूब जायँ । जन्म लेते ही मर जायें । फिर धीरे से बोला मैं तो दो–तीन बरस में मर जाऊँगा पर तुम ? तुम्हारा क्या होगा ?"[२७]

यह कहानी नई विद्रोही पीढ़ी को चेतावनी देती है । ऐसे ही इस समस्या को 'मेड इन ईटली', 'रामचंदानी' 'तेमर्ग' आदि कहानियों को भी मुखरित किया गया है । इन कहानियों के माध्यम से उन्होंने प्राचीन मूल्यों के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की है । आज बौद्धिक चेतना तथा अधिकाधिक धनोपार्जन की भावना ने सारे सामाजिक, पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है ।

❖ *नारी–जीवन के प्रति स्वस्थ विचार :*

साहनी जी भारतीय सभ्यता–संस्कृति से आमूल चूल प्रभावित थे । भारतीय समाज में नारी को महत्त्व देते हुए लिखा है – "यत्र नारीयस्तु पूजयन्ते, रमन्ते तत्र देवताः ।" अर्थात् जहाँ नारी की पूजा होती है वहीं देवताओं का निवास होता है । साहनी जी में नारी के प्रति कुछ ऐसी ही आस्था दिखाई देती है । समाज का महत्त्वपूर्ण अंग परिवार है, और परिवार में महत्त्वपूर्ण स्थान नारी का है । परिणामतः माँ की ममता, बहन का स्नेह, पत्नी की आदर्श भावना सभी कुछ उनकी कहानियों में देखा जा सकता है । नारी का

दूसरा पक्ष है जिजीविषा । इन सभी समस्याओं का साहनी जी ने अपनी कहानियों में पर्दाफास किया है ।

'सिर का सदका' कहानी की नायिका इशरो, पति को परमेश्वर मानती है, और हर हालत में पति को खुश रखना चाहिए । नारी स्वभाव की एक सहज लालसा होती है । पुत्रैषणा की और अपने पति के वंशवर्धन की ! जब उसे ज्ञात होता है कि मैं संतानोत्पति के लिए सक्षम नहीं हूँ तो पति के सामने अपनी ही छोटी बहन को सौत के रूप में रखने का प्रस्ताव रखती है । उसके बच्चे को अपना समझकर उसे पूरा प्यार देती है । इतना ही नहीं वह पुरुष के अत्याचार और शोषण को भी मूक बनकर स्वीकार करती है । इस प्रकार वह एक आदर्श पत्नी के रूप में दिखाई देती है । उसकी वाणी में युग का सनातन सत्य छिपा हुआ है – "पर मैं कहती हूँ, आपके सिरका सदका मैं बहुत कुछ खा–पहनी चुकी हूँ । मैं घर में बैठी खुश हूँ, आप मेरी चिंता नहीं करे ।"[२८]

'एक रोमान्टिक कहानी' कहानी की नायिका ऐसी ही पत्नी है । जिसको मिरगी के दौरे पड़ते हैं और दौरा पड़ने पर वह किसी पर झपट पड़ता है । सबकुछ तहस–नहस कर देना चाहता है, पर रुकमणि का उसके प्रति मानसिक और आत्मिक स्तर, पर इतना गहरा लगाव है कि उस स्थिति में भी वह अपने पति को इशारे से ही काबू में कर लेती है ।

ऐसे ही 'राधा–अनुराधा' कहानी की नायिका राधा भी अपने बाप की इच्छा के विरुद्ध गूँगे को स्वीकार कर लेती है । जिसके बाह्य जीवन से हास्य प्रस्तुत होता है, तो आंतरिक जीवन से करुणा टपकती है । इस प्रकार साहनी जी ने अपनी कहानियों में नारी पात्रों के बहुपक्षीय जीवन और समस्याओं को मूर्त रूप देने का प्रयास किया है । वे प्रत्येक अवस्था में स्वस्थ नारी जीवन की उदात्त नारी की परिकल्पना करते हुए दिखाई देते हैं ।

❖ यौन–भावना एवं वेश्या–समस्या :

आधुनिक युग में स्त्री–पुरुष के पारस्परिक संबंधों में बड़ा भारी परिवर्तन आया है । पाश्चात्य प्रभाव और शिक्षा–दीक्षा का प्रचार–प्रसार होने से इस प्रकार के संबंधों में नैतिकता का ह्रास हुआ है । आधुनिक कहानीकारों ने इस नये, नैतिकता–बोध को ग्रहण करके प्रेम–विवाह और यौन–संबंधों में एक खुली दृष्टि अपनाई है । साहनी जी ने बिना किसी निषेध भाव से शरीर–धर्म की जीवनगत सच्चाई का आलेखन किया है । उन्होंने न तो कोई प्रेम–कहानी लिखी है और ना ही अपनी कहानियों में प्रेम के किसी पक्ष विशेष को उभारा है । बल्कि नर–नारी के सहज प्रेम के यथार्थ चित्र इनकी कहानियों में स्पष्ट हो पाये हैं ।

'प्रणय–लीला' कहानी में युवा–मानस में काम–कुंठा की जो प्रबल भावना दिखाई देती है वह प्रत्येक युवा–मानस को अपनी ओर आकृष्ठ करती है । इस कहानी की नायिका अपने सह अध्यायी अशोक के बड़े भाई को चाहती है, लेकिन अशोक के बड़े भाई की सगाई हो जाने पर अपनी वासना की तृप्ति अशोक से करती है । सुषमा विकास–ग्रस्त भावनाओं के कारण अशोक को अजनबी रूप से देखती है और उसके साथ घुमने जाती है । वह प्रेम के बहाने अशोक के साथ खिलवाड़ करती है । यह प्रेम का एक अनैतिक रूप ही है जहाँ अपने को बरबाद कर रही है । वहीं अशोक को शिकार बनाती है और कहती है – "जब यूँ सो रहा था तो तेरा चेहरा भाई से मिलता था । उस जैसी भवें, उस जैसी नाक ... ।"[२६]

विवाहोत्तर यौन–संबंध का उदाहरण 'डोरे' कहानी में देखा जा सकता है । अर्चना विवाहित पुरुष गिरीश से प्रेम करती है । जो दो बच्चों का पिता हे । वैसे अविवाहिता अर्चना गिरीश को अपना समझकर स्वयं को विवाहिता समझती है, कहती है – "मैं तो शादी कर चुकी हूँ । मेरी शादी तो उसी दिन हो गई थी जब हम दोनों ने प्रेम की शपथ ली थी ।" अर्चना के इस व्यवहार

से गिरीश के घर का सारा वातावरण कलह और क्लेश से भर जाता है। गिरीश की बढ़ती हुई उम्र को देखकर अर्चना को पश्चाताप होता है। वह आत्महत्या के लिये विचार करने लगती है। इस प्रकार ऐसे वर्णनों के माध्यम से साहनी जी ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि अनैतिक यौन संबंध के कारण दाम्पत्यजीवन में दरारें पड़ जाती हैं और सुखमय जीवन विक्रान्त हो जाता है।

वर्तमान समय में शहरीकरण के कारण तथा पाश्चात्य सभ्यता–संस्कृति के कारण नैतिकता–बोध की चेतना मृत प्रायः बन गई है। फलस्वरूप वेश्या समस्या एक अत्यंत भयावह समस्या बन गई है। साहनी जी की कहानियों में यह समस्या भी उभर कर आई है। ''अभी तो मैं जवान हूँ'' कहानी में साहनी ने इस समस्या की वास्तविकता को प्रस्तुत किया है। वेश्यालय, वेश्यालयों की स्थिति तथा उसके रूप रंग का भी चित्रण किया है। पुरुष वेश्याओं पर आशक्त होकर कैसे पंगु बन जाते हैं, वेश्याएँ किस प्रकार से ग्राहकों की बाट देखती रहती हैं। इसका चित्र इन पंक्तिओं में स्पष्ट है – ''साथ चालिओं के तीन–तीन होलिये, इसी बीच और यहाँ हरकत नहीं। हम रातभर इंतजार करते रहे।''[३०]

वास्तव में यह समाज पर, सभ्य समाज पर, एक कलंक है। साहनी ने इनका वास्तविक चित्रण करके हमें सोचने के लिए विवश कर दिया है। आज बड़े–बड़े नगरों महानगरों की स्थिति दयनीय बनती जा रही है। आजादी के पश्चात् यह समस्या और प्रबल बनी है। इसी समस्या का एक नया रूप महानगरों में 'कॉलगर्ल' के रूप में दिखाई देने लगा है। इनका यथार्थ चित्रण साहनी की कहानियों में मिलता है।

❖ भ्रष्ट राजनीति :

आज की राजनीति अपने महत्त्व को खोती जा रही है । जो राज्य का नेतृत्व करे अर्थात् जिन आदर्श मूल्यों के आधार पर समाज तथा राष्ट्र का संचालन हो उसे राजनीति कहते हैं, और कर्णधार को राजनीतिक ही कहते हैं । राज नेता को दूसरे शब्दों में यदि कहना चाहें तो नायक कह सकते हैं । नायक की व्यख्या करते हुए कहा गया है – "नयति इति नायकः" अर्थात् जो समाज या राष्ट्र का नैतृत्व कर सके उसे नायक कहते हैं । अर्थात् वह उदात्त चरित्र वाला होता है । जिसमें समर्पण की भावना होती है ।

परंतु दुर्भाग्य की बात है कि आज के परिवेश में राजनेता लोक–सेवा के नाम पर अपने लिए चुनाव का जुगाड़ँ करना, वोट और कुर्सी हथियाने के लिए जोड़–तोड़ करना हो गया है । आज के नेताओं का आशय केवल कुर्सी प्राप्त करना है । देश–सेवा और लोक–सेवा के साथ उनका सूतक संबंध भी नहीं है । वे चुनाव में विजय पाने के लिए तरह–तरह की तरकीबें ढूँढ निकालते हैं । 'मौका–परस्त' कहानी में पार्टी के सदस्य शंभुनाथ की मृत्यु का मौका उठाकर चुनाव जितने का माध्यम बना लिया जाता है । शंभुनाथ की अर्थी के सहारे विरोध पक्ष के माहोल में भी चुनाव का प्रसार कर लेते हैं । रामदयाल कहता है – "अब भी इरनारायण नहीं जीते तो उसकी किस्मत हम से तो, जो बन पड़ा हमने कर दिया, हमारे लिये तो उनके इलाके में घुसना मुस्किल हो रहा था । सब मौके की बात है... ।"[३१]

'गुलमुण्ठे' एक पार्टी कार्यकर्ता की कहानी है जो कि बाद में व्यवसायी हो गया है । उसकी करनी और कथनी में जमीन आसमान का अंतर है 'वाङ्चू' कहानी एक चीनी बौद्ध शोध–कर्ता को केन्द्र में रखकर लिखी गई है, जो देशों के आपसी भ्रष्ट रणनीति का शिकार बन जाता है ।

इस प्रकार साहनी जी ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि जिस दृष्टि से प्रजातंत्र सरकारों की रचना हुई है और होती जा रही है, वे सरकारं या

सरकारी अमलदार अपनी स्वार्थ वृत्ति में आकर, अपना घर भरने लगे हैं, और देश की बहुत बड़ी जनता उनकी भ्रष्ट राजनीति के दमन चक्र में पिसती रहती है ।

❖ *वर्ग–भेद की विषमता :*

यों तो समाज में सदा ही ऊँच–नीच और जाँति–पाँति का भेद बना रहा है । परंतु आधुनिक युग में वर्गभेद की विषमता जातिगत न होकर, आर्थिक बन गई है । अर्थात् अर्थ की प्रधानता बढ़ती जा रही है, चाहे कितना भी सामान्य चरित्र का व्यक्ति हो पर यदि वह धनवान है, अर्थवान है, तो वह आदर का पात्र बन जाता है । साहनी ने ऐसे तथ्यों को अपनी कहानी में उभारा है ।

'अपने अपने बच्चे' कहानी में उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के दो बच्चों के माध्यम से वर्ग–भेद की संकीर्ण दीवार का पर्दाफाश किया है । बेबी उच्च वर्ग के घराने का बच्चा है और निक्कू निम्न वर्ग का बच्चा है बाल सहज चंचलता में कोई भेद नहीं है, लेकिन भेद आर्थिक असमानता के कारण है । साहब की पत्नी के इन शब्दों में छिपा हुआ युग–सत्य दिखाई देता है । "ठीक हो या न हो, हमारा इससे क्या वास्ता क्या हमने यतीम खाना खोल रखा है ? सुबह ग्लास भरकर चाय देदी । इससे क्या फायदा जी ? क्या यह अमर हो जायेगा ।"[३२]

'साग मीट' में श्रीमती सुमित्रा की दृष्टि में छोटे लोग उन कुत्तो की तरह हैं जिनके मुँह में हड्डी दिये रहे तो वे भूँकते नहीं हैं । उनके प्रति उन्हीं के शब्दों में "इनको भगवान ने ऐसी समजदारी दी है, इनकी कोई कसम तक नहीं खाता । सभी इनके सामने हाथ जोड़ते हैं । ये जल्दी घबरा नहीं जाते, यही इनकी सबसे बड़ी खूबी है ।"[३३]

'पिकनीक' कहानी में गौरी निम्नवर्ग की औरत है, और आया का काम करती है । उच्च घराने के वकील साहब की पत्नी उन्हें घृणा की दृष्टि से

देखती है और उसके साथ अमानवीय व्यवहार करती है । जब गौरी वकील साहब के घर के सामने से उठने से मना करती है तो वकील साहब की पत्नी कहती है – "क्यों नहीं उठ सकती ? जान पहचान नहीं तो क्या, अपना घर तो गंदा नहीं करवा सकती । मैं तो यहाँ नहीं बैठने दूँगी ।"[३४]

इस प्रकार देखा जाय तो वर्ग–भेद की विषमता के कारण अमानवीय व्यवहारों को ही नहीं आर्थिक शिकंजे में फँसे लोगों की समस्या को उभारने का प्रयत्न किया है ।

❖ *आडंबरपूर्ण धार्मिकता :*

धर्म की व्याख्या करते हुए कहा गया है – "धारयति इति धर्मः ।" अर्थात् जो धारण करता है, सबको एक साथ बाँधता है, साथ लेकर चलता है, सबका रक्षण करता है वही धर्म है, परंतु आज धर्म की व्यापक चेतना मात्र मंदिर–मस्जिद तथा बाह्याचरण तक ही सीमित रह गई है । साहनी ने इस धार्मिक आडंबर पर करारा व्यंग्य किया है । अपनी कुछ कहानियों के माध्यम से धार्मिकता पर बेधक कटाक्ष किया है जैसे 'मालिक का बंदा' कहानी में एक रेल्वे पुलिस हवालदार है । जो रेल्वे का सामान चोरी करके मंदिर बनवाता है और कहता है कि उसने सब कुछ भगवान के आदेश से किया है – "सुन स्टेशन मास्टर' यह माल न सरकार का है न तेरे बाप का है, यह माल भगवान का है । जितना माल भगवान कहेंगे मैं यहाँ से उठवाऊँगा । भगवान का घर बन रहा है, मेरा घर नहीं बन रहा है ।"[३५]

इन पंक्तियों में मध्यवर्गीय लोगों की वह धार्मिक चेतना दिखाई देती है जिसमें बाह्याचरण है । धर्म की आंतरिक शुद्ध चेतना नहीं है ।

❖ निष्कर्ष :

इस प्रकार इस पूरे विवेचन के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि साहनी जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से अपने पूरे युग विशेष को

किसी न किसी रूप में उजागर करना चाहा है । उनकी कहानियों में मानो युग मूर्तिमंत होकर बोलता हुआ दिखाई देता है । जीवन की हर समस्या को कहानीकार भीष्म साहनी ने बड़ी निष्ठा, ईमानदारी और आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किया है और यह उसका जीता जागता युग–बोध है ।

४. साहनी के उपन्यासों में युग–बोध

युग–बोध का तात्पर्य युगीन समस्याओं से है । सर्जक अपने युग–विशेष के साथ कितना जुड़ा हुआ है – इस से यह फलित होता है । अपने युग विशेष की सभी प्रकार की घटनाओं से प्रभावित एवं संवेदित होना सर्जक का स्वाभाविक गुण होता है । वह एक तटस्थ दृष्टा होता है और अपनी उसी तटस्थता के साथ वह युग–विशेष की घटनाओं, समस्याओं का उल्लेख अपनी रचना में करता है । साहनी जी एक प्रतिभा–सम्पन्न जागृत सर्जक थे जो अपनी मिट्टी और युग–विशेष से पूर्णतः जुड़े हुए थे । उनके उपन्यासों में तो उनका युग मानो मूर्तिमंत हो उठा है । यहाँ पर मैं उनके उपन्यासों में वर्णित, व्यक्त युग–बोध पर विचार करूँगी ।

❖ *सामाजिक युग–बोध :*

प्रत्येक साहित्यकार अपने सामाजिक परिवेश से अनिवार्य रूपेण प्रभावित होते हैं । साहनी जैसे प्रबुद्ध सर्जक का अपने युग–विशेष के साथ अनुस्यूत होना सहज स्वाभाविक हैं । साहित्य और समाज का चोली–दामन का संबंध होता है । साहित्य–समाज के इस अन्योन्याश्रित संबंधों पर अपने विचार व्यक्त करते हुए साहनी जी ने लिखा है – “साहित्य सामाजिक जीवन की ही ऊपज होती है और समाज के लिए ही उसकी सार्थकता भी होती है, कि वह कहाँ पर जीवन की गहराई में उतर पाया है । वह मात्र छिछले पानी में नहीं लोटता रहता, कहीं जीवन के गहरे अन्तर्द्वन्द्व को पकड़ पाया है । इस अंतर्विरोध को हर युग और काल में समाज के अंदर पाये जाने वाले संघर्ष की पहचान करता है ।”[३६]

साहनी सदैव प्रगतिशील विचारधारा के पोषक रहे । वे किसी वाद या किसी साहित्यिक गुट के नहीं रहे पर उनके साहित्य पर यदि सूक्ष्म रूप में अवलोकन किया जाय तो यह ज्ञात होगा कि उनकी रचनाओं में मुंशी प्रेमचंद तथा प्रगतिशील लेखक यशपाल की भाँति सामाजिक यथार्थवादी चेतना का विकास हुआ है । पर वे प्रेमचंद के अधिक निकट हैं । यशपाल की भाँति तीक्ष्ण नहीं है । हम यह भी कह सकते हैं कि साहनी को जीवंत–दर्शन प्रेमचंद और यशपाल के बीच का जीवन–दर्शन है ।

साहनी ने अपने उपन्यासों में अनेक सामाजिक समस्याओं को उभारा है । जैसे पारिवारिक समस्याएँ, वृद्धजनों की समस्याएँ, दाम्पत्य–जीवन की समस्याएँ, विधवा–विवाह, प्रेम–विवाह, दहेज–प्रथा, बहु–विवाह, नारी–जीवन की समस्याएँ, इत्यादि समस्याओं को उन्होंने अपने उपन्यासों का विषय बनाया है । इन समस्याओं का चित्रण सर्जक की युग–बोध की चेतना का द्योतक है ।

❖ *पारिवारिक युग–बोध :*

भारत एक ऐसा देश रहा है जहाँ सदियों से संयुक्त परिवार की परंपरा व्यवस्था रही है । कई पीढ़ियों के लोग एक ही घर में एक साथ रहते, खाते–पीते और जीवन व्यतीत करते रहे हैं । परंतु दुर्भाग्य की बात है कि वैज्ञानिक प्रगति के साथ आज भारतीय समाज पर जो पश्चिमी प्रभाव पड़ा है, उसके कारण संयुक्त परिवार टूटते चले जा रहे हैं और परिवार की संकल्पना पति–पत्नी तक ही परिसीमित होती जा रही है । फिर भी इस विघटनशील स्थिति में भी कुछ संयुक्त परिवार आज भी अविच्छिन्न रूप में विद्यमान हैं । इन संयुक्त परिवारों की अपनी कुछ आंतरिक समस्याएँ हैं जिनका चित्रण साहनी के उपन्यासों में परिलक्षित होता है ।

साहनी जी का 'झरोखे' उपन्यास मध्यकालीन समाज की कथा–व्यथा पर आधारित है । उसमें वर्णित परिवार कट्टर आर्य समाजी है । गृहस्वामिनी अपनी तीन पुत्रियों की असामायिक निधन के कारण शोक संतप्त है । परिवार का नौकर तुलसी भी आर्यसमाजी विचारों से प्रभूत मात्रा में प्रभावित है । वह

अचानक प्रश्न पूछ बैठता है कि क्या वह जीवन भर बर्तन ही माँजता रहेगा ? इस अप्रत्याशित प्रश्न को सुनकर तुलसी को दी गई शिक्षा–दीक्षा के प्रति गृहस्वामिनी के मन में पश्चाताप होता है । पिता की कृपा वाली बैसाखी जिन्दगी उसे अपर्याप्त लगती है । साहनी जी गृहस्थ जीवन की गरिमा को श्रेष्ठ मानते हैं और बसंती के जीवन में आए परिवर्तन को निम्न शब्दों में प्रस्तुत करते हैं – ''बसंती आज अपने आप ही घर मालकिन की तरह व्यवहार करने लगी थी, उसने यह भी समझ लिया था कि घर टूट नहीं सकता, इसे बनाए रखने में ही कुशल है ।''[३७]

अपने सामाजिक उपन्यास 'कुंतो' में साहनी जी ने पारिवारिक स्थितियों, बदलती हुई विविध परंपराओं, आधुनिक मानसिकता आदि का चित्रण बड़े मार्मिक ढंग से किया है । ''कुन्तो को दुनिया छोड़े साल भर का समय बीत चुका है । घर परिवार के सभी लोग एक–एक करके बंबई में जयदेव के पास पहुँच चुके थे, तूफान थम चुका था, परिवार के जीवन में कुछ–कुछ स्थिरता आने लगी थी ।''[३८] इसे स्पष्ट करते हुए आगे कहते हैं – ''जीवन की त्रासदी इस बात में नहीं होती कि हम किसी को खो देते हैं, त्रासदी इस में होती है कि खो चुकने के बाद हम उसे पहचान पाते हैं ।''[३९] इन पंक्तियों में पारिवारिक घटित होती हुई समस्याओं का संकेत लेखक ने किया है ।

पूँजीवादी व्यवस्था के कारण संयुक्त परिवारों के टूटने का मूल कारण अर्थ की प्रधानता है । 'झरोखे' उपन्यास के वृद्ध पिता जी की यह व्यथा देखिए ''मैं पिसता रहूँ उम्र–भर ? मेरे से अब काम नहीं होता । नहीं करता, न करें । बना बनाया काम ठप्प हो जाएगा मेरी बला से ।''[४०] आज परिवारों में वृद्धजनों की अवमानना वर्तमान युग की सब से बड़ी दुखद समस्या है । 'बसंती' उपन्यास का चौधरी कहता है – ''मैं तेरे बाप के बराबर हूँ बेरहम, बेहया, अपने बाप को भी उठाकर पटकेगा, हरामी की औलाद ।''[४१]

'कड़िया' उपन्यास के नारंग साहब के इन शब्दों में युगीन–परिवेश के सत्य को देखिए – ''नारंग साहब कमरे के बीचो–बीच उत्तेजित से टहलने लगे, बार–बार उनके मुख से उहँ–उहँ शब्द निकलता, माँ जब जिन्दा थी, तब इतने

बूढ़े और निस्सहाय नहीं नजर आते थे – कचहरी में मामला ले जाऊँ तो थोडी बहुत पूँजी है, वह खत्म हो जाएगी, मैं क्या करूँ मैं आज हूँ, कल नहीं, रहूँगा तुम कहाँ दर–दर की ठोकरे खाती फिरोगी । पर जमाना ऐसा आया है, किसी को कुछ सूझता नहीं कि क्या करें ?''[४२]

'मय्यादास की माडी' के हरनारायण के मुख से वृद्धों की करुण वेदना को सुने ''बस, बस बीरा हो गया जो होना था, नसीब ही खोटा है तो कोई क्या करे ? नसीब अच्छा होता तो घनश्याम की क्यों मरता । मेरी किस्मत ही खोटी है । तुम सब मेरे कर्मो का फल भोग रहे हो ।''[४३]

इस प्रकार परिवार की विविध स्थितियों का उल्लेख इनके उपन्यासों में बड़ी मार्मिकता के साथ व्यक्त हुआ है ।

❖ *दाम्पत्य जीवन का प्रश्न :*

उपन्यासकार साहनी ने अपने उपन्यासों में भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों ही संस्कृतियों से प्रभावित दाम्पत्य जीवन का चित्रण किया है । वैसे देखा जाय तो दाम्पत्य जीवन सामाजिक स्वस्थता एवं समृद्धि के लिए परम आवश्यक है । इस की महत्ता को स्वीकार करते हुए कहा गया है – ''दाम्पत्य जीवन सृष्टि के विकास का मूलाधार है और इसका उचित पालन समाज को स्वस्थ और समृद्ध बनाता है । समाज के समुचित विकास के साथ ही इसे आवश्यकता से अधिक महत्त्व भी मिला है । हर सुसंस्कृत देश की आचार संहिता में इसे पवित्र संस्कार की संज्ञा दी गई है और इससे संबंधित उसके कुछ नियम भी बनाए गये हैं । विधि द्वारा विवाह के बाद ही स्त्री–पुरुष को पति–पत्नी का दर्जा दिया जाता है ।''[४४] सुखी दाम्पत्य जीवन से जहाँ साहनी जी प्रभावित हैं वहीं विभिन्न कारणों से नीरस बनते दाम्पत्य जीवन का सफलता पूर्वक चित्रण भी उनके उन्यासों में मिलता है ।

'बसंती' उपन्यास की सूरी–दम्पति मध्यवर्गीय पाखंड और हृदय–हीनता की जीती–जागती प्रतिमूर्ति है । सूरी साहब बसंती को वहाँ सुलाने के सख्त खिलाफ हैं, पर जब वह पकड़ कर ले जाती है तो वे एक तरह से संतुष्ट होते हैं और 'नीति सम्मत' बात करते हैं । उनकी उन नीति–सम्मत तर्क पूर्ण बातों में

उनका पाखंडपूर्ण व्यवहार स्पष्ट दिखाईदेता है । उपन्यास के नायक के शब्दों में "बसंती को लेकर जब सूरी साहब का झगड़ा अपनी पत्नी के साथ हुआ था तो उन्होंने दूसरा तर्क पैदा किया था । आवारा–लड़की है, गुण्डे उसके पीछे घूमते हैं, जिसके साथ भागी थी वह भी गुण्डा था, जिस के हाथ बेच गया, वह भी गुण्डा है और उसकी राहों में घूम रहा है ।"[४४]

दाम्पत्य–जीवन के 'टाइप' चरित्र का भी संकेत उनके पात्रों में मिलता है । बसंती कहती हैं – "तू भी हरामी, वह भी हरामी, खबरदार जो मेरे बच्चे को हाथ लगाया – मेरे पेट में अपना बच्चा देकर मुझे बेचने चला था । हरामी, बेशर्म, बदजात"[४६]

'कड़ियाँ' उपन्यास में भी महेन्द्र के अवैध संबंधों की कहानी व्यक्त है । मध्यवर्गीय परिवार का महेन्द्र दफ्तर में अफसर है उसी दफ्तर में केशियर तरीके काम करने वाली सुषमा से महेन्द्र के अवैध संबंध साबित हो जाते हैं । महेन्द्र अपने इसे अवैद्य संबंध की बात अपनी पत्नी को बताते हुए क्षमा–याचना करता है । परतु इस अवैध संबंध को जानकर महेन्द्र की पत्नी प्रेमिका के मन में प्रतिकूल प्रतिक्रिया होती है । फिर भी वह अपने आक्रोष को दबाकर कहती है – "हमारी शादी नाकाम्याब कैसे रही है ? अच्छी–भली चल रही है । तुम सीधे–रास्ते पर चलते जाओ तो भगवान जी की कृपा है । हमें इतना सुन्दर बेटा मिला है । इतनी सुन्दर तुम्हारी नौकरी है ।"[४७]

इस प्रकार देखा जाय तो आज पवित्र संबंध का अभाव है । जब पवित्र संबंध ही नहीं है तो पवित्र दाम्पत्य जीवन की परिकल्पना आज के इस भौतिकता प्रधान युग में कैसे की जा सकती है ? आज पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव स्वरूप दाम्पत्य जीवन में जो एक दूसरे केप्रति वफादारी और ईमानदारी का भाव होना चाहिए वह मृत प्रायः होता जा रहा है जिसका बड़ा यथार्थ चिन्तन साहनी के उपन्यासों में मिलता है ।

❖ *वैध–अवैध प्रेम का प्रश्न :*

यदि सामान्य रूप से अवलोकन करें तो प्रेम तो वैध ही होना चाहिए । प्रेम निष्पाप और निष्कलुश होना चाहिए । वह प्रेम, प्रेम नहीं जिस में किसी

प्रकार का स्वार्थ या भोगवृत्ति की भावना पड़ी हो । प्रेम का, सात्विक प्रेम का पल्लवन तो निःस्वार्थ की आधारशिला पर ही संभव हो सकता है । परंतु जब जीवन के सारे मूल्य और आदर्श ही बदलते जा रहे हैं तो प्रेम की परिभाषा भी बदलती जा रही है । आज जब प्रेम शब्द का उपयोग करते हैं तो मुख्यतः अवैध प्रेम का ही भाव प्रस्तुत होता है । ''समाजवादी लेखकों ने तो प्रेम की नाव को जीवन की सहज धारा में प्रवाहित किया है तथा प्रेम के सहज स्वाभाविक आधार पर ही जीवन-निर्माण के तत्त्व को उद्बोधित किया है । वे उसी प्रेम के पक्षधर रहे है जो जीवन का विकास करे प्रेम के क्षेत्र में पुरुष-नारी की स्वतंत्रता का समर्थन करते हुए समाजवादी उन्यासकारों ने प्रेम को भी अन्य जीवन तत्त्वों के समान ही द्वंद्वात्मक माना है और उसे जीवन की सिद्धि का प्रेरक सोपान स्वीकार किया है ।''[४८]

साहनी जी के लगभग सभी उपन्यासों में प्रेम-तत्त्व की अनेक रूपों में चर्चा की गई है । प्रेमी-प्रेमिका, पति-पत्नी और प्रेमी, प्रेमिका और पत्नी के बीच, त्रिकोणीय प्रेम का संचार भी हुआ है । 'घड़ियाँ' उन्यास का महेन्द्र एक पत्नी होते हुए भी सुषमा को चाहता है, तब प्रेमिका कहती है – ''तुम दूसरी स्त्री के पास जाते हो, तुम बुरे आदमी हो ।''[४९]

'मय्यादास की माडी' उपन्यास में साहनी जी ने रुक्मणि तथा पगलैट पति कल्के के आत्मिक संबंधों पर टिप्पणी करते हुए कहा है – ''दोनों पति-पत्नी इस बात के इतने अम्पस्त्र हो चुके थे कि आँगन पार कर बाहर भी बाद्ध निकलने पर रुकमणि की आँखे बरबस पगलैट को खोजने लगती थी । उसे वहाँ पाकर उसे झेंप भी होती और अपार सुख का आभास भी होता । दोनों के बीच शारीरिक स्तर पर असमानता रहने पर भी दोनों की आत्माएँ एक दूसरे में गुंथ गई थी । स्थिर, शान्त परन्तु किसी गहरी झील जैसा प्यार उनके बीच पाया जाने लगा था । इन्सान का शरीर भूखा नहीं होता, भूखी तो उसकी आत्मा होती है ।''[५०] साहनी जी इस तथ्य को यहाँ उद्घाटित करना चाहते हैं कि ''शारीरिक आकर्षण हेतु किया गया प्रेम स्थाई नहीं होता । आत्मिक स्तर पर किया गया प्रेम ही स्थाई होता है । यही सनातन सत्य है और यही पवित्र

प्रेम पति–पत्नी के बीच होना चाहिए । वास्तव में पति–पत्नी के प्रेम को ही वैद्य प्रेम कहा जा सकता है । शेष प्रेम को बैधता प्रदान करना तर्क संम्मत नहीं प्रतीत होता है ।

❖ *यौन–कुंठा एवं नारी :*

यह आज की बड़ी जटिल समस्या है । विज्ञान के बढ़ते प्रसार ने हमें आज इतना तार्किक और स्वच्छन्द बना दिया है कि आज की युवा पीढ़ी किसी भी प्रकार की चारित्रिक मान–मर्यादा को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है । आज पश्चिमी सभ्यता का इतना अधिक प्रभाव अपनी युवा पीढ़ीं पर पड़ रहा है कि चारित्रिक स्वच्छंदता अपनी चरम सीमा पर बढ़ती जा रही है । फलस्वरूप जीवन की अनेक विषम स्थितियाँ उत्पन्न होती जा रही है । अतृप्त भावनाएँ ही कुंठा का रूप धारण करती हैं । आज की युवा पीढ़ी स्वच्छंद होकर दैहिक भोग को सुख मानने लगी है और जब वह इच्छा परितृप्त नहीं होती तो वही इच्छा कुंठा बन कर भयंकर रूप धारण कर लेती है । साहित्य में काम एवं कुंठा पर प्रकाश डालते हुए डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है – ''स्त्री–पुरुष के परस्पर प्रेम, संगम, सहयोग और उपभोग से जिस सुख और आनंद का अनुभव होता है उसे काम कहते हैं । काम में विकारग्रस्त मनोवृत्ति ही कुंठा है ।''[५९]

साहनी जी के उपन्यासों में यौन–कुंठा और नारी जीवन का बड़ा ही यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है । 'झरोखे' उपन्यास में प्रवृत्ति–दमन और व्यक्तित्व–दमन चित्रांकन कर वीर्यपात और स्वप्न दोष से आनंदित होकर तरुण किस तरह अपने यथार्थ विकास से विमुख हो जाते हैं, जिस का परिणाम यह होता है कि किताबों से औरत केचित्र फाड़ने लगते हैं । इस प्रकार के जीवन की साहनी ने बड़ी कड़ी आलोचना की है । दीवान धनपत जो एक रखैल का बेटा था और एक रखैल को रख लिया था, ऐसी अमर्यादित हरकतें तो नहीं करता पर अपनी आदतों से वह सनकी दीवान के रूप में विख्यात है ।

'कुंतो' उपन्यास में प्रोफेसर साहब मानों जीवन का निचोड़ समझा रहे हैं । ''इन्सान जिस ओर अपनी वृत्तियों को मोड़े, वे मुड़ जाती है । मुख्य

बात सही समझ की है, विवेक की, सही दृष्टि की । आकर्षण का होना स्वाभाविक है पर आकर्षण पर अपना प्रभुत्व भी होना चाहिए । किसी की पत्नी सुंदर है, मैं उसके सौंदर्य की ओर खिंचा जाता हूँ, पर मैं बेलगाम होकर उसका पीछा नहीं कर सकता । मनुष्य की वृत्तियों के ऊपर उसका विवेक होता है, होना चाहिए । इसी को यूनानी दार्शनिकों ने मध्यम मार्ग कहा है । ''दस फार एण्ड नो फर्दर द गोल्डेन मीन... ।''[५२]

'कड़ियाँ' उपन्यास के नाटा पर ध्यान दीजिए । वह विवाहित है । उसकी पत्नी है, बच्चे भी हैं । फिर भी जब तक पराई औरत का उसे सामीप्य नहीं मिल जाता, वह पागलों की तरह भटकता रहता है । उसका किसी औरत के साथ रिश्ता मात्र क्षणिक है । उस रिश्ते के बाद वह जिस्म उसे बासी नज़र आने लगता है । देखिये – ''अरे जो है, सो है, इस में छिपाने की क्या बात है ? हम औरत से प्रेम करते हैं, हम औरत के बिना रह नहीं सकते । हमारी अपनी घरवाली से हमारी पटती नहीं, बस किस्सा खत्म – तुम शरीफ आदमी हो, शरीफ आदमी केवल मन से व्यभिचार करते हैं, वह भी बीसियों से मगर व्यवहार में अपनी शराफत को आँच नहीं आने देते ।''[५३]

इस प्रकार देखा जाये तो साहनी ने अपने उपन्यासों में यौन–आकर्षण को जीवन का सहज एवं स्वाभाविक सत्य माना है । परन्तु यदि मानसिक कुंठा तथा दलित वासना के रूप में परिवर्तित होने लगे तो वहाँ न विवेक के अंकुश की आवश्यकता पर भी बल दिया है ।

नारी तो देखा जाय तो समाज की शोभा है । उसके आदर्श रूपों में माँ, पत्नी, भगिनी तथा प्रेयसी – इन चार रूपों की बड़ी महत्ता स्वीकार की गई है । ये नारी के वे मूल्यवान शाश्वत रूप हैं जिन के साथ कोई खिलवाड़ नहीं किया जाना चाहिए । फिर भी समाज की विकृत्ति मनोवृत्ति के कारण इन सारे रूपों के साथ प्रश्न चिन्ह लगे हुए हैं । साहनी जी के उपन्यासों में इन सभी रूपों का कमोबेस उल्लेख हुआ है । साहनी के उपन्यासों की लगभग सभी नारियाँ आत्मपीड़न की शिकार हुई हैं । फिर भी उनमें विद्रोह का भाव दिखाई देता है । 'कड़ियाँ' उपन्यास की सुषमा जिसमें उतीत वासना के लक्षण परिलक्षित

होते हैं । परंतु 'कड़ियाँ' की ही प्रमिला, 'बसंती' उपन्यास की बसंती 'मय्यादास की माडी' की रुकमणि और कुंतो की सुषमा आदि नारियाँ आत्मपीड़न के दौर से गुजरती है, अतः उनमें विद्रोह की आग भडक उठती है किन्तु कुंतो तो सारी जिन्दगी ठोकर खा कर जयदेव की शरण में सुख का अनुभव करती है । वह एक क्षण के लिए भी जयदेव से अलग नहीं होना चाहती । जब कि जयदेव का समर्पण पूरी तरह से सुष्मा के प्रति है । कुन्तो विद्रोह भी नहीं करती । सब कुछ मौन भाव से सहन करती है । यह बात सुषमा में नहीं दिखाई देती । वह तो प्रमिला की तरह एक सीमा तक बर्दास्त करती है पर बाद में महेन्द्र की तरह गिरीश के विरोध में तन कर खड़ी हो जाती है । प्रमिला को जितना सहन करना पड़ता है, उतना सुषमा को सहन नहीं करना पड़ता । प्रमिला जहाँ कम पढ़ी-लिखी महिला है वहीं आर्थिक दृष्टि से कमजोर भी है । फिर भी वह विषम परिस्थिति से भागती नहीं । एक साथ दो तरफा संघर्ष करती है ।

साहनी की दृष्टि में नारी की असहाय स्थिति का एक मात्र कारण उसकी आर्थिक स्थिति है । कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण ही नारी की दयनीय स्थिति बनी हुई है । प्रमिला जब अपने पैरों पर खड़ी हो जाती है तो अपनी सहेली संतो से कहती है – "संतो मुझ में हिम्मत आ गई है, अब थर-थर काँपती नहीं रहती ।"[५४] बसंती तो इनसे बिल्कुल ही अलग पात्र है, वह जिस से प्यार करती है उसके प्रति पूर्णतः समर्पित है । उसके प्रति शाम कश्यप का यह कथन उपयुक्त प्रतीत होता है – "भीष्म जी ने इस उपन्यास के माध्यम से, ऐसा संघर्षशील और शक्तिशाली टाइप चरित्र प्रदान किया है जो जीवन में अपनी भरपूर मौजूदगी के बावजूद साहित्य और कला की दुनिया में एक साथ दुलर्भ था । बसंती की असहायता, बेफिक्री और तो क्या हुआ 'बीबीजी' कह कर वह बड़ी से बड़ी गहरी चोट सह जाने की ताकत उसे अपने निश्चित 'टाइप' में ढालती है । लेकिन वह सह जाना कहीं न कहीं एक ऐसे रिवोल्ट का भीतरी ही भीतर सुलगता पलीता छोड़ जाता है कि बसंती जब तनकर खड़ी हो जाती है तो भरपूर चोट भी करती है ।"[५५]

आज की नारी जब अपने पैरों पर खड़ी हो रही है, आर्थिक दृष्टि से मजबूत बन रही है तो उसमें आत्म विश्वास भी उत्पन्न हो रहा है । पर साहनी जी के युग में यह संभव नहीं था । नारी इन दोनों दृष्टियों से मजबूत नहीं थी । इसलिए उन्होंने ऐसे नारी चारित्रों की परिकल्पना की है जो आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर नहीं है अतः उसमें आत्मविश्वास की कमी है । इस प्रकार साहनी जी की नारी आर्थिक विसंगता तथा आत्म विश्वास की कमी के कारण अधिक पीड़ित है । फिर भी बसंती जैसे कुछ ऐसे नारी चरित्र हैं जिनमें आत्मगौरव, आत्मविश्वास का भाव भरा पड़ा है । बसंती की नियति चाहे जो भी हो पर यह तो स्वीकार करना ही होगा कि वह जहाँ एक तरफ रुढिग्रस्त मान्यताओं के प्रति विद्रोह कर, नारी के खरीद–फरोस्त की भावना को खंडित करती है, वहीं साठ साल के नपुंसक बुलाकीराम की सारी सुविधाओं को लात मार कर परंपरा से चली आ रही वैवाहिक मान्यता को चुनौती भी दे देती है । इन चरित्रों के माध्यम से साहनी ने समाज में व्याप्त बुराइयों का पर्दाफाश किया है । बूढ़ा बुलाकीराम, बसंती को खरीदना चाहता है पर बसंती मुँह तोड़ उत्तर देती है उसी समय लंगडा बुलाकीराम कहता है ‘‘मुझे छोड़ कर नहीं जाना, बसंती रानी । मुझे छोड़ कर नहीं जाना । मैं भलाचंगा हूँ । मुझे कुछ भी नहीं हुआ है सारी बोतल खत्म कर लेगा तो माता का कोप दूर हो जाएगा – बस, महीने दो महीने की बात रह गई है ।’’[५६]

साहनी जी के उपन्यासों में आदर्श नारी चरित्रों का भी संकेत मिलता है । ‘तमस’ उपन्यास में सुअर मारने से जो पैसे मिलते हैं, उन पैसों के संबंध में नथ्थू की पत्नी यहाँ तक कह डालती है – ‘‘मैं इन पैसों से धोतिया लूँगी ? मैं इन पैसों में आग नहीं लगाऊँगी ? तुमसे ऐसा कुकर्म करवाया ।’’[५७]

ऐसे ही ‘मय्यादास की माडी’ की वीरावली जो अन्याय का प्रतिरोध करती है, का चरित्र दृष्टव्य है । पुरोहित जब उस की बेटी की शादी एक पागल कर्लक से करवा देता है तो वह सर्पिणी की भांति फुत्कार कर उठती है – ‘‘इस से कहो जी, चला जाय यहाँ से । इस द्वार पर इस का साया भी नहीं

पड़े । जिसनें मेरी बेटी को कुँएँ में झोंका है, वह तिल–तिल मरे उसे बावले कुते काटें, उसे फनियर साँप डस–डस जाय ।"[५८]

नारी तो त्याग और तपस्या की मूर्ति है । ऐसी आदर्श नारी का भी उल्लेख 'कुंतो' उपन्यास में मिलता है । कुंतो का पति जब सुषमा को दिल दे बैठता है तो कुंतो का हृदय द्रवित हो उठता है । और वह उसे मार्ग दे देती है । कहती है "मुझ से कह दिया है कि मैं सुषमा के बिना नहीं रह सकता । वह मन ही मन छटपटाता रहता है । मैंने उससे कह दिया है कि सुषमा को ले आए, मैं उसे अपने पास रख लूँगी और अगर कहोंगे तो मैं कहीं चली जाऊँगी ।"[५९]

नारी की एक स्थिति निःसंतानता की भी है । साहनी जी ने ऐसी नारी की व्यथा का भी संकेत किया है । 'बसंती' उपन्यास की रुकमणि को शादी के बहुत वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी बच्चा नहीं होता । वह बच्चे के लिए काफी परेशान रहती है, जब–तब रोती रहती है । बसंती उसे हिम्मत बंधाती हुई कहती है – "क्या हुआ जो बच्चा नहीं हुआ तो ?"[६०]

इस प्रकार साहनी जी ने नारी के विविध रूपों का बड़ा ही यथार्थ, मर्मस्पर्शी चित्रण अपने उपन्यासों में किया है ।

❖ *राष्ट्रीय स्वाधीनता एवं मोह–भंग :*

साहित्य पर युगीन परिस्थितियों का प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव अवश्य ही पड़ता है । साहनी जी उस युग के उपन्यासकार हैं जब देश में स्वतंत्रता को लेकर राजनीतिक उठा–परक चल रही थी । सारे देश में अंधा–धुंधी फैली थी । ऐसे समय में 'तमस' जैसे उपन्यास की रचना करके उन्होंने राष्ट्रीय स्वाधीनता तथा उससे जुड़ी हुई अनेक समस्याओं को उभारने का सफल प्रयत्न किया है ।

आज के समर्थ, आलोचक डॉ. नामवरसिंह ने लिखा है – "हिन्दी में भीष्म साहनी की प्रतिष्ठा उनके उपन्यास 'तमस' के कारण मिली और वह भी लग–भग सातवें दशक के अंत में । कारण स्पष्ट ही इस उपन्यास की

विषयवस्तु है । अर्थात् देश के विभाजन की त्रासदी । इसके पहले यशपाल का 'झूठा–सच' जैसा विशाल उपन्यास छप चुका था । इस के बावजूद साहनी ने 'तमस' लिखना आवश्यक समझा ।"

राष्ट्र की स्वाधीनता के नाम पर न जाने कितने लोगों ने अपने प्राणों की आहुति दे दी पर उन्हें कोई शिकायत नहीं रही । पर ऐसे लोगों की भी कमी नहीं रही जिन्हें अपनी भूमिका को लेकर असमंजस की स्थिति बनी रही । साहनी ने इन दो मुहे चरित्रों का पर्दाफाश बड़ी कुशलता से किया है ।

अंग्रेजों ने हम भारतवासियों में फूट डालकर कुछ लोगों को अपना पक्षधर बनाया और उन्हें विविध रूपों में पुरस्कृत भी किया । साहनी जी ने ऐसे देशद्रोही चरित्रों और अंग्रेजो की विघटनवादी मानसिकता का बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण 'मय्यादास की माडी' उपन्यास में किया है । तेजसिंह और लालसिंह सिक्ख सेना के साथ गद्दारी करके अंग्रेजो के प्रिय पात्र बन जाते हैं और अपने ही देश के विरुद्ध कार्य करने लगते हैं । अंग्रेजो की इस कूटनीति का पर्दाफाश करते हुए साहनी कहते हैं – "कल तक जो दुश्मन थे, वे दोस्त बन जाते हैं । कल तक जो भगोड़े थे वे सिपहसालार बन जाते हैं । जो काला था वह ऊजला–उजला लगने लगता है ।"[६१] अंग्रेजी शासन की कूटनीति के कारण आम जनता भी उनके प्रति आकर्षित थी जिसका संकेत इस उपन्यास में किया गया है । अंग्रेजों की दमनकारी नीति का बड़ा मार्मिक वर्णन 'कुंतो' उपन्यास में मिलता है । राजनैतिक वातावरण को प्रभावशाली बनाने के लिए नाटक मंडली के माध्यम से गीतों का भी प्रयोग किया गया है । हिन्दू–मुस्लिम के बीच तनाव की समस्या है जिसका समाधान इस गीत के माध्यम से करने का प्रयत्न किया गया है –

"सुनो हिन्द के रहने वालों, सुनो सुनो !
ये किन बच्चों की चीखें हैं,
किस दुखिःया माँ की आहे हैं,
किस बेवा दुल्हन की फरियाद लिए खामोश निगाहे हैं ?
हम हिन्दू हैं, हम मुस्लिम हैं,

हम सब गरीब दुखियारे, सब एक ही विपदा के मारे

बन्द करो, बंद करो यह खून की होली ।"[६२]

जनता ने सोचा था कि आज़ादी के पश्चात् एक नये सूर्य का उदय होगा, हमें रोटी–कपड़ा–मकान मिलेगा । हमें वाणी का स्वातंत्र्य मिलेगा । हम भूखे नंगे हताश–निराश न होंगे । सारा अपना देश होगा, हमारी अपनी नई जिन्दगी होगी । ये सारे स्वप्न मात्र स्वप्न बनकर ही रह गये । आज़ादी मिली, वाणी का स्वातंत्र्य भी मिला जो अमन–चैन, भाई–चारे की बात थी, उसके तो चिथड़े चिथड़े उड़ गये । साहनी ने अपने उपन्यास 'तमस' में इसका बखूबी उल्लेख किया है ।

❖ *राजनीतिक दलों की भ्रष्ट राजनीति :*

विश्व में विविध प्रकार की सरकारें रही हैं, आज भी हैं । उन सब में श्रेष्ठ सरकार 'प्रजातंत्र' सरकार मानी जाती रही है जिसे लोकतंत्र भी कहते हैं । कहा जाता है – "प्रजा की सरकार, प्रजा के लिए, प्रजा के द्वारा ।" भारत देश में यह संभव हुआ । शायद यह देश विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है जहाँ प्रजा अपने मतों का उपयोग करके अपने मन के अनुसार सरकार बनाती है । परंतु दुर्भाग्य की बात हैं कि यह सब कुछ होते हुए भी भारत में वास्तविक रूप में प्रजातंत्र नहीं आ पाया । बहुत सारी राजनीतिक पार्टिया बनती गई और वे अपना स्वार्थ साधने में ही लगी रही ।

साहनी ने में 'तमस' में इन राजनीतिक प्रश्नों की गुटबंदी, आपसी तनाव, भेद–भाव आदि का बड़ा यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है । लोग कहते रहे कि कॉंग्रेसी चर्खा कांतने, झाडू लगाने और अपनी मेम्बरी की चिंता के अलावा और कुछ नहीं करते । ऐसी भी धारणा बनी रही कि कॉंग्रेस हिन्दुओं की पार्टी है, उससे मुसलमानों का हित नहीं हो सकता । देखा गया कि आपसी दंगा रोकने के लिए कोई भी दल संकल्प नहीं लेता, प्रतिबद्धता नहीं व्यक्त करता । क्षुद्र स्वार्थो में उलझे रहने के कारण तथा अपने दल और अपने हित तक ही सीमित होने के कारण दो राजनीतिक पार्टियाँ देश–हित की बात विशाल फलक

पर नहीं कर पाईं । दुर्भाग्य की बात तो यह रही कि ये राजनीतिक दल न तो देश हित की बात कर पाये न अंग्रेजो की कूटनीतिक चाल को ही समझ पाये । इस सिथति का वर्णन करते हुए 'तमस' का पात्र जनरल कहता है – "साहिबान मैं आप से कहता हूँ कि हिन्दू–मुसलमान भाई–भाई हैं, शहर में फिसाद हो रहा है, आगजनी हो रही है और उसे कोई रोकता नहीं । डिप्टी कमिश्नर अपनी मेम को बाहों में लेकर बैठा है और मैं कहता हूँ कि हमारा दुश्मन अंग्रेज है । गांधीजी कहते हैं कि वही हमे लड़ाते है और हम भाई–भाई है । हमें अंग्रेजों की बातों में नहीं आना चाहिए ।"[६३]

'मय्यादास की माडी' उपन्यास का नेरेटर कहता है – "हर लड़ाई मात्र शक्ति का प्रदर्शन भी नहीं होती, हर लड़ाई एक संघर्ष होता है, जिस के साथ कहीं स्वार्थ तो कहीं आदर्श जुड़े होते हैं ।"[६४] इस कथन द्वारा राजनीतिको भ्रष्टता का संकेत किया गया है । वास्तव में देखा जाय तो राजनीतिक दल या कमेटियाँ समस्या के मूल समाधान को ढूँढना नहीं चाहती बल्कि व्यक्तिगत स्वार्थ या दलगत भावना से प्रेरित होकर राजनीति के छल–छद्‌म में पड़े रहते हैं । ये तथाकथित समाज के देश के कर्णधार अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु किसी भी अमानवीय कदम को उठाने में कोई संकोच नहीं करते । वे साम–दाम–दण्ड–भेद किसी भी प्रकार अपना स्वार्थ सिद्ध कर ही लेते हैं फिर भी सफेद पोश में वे समाज के सेवक या अगुवा कहलाने का दंभ भरते रहते हैं । साहनी जी के उपन्यास में राजनीति तथा राजनीतिज्ञों की इस भ्रष्टता का पर्दाफाश किया गया है ।

❖ *शोषक–शोषित वर्ग की समस्या :*

ऐसा प्रतीत होता है कि सामाजिक रचना के साथ ही ये दो वर्ग उभर कर आएँ होंगे । क्योंकि प्रत्येक युग के समाज में शोषक–शोषित वर्ग की समस्या बनी रही है । ऐसे ही स्वतंत्रता पूर्व तथा स्वतंत्रता के पश्चात् भी यह समस्या द्रोपदी की चीर की भाँति बढ़ती रही है । समाजवादी जन–चेतना से संपन्न उपन्यासकार अपने उपन्यासों में इस शोषक–शोषित वर्ग की समस्या को विशेष महत्त्व देते रहे हैं । उन्हें उभार कर उसके समाधान–हेतु भी प्रयत्न

करते रहे हैं । ये समस्याएँ मुख्यतः किसान–जमींदार तथा मजदूर पूँजीपति के संघर्ष के रूप में उभरती रही हैं जिन का चित्रण साहनी के उपन्यासों में भी मिलता है । इनके उपन्यासों में मुख्यतः मजदूर–पूँजीपति का संघर्ष विशेष रूप से उभर पाया है ।

'झरोखे', 'बसंती', तथा 'तमस' उपन्यास में मजदूर–पूँजीपति का संघर्ष विशेष रूप से हटकर एक नये रूप में व्यक्त है । साहनी जी शहर के रहने वाले थे । अतः उनका संपर्क किसान–जमीदारों से विशेष नहीं रहा । अतः इनका संघर्ष इनके उपन्यासं में विशेष रूप में नहीं उभरा है । पर मजदूर–पूँजीपति–संघर्ष विशेष रूप से उभरा है ।

'बसंती' उपन्यास में शोषक–शोषित लोगों के बीच तनाव का यह उदाहरण देखने योग्य है – "गोबिंदी बोली – तुम मर्द लोग डरते काँपते ही रहोगे । अब की बार अफसर से मिलने जाओ तो मुझे भी साथ ले चलना । अफसर को ऐसी फटकार सुनाऊँगी कि नानी याद करा दूँगी – मैं कहूँगी, जिस जमीन पर हमारी कोठरियाँ खड़ी हैं, वे हमारे नाम करवा दो । कोठरियाँ तो हमने अपने पैसों से बनवाई हैं, इन्हें कोई क्यो तोड़े ? तुम्हारे मुँह से कोई बात ही नहीं निकलती ।"[६५] शोषित–समाज–व्यवस्था के प्रति साहनी व्यंग्य करते हुए 'मय्यादास की माडी' उपन्यास में कहते हैं – "नहीं, कोई नाच रहा है पर वह कन्हैया नहीं, उसके हाथ में बाँसुरी नहीं, उसके हाथ में छोटी–सी लाठी है, जिस पर रंग–बिरंगी तितलियाँ लटक रही है । जो नाच रहा है; पर उसके नाचने की लय में देवताओं का संगीत न होकर मानव का आर्तनाद है ।"[६६] यह पूँजीपतियों के लिए तमाशा है ।

'तमस' उपन्यास में गरीब नत्थू तथा मुरादअली के माध्यम से भी शोषक–शोषित प्रश्न को उठाया गया है । मरे हुए जानवरों की खाल निकालने वाला नत्थू, मुरादअली को अठन्नी – रूपया दे कर भी संतोष कर लेता है क्योंकि उसे खाल तो मिल जाती है । 'तमस' के खिज़र के इन शब्दों को भी देखिए – "दरअसल उस गाँव का हाकिम बड़ा जालिम है, वह अपनी ऐश–ओ–इशरत के लिए गरीब लोगों की किश्तियाँ छीन लेता है – वह बच्चा,

हराम का बच्चा था, हलाल का बच्चा नहीं था । जिस आदमी की वह औलाद है वह बड़ा जालिम है, जालिम और नापाक–बड़ा होकर जालिम बनता और बेगुनाह लोगों पर जुल्म ढाता । अब कहो मैंने अच्छा किया या बुरा किया ?''[६७]

समाज–व्यवस्था की यह भी एक सच्चाई है कि आदमी के पास जब पद, प्रतिष्ठा और धन एकत्रित हो जाते हैं तब वह किसी का भी हमदर्द नहीं बन पाया । प्यादा से फरजी मयो, ढेढो–ढेढो जाय', की उक्ति उसके जीवन में चरितार्थ हो जाती है । 'कड़िया' उपन्यास की ये पंक्तियाँ उद्धत हैं – उपन्यास का नायक महेन्द्र कहता है – ''यह पाप–पुण्य सब बकवास है, प्रमिला ! मेरा इस में तनिक भी विश्वास नहीं है । पर मेरे संस्कार बहुत गहरे हैं – मेरा पूरा हक है, जैसा मैं जीना चाहूँ जिऊँ । औरत का भी हक है... ।''[६८]

समाज से जब तक असमानता नहीं मिट पाती तब तक शोषक–शोषित का संघर्ष बना रहेगा, मिट नहीं सकता । 'झरोखे' उपन्यास का तुलसी नौकर से मुक्ति पाने–हेतु जीवन भर संघर्ष करता है परंतु उसे मुक्ति नहीं मिलती । इसके मूल में यह असमानता ही है । ये पंक्तियाँ इस की साक्षी है – ''माता जी ! तुलसी अपने बेटे को नौकर रखवाने के लिए लाया है – इसे भी और कोई घर नहीं मिलता । घूम–फिरकर यहीं पहुँच जाता है ।''[६९]

शोषित, गरीब मजदूरों के प्रति साहनी जी में विशेष करुणा है । उनके जीवन को देखकर वे करुणार्द्र बन जाते हैं ।

बस्ती क्या थी, दिल्ली की ही एक सड़क के किनारे छोटा–सा राजस्थान बना हुआ था । आज़ादी के बाद दिल्ली शहर फैलने लगा था । दिल्ली से दूर जहाँ कहीं सूखा पड़ता था या बाढ़ आती थी, वहीं से लोग उठ–उठ कर दिल्ली की ओर भाँगने लगते । कहीं राजस्थान से तो कहीं हरियाणा और पंजाब से और कहीं तो दूर दक्षिण से रोजगार की तलाश में.. ।''[७०]

गरीबों के प्रति तथाकथित सभ्य समाज के लोगों के जो घृणित व्यवहार है, 'मय्यादास की माडी' की ये पंक्तियाँ स्पष्ट कहती है – ''इन कहांरो को

उग लाते है तुम मेरे सिर पर, न नहाए न धोए । इनसे बू की लपटे उठ रही है । हराम–खोर आ जाते हैं परेशान करने ।"[७७]

इसी उपन्यास के सेक्स–बिन्दु के कारखानेदार के ये शब्द युगीन सत्य का उद्घाटन करते हैं – "भारतीय मजदूर के साथ मेरी पूरी हमदर्दी है – ज्यादा सहानुभूति है – यह सोचकर की भारत के बुनकर सुख–सुविधा, निछावर की यूँ, यह कोई अक्लमंदी की बात नहीं है ।"

किसानों की दयनीय स्थिति का भी बड़ा मार्मिक चित्र इनके उपन्यासों में व्यक्त हुआ है । आजादी के बाद भी किसान कर्ज की मार से मुक्त नहीं हो पाए हैं । 'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास की ये पंक्तियाँ साक्षी है – "मगर दीवन ने हमदर्दी तो दिखाई ना, उसे किसान को कुछ देना तो नहीं बनता था ना । ऐस. तो वसूलना बनता था । अब वक्त की बात है – पहले जमीन कुर्क तो नहीं होती थी, अब तो कुर्क हो जाती है । दो साल लगान नहीं दो, तीसरे साल जमीन कुर्फ ।"[७८]

❖ *आर्थिक समस्याएँ :*

अर्थ ही मानव–जीवन का मूलाधार है । जीवन यापन के लिए अर्थ का उपयोग आवश्यकता ही नहीं अनिवार्यता है । सामाजिक वर्ग–विषमता के मूल में भी अर्थ की ही प्रधानता है । आर्थिक स्थितियाँ ही सामाजिक श्रेणियों का निर्धारण करती है । अर्थ के ही कारण विभिन्न संघर्षो का जन्म होता है । साहनी जी जनसाधारण वर्ग के साथ गहरा सरोकार रखनेवाले सर्जक थे । उनके उपन्यासों में ऐसे अनेकानेक प्रसंग उद्घाटित हैं जिन में देश की आर्थिक स्थिति, अर्थव्यवस्था, आर्थिक अभावों के दुष्णरिणामआदि का स्पष्ट उल्लेख हैं । इस रष्ट्र की यह एक–चिरंतन, सार्वत्रिक समस्या है । "कहीं पर पीड़ा भारत–विभाजन के कारण जमी है, कहीं राजनीतिक दोगलेपन से, कहीं अफसरशाही से, कही

पूँजीवादी व्यवस्था से, कहीं महामारी, जिन्दगी की यांत्रिकता, अकेलेपन, विषमता आदि से ।”[७३]

साहनी जी ने ‘तमस’ उपन्यास में जिन सांप्रदायिक दंगों को उभारा है, उसके मूल में वे पूँजीवादी सभ्यता तथा सामाजिक दुर्व्यवस्था को ही स्वीकार करते हैं । उनकी दृष्टि में सांप्रदायिक दंगे पूँजीवादी शक्तियों की देन है । यदि ये पूँजीपति लोग चाहते तो सामाजिक असमानता दूर भी हो सकती है और सामाजिक अमन भी कायम हो सकता है । परंतु तब इनका सामाजिक वर्चस्व ही समाप्त हो जाएगा । अतः अपने सामाजिक वर्चस्व को बनाए रखने के लिए इस वर्ग के लोग सदैव दंगे–फसाद करवा कर समाज को संकट में डाले रखते हैं और अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं ।

❖ *धार्मिक रुढ़ि की समस्या :*

यदि गहराई से देखा जाय तो धर्म की चेतना ने धार्मिक भावना को जो प्रोत्साहन देना चाहिए, नहीं दिया । यह सदा कहा जाता रहा – “धारयति इति धर्मः” । जो सब को धारण करता है, बांध कर चलता है वही धर्म है परंतु दुर्भाग्य की बात है कि उन धर्मावलंबियों ने सदा समाज को बाँटने का काम किया है । यह भी कहा जाता रहा – ‘धर्मो रक्षति रक्षितः’ अर्थात् जो धर्म की रक्षा करता है, उसकी रक्षा धर्म करता है । परंतु कहीं भी धर्म की यह सात्विक भावना दृष्टिगोचर नहीं होती । उसमें समयान्तर से अनेक प्रकार की रुढ़ियों, अंधविश्वासों का समावेश होता गया है और अब उन रुढ़ियों और अंधविश्वासों को ही भटके हुए तथाकथित धार्मिक लोगों ने धर्म मान लिया है ।

साहनी जी धार्मिक रुढ़ियों में विश्वास नहीं रखते थे । उन्होंने धार्मिक एवं सांप्रदायिक संकीर्णता के जीवन–विरोधी तत्त्वों को उद्घाटित किया है । ‘झरोखे’ उपन्यास में आर्यसमाजी अतिवादी मनासिकता तथा कट्टरवादिता का खुलकर विरोध किया है । उन्होंने उन सामाजिक प्रवृत्तियों को बड़ी सूक्ष्मता के

साथ प्रस्तुत किया है जिन विवेकशील तार्किकता के स्थान पर रुढ़ विश्वासों के आधार पर मानवीय संबंधों को निश्रित किया जाता है । 'तमस' में प्रचलित तंत्र–मंत्र पर पर गहरा कटाक्ष किया है – ''एक धर के सामने कोई औरत 'टोना' कर गई थी । कुछ थिगलियों में लिपटे कंकड़ और गुँथे और का पुतला और उस में खोंसी हुई लकड़ी की खपचियाँ थी नत्थू ने इसे अपने लिए अपशुकन समझा ।''[७४]

साहनी जी एक स्वतंत्र चिंतक थे । वे खुशामदी सर्जक नहीं थे । जो देखते थे, भोगते थे, उसे ही शब्द बद्ध करते थे । अर्थात् भोगे हुए जीवन की सच्चाई उनके साहित्य में व्यकत हुई है । उन्होंने मुक्त कंठ से स्वीकार किया है – ''मैं केवल लिखता हूँ, जिस चीज को मैं गहरे में महसूस करता हूँ – जो मुझे बेचैन करती है उसे मैं अपनी कलम पर ले आऊँ ।''[७५]

आज के समर्थ आलोचक राजेश्वर सक्सेना ने 'तमस' में व्यक्त राजनीति और धार्मिक अंतर्विरोधों का पर्दाफाश करते हुए लिखा है – ''तमस' में राजनीति और धर्म के अंतर्विरोधों स्पष्ट किया है – ''साहनी ने तमस में राजनीति के निमित धर्म का पर्दाफाश किया है ।''[७६] धार्मिक क्षेत्र की यत्किंचित विकृतियों के कारण सामाजिक मूल्यों का क्षय हो रहा है । आज भी जादू, टोना एवं अंधविश्वासों का प्रभाव व्याप्त है । 'बसंती' उपन्यास की इन पंक्तियों में पौराणिक रुढिवादी मान्यताओं का उल्लेख देखिए – ''दीनू ने मन ही मन यह धारण कर ली थी कि मंदिर में पूरा अनुष्ठान कराकर लौटेगा, चढ़ाँवा भी चढाँएगा, बलि भी देगा और देवी का कोप भी उतरवाएगा । दीनू को पता चला कि इसी पेड़ के निकट वह चबूतरा है जहाँ बलि चढ़ाई जाती है – ''पुजारी के हाथ में उसका दाम रख दो तो मेमना अपने आप ही चबूतरे पहुँचा दिया जाता है पर जहाँ काट कर बलि दी जाती थी – एक छोटे से छोकरे ने बलि चढाने के लिए दीनू से सवा रुपयें लिया था । हाँ गर्दन कट जाने पर भी मेमने की ढाँगे कुछ देर तक ज्यों की त्यों खड़ी रहीं । छोकरे ने लपककर गर्दन

उठा ली महाराज के गले में लोटते नागों को देखा – पुजारी ने रूपये लिए और थाली में से चुटकी भर बुंदी उठाकर दीनू की ओर बढ़ा दी, देवी का कोप दूर हो गया । देवी की कृपा से अब इसका गर्भपात नहीं होगा ।"[७७] इस प्रकार साहनी जी ने समाज में प्रचलित अनेक प्रकार की धार्मिक पाखंडों और धार्मिक रुढ़ियों का उल्लेख अपने उपन्यासों में किया है ।

❖ *जनसंख्या विस्फोट की समस्या :*

यह भारत जैसे देश के लिए एक भयंकर समस्या है । निरंतर द्रौपदी की चीर की भाँति बढ़ती हुई जनसंख्या सामाजिक सुख–शांति के लिए एक विकट चुनौती बनती जा रही है । रोजी–रोटी की तलाश में आज लोग गाँवों को छोड़कर शहरों की ओर भाग रहे हैं और शहरों में कीड़े–मकोड़ों की भाँति जीवन–व्यतीत कर रहे हैं । ऐसी बस्तियों में रह रहे हैं जहाँ हवा–पानी की कोई व्यवस्था नहीं । उनके पीले, निर्बल–दुबले निराश चेहरे देखने जैसे होते हैं ।

भारतीय समाज संतान की प्राप्ति को ईश्वरीय विधान और वरदान मान बैठा है । इसीलिए यह जनसंख्यावृद्धि समस्या बनती जा रही है । इस विस्फोट के लिए हमारी सोच, संस्कृति अधिक जिम्मेदार है । चाहें खाने के लिए रोटी न हो, शरीर ढ़कने के लिए वस्त्र न हो, पढ़ाई–लिखाई के लिए पैसों की व्यवस्था न हो, रहने के लिए छप्पर की व्यवस्था न हो फिर भी भूखे–नंगों–बच्चों की कतार खड़ी हो जाती है । साहनी ने अपने उपन्यासों में इस स्थिति का बड़ा मार्मिक, सटीक चित्रण किया है । 'कुंतो' उपन्यास में परिवार का चित्र प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं – "विद्या के चले जाने के बाद उसके छोटे–छोटे बच्चे परिवार के जीवन के केन्द्र में आ गये हैं । वे किसके साथ रहें, अपने पिता के साथ, या बच्चों के नाना–नानी उनका पालन पोषण करें ?"[७८] मां के बिना बच्चे आज निराधार दिखाई देते हैं ।

समकालीन परिवेश के निदर्शन और विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त रुढ़ियों के उद्‍घाटन के साथ–साथ साहनी जी ने बदलती हुई मानसिकता का भी चित्रण किया है । उनका मानना है कि अगर बढ़ती हुई जनसंख्या पर अंकुश नहीं लगता तो देश दुनिया की तस्वीर बदल जाएगी । 'कुंतो' उपन्यास में जब छोटा बेटा अपनी बहन की सगाई को रोकना चाहता है, तब माँ कहती है – "उन लोगों को पता चल गया कि तुम भाइयों ने यह काम किया है तो – तुम नहीं जानते... उनकी चार–चार बेटियाँ है । बेटा ! कुछ समझा करो एक का व्याह हो पाया है और वह भी बड़ी मुश्किल से ।"[७६]

'कुंतो' उपन्यास का जयदेव अपनी बहन के प्रति क्रुध होकर कहता है – "ये सब करतूत तेरी है । तुम भी कैसी बहन हो ? सात साल अभी ब्याह को नहीं हुए और चार कतूरे जन दिए ।"[८०] अधिक संतान पैदा करने का गर्व है । तभी तो "तुम कितनी बहने हो बसंती ? एक ही बेटा क्यों है बीबी जी, तीन–तीन बेटे हैं और तीन–तीन बेटियाँ ।"[८१] बेटे के मोह में बच्चियाँ पैदा होती रहती है और माँ–बाप इसके प्रति जागरुक नहीं होते । और बच्चों की परवरिश सही ढंग से नहीं हो पाती । अधिक संतानों की परवरिश अच्छे ढंग से न हो पाने का यह जीता–जागता उदाहरण देखिए – "जिसके नीचे दिन भर बस्ती की बूढ़ी औरत, मर्द और बच्चे पड़े रहते थे – उन्हीं के सामने इनके अधनंगे बच्चे खेलते थे ।"[८२]

भारतीय समाज में सदैव पुत्र को महत्त्व दिया जाता रहा है । जब तब पुत्र न पैदा हो तब–तक मानो उद्धार ही नहीं होगा । इस धारणा को लेकर जीने वाले लोग अधिक से अधिक बच्चे पैदा करते हैं । और स्वयं दुःखी होते है । इसका निर्देश 'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास में देखिए – "गोकुल दास के कोई बेटा नहीं हुआ । पुत्र–लाभ की ललक ने उस का मानसिक संतुलन बिल्कुल बिगाड़ दिया । तीसरी बेटी के जन्म के बाद वह इतना बोखलाया कि

अपनी पत्नी को तीनों बेटियों के साथ उसके माय के रवाना कर दिया और बरसों तक उनकी सुधि नहीं ली ।"[८३]

इस प्रकार देखा जाय तो भीष्म साहनी जी ने जहाँ अपनी कहानियों में इस समस्या का संकेत किया है वहीं अपने उपन्यासों में भी उन्होंने ये जन–संख्या विस्फोट का संकेत किया है । वे यह बताना चाहते थे कि लड़का–लड़की में कोई भेद नहीं है और हंमेशा अपनी मर्यादा में रह कर ही संतानोत्पति की लालसा रखनी चाहिए । यदि छोटा परिवार होगा तो बच्चों का लालन–पालन अच्छे ढंग से होगा और उनकी शिक्षा–दीक्षा का भी प्रबंध अच्छे ढंग से किया जा सकेगा । बढ़ती हुई जन संख्या पर अंकुश लगाने का उपाय अवश्य ही करना चाहिए ।

❖ निष्कर्ष :

इसे पूरे विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि साहनी जी एक ऐसे सर्जक थे जो अपने युगीन–संदर्भो और समस्याओं से बहुत गहरे तक जुड़े हुए थे । उन्होंने लगभग उन सारे युगीन संदर्भो को कमोबेस में रूपायित किया है जो मानव–समाज के उत्थान के लिए परमावश्यक है । हमने जिन समस्याओं का उल्लेख किया है, मात्र उन्हीं का वर्णन उन्होंने नहीं किया बल्कि और भी बहुत सी युगीन समस्याएँ थी जिनका उल्लेख उनके उपन्यासों में मिलता है । जैसे नौकरी की तलाश में भटकती हुई पीढ़ी का हताश–निराशा अर्थात् बेरोजगारी की समस्या, मँहगाई–मार और आर्थिक अभाव को सहन करने की समस्या, विघटनकारी परिस्थितियाँ गिरगिट की भांति नित बदलती हुई तथाकथित सामाजिक नेताओं की समस्या, पश्चिमी सभ्यता संस्कृति के मोह में आज की नारी के बदलते चरित्र की समस्या, टूटते हुए संयुक्त परिवारों की समस्या, प्रेम–संबंधो के बदलते रूपों की समस्या, बिवाहों के बदलते रूपों की समस्या इत्यादि अनेकानेक

समस्याओं का चित्रण इनके उपन्यासों में किया गया हैं । स्फीतिभय के कारण मैंने अलग–अलग मुदो में न लेकर उसका संकेत मात्र कर दिया है ।

वैसे जब हम उपन्यासों में मानव–मूल्य की चर्चा करते हैं तो उसका सीधा अर्थ समकालीन परिवेश एवं समसामयिक जीवन की गति के भीतर उभरते एवं स्वरूप ग्रहण करते प्रगतिशील तत्त्वों से होता है । इस रूप में देखा जाय तो भीष्म–साहनी का मूल–स्वर मानवतावादी रहा है । मानवतावादी दृष्टिकोण का विस्तार तो उस व्यापक परिवेश में होता है जहाँ तक उस सर्जक की दृष्टि विस्तरित होती है । उनके दृष्टि–विस्तार को किसी गली कुचे या शहर–गाँव तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता । साहनी एक सच्चे अर्थो में समाजवादी लेखक थे जिनका चिंतन–मनन किसी जाति, धर्म, संप्रदाय या राजनीतिक दलगत भावना विशेष से जुड़ा नहीं है । इन सब से ऊपर उठ कर वे एक व्यापक मानवतावादी दृष्टि से संप्रेरित होकर साहित्य–सर्जन करते रहे है । वे अपने युग–बोध से सदैव उत्प्रेरित होते रहे जिसके परिणाम स्वरूप वे समाज की बुराइयों पर प्रकाश डाल सके हैं । युगीन समाज में व्याप्त सभी रुढ़ियों एवं बुराइयों के प्रति वे जाग्रत दिखाई देते है । वे अपनी संवेदना पाठक वृन्द तक, पहुँचाने में सफल रहे हैं । अर्थात् साहनी जी का युग–बोध सदा जीवंत, जाग्रत और प्रबुद्ध दिखाई देता है ।

संदर्भ संकेत :

१	हिन्दी मानक कोश	रामचंद्र वर्मा, खण्ड–४	४४
२	बृहत हिन्दी कोश	कालिका प्रसाद	१०६६
३	भाषा शब्द कोश	डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल'	३७८
४	हिन्दी कहानी में युग–बोध	डॉ. मंजुलता सिंह	१
५	विश्व हिन्दी कोश	डॉ. रामप्रसाद तिवारी भाग–४	२८२
६	हिन्दी साहित्य कोश	डॉ. धीरेन्द्र वर्मा	२८६
७	हिन्दी कहानी में युग–बोध	डॉ. मंजुलतासिंह	२
८	आस्था और सौंदर्य	डॉ. राम विलास शर्मा	४
६	हिन्दी कहानी में युग–बोध	डॉ. मंजुलतासिंह	३
१०	हिन्दी कहानी में युग–बोध	डॉ. मंजुलतासिंह	पृष्ठभमि से उद्धृत
११	स्वातंत्र्योत्तर कहानी	सं. डॉ. रामकुमार गुप्त	४३
१२	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	६
१३	मेरी प्रिय कहानियाँ (भूमिका)	भीष्म साहनी	११
१४	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१३
१५	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	११
१६	वाङचू	भीष्म साहनी	४४
१७	भटकती राख	भीष्म साहनी	५१
१८	निशाचर	भीष्म साहनी	१५६
१६	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१३०

२०	पहला पाठ	भीष्म साहनी	७१
१२	पहला पाठ	भीष्म साहनी	३०
२२	भटकती राख	भीष्म साहनी	१८३
२३	शोभा यात्रा	भीष्म साहनी	५६
२४	भटकती राख	भीष्म साहनी	१५६
२५	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	६१
२६	पहला पाठ	भीष्म साहनी	६-१०
२७	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	८४
२८	भटकती राख	भीष्म साहनी	११३
२९	पहला पाठ	भीष्म साहनी	४४
३०	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	६७
३१	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	७४
३२	भटकती राख	भीष्म साहनी	१८३
३३	वाङ्चू	भीष्म साहनी	४४
३४	वाङ्चू	भीष्म साहनी	५०
३५	वाङ्चू	भीष्म साहनी	६१
३६	निशाचर (कहानी संग्रह)	भीष्म साहनी	१४०
३७	बसंती	भीष्म साहनी	१४६
३८	कुंतो	भीष्म साहनी	३२७
३९	कुंतो	भीष्म साहनी	३२७
४०	झरोखे	भीष्म साहनी	१०४
४१	बसंती	भीष्म साहनी	४४
४२	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	८४-८५
४३	‘मय्यादास की माड़ी’	भीष्म साहनी	२८७
४४	वर्तमान हिन्दी महिला कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन	डॉ. साधना अग्रवाल	१३
४५	बसंती	भीष्म साहनी	१००
४६	बसंती	भीष्म साहनी	१४०
४७	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१६४

४८	आलोचना–४८	संपादक – बच्चनसिंह	१६
४६	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	४६
५०	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	३०६
५१	भारतीय सौंदर्य शास्त्र की भूमिका	डॉ. नगेन्द्र	१७६
५२	कुंतो	भीष्म साहनी	१४६
५३	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	५५
५४	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१६८
५५	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१४८
५६	बसंती	भीष्म साहनी	१२१
५७	'तमस'	भीष्म साहनी	१६२
५८	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	७४
५६	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	२६०
६०	बसंती	भीष्म साहनी	१३५
६१	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१३७
६२	कुंतो	भीष्म साहनी	३०६
६३	तमस	भीष्म साहनी	१४१
६४	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१५१
६५	बसंती	भीष्म साहनी	११
६६	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	२५८
६७	तमस	भीष्म साहनी	१५
६८	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	२६
६६	झरोखे	भीष्म साहनी	१३१
७०	बसंती	भीष्म साहनी	११
७१	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	२३८
७२	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१७७
७३	हिन्दी कहानी एक अंतरंग पहचान	डॉ. राम दरशमिश्र	७६
७४	तमस	भीष्म साहनी	२७

७५	मधुमती वर्ष १४, अंक–१०४ अक्तूबर १९७५	वेदव्यास	२०
७६	आलोचना पत्रिका – लेख : प्रगतिशील साहित्य किसे कहते हैं ?	डॉ. नामवरसिंह	९३
७७	बसंती	भीष्म साहनी	३०
७८	कुंतो	भीष्म साहनी	७६
७९	कुंतो	भीष्म साहनी	७५
८०	कुंतो	भीष्म साहनी	२३७
८१	कुंतो	भीष्म साहनी	३८
८२	बसंती	भीष्म साहनी	७०
८३	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	८३

📖 .....✍

चतुर्थ अध्याय
'भीष्म–साहनी के कथा साहित्य का शिल्प–वैभव'

१ शिल्प की अवधारणा
२ साहित्य में वस्तु और कला–शिल्प की सापेक्षिक भूमिका
३ वस्तु कला और शिल्प
४ साहनी की कहानियों के कथानक की विशेषताएँ
५ चरित्र–शिल्प
६ साहनी की चरित्र सृष्टि कला की विशेषताएँ
७ कथोपकथन (संवाद)
८ देश–काल वातावरण
९ भाषा–शैली
१० उद्‌देश्य
११ उपन्यास : कला–वैभव
१२ साहनी के उपन्यासों के कथानक की विशेषताएँ
१३ चरित्र शिल्प
१४ साहनी के उपन्यासों के पात्रों का वर्गीकरण
१५ कथोपकथन (संवाद–कला)
१६ देश–काल–वातावरण
१७ भाषा–शैली
१८ उद्‌देश्य

चतुर्थ अध्याय
'भीष्म-साहनी के कथा साहित्य का शिल्प-वैभव'

१. शिल्प की अवधारणा :

"साहित्य में वस्तु तत्त्व की भाँति कला और शिल्प का भी अपना विशिष्ट महत्त्व होता है । कोई साहित्यिक कृति वस्तु तथा विचार तत्त्व की वाहिका होते हुए भी एक कलात्मक इकाई भी होती है । मूलतः वह एक कलात्मक सृष्टि ही है, जो कलाकार की अपनी संवेदनाओं, अनुभवों तथा चिंतन को इस रूप में पाठकों तक संप्रेषित करती है, कि पाठक सहज ही उससे एक तादात्म्य का अनुभव करता हुआ इच्छित आनंद तथा संतोष प्राप्त करता है । कहने कि आवश्यकता नहीं कि कला के आवरण में प्रस्तुत की गई संवेदनाएँ तथा वैचारिकता ही साहित्य को साहित्य बनाते हैं और उसे स्थायी महत्त्व भी प्रदान करते हैं । साहित्य के अंतर्गत कला और शिल्प दोनों की अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है ।"[१]

अभिव्यक्ति का मूल माध्यम भाषा है । भावों को संप्रदाय की स्थिति भाषा से ही मिलती है । मनुष्य के सफल उद्घाटन एवं अभिव्यक्ति के लिए साहित्य की रचना करते समय साहित्यकार को शिल्प का सहारा लेना पड़ता है । साहित्य के शिल्प के अंतर्गत उन सभी विधियाँ, नियमों, तरीकों का समावेश हो जाता है, जिसकी सहायता से सर्जक किसी घटना, पात्र, वार्तालाप अथवा दृश्य, वातावरण का सजीव वर्णन प्रस्तुत करता हुआ, मानव जीवन के किसी विशिष्ट पहलू पर प्रकाश डालता है । शिल्प के कोशीय अर्थ निम्नांकित हैं –

"शिल्प गुण, कलाकृति के विभिन्न अंगो की शिल्पगत एकांतविति ।"[२]

"शिल्प-संज्ञा पु. (सं.) निर्माण, सर्जन, सृष्टि, रचना ।"[३]

"शिल्प से अभिप्राय हाथ से कोई वस्तु तैयार करने अथवा हस्तकारी या कारीगरी से है ।"[४]

२. साहित्य में वस्तु और कला-शिल्प की सापेक्षिक भूमिकाः वस्तु-कला और शिल्प :

कला और शिल्प के बल पर श्रेष्ठ साहित्य की रचना नहीं की जाती । उसी प्रकार कोश अनुभव और चिंतन भी लिपिबद्ध होकर श्रेष्ठ साहित्य की संज्ञा प्राप्त नहीं कर सकता । साहित्य में वस्तु और शिल्प का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

"प्रतिभा के साथ-साथ कुशल शिल्प का होना बहुत जरुरी है । शिल्प विहीन प्रतिभा उत्कृष्ट रचना का सृजन करने में असमर्थ है । ऐसी प्रतिभा उस कुशल कारीगर के समान है, जो औजार न होने के कारण अपनी कारीगरी दिखाने में असमर्थ है ।"[५] साहित्य में कला और शिल्प का अनन्य संबंध है ।

३. कथावस्तु :

कहानी में कथावस्तु का महत्त्व :

"कथावस्तु कहानी का सबसे महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य तत्त्व हैं, चाहे वह किसी रूप में हों ।"[६] "कथावस्तु के दो भाग किये जा सकते हैं (१) कथांश (२) विन्यास । कहानी में कथांश प्रायः संक्षिप्त और सरल होना चाहिए ।"[७] "कहानीकार अपने पाठक को अंत तक पहुँचाने में इधर-उधर घूमने या 'चिलम-तमाकू पीने' का अवकाश नहीं देता । घटनाओं के संबंध में बिना प्रयोजन अंदर आने की इजाजत नहीं है । कहानीकार का मूल-मंत्र कहा गया है ।"[८] कथानक कहानी का मुख्य आधार होता है । वह कहानी का ढाँचा अथवा शरीर है । इसके बिना कहानी की कल्पना भी नहीं की जा सकती है । यही तत्त्व कहानी को विकास की ओर ले जाता है । कथानक की प्रमुख तीन विशेषताएँ हैं । (१) सम्यक गठन (२) रोचकता और (३) स्वाभाविकता ।

लेखक अपनी इच्छानुसार अतीत या वर्तमान कहीं से भी कथानक का चुनाव कर सकता है ।

कथानक के विकास की चार अवस्थाएँ बताई गई हैं (१) शीर्षक (२) आरंभ (३) विकास और (४) चरम सीमा ।[६]

४. साहनी की कहानियों के कथानक की विशेषताएँ :

साहनी की कुछ कहानियों को छोडकर सभी कहानियाँ संक्षिप्त हैं । उनकी कहानियों के शीर्षक प्रतीकात्मक, भावात्मक, पात्रों के नाम के आधार पर एवं मनोदशा के आधार पर रखा गया है । सरलता, सहजता एवं स्वाभाविकता साहनी की अपनी निजी विशेषता है । उन्होंने घटना ऐक्य और संबंध–निर्वाह का पूर्ण रूप से पालन किया है । उन्होंने प्रारंभ, मध्य और अंत तीनों की एकसूत्रता अपनाते हुए चरमसीमा में पहुँचकर कौतूहल का निरूपण किया है । साहनीने कथावस्तु का चयन निम्न और मध्यम दोनों वर्गो से अधिकांशतः किया है । यह परिवेश उनका अधिक जाना–माना एवं पहचाना लगता है ।

अब हम साहनी की कहानियाँ के कथानक संबंधी विशेषताओं की चर्चा करेंगे ।

शीर्षक, संक्षिप्तता एवं स्वाभाविकता :

साहनी की कहानियों के शीर्षकों को हम इस प्रकार विभाजित कर सकते हैं –

प्रतीकात्मक शीर्षक :

चीफ के दावत, पाली, चोरी, राधा–अनुराधा, खूंटे, मालिक का बन्दा, नौसिखुआ, सडक पर, अपने–अपने बच्चे, नीली आँखे, खून के छांटे, क्रिकेट मेच' आदि कहानियाँ प्रतीकात्मक है ।

भावात्मक शीर्षक :

भाई–बन्द, फैसला, समाधि भाई, रामसिह, त्रास, जख्म, पहिचान, काँटे की चुभन, फूलाँ, शोभा–यात्रा, प्रणय–लीला, साग–मीट, ऊब, घर–बेघर, मुर्गी की कीमत, तमगे, इत्यादि हैं ।

उद्‌देश्य के आधार पर :

कण्ठहार, मुर्ग मुस्सलम, दिवास्वप्न, पोखर, नहामत, अतीत के स्वर, दहलीज, पहला पाठ, पाप पुण्य, छिपे चित्र, अहं ब्रह्माष्मि, खुश्बू, झुमर, भाग्यरेखा आवाजें, झुरपुरा, अशांत रुहें, शिष्टाचार इत्यादि हैं ।

साहनी की 'अधिकांशतः कहानियाँ' संक्षिप्त हैं । संक्षिप्त कथावस्तु होते हुए भी कलात्मकता का पूर्णतः निर्वाह हुआ है । एक ही घटना और अल्प पात्रों के माध्यम से कहानी प्रस्तुत करने की साहनी की अपनी निजी विशेषता है । निशाचर, जहरबख्श, मेड इन इटली, भटकाव, फैसला, शोभायात्रा, सड़क पर चोरी, नौसिखुआ, खुश्बू, आदि कहानियाँ संक्षिप्त होते हुए भी विशेष कलात्मक हैं । संक्षिप्त कथावस्तु में साहनी ने पात्रों की मनोदशा को प्रकट करने के लिए संकेतशैली का प्रयोग किया है । उनकी कहानियों में कृत्रिमता नहीं बल्कि स्वाभाविकता विद्यमान है । संक्षिप्तता और सरलता के माध्यम से साहनी की कहानियाँ स्वाभाविकता को मुखरित करती हैं । उनकी कहानियों में निरुपित पात्र एवं घटनाएँ हमारे आसपास की हैं जिसे हम देखते हैं, सुनते हैं, भोगते हैं ।

घटना ऐक्य और संबंध-निर्वाह :

कहानी में केवल एक घटना होती है और होनी चाहिए और उसमें समाविष्ट घटनाओं की एकता होनी चाहिए । "एक परिस्थिति दूसरी परिस्थिति में घनिष्ठता से जुड़ी रहे, यह बहुत आवश्यकता है । इसे ही एकता और अन्विति कहा गया है ।"[१०] "प्रत्येक दशा में कहानीकार का ध्यान इस बात की ओर विशेष रूप से रहता है कि कहीं घटनाओं की श्रृंखला टूट न जाये । संबंध-निर्वाह का यही अर्थ है ।"[११]

साहनी की कहानियों में विशेष रूप से एकता और अन्विति देखने को मिलती है । – उदाहरण – 'चीफ की दावत' कहानी में साहनी ने चार परिस्थितियों को उठाया है, परंतु चारों परिस्थितियाँ संघर्ष को याद करती हुई, एक श्रृंखला में चरम सीमा पर पहुँचती हैं । जैसे –

"आज मिस्टर शामनाथ के घर चीफ की दावत थी ।"

"…. माँ का क्या होगा ?'

"… खाना खा के जल्दी ही अपनी कोठरी में चली जायें – मैं बाहर से ताला लगा दूँगा… ।"

"सात बजते बजते एक काम्याब पार्टी है – शामनाथ की पार्टी सफलता से शिखर चूमने लगी.. ।"

"माँ हाथ मिलाओ – ओ अम्मी तुमने आज रंग ला दिया – तो मैं बना दूँगी, बेटा, जैसे बन पड़ेगा बना दूँगी ।"[१२]

कहानी के प्रारंभ, मध्य और अंत में रोचकता के साथ–साथ रचनात्मक – संगठन की एकता भी प्रभावपूर्ण है । कहानी चरम सीमा पर पहुँचकर मूल लक्ष्य को प्रतिपादित करने में सफल है, जो साहनी की अपनी निजी विशेषता मानी जायेगी ।

प्रारंभ और अंत में कौतूहल का समन्वय एवं वस्तु संगठनः

उत्तम कोटि की कहानी का प्रारंभ आकर्षक और अंत महत्त्वपूर्ण होता है । इन दोनों का आधुनिक कहानियों में विशेष ध्यान दिया जाता है । "कहानी घुड़–दौड़ के समान है । इसमें सबसे अधिक महत्त्व प्रारंभ और अंत का है ।"[१३] डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा का यह कथन दृष्टव्य है – "आदि और अंत के तारतम्य में 'अंत' को अधिक महत्त्व देना चाहिए क्योंकि मूलभाव के परिचायक का वही केन्द्रबिंदु है । मध्य की उपेक्षा की जा सकती है आरंभ का दौर्बल्य सहन किया जा सकता है, पर अंत बिगड़ा तो सब डूबा समझना चाहिए ।"[१४]

साहनी की कहानियों का प्रारंभ बड़े रोचक ढंग से हुआ है । साहनी की सबसे बड़ी विशेषता है कि प्रारंभ में ही अंत का अंगुली–निर्देश कर देते हैं । कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं –

'दहलीज' कहानी का प्रारंभ बड़े रोचक ढंग से हुआ है – "सब से भयानक मौत है । वर्षो से मैं क्यास लगा रहा हूँ कि मैं किस मौत से मरुँगा । अभी भी जिन्दगी और मौत के बीच लटक रहा था, उसका धागा

टूटने में नहीं आ रहा था – मरने से पहले इंसान किसी ऐसी जगह पहुँच जाता है जहाँ जिन्दगी की खल नही रह जाता – न अँधेरा, न उजाला, न जिंदगी, न मौत... ।"[१५]

'नौसिखुआ' कहानी का प्रारंभ – "अमरजीत ने काँपते हाथों से पात्र को मुँह लगाया – उसकी सोच, उसके सभी राग–द्वेष, सभी एकीभूत होकर किसी लौ पर केन्द्रित हो गए है – सभी बंधनों से मुक्त पंथ की सेवा के लिए दतचित उपस्थित हो गया है ।"[१६]

'अहं ब्रह्मास्मि' कहानी का प्रारंभ – जाड़े की छुट्टियों में हम कभी–कभी सुबर–सबेरे लम्बी सैर को निकल जाया करते थे – दोपहर तक वहीं पड़े रहें, और सिनेमा देखकर शाम को घर लोटे, या अगर देखा कि भाटिया बहुत व्यस्त है, जो थोड़ी देर गप्य–शप्य करने के बाद शहर की ओर चल दिए ।"[१७]

उसी प्रकार साहनी की कहानियों के प्रारंभ की ही तरह अंत व्यंग्यात्मक उद्देश्य मूलक है । साहनी की कहानी के प्रारंभ हमें पूरी तरह अपनी ओर खींच लेते हैं तो अंत एक जोरदार व्यंग्य करके एक झटका दे देते हैं ।

संवेदना के स्तर पर उनकी कहानियों के अंत बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत हुए हैं ।

'त्रीस' कहानी का अंत प्रभावपूर्ण है – "पाँच दूँ या दस ? दस दूँ पाँच ? यह क्या बेवकुफी करने जा रहे हो ? यह क्या कम है कि इसे अस्पताल में उठा लाये हो ?"[१८]

'झूमर' कहानी का अंत – "मात्र झूमरों का जोड़ा जो बेटी की शादी के समय उसने अपने लिए बनवाया था । झूमर चूकने के बाद कमल सिर पर अपना पल्लू ठीक कर रही थी और अपनी आँखें पोंछ रही थी ।"[१९]

'मुर्ग–मुसल्लम कहानी का अंत कोतूहल उत्पन्न करता है "यह इतना आसान थोड़े ही है । हमने बरसों तक देश–सेवा की है, तब कहीं जेलखाने में जाने का अधिकार प्राप्त कर पाये हैं । वरना बिना कुछ किये – धरे जेल में

कौन जाने देता है ? अब, पुलिसवाले मेहरबान हों तभी कुछ हो सकता हैं ।"[२०]

साहनी की कहानियों का प्रारंभ विशेषतः वातावरण के चित्रण द्वारा, मानवीय चित्रण द्वारा, पात्र के सामान्य परिचय द्वारा, पात्र की चारित्रिक विशेषता के उद्घाटन द्वारा, मानव के चरित्र के विश्लेषण द्वारा, घटना अथवा क्रिया व्यापार द्वारा एवं मौखिक परंपरा के ढंग से हुआ है । साहनी की कहानियों का अंत विशेषतः संघर्षात्मक एवं नाटकीय ढंग से हुआ है । जैसे प्रणल–लीला' कहानी का उदाहरण –

"तू बोलता क्यों नहीं अशोक ?"

"भाई की तो सगाई होने जा रही है । इतवार को सगाई है । क्या तुम नहीं जानती ? वह अब तुम्हें खत नहीं लिखेंगे ? ।"[२१]

साहनी की कहानियों में वस्तु–संगठन का निर्वाह कलात्मक ढंग से हुआ है । उनकी कहानियों में प्रारंभ, मध्यभाग और अंत की योजना के रूप में नियोजित व्यवस्था है । कहानी का प्रारंभ, पहले कौन–सा सूत्र या समस्या को उठाना, उसमें पात्रों को व्यवस्थित बिठाना, यह सब तरीकाबद्ध है । कथानक के अंत में कार्य को परिणाम का 'स्वरूप देखने में वे सिद्ध हस्त मालूम होते हैं । उनकी कहानियों का चरमोत्कर्ष, चमत्कारपूर्ण या आंतरिक न होकर भावात्मक है । विचार और दृष्टिकोण को बोधात्मक रूप देकर साहनी सोद्देश्य कहानियों के लिए कथानकों का निर्माण करते हैं । कथानक चाहे किसी प्रकार का हो वे विचार, संवाद या दृश्य से उसका उद्घाटन करते है, फिर अपनी अप्रतिम सूझ के अनुसार इस प्रारंभिक कारण को कार्य में परिणत करनेवाले मध्य भाग को खोलते हैं । जिनका पर्यवसान चरम सीमा पर होता है । उद्देश्य को पकडने में पाठक अपने आप स्वतंत्र रहते हैं ।

साहनी एक सफल कहानीकार हैं । परंपरा के प्रति लगाव और नवीन के प्रति आग्रह इनकी कहानियों को विशिष्ट बनाते हैं । उन्होंने अपनी कहानियों के विषयवस्तु का चयन विविध क्षेत्रों और वर्गों से किया है । उन्होंने अपने युग का चित्रण बड़ी प्रामाणिक्ता के साथ किया है ।

साहनी ने अपनी कहानियों की कथावस्तु का चयन शहर और गाँव दोनों क्षेत्रों से किया है । लेकिन अधिकांश कहानियाँ शहरी क्षेत्र के निम्न और मध्यमवर्ग की हैं ।

(१) निम्नवर्गीय कथानक :

निम्नवर्ग–ज्यादातर अनपढ और भाग्यवादी होता है । साहनी की कहानियों के निम्नवर्ग ज्यादातर शहरी एवं मजदूर है । इस वर्ग की लालसा और दयनीय परिस्थिति के केन्द्र में आर्थिक विषमता ही जिम्मेदार है ।

'गंगो का जाया' कहानी में मजदूर वर्ग की विडम्बना का चित्रण हुआ है । बड़े शहर में घीसू और उसकी पत्नी गंगो मजदूरी का काम करते हैं । सगर्भा होने के फल–स्वरूप वह कोई काम नहीं कर सकती । उसे कोई काम देने के लिए तैयार नहीं होते । जहाँ भी काम करने जाती है, वहाँ जब उसका पेट देखने लगते हैं । उसका पति उसे मायके में चले जाने को कहता है, क्योंकि तीन जीवों का पोषण करने में वह असमर्थ है । घीसू अपने पाँच वर्ष के लड़के रिसू को बूट पालिस के काम में लगा देता है । रिसू बूट पालिस करने के लिए शहर की बड़ी–बड़ी गलियों में चक्कर काटते हुए, कई दिनों तक वापिस नहीं लौटता । इधर गंगों के पेट में दूसरे बच्चे ने करवट लेना शुरु कर दिया है ।

साहनी ने शहरों में बढती हुई मजदूरों की भयावह संख्या, उसकी विडम्बना को विषय वस्तु के रूप में चयन किया है । जैसे – 'और जब वह नई आजादी बन कर तैयार हो जाती तो फिर मजदूरों की टोलियाँ अपने फूस के दर पर उठाये किसी–किसी दूसरी आबादी की नींव रखने चल पड़ती – पर अधिक छोटी–मोटी काम की तलाश में सड़कों पर घूमते रहते, काम इतना न था जितने मजदूर आ पहुँचते ।"[२२]

"अपने – अपने बच्चे" कहानी में उच्चवर्ग की निम्नवर्ग के प्रति हीन–भावना का चयन किया है । साहनी ने निम्न मध्यमवर्ग के वर्ग–भेद को इस प्रकार से स्पष्ट किया है –

"अब्बल जिस औरत के साथ चार बरस का दुम–छलका लगा हो, उसे नोकरी मिलती भी कहाँ है, मालिक कहते हैं औरत को तो दो दक्त रोटी चाय दें, बच्चों को साथ में क्यों दें ?"[२३]

'पिकनिक' कहानी में निम्नवर्ग के प्रति उच्चवर्ग के अमानवीय व्यवहार को लेकर विषयवस्तु का चयन किया है । साहनी ने मजदूरन गौरी की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है । "दोनों बच्चे खाट के पास लोट आए हैं, और पालथी मारकर खाट के पास बैठ गए हैं । खाट पर बच्चें माँस की पीली पीली टाँगे, मैली सी कपरी में से झाँक रही हैं । और गौरी फटी सी साडी का पल्लू कमर में खौसती हुई, सड़क पार के सामने ऊपरवाले फ्लेट में झाडू बर्तन करने चली गई है ।"[२४] उसी प्रकार 'साग–मौट' कहानी में साहनी ने धनिक लोगों का निम्नवर्ग के प्रति अमानुषी व्यवहार का चयन किया है । 'शिष्टाचार' कहानी में 'हेतु' नामक नौकर पात्र को साहनी ने निम्नवर्ग के व्यक्ति का संस्कृति प्रेम का वर्णन किया है । 'राधा–अनुराधा' कहानी में साहनी ने निम्नवर्गीय बाप का बेटी के प्रति अमानुषीय व्यवहार को किया है । उसी प्रकार साहनी की अधिकांश कहानियों में निम्नवर्ग का सजीव चित्रण किया है जो पीड़ित हैं, शोषित हैं, अमानुषी त्रास झेलने वाले पात्र है ।

२. *मध्यमवर्गीय कथानक :*

साधारणतः समाज को कई प्रकार से बाँटा जाता है । जैसे, सेक्स के आधार पर, आयु के आधार पर, जाति और प्रजाति के आधार पर और धर्म के आधार पर । अब सामाजिक विभाजन का कार्य वर्ग के आधार पर किया जाने लगा है । समाज के तीन हिस्से होते हैं – उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग । इस प्रकार स्पष्ट है कि अनुप्रस्थ ढंग से समाज के विभाजन होने पर उसका जो भी बिचला हिस्सा है, उसे मध्यवर्ग कहा जाता है ।[२५]

डॉ. श्याम सुंदर घोष के शब्दों में – "यह वर्ग समाज का बिचला हिस्सा है जो समाज को अनुप्रस्थ ढंग से विभाजित करने पर बनता है, और जिसमें समावेश कर एक ही रुतवे या ओहदे के लोग सम्मिलित होते हैं । जिनकी

विशेष आर्थिक और सामाजिक स्थिति और प्रवृत्ति होती है । जो बहुधा उनकी आय, व्यवसाय, शिक्षा और वंश–परंपरा से निर्धारित होती है ।[२६]

मध्यवर्ग की मुख्य विशेषता यह है कि वह सभ्यता, संस्कृति, रहन–सहन, आचार–व्यवहार में उच्चवर्ग से प्रभावित होता है लेकिन बदतर होती आर्थिक स्थिति उसे निम्नवर्ग की विशेषताओं को स्वीकार करने के लिए विवश कर देती है । साहनीने अधिकांश कहानियों की कथावस्तु का चयन मध्यमवर्ग से किया है । इस वर्ग के लोग–ज्यादातर पढे–लिखे होते हैं और अपनी जिजीविषा के कारण पीड़ित होते हैं ।

'चीफ की दावत' कहानी में क्लर्क मि. शामनाथ अपनी तरक्की के लिए बड़े चीफ को भोजन का आमंत्रण देता है । साहनी ने मध्यमवर्गीय क्लर्क जीवन की जिजीविषा को व्यक्त करने हेतु कथावस्तु का निर्माण किया है । 'सिफारिशी चिट्‌ठी' कहानी में मध्यमवर्गीय जीवन की मानसिक कुण्ठाओं से उद्‌भूत नपुंसकता को लेकर विषयवस्तु का चयन किया गया है । पट्टरियाँ' कहानी में केशोराम एम.ए. तक पढ़ा लिखा व्यक्ति है । इस कहानी में विषम परिस्थिति से घुट रहे व्यक्ति के जीवन की मानसिकता को कथावस्तु का आधार बनाया है । 'राधा–अनुराधा' कहानी में साहनी ने मध्यमवर्गीय व्यक्ति के जीवन की निर्ममता, निरंकुशता और अमानवीयता का कथावस्तु के रूप में चयन किया है । 'घर की इज्जत' कहानी में साहनी ने पुरानी पीढ़ी की जड़ता को लेकर कथावस्तु का निर्माण किया है । जैसे बड़े भाई की मनोवृत्ति मध्यवर्गीय मनोवृत्ति का सजीव उदाहरण है । "मैं कब कहता हूँ कि सामाजिक नहीं है ? मगर कुलीन घरों की बहु–बेटियाँ लोगों के सामने बेपरदा होकर नहीं आती ।"[२७]

आधुनिक युग में स्त्री–पुरुष, प्रेमी–प्रेमिका, पति–पत्नी आदि संबंधों का परिवर्तित रूप बदल चुका है । 'डोरे' कहानी में लेखक ने दुहरा प्रेम दुहरी मनःस्थिति और दुहरा व्यक्तित्व जीवन को किस प्रकार बोझिल बनाते हैं, इसको व्यक्त करने–हेतु कथावसतु का चयन किया है । 'पास–फेल' कहानी में मध्यमवर्गीय लोगों की विवाह संबंधी संकीर्ण मनोवृत्ति का चयन किया गया है । 'ललिता' कहानी में संयुक्त परिवार की दुविधाग्रस्त मनोवृत्तियों का चयन किया

गया है । 'एक रोमांटिक कहानी' कहानी में मध्यमवर्गीय लोगों की बदली हुई मनःस्थिति का चयन हुआ है । 'समाधीभाई रामसिंह' कहानी में मध्यमवर्गीय विश्वसनीयता को प्रस्तुत किया है । 'तस्वीर' कहानी में मध्यम वर्गीय परिवार में विधवा जीवन की दयनीय स्थिति का चयन हुआ है । 'जोत' कहानी में किसान की लालसाओं विडम्बनाओं का चयन किया गया है । 'निमिष' कहानी में मध्यमवर्गीय लोगों की भाग्यवादी मनोवृत्ति का वर्णन हुआ है ।

निष्कर्षतः

साहनी संवेदनशील कहानीकार हैं । अपनी कहानियों में उन्होने मुख्यतः दो वर्ग, निम्न और मध्यवर्ग को अपनी कहानियें का विषयवस्तु बनाया है । इन दो वर्गो का चयन करके उनकी मनोवृत्ति और क्रियाकलापों का पर्दाफाश किया है । इन दो वर्गों की विषमाओं और समस्याओं को अधिक नजदीक से देखा है और परखा है ।

५. चरित्र-शिल्प :

कहानी के मुख्य तत्त्वो में चरित्र-शिल्प का महत्त्व सबसे अधिक है, क्योंकि कहानी की जान संक्षिप्तता है और संक्षिप्त कथावस्तु को आगे बढ़ाने का कार्य पात्रों के माध्यम से ही संभव हो पाता है । पात्रों के माध्यम से कहानीकार जीवन के कई महत्त्वपुर्ण पहलू और रहस्य का उद्‌घाटन सरलता से कर पाता है ।

कहानी में चरित्र-शिल्प का महत्त्व तथा स्थान :

कहानी में पात्र के संपूर्ण चरित्र पर प्रकाश नहीं डाला जाता, परंतु उसके चरित्र के ऐसे अंश को ही प्रकाशित किया जाता है जिनसे कि उसका संपूर्ण व्यक्तित्व जाज्वल्यमान हो उठता है । वस्तुतः आधुनिक कहानी में वही कथा श्रेष्ठ मानी जाती है जिसमें लेखक पात्रो का चरित्र-चित्रण करता हुआ किसी मनोवैज्ञानिक सत्य की व्याख्या करे । सफल चरित्र-चित्रण के लिए यह आवश्यक है कि लेखक को मनोविज्ञान का विशेष ज्ञान हो । वह उनकी आन्तरिक वृत्तियों

में प्रविष्ट होकर उनके विषद अध्ययन द्वारा संवेदना के स्तर पर चित्रण करें । कहानी के अंतर्गत संपूर्ण पात्र लेखक की कल्पना की उपज होते हैं, किंतु यदि वे अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व न रखते हो, और लेखक के ही कठपूतली हों, तो वे व्यर्थ और अरुचिकर होंगे । वस्तुतः पात्रों के स्वाभाविक और सजीव चित्रण के लिए लेखक को अपना व्यक्तित्व और पर आरोपित नहीं करना चाहिए । कहानी में चरित्र–विकास के लिए पात्र की मानसिक और सामाजिक परिस्थितियों का विवरण भी पर्याप्त सहायक हो सकता । कथावस्तु के अनुकूल पात्रों का चयन किया जाना चाहिए ।

पात्रों का वर्गीकरण :

कहानी के पात्रों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है –

१. चरित्र के आधार पर
   - वर्गप्रधान
   - व्यक्तिप्रधान

२. स्वभाव के आधार पर
   - स्थिर पात्र
   - गतिशीलपात्र
   - विचित्रपात्र
   - अधमपात्र

३. अध्ययन की सुविधानुसार
   - मुख्यपात्र
   - गौणपात्र

चरित्र के आधार पर

चरित्र के आधार पर मुख्यतः दो प्रकार के पात्रों की कल्पना की गई है (१) वर्गप्रधान और (२) व्यक्ति प्रधान । स्वभाव के आधार पर पात्रों को चार विभागों में विभक्त किया जा सकता है ।

(१) स्थिर पात्र (२) गतिशील पात्र (३) विचित्र पात्र और (४) अधम पात्र ।

(१) चरित्र के आधार पर :

१) **वर्ग प्रधान पात्र** : इन्हें सामान्य या टाइप पात्र के नाम से भी जाना जाता है । ये पात्र अपने वर्ग–विशेष का अपनी जाति का पूर्ण प्रतिनिधित्व करते हैं ।

२) **व्यक्तिप्रधान पात्र** : ऐसे पात्र अपनी निजी विशेषताओं से युक्त होते हैं । वे सामान्य लोगों से कुछ विलक्षण होते हैं । ऐसे पात्रों का व्यक्तित्व ही इन्हें सामान्य पात्रों से अलग कर देता है ।

(२) स्वभाव के आधार पर :

१) **स्थिर पात्र** : इस तरह के पात्र अपने चरित्र एवं आदतों में पूरी तरह स्थिर रहते हैं । ऐसे पात्रों को आदर्शवादी पात्र भी कहा जाता है ।

२) **गतिशील पात्र** : इसे प्रगतिशील या यथार्थवादी पात्र के नाम से भी जाना जाता है । ये परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ–साथ अपने स्वभाव, अपनी आदतों को बदलते रहते हैं ।

३) **विचित्र पात्र** : कुछ पात्र ऐसे होते हैं जिनमें स्थिर एवं गतिशील अर्थात् आदर्श और यथार्थ दोनों का मिला जुला रूप पाया जाता है । अतः ऐसे पात्रों को विचित्र पात्र की संज्ञा दी जा सकती है ।

४) **अधम पात्र** : इस प्रकार के पात्रों को अधम कोटि के खल पात्र के रूप में माना जाता है ।

(३) अध्ययन की सुविधानुसार :

१) **मुख्य पात्र** : प्रधानपात्र या मुख्य पात्र कहानी के संचालक होते हैं और संपूर्ण कथावस्तु पर छाये रहते हैं । ये मुख्यतः नायक या नायिका होते हैं ।

२) **गौणपात्र** : ये पात्र कथा को आगे बढाते हैं और अवसरानुसार कहानी में व्यापकता लाते हैं । गौण पात्रों की योजना मुख्य पात्रों या कथावस्तु में योग देने के लिए की जाती है तो कभी–कभी कथावस्तु में मात्र मोड देने के लिए भी की जाती है ।

चरित्र–चित्रण की प्रणालियाँ :

चरित्र–चित्रण के लिए चार प्रणालियाँ प्रयुक्त होती है । (१) वर्णन द्वारा (२) संकेत द्वारा (३) वार्तालाप और (४) घटनाओं द्वारा ।

साहनी की कहानियों के पात्र :

अध्ययन की सुविधा के लिए साहनी की कहानियों के पात्रों को हम निम्नलिखित वर्गो में विभाजित कर सकते हैं । उनकी कहानियों के पात्रों में पुरुष और स्त्री दोनों को स्थान मिला है । इनका हम अलग–अलग शीर्षकों के अन्तर्गत उल्लेख करेंगे । साहनी की कहानियों के कुछ पात्रों के माध्यम से चरित्र–चित्रण कला एवं संवेदनाबोध का परिचय करेंगे ।

आदर्श पात्र :

आदर्श पात्र विशेष रूप से परंपरित मूल्यों एवं सत्य से चिपके रहनेवाले पात्र होते हैं । ये पात्र किसी भी स्थिति–परिस्थिति में अपनी आस्था से नहीं डिगते । साहनी की कहानियों में इसरो, राजा–बाणभट्ट, रुकमणि, सुक्लजी, रामसिंह, रामदास, प्रो. विरेन्द्र, बूढी माँ, वकील साहब आदि ऐसे पात्र है ।

यथार्थ पार्त्र :

यथार्थपात्र युगीन परिवेश में हमारे आस–पास मौजूद होते हैं । ऐसे पात्रों का न तो आदर्श, ध्येय और सिद्धांतो होते है । ये पात्र परिस्थितियों से

समझौता करनेवाले पात्र होते हैं । साहनी की कहानियों में जानकू – शामदास, रामदेव, सुनंदा, मि. शामनाथ, रानी मेहतो, रामदयाल, कुन्तो, ललिता, कृष्णलाल, स्वार्थी पिता, सुषमा, कोशोराम, देवव्रत, बड़े भाई, वकील–पत्नी आदि ऐसे ही पात्र हैं ।

विद्रोही पात्र :

ये पात्र अन्याय अत्याचार, पाखंड के शिकार बने हुए होते हैं । निम्नस्तर के पात्र बहुधा ऐसे पात्र होते हैं, साहनी की कहानियों में मुन्नी, विधवा स्त्री, गोरी, राधा, सरदारजी, बीरजी आदि ऐसे पात्र हैं ।

उपेक्षित और पीड़ित पात्र :

स्वार्थ और अनैतिकता के शिकार अनेक ऐसे पात्र होते हैं । ये पात्र बहुत दयनीय होते है । साहनी की कहानियों में ऐसे तिरस्कार और धृणा का भोग बने हुए पात्रो में चाचा मंगल सेन, एक वृद्ध, माया, गिरीश, त्रिलोकनाथ आदि है ।

शोषित पात्र :

पूँजीपति एवं साधन–संपन्न लोगों के शिकार ये पात्र भाग्वादी अधिक होते हैं । असमानता की भेद–रेखा एवं गरीबी के कारण ऐसे पात्र भाग्यवादी बन जाते हैं । साहनी की कहानियों में ऐसे पात्रों में जग्गो, हेतु, गंगो आदि आते हैं ।

६. साहनी की चरित्र–सृष्टि कला की विशेषताएँ :

साहनी के पात्र अलग स्तर के हैं । सभी पात्र गतिशील मालूम पड़ते हैं । इनके पात्र परिवेश में जुड़े हुए यथार्थ परक कटुता को सहते हैं । सभी पात्रों को यथार्थ अनुभव के विविध स्तर हर्ष–शोक, सुख–दुख, प्रेम आदि पर जीना पड़ता है । यथार्थ चरित्रों के द्वारा ही साहनी ने कहानियों में प्राण डालते हैं । कम से कम पात्रों की कहानी लिखकर प्रमुख पात्र को संकेन्द्र बनाने के विषय में वे उत्सुक रहे हैं । उनकी कहानियाँ कम पात्रीय और बहु–उदेशीय रही

हैं । साहनी के चरित्र–चरित्रों का उद्घाटन करने में सिद्धहस्त हैं । उन्होंने कहानियों में निरपेक्ष विश्लेषण, आत्मविश्लेषण एवं मानसिक उहापोह द्वारा चरित्र विश्लेषण किया है, जो अधिक कलात्मक बन पड़े हैं ।

साहनी के कहानियों के पात्र गुण–अवगुण से भरे हुए हैं, क्योंकि आखिर वे मनुष्य हैं । साहनी ने विशेष रूप से यथार्थ चरित्रों की सृष्टि की हैं । आंतरिक संघर्ष एवं द्वन्द्व प्रायः सभी पात्रों में पाया जाता है ।

साहनी के कहानियों के प्रमुख पात्रों को हम आदर्शपात्र, यथार्थपात्र, शोषित पात्र, विद्रोही पात्र, उपेक्षित और पीड़ित पात्र की कोटियों में बाँट सकते हैं, जो पात्र संवेदना के स्तर पर प्रस्तुत हुए हैं । हम इन पात्रों का सामान्य अवलोकन करेंगे ।

(१) आदर्श पात्र :

साहनी के कुछ पात्र आदर्श वादी है । ये देवता तो नहीं है, लेकिन इनका देवता प्रबल है । उनके आदर्श पात्र मानव जीवन की सच्चाई को व्यक्त करते हैं । वफादारी, सच्चाई, समता, सहानुभूति और न्यायप्रियता आदि में साहनी ने सच्चे जीवन की कल्पना की है, वह सच्चा जीवन इन पात्रों की विशेषता है ।

इसरो, 'सिर का सदका' कहानी की नायिका है । इसरो आदर्श पत्नी है । वह अपने पति को परमेश्वर मानती है और उसकी खुशी के लिए सब कुछ करने के लिए तत्पर नारी है । वह पति को कहती है – "आप दूसरी शादी क्यों नहीं कर लेतें, तो ये रो पड़े – हाय, जी, आप के सिर का सरका घर में बेटा होगा तो मेरी भी गोद भर जायगी, घर में उजाला होगा, मुझ से आपका ये चेहरा नहीं देखा जाता ।"[२८] वह चाहती है कि अपना वंश चलता रहे । वह पतिव्रता नारी है । राजा बाणभट्ट, 'रानी मेहतो' कहानी का गौण पात्र है । वह राजा होते हुए भी साधारण श्रमिको की भाँति रस्सी बनाकर अपना जीवन निर्वाह करता है । वह अपने कर्तव्य और आदर्श को ठोकर मारकर रानी को खुश कर देता है, परंतु आदर्श भावना के, भंग के कारण वह

विक्षुबद्ध हो जाता है । रुकमणि 'रोमांटिक' कहानी की नायिका है । उसका पति बिमार है । परिवार के सब लोग उसका हर हालत में शोषण करते रहते हैं । रुकमणि को अपने इच्छित पुरुष का अभाव जरुर खलता है, फिर भी पति के प्रति उसका आकर्षण बना रहता है । इस प्रकार रुकमणि एक आदर्श, परायण, भोली, विवेकपूर्ण नारी है । शुक्लाजी 'फैसला' कहानी का मुख्य पात्र है । उन्होंने जब तक नौकरी की तब तक दिल बड़ा साफ रखा । जब थानेदार झूठी गवाही के आधार पर छूट जाता है तब वह त्यागपत्र पेश कर देते हैं । रामसिंह 'समाधि भाई रामसिंह' कहानी का नायक है । वह शहर में छोटे–बड़े सब लोगों को चिरायता पिलाता है । वह निःस्वार्थ भाव से सब को चिरायता पिलता है । जीवन के अंत में लोगों की सारी भीड़ पत्थर मारना शुरु कर देती हैं, तो वह कहता है – "भाइयों मैंने किसीका कुछ नहीं बिगाड़ा मुझे मत मारो । मैंने तुम्हारी सेवा की है ।"[२६]

रामदास मासटर 'इमला' कहानी का मुख्य पात्र है । वह सिद्धांत–प्रिय और आदर्शवादी व्यक्ति है । वह लड़कों को पढ़ाने का काम ईमानदारी से करना अपना कर्तव्य समझता है, परंतु जब प्रधानपुत्र के घर शिकायत लेकर जाता, तो उसे भला–बुरा सुनना पड़ता है और उसकी आत्मा को और धक्का लगता है । प्रो. विरेन्द्र 'प्रोफेसर' कहानी का मुख्य पात्र है । कला के सबंध में अपना आदर्श व्यक्त करते हुए कहते हैं "अगर कलाकार आजाद नहीं तो उसकी कला पनप नहीं सकती । बंधन के वातावरण में इन्सान कलाकार नहीं बन सकता । कलाकार सूखी रोटी के टुकडों पर जीना पसंद करेगा लेकिन किसी का आश्रित बनकर रहना नही ।" बूढी माँ 'चीफ की दावत' कहानी का मुख्य नारी पात्र है । वह आदर्श माता है । बेटा माँ को नचवाता है, तिरस्कार और धृणा की दृष्टि से देखता है । जब दावत के समय बेटा जल्दी खाने की बात करता है तब वह कहती है – "बेटा तुम तो जानते हो घर में माँस–मछली बने तो में कुछ नहीं खाती ।"[३१] इसके चरित्र में त्याग संयम धर्म–परायणता, वात्सल्यभाव है । वकील साहब 'अपने–अपने बच्चे' कहानी के गौण पुरुष पात्र है । बच्चों के साथ सहृदयता से काम लेना अपना आदर्श समझते हैं । जब नौकर पुत्र का,

अधिक लालनपालन करते हुए मालकिन पति को डाँटती है तब वे कहते है – "मैं तो इसे अब भी खाने को दूँगा रोटी भी दूँगा, चाँदनी, शरबत भी उसे साथ घुमाने भी ले जाऊँगा ।"[३२] दया, सहानुभूति, शिष्टता आदि गुणों से वकील साहब का चरित्र उत्कृष्ठ है ।

इस प्रकार देखा जाय तो साहनी ने ऐसे पात्रों की सृष्टि की है, जो मानवीय मूल्यों और आदर्शों को अपनाकर कर्म–क्षेत्र में प्रवेश करते हैं । वे अपने दायित्व को ईमानदारी से निभाने में ही अपनी गरिमा समझते हैं । वे समय के विधायक बनते हैं । ऐसे पात्रों को आदर्श पात्र कह सकते हैं ।

(२) यथार्थ पात्र :

नयी कहानी में यथार्थ चित्रण को आवश्यक माना गया है । साहनी यथार्थवाद में पूर्णतः विश्वास रखते है और इसी कारण अपनी कहानी के पात्रों को यथार्थ भूमि पर लाकर खड़ा कर दिया है । उनके यथार्थपात्र वास्तविक जगत में भी देखे जा सकते हैं । साहनी के यथार्थ पात्रों की यह विशेषता है कि वे हमें सोचने और समझने के लिए विवश कर देते हैं ।

जानकू 'जोत' कहानी का नायक है । उन्हें अपनी जमीन जान से भी प्यारी है । इनकी जमीन का छोटा सा टुकडा ऊँचे पहाड़ की चोटी पर है । जब जमीन पिघलने लगती है तब पागल सा बन जावा है । वह पटवारी, जमींदार, रेंजर, अफसर, पुरोहित आदि के पास दया की भीख माँगता है । जानकू हाथ बाधकर कहता है – "मेरी जमीन बह चली है मालिकों, कुछ करोंगे तो बच जाएगी ।"[३३] इस प्रकार जानकू किसान–जीवन का यथार्थ प्रतिनिधित्व करता है । रामदेव 'ढोलका' कहानी के मुख्य पुरुष पात्रो में से एक है । वह समाज की पुरानी रीत–रस्मो का सख्त विरोधी है । उसका अपना न तो कोई आदर्श है न तो अपना ठोस व्यक्तित्व है । नयी और पुरानी पिढ़ी किसी में भी अपना तालमेल बिठाने में असमर्थ युवक है । रामदास रेंजर 'जोत' कहानी का गौण पुरुष पात्र है । वह गाँव की अनपढ और निम्नवर्ग की मजबूरियों का फायदा उठाकर के गाँव की स्त्रियों को अपनी कामवासना का शिकार बनाता

रहता है । सुनंदा 'घर की इज्जत' कहानी की नायिका है । वह पढ़ी–लिखी रूपवान और साथ ही बेपरवाह औरत है । वह स्पष्टभाषी है, अपने पति को कहती है – "इस घर में खुस–फुस बहुत चलती है, हर नुक्कड ने दो, दो आदमी खड़े न मालूम क्या खुस–फुस करते रहते है ।"[३४]

मि. शामनाथ 'चीफ की दावत' कहानी का मुख्य पात्र है । वह स्वार्थी पात्र है । वह माँ को फालतू समान की तरह समझता है । अपनी स्वार्थ भावना की पूर्ति के लिए अनपढ मां के पास गाना बुलवाकर ही पीछा छोड़ता है । इस प्रकार शामनाथ आधुनिक बेटे का यथार्थ प्रतिनिधित्व करता है । रानी मेहतो 'रानी मेहतो' कहानी की नायिका है । उन्हें आभूषणों के प्रति अधिक लगाव है और जब राजा अँगूठियाँ लाकर देते हैं तो वह कहती है – अँगूठियाँ तो दासियों को भी मिल जाती है, तुम्हें किसी दासी से ब्याह करना चाहिए था ।"[३५]

अपनी आभूषण लालसा के कारण एक दिन उसे पागल होना पड़ता है । रामदास 'मौका परसी' कहानी का मुख्य पात्र है । वह व्यवहारकुशल राजकीय कार्यकता है । उनकी कथनी और करनी में बड़ा अन्तर है । पार्टी के सदस्य राजु की मृत्यु पर वह कहता है – "हाँ तो जब जुलुस को शक्ल में ले जायेंगे, तो कुछ श्लाकों में से तो लेकर जाना चाहिए । यों सीधे स्मशान भूमि में ले जाने में क्या तुक है ? साथ में थोड़ा प्रचार भी हो जायेगा ।"[३६]

इस प्रकार कुतो 'सिफारिशी चिटठी' कहानी की नायिका आधुनिक युग की बदली हुई नारी–भावना का यथार्थ प्रतीक है । ललिता 'ललिता' कहानी की नायिका है । वह ससुरालवालों को अपनी व्यवहार कुशलता से अँगुलियों पर नचाती है । वह कहती है – "वाह अब मैंने इसकी भी तरकीब ढूँढ निकाली है । जब वह सो जाते हैं, तो चुपके से उनके बटुए में से दस–पाँच निकाल लेती हूँ, उन्हें कुछ भी मालूम नहीं होता ।"[३७] 'प्रोफेसर' कहानी के कृष्णलाल, 'राधा–अनुराधा' कहानी के स्वार्थी पिता 'प्रणयलीला' कहानी की सुषमा, 'पहला पाठ' कहानी का देवदत्त, 'पट्टरियाँ' कहानी का केशोराम, 'पिकनिक' कहानी की

वकील पत्नी, 'घर की इज्जत' कहानी के भाई साहब आदि चरित्र यथार्थ भूमि पर चित्रित हुए हैं ।

(३) विद्रोही चरित्र :

क्रांतिवादी कहानीकार होते हुए भी साहनी के सभी पात्रों में विद्रोह का स्वर नहीं है । इनकी कहानियों के कुछ पात्र ऐसे हैं, जो मजबूरी 'परिस्थिति में और कोई सहारा न रहता तो' विद्रोह का रूप धारण कर लेते है । उनके नारीपात्र अधिक विद्रोह करनेवाले चरित्र हैं । वे अपने अधिकार एवं कर्तव्य के लिए अधिक जागृत दिखाई देते हैं । मुन्नी 'विकल्प' कहानी की नायिका है । उसका पति काम-कुठित मनोवृत्ति से पीड़ित है । मुन्नी स्वच्छंद व्यक्तित्ववाली नारी है । उसका पति किसी पराई लड़की को दिल दे बैठता है । वह आत्महत्या करके पति का रास्ता साफ कर देना चाहती है, लेकिन बच्चों की खातिर ऐसा नहीं कर पाती । अपनी प्रेमिका को अपने ही घर में रखने का प्रस्ताव उसका पति रखता है तब यह कहती है - 'यह मत समझो कि मैं चूप बनी रहूँगी, अगर तुम मुझे खदेडोगे, तो मैं भी तुम्हें छोडूंगी नहीं ।"[३८] विधवा स्त्री 'तस्वीर' कहानी की नायिका है । जिसका पति दो बच्चों को छोड़कर मर गया है, लेकिन वह पति परायण नारी है । वह मन ही मन सोचती है - "वह था तो घर था, परिवार था, गृहस्थी थी - क्या आश्रय का, अपनी जरुरत का ही नाम प्रेम है ?" ससुर जब जबरजस्ती कहता है तो वह साफ शब्दों में बतला देती है - 'जी, नहीं मैं यहीं पर रहूँगी ? मैं यहीं बच्चों को लेकर रहूँगी, कोई छोटा-बड़ा काम ढूँढ़ लूँगी ।"[३९]

गौरी 'पिकनिक' कहानी की नायिका है । वह अनपढ़ मजदूर औरत है । वह तीन बच्चों की माता है और चौथा पेट में हैं । गौरी व्यवहार कुशल औरत है । जब उसका पति पैसा माँगता है, तब वह कहती है - "राशन के पैसे देदूँ तो बच्चों को क्या खिलाऊँगी - कहता है घर में घूसने नहीं दूँगा । घर है कहाँ ? जिसमें घूमने नहीं देगा ? घर इसके बाप का है ।"[४०] वकील की पत्नी ने जबरदस्ती करनी शुरु की तो वह मुँहतोड़ जवाब देती हुई कहती है

– "उठवा के देख लो – देखे तो हमें कौन यहाँ से उठाता है ?"[४१] राधा 'राधा–अनुराधा' कहानी की नायिका है । वह स्वार्थी बाप की पुत्री है । पिता पैसा की लालच से किसी वृद्ध गूँगे के साथ उसकी शादी तय कर लेता है । तब वह मनपसंद गढ़वाली लड़के के साथ मंदिर में जाकर शादी कर लेती है । इस प्रकार स्वार्थी बाप के सामने उसका विद्रोही चरित्र दिखलाई पड़ता है । सरदारनी 'सरदारनी कहानी की मुख्य पात्र है सरदारनी अनपढ और बड़ी हसमुख पंजाबिन औरत है । वह सचमुच भारतीय विरांगना के स्वरूपवाली नारी है । वह तुफानी इलाकों में जाने का साहस करती हुई कहती है – "यह गुरु महाराज की तलवार है । किसी आततायी को नहीं छोड़ेंगी । हट जाओ सामने से, जिसे जान प्यारी है ।"[४२] 'वीरनी' 'खुन का रिश्ता' कहानी का गौण पुरुष पात्र है । वह स्वभाव का सरल और भावनाशील व्यक्ति है । परिवर्तनशील जिंदगी में उसे अधिक आस्था है । परिवार के सब सदस्य उसकी सगाई बड़े धामधूम से करना चाहते हैं तो वह विद्रोह करके कहता है – "मैंने कह दिया, माँ मेरी सगाई सवा रूपये में होगी और केवल बाबूजी सगाई डलवाने जायेंगे । जो मंजुर नहीं हो तो अभी से... ।"[४३] साहनी की कहानियों के अधिकांस पात्र परिस्थितियों के सामने जूझनेवाले और विद्रोह करनेवाले पात्र हैं ।

(४) उपेक्षित और पीड़ित पात्र :

साहनी की कहानियों में मध्यम वर्ग और निम्नवर्ग दोनों का चित्रण किया गया है ।

साहनी के निम्नवर्ग के पात्र विशेषतः उपेक्षित हैं । इन पात्रों की उपेक्षा का कारण आर्थिक विषमता, वर्गभेद एवं मूल्य विघटन की परिस्थिति है । साहनीने उपेक्षित पात्रों का सूक्ष्म चित्रण किया है । उपेक्षित पात्र की दयनीय स्थिति, विडम्बना, आकांक्षाओं आदि का मानवतावादी दृष्टिकोण से चित्रण किया है । उन्होंने उपेक्षित चरित्रों के माध्यम से सिद्ध करने का प्रयास किया है कि उच्चवर्ग को अमानवीय व्यवहार का शिकार बने हुए हैं ।

मंगलसेन 'खून का रिश्ता' कहानी का नायक है । वह पचास बरस की उम्र का बूढा है । कई बरसों तक वह फौज में भी रह चुका है । जब उसके भतीजे की सगाई का दिन आता है तब परिवारवाले सब उन्हें साथ ले जाने के लिए मना कर देते हैं । आर्थिक दृष्टि से बहुत गरीब होने के कारण सब की उपेक्षा का कारण बना हुआ है । एक वृद्ध 'जख्म' कहानी का नायक है । वह गरीब है परंतु ज्ञानी पुरुष है । रेलयात्रा का एक सहयात्री उसकी गरीबाई को देखकर उसके गाल पर तमाचे जड देता है । वह कहता है – मैं अकेला हूँ, बूढा हूँ, मेरे बदन में ताकत नहीं है । क्या इसलिए तू मुझे मार डालना चाहता है ? ।"[४६] आज की मूल्य–विघटन की परिस्थिति में वृद्ध युग का प्रतिनिधित्व कर रहा है । माया 'अपने–अपने बच्चे' कहानी की नायिका है । माया अपने पति से उपेक्षित है । उसका पति किसी पराई औरत को लेकर भाग जाता है । वह गरीब है । उसकी विडम्बा यह है कि उसका चार वरस का लड़का कहीं पर जमने नहीं देता । उच्च वर्ग के लोग साथ में बच्चों को देखकर काम देने से इन्कार कर देते हैं । त्रिलोकनाथ सिफारिशी चिठी' कहानी का मुख्य पात्र है । वह सामान्य क्लर्क की नौकरी करता है । वह बंडा नेक और ईमानदार व्यक्ति है । उसका मानना है कि सिफारिश के बिना कोई काम नहीं हो सकता । ऊपरी सुपरिटेन्ड़ेन्ट से वह ज्यादा डरते हैं । वह कहता है – "सुपरिटेन्ड़ेन्ट चिढ गया है । वह दिल का अच्छा आदमी नहीं है । मुझ से यों भी डाह करता है । क्योंकि मैं उससे ज्यादा पढा हुआ हूँ । ये लोग जान बूझकर रिपोर्ट खराब कर देते हैं ।"[४७] इस प्रकार मानसिक लघुताग्रंथि से त्रिलोकनाथ पीड़ित है ।

गिरीश 'डोरे' कहानी का नायक है । वह विवाहित है फिर भी अविवाहित अर्चना से प्रेम करता है । वह दो बच्चों का पिता है । अर्चना को मिलने में उसे क्षोभ भी है और आवेग भी । लेकिन वह बड़ा व्यवहार कुशल व्यक्ति है । जब अर्चना हठाग्रह करके गिरीश को मिलना चाहती है, तब वह कहता है – ' 'यह क्या बचपना है, अर्चना । तुम्हें स्थिति को समझना चाहिए । तुम तो बच्चोंवाली बात करती हो । अब पन्द्रह साल पहलेवाली स्थिति नहीं रह गई

है । गिरीश के गृह क्लेश का कारण भी उसकी काम कुंठित मनोवृत्ति जिम्मेदार है । इस प्रकार साहनी की कहानियों के अधिकांश पात्र कुण्ठित पीड़ित और उपेक्षित हैं । जिसके केन्द्र में अर्थ है, जिजीविषा है ।

(५) शोषित पात्र :

साहनी ने अपनी कहानियों में शोषित पात्रों को महत्त्व दिया है । उनके शोषित पात्र बहुत कुछ निम्न वर्ग के उपेक्षित अनपढ पात्र होते हैं । शोषित पात्रों के पास न तो रहने के लिए मकान है, न खाने के लिए रोटी है और न पहनने के लिए आवश्यक वस्त्र हैं । शोषित पात्रों में न तो विद्रोह का भाव हे, न तो अपनी कोई गुँजाइश है । वे अपने भाग्य पर विश्वास रखनेवाले पात्र हैं ।

जग्गो 'साग मीट' कहानी का मुख्य पात्र है । मालिक के घर में परिवार का सदस्य बनकर रहता है । मालिक का छोटा भाई जग्गा की मजबूरी का फायदा उठाता है । वह जग्गो की पत्नी के साथ अनैतिक संबंध जोड़ता है । जब उसे पता चल जाता है तो बिना कहे सुने आत्महत्या कर लेता है । जग्गो उच्च वर्ग की काम–कुण्ठित भावनाओं का शिकार होता है । गंगो 'गंगो का जाया' कहानी का गौण स्त्री पात्र है । वह गर्भवती मजदूर औरत है । ठेकेदार उसका हर हालत में शोषण करता रहता है और उसे तिरस्कार और धृणा की दृष्टि से दखेता है । काम देने के लिए ठेकेदार को विनंती भी करती है लेकिन ठेकेदार कहता है "तेरे बाप का मकान बन रहा है, जो जी चाहा करेगी ? चल हट यहाँ से । आधे दिन के पैसा ले और दफा हो जा । हरामखोर आ जाते हैं ।"[५०]

हेतु 'शिष्टाचार' कहानी का मुख्य पात्र है । इज्जत परंपरा के पालन को वह अपना आदर्श समझता है । वह सामान्य नौकर के होते हुए भी ईमानदार व्यक्ति है । मालिक के बच्चे का मुंडन करवाने का शुभ दिन आता है और उसी दिन अपने बच्चे को मृत्यु की खबर मिलती है, वह मालिक से छुटी माँगता है । मालिक महेमानों के सामने बेरहमी से उसे पीटते हैं । हेतु उच्चवर्ग

के अमानुषी व्यवहार का शिकार बना हुआ है । इस प्रकार देखा जाय तो साहनी की कहानियों में अधिकांशतः शोषित, प्रताडित पात्रों के जीवन की कथा–व्यथा का उल्लेख हुआ है । ऐसे पात्र साहनीजी को अधिक संवेदित कर सके हैं ।

निष्कर्षतः कहानीकार के लिए कथावस्तु का जितना महत्त्व है उतना महत्त्व पात्रों के चरित्र चित्रण का भी है । "आधुनिक कहानी के कला–रूप में चरित्र–चित्रण आदर्श माना जाता है । पात्रों में जीवन–शक्तियाँ आ जाने से वे अपना वर्णन स्वयं कर देते हैं । लेखक को अपनी ओर से कहने की कोई आवश्यकता नहीं होती ।"[५१] साहनी ने अपनी कहानियों में समाज के मध्यमवर्ग और निम्नवर्ग के पात्र लिए हैं । इन दोनो वर्ग की विडम्बनाओं का निरूपण करने के लिए सभी क्षेत्रों से पात्र लिए हैं । जैसे मजदूर, किसान, पुरोहित, पुजारी, पूँजीपति, प्रोफेसर, मास्टर, राजनेता, ठेकेदार, न्यायाधीश, सामान्य कलर्क विधवा आदि विविध स्तर के पात्रों का इनकी कहानियाँ में यथार्थता के साथ निरूपण हुआ है ।

साहनी की कहानियाँ के अधिकांश पात्र अनपढ शोषित और भाग्यवादी है । इन पात्रों को उन्होंने दया, करुणा और संवेदशीलता की दृष्टि से देखें हैं । इन पात्रों की आत्मा को जब ठेस पहुँचती है, तब लेखक का मानवतावादी दृष्टिकोण जाग उठता है ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि साहनी ने स्त्री–पुरुष दोनों को अपनी कहानियों में यथा योग्य स्थान दिया है । उनके पुरुष पात्र जिजीविषा विडम्बना, कुण्ठित मनोवृत्ति स्वार्थवृत्ति आदि से पीड़ित हैं । नारी पात्र अधिक विद्रोही हैं । उन्होंने चरित्र–चित्रण के लिए सभी आवश्यक तत्त्वों का प्रयोग किया है । उन्होंने पात्रो की सृष्टि में परिवेश, कथ्य, भाषिक, आचरण, नाम, देश–विन्यास आदि सबका सफलतापूर्वक निर्वाह किया है ।

७. कथोपकथन (संवाद) :

कथोपकथन पात्रों के चरित्र चित्रण में सहायक होता ही है, क्योंकि कथा की स्वाभाविकता के लिए कथोपकथन का समावेश आवश्यक है । कथोपकथन द्वारा ही हम पात्रो के दृष्टिकोण आदर्श तथा उद्‌देश्य से परिचित हो सकते हैं ।

कहानी में वस्तुतः कथोपकथन तीन कार्यो में बहुत सहायक होता है (१) चरित्र–चित्रण में (२) घटनाओं को गतिशील बनाने में और (३) भाषाशैली का निर्माण करने में ।[५२]

कथोपकथन या वार्तालाप द्वारा ही पात्रों के हृदयगत भावों को जान सकते हैं । यदि वार्तालाप पात्रों के चरित्र के अनुकूल न हो तो हम पात्र के चरित्र का मूल्यांकन करने में भूल कर जाएँगे । कहानीकार 'वर के मोतिबिर नाई' की भाँति विश्वासपात्र अवश्य है किन्तु मार्मिक स्थलों पर पात्रों के वार्तालाप को ज्यों का त्यों उपस्थित कर देने में हम को दूसरे आदमी द्वारा बताई हुई बात की अपेक्षा परिस्थिति का ठीक अंदाज लग जाता है, कहानी में कथोपकथन तिहरा काम करता है ।[५३]

कथोपकथन के माध्यम से पात्रों के भाव स्पष्ट होते हैं । यह आवश्यक है कि कथोपकथन स्वाभाविक और परिस्थिति के अनुकूल हों । कहानी में कथोपकथन की विशेषता उनकी संक्षिप्तता की सार्थकता में है । कथोपकथन तीन प्रकार के माने गये हैं (१) पूर्ण नाटकीय (२) संकेत पूर्ण और (३) घटना पूर्ण ।[५४]

कहानी में वर्णनों और संवादों में सामंजस्य होना बड़ा आवश्यक है । डॉ. जगन्नाथप्रसाद शर्मा के शब्दों में "सजीवता और यथार्थवता को मुखरित करने के अभिप्राय से प्रायः सभी कहानीकार संवादो में स्थानीय वातावरण की झलक देने की अनिवार्य अभिलाषा या चेष्टा करता है ।"[५५]

संवाद तभी उपयुक्त होंगे जब वे पात्र और परिस्थिति अर्थात् वातावरण के अनुकूल हो, इसके लिए संवादों की भाषा में आवश्यक तत्त्वों का समावेश होना चाहिए ।[५६]

कथोपकथन कहानी का आवश्यक एवं अनिवार्य तत्त्व है । संक्षिप्तता कहानी की जान है । अनावश्यक संवादों का कोई स्थान नहीं रहता । क्योंकि संक्षेप में ही बहुत कुछ कहना होता है ।

❖ साहनी की कहानियों में कथोपकथन की विशेषताएँ :

साहनी कथानक के लेखकाश्रित होकर चलने की बजाय पात्राश्रित होकर चलने पर बल देते हैं । यह ठीक भी है क्योंकि कहानी में पात्रों की सजीवता उनकी विश्वसनीयता की शर्त होती है और यह शर्त बहुत–कुछ संवादों से पूरी होती है । कहानी में रोचकता और उत्सुकता बनाने का सफल माध्यम संवाद है । उनकी कोई भी कहानी संवाद–रहित नहीं है । साहनी ने संवादों का उपयोग जीवित उपस्थिति के अतिरिक्त कथा–विकास चरित्र–प्रकाशन और वातावरण निर्माण में किया है । साहनी ने संवादों की स्वाभाविकता और मनोवैज्ञानिकता के साथ–साथ रसानुकुलता का भी पूरा–पूरा ध्यान रखा है । साहनी की कहानियों में निरुपित संवाद पात्र विशेष की मनोदसा के अनुरूप ही है । उन्होंने घटनाएँ, पात्रो कें कार्य, चरित्र–निर्माण स्वभाव, उनके मनोभाव, उनका अन्तर्द्वन्द्व सबकुछ विशेषरूप से संवादों के माध्यम से ही व्यक्त किया है जो उनकी अपनी विशेषता है ।

❖ पात्रों का चरित्रोद्घाटन करनेवाले कथोपकथन :

कहानी में पात्रों के चरित्रोदघाटन करने का महत्त्वपूर्ण साधन संवाद है । पात्रों की निजी विशेषता, मर्यादा, भाव आदि संवादों के माध्यम से इनके व्यवहार का पता भी लग जाता है । साहनी ने विशेषतः अपनी कहानियों के पात्रों का चरित्रोद्घाटन वार्तालाप के माध्यम से किया है । 'चीफ की दावत' कहानी का मुख्यपात्र मि. शामनाथ जो एक स्वार्थी बेटा है और इनकी स्वार्थवृत्ति का परिचय

हमें संवाद से मिल जाता है । जैसे – “और खुदा के वास्ते नंगे पाँव नहीं घूमना । नहीं खड़ाऊ – उठाकर बाहर फैंक दूँगा ।”

“चालो, ठीक है । कोई–चूडियाँ बूडियाँ हो तो वह भी पहन लो । कोई हर्ज नहीं ।”

“चूडियाँ कहाँ से लाऊँ बेटा ? तुम तो जानते हों सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गये ।”

“... यह कौन सा राग छेड दिया माँ । सीधा कह दो नहीं है, जेवर बस... जितना दिया था, उससे दुगुना ले लेना ।”[५७]

‘भटकती राख’ कहानी में युवक की आदर्श भावना का परिचय कथोपकथन के माध्यम से हुआ है, जैसे

“अब घर चलो बेटा । दिनभर न कुछ खाया, न पिया, यहाँ भटकते रहे ।

“मैं घर नहीं जाऊँगा माँ ।

युवक ने कहा “घर नहीं चलोगे क्यों भला ?”

“मैं घर कैसे जा सकता हूँ माँ झोंपड़े में से रोने की आवाज जो आ रही है ।”[५८]

‘सिफारिशी चिटठी’ कहानी के मुख्य पात्र त्रिलोकनाथ जो मानसिक–ग्रंथि से पीड़ित है । इसका चरित्रोद्‌घाटन संवाद के माध्यम से हुआ है । जैसे –

“तुम चाहती हो खन्ना साहब ने चिट्‌ठी लिख दी होगी ?”

“जो कहा है तो लिख दी होगी”

“मैं सोचता हूँ यह चिट्‌ठी खिचकर खन्ना साहब ने मेरे साथ बड़ी ज्यादती की है । तुम दफ्तर के मामले को समझती नहीं हो । सिफारिशी चिट्‌ठियों पर तरक्किथाँ मिलने लगें तो सभी क्लर्क अफसर बन जाये – मेरी तरक्की होगी तो बाकी क्लर्क क्या चुप बैठे रहेंगे ।”[५९]

‘इमला’ कहानी के आदर्श पात्र मासटर रामदास की आदर्श भावना का परिचय संवाद से हुआ है । जैसे – “स्कूल के प्रधानजी का बेटा है आज ही पढ़ने आया है ।” प्रधानजी का ? मगर वह तो बड़ा गुस्ताख लड़का है ।”

“आपने उसे पीटा तो नहीं न ?” “नहीं मगर इस तरह से तो नहीं चलेगा – किसी मास्टर की इज्जत नहीं रहेगी ? मैं तो प्रधानजी से शिकायत करुँगा ।”[६०]

साहनी वर्तमान समस्या के सूक्ष्म दृष्टा हैं ‘साग–मीट’ कहानी में नौकर के प्रति मालिक की क्रूरता का परिचय संवाद से मिल जाता है । जैसे –

“जग्गे ने दस साल तक हमारी सेवा की है । इसे हम कैसे भूल सकते हैं ?”

“सौ – पचास दे दो, तो गरीब का मुँह बन्द हो जाता है ।”[६६]

संवाद कहानी का प्राण है । पात्रों की मनोवृत्ति को यथार्थ रूप देने के लिए संवाद महत्त्वपूर्ण साधन है ‘पिकनिक’ कहानी की नायिका मजदूर औरत होते हुए भी उसका हृदय प्रेम और वात्सल्य से भरा हुआ है । जैसे –

“ला, पैसे दे दे – “

“नहीं दूँगी, ये मैंने राशन के लिए रखें हैं ।”

“पैसा दे दे, नहीं तो मुझ से बुरा कोई नहीं होगा ।”

“औरत जात’ पर हाथ उठाते शरम नहीं आती – कर ले मेरा जो करना है ।”

“राशन के पैसा दे दूं तो बच्चों को क्या खिलाऊँगी ।”[६२]

साहनी ने संवाद के माध्यम से पात्रों का चरित्रोद्घाटन बड़े सरल, सहज और स्वाभाविक ढंग से किया है ।

❖ कथावस्तु को गतिशीलता प्रदान करनेवाले कथोपकथन :

साहनी की कहानी–कला की एक निजी विशेषता यह है कि उनके ज्यादातर कथोपकथनों में पात्रों की विशेषताओं के साथ–साथ कथावस्तु को गतिशीलता प्रदान करने का भी विशेष गुंण देखा जा सकता है । जो अपनी निजी विशेषता है ।

'पास–फेल' कहानी में मुन्नी की शादी के लिए परिवारवाले युवक को बतलाने के लिए ले जा रहे हैं । यह संवाद कहानी की गतिशीलता बढ़ाने का काम करता है । जैसे –

"तुम क्या सोचती हो ? मान जायेगी चाची ?"

"अब तो किसी के दिल की भगवान जाने, पर उन्हें खुद ही तो लड़की देखने को कहा है ।"

"वे क्या कहेंगे ? अच्छा भी लगे तो लड़केवाले मुँह से थोड़े ही कहेंगे कि अच्छा है, पर मै तो, समझती हूँ – इस घर में मुन्नी का काम हो जायेगा ।"[६३]

'शिष्टाचार' कहानी में बाबू रामगोपाल और उकी पत्नी के वार्तालाप से नौकर की दयनीय स्थिति का पता चलता है, इस संवाद से कथावस्तु को भी गतिशीलता मिलती है । जैसे –

"जानती हो तलब क्या होगी ? केवल बारह रूपये इतना सस्ता नौकर तुम्हें आजकल कहाँ मिलेगा ?"

"तो काम भी वैसा करता होगा ?"

"तो इसे काम करना भी मैं सिखाऊँगी ? अब मुझ पर इतनी दया करो.. जब दूसरा मिल जाये तो मैं इसे निकाल दूँगी ।"[६४]

'गंगो का जाया' कहानी में मजदूर औरत गंगो और ठेकेदार के संवाद से कथावस्तु को गीतशीलता मिलती है । जैसे –

"तेरे बाप का मकान बन रहा है.. आधे दिन के पैसे ले और दफा हो जा ।

हरामखोर आ जाते हे... ।"

"तुम्हें क्या फर्क पड़ेगा, दली मेरा काम कर लेगी, काम तो होता रहेगा ।"

"पहले पेट खाली करके आओ, फिर काम मिलेगा ।"[६५]

साहनी के संवाद कहीं संक्षिप्त है, कहीं बड़े हैं फिर भी पाठकों के दिमाग में अरुचि का भाव पैदा नहीं होता बल्कि कथा को गति देते हैं ।

'विकल्प' कहानी का संवाद देखिए –

"वह है कौन मेरे आदमी पर डोरे डालनेवाली ? देखने में चुडैल लगती है, मोटी–मोटी आँखे मेढक जैसी ।"

"मैं उसे अपनी जूती बराबर नहीं समझती । वह है कौन ? मेरा आदमी बेवकूफ बन रहा है ।"[६६]

साहनी ने कहीं–कहीं पर लम्बे संवाद दिये हैं, लेकिन इससे पाठकों की एकरसता भंग नहीं होती है, परंतु कथावस्तु में अधिक रोचकता एवं सजीवता लाने के प्रयास में सफल है ।

❖ भावानुकूल संवाद :

साहनी ने अपनी कहानियों में विशेषतः किसी न किसी समस्या को ठोस रूप देने का प्रयत्न किया है । कहानी में पात्रों के मनोभावों तथा क्रिया–कलापों को स्पष्ट करना आवश्यक होता है । साहनी ने अपनी कहानियों में सूक्ष्म और अगोचर मनोव्यापारों का सफलता से परिचय दिया है ।

साहनी ने प्रेम और स्नेह के संवादों में प्रसाद एवं माधुर्यपूर्ण भाषा का प्रयोग किया है । 'चीफ की दावत' कहानी में माँ का बेटे के प्रति अगाध स्नेह संवाद से अच्छी तरह प्रकट हुआ है । जैसे –

"तरक्की यूँ ही हो जायेगी ? साहब को खुश रखूँगा तो कुछ कहेगा ।"

"तो मैं बना दूँगी, बेटा, जैसे बन पड़ेगा बना दूँगी ।"[६७]

'तस्वीर' कहानी में बच्चों का पिता के प्रति स्नेह बड़ी कुतूहलता के साथ प्रकट हुआ है । जैसे पापा माँ कुर्सियाँ – मेम नहीं बेचेगी । माँ ने कह दिया है । पापा तुम्हारी चीजें घर में ही रहेगी । पापा दादाजी ने माँ को बहुत डाँटा, बहुत डाँटा, मगर माँ नहीं मानी... ।"[६८]

'खून का रिश्ता' कहानी में चाचा मंगलसेन की दयनीय दशा का निरूपण संवादों के माध्यम से ही हुआ है । 'घर की इज्जत' कहानी में सुनंदा खोखली परंपरा का विरोध करती है । जैसे –

"मगर बात यहीं खत्म नहीं होगी, हमारा नाटक बेशक यहाँ, खत्म हो जायेगा । तुम्हें उसी घर में रहना है ।"

"मैं जानती हूँ । यह मत भूलो कि भाई साहब को भी उसी घर में रहना है ।"[६६]

साहनी ने दाम्पत्य जीवन के मधुर भावों का आलेखन किया है । सिफारिशी चिट्ठी' कहानी में पति–पत्नी के मधुर भावों का निरूपण संवाद के माध्यम से हुआ है । जैसे – "मैं मोटी नहीं होऊँगी, तुम्हारा सारा काम मैं अपने हाथ से करूँगी ।"

"खातिर जमा रखो... ।"

"तुम भी कैसे रुखे आदमी हो जो, अभी से मेरे साथ अफसरी करने लगे हो ।"[७०]

साहनी ने भाव, भाषा और प्रकृति के अनुसार कथोपकथनो का निरूपण किया है । प्रेम, स्नेह का वर्णन मधुर भाषा में किया है, तो विडम्बनाओं से युक्त संवाद में कर्कश भाषा का प्रयोग किया है ।

❖ कथोपकथन में रोचकता एवं उत्सुकता :

कहानी में रोचकता एवं उत्सुकता का होना आवश्यक है । कहानीकार ने पाठक को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए रोचकता और उत्सुकता प्रेरक संवादों की रचना की है ।

'भटकती राख' कहानी के संवाद उत्सुकता पूर्ण हैं जैसे – "मगर पहले इतने चमक रहे थे, दादीमा, मैं सच कहती हूँ ।"

"देखा न, यह सोना नहीं है, बेटी, राजा की राख है ।"

"राख कभी यो चमकती है दादीमा, क्या आप कह रही हो ? और फिर मेरे हाथ पर पड़ते ही बुझ गई । कौन राजा ? किसकी राख ?"[७१]

'माता–विमाता' कहानी में एक बच्चे की दो माताओं का संवाद बड़ी रोचकता से निरुपित हुआ है । जैसे –

"बोल, तेरे पेट से पैदा हुआ था ? "

"पेट से पैदा नहीं हुआ तो क्या ? पिछले सात महीने से दूध पिला रही हूँ ।"

"दूध पिलाया है इससे बच्चा तेरा हो गया ?"

"जबरदस्ती क्यूँ ले जाऊँगी ? – इसी से पूछ लो डायन सामने खड़ी है ।"

"कल मुँही बोलती क्यों नहीं ? मैं तेरे से छीनके ले जा रही हूँ ?"[७२]

'खून का रिश्ता' कहानी के मुख्यपात्र मंगलसेन उपेक्षित पात्र है । इस उपेक्षाभाव को लेखक ने बड़ी रोचकता से संवाद में व्यक्त किया है । जैसे – ' 'कौन से चाचा को ?"

"चाचा मंगल सेन को ।"

"हाय–हाय बेटा शुभ–शुभ बोलो, मरदुद को साथ ले जाएँ ? सारा शहर थू थू करेगा ।"[७३]

'राधा–अनुराधा' कहानी में बीबीजी और राधा का संवाद बड़ी उत्सुकता जागृत करता है । जैसे –

"हाय बीबीजी ब्याह ही तो करने जा रहे थे, इसीसे तो मैने जहर खाया था ।"

'वह लड़का कहाँ है ? वह तो बूढा है और बीबीजी गूँगा है ।"[७४]

साहनी ने वातानुकूल और पात्रानुकूल संवादों की रचना करके वातावरण की सृष्टि की है । छोटे–छोटे वाक्यों में सरल, स्पष्ट एवं धारावाहिक भाषा में संवादों की रचना की है ।

❖ एक पात्रीय कथोपकथन :

साहनी ने संवादों की विविधता अपनाते हुए एकपात्रीय संवादों का सृजन किया है । पात्रों की मनःस्थीत का परिचय एकपात्रीय संवादों के माध्यम से अधिक सजीवता के साथ मिल सकता है । एकपात्रीय संवाद होने के बावजूद भी पाठक को अरुचि पैदा नहीं होती, लेकिन सरसता, स्वाभाविकता जैसी की तैसी

बनी रहती है । 'उब' कहानी में अध्यापक की मनःस्थिति का चित्रण बड़ी स्वाभाविकता से हुआ है । जैसे –

"जब परीक्षा शुरु हुई थी तो इन लड़कों के प्रति मेरे ह्रदय में तरह तरह के उद्‌गार उठने लगे थे । ये मेरे विद्यार्थी हैं, मुझ से साल भर तक शिक्षा ग्रहण करते रहे हैं । पर इतने में ही एक लड़के का प्रश्न का पर्चा उड़कर गजभर की दूरी पर जा गिरा । और इस छोटे से अपमान से मुँह फेर कर फिर अपनी रेखा पर चलने लगा ।"[७५]

'सिफारिशी चिटठी' कहानी में नायिका कुंतो की जिजीविषा स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत हुई है । जैसे –

"हाय मैं कैसी पापिन हूँ, यों ही बके जा रही हूँ । दुर्गा माता, मैं सबसे पहले तुम्हें भोग लगाऊँगी – मुझे माफ करना दुर्गा माई, तुम तो इस घर की बड़ी हो, सब की माँ हो । मैं पढ़ी–लिखी तो नहीं हूँ, मुँह से बात निकल जाती है ।"[७६]

❖ पात्रों के पारस्परिक सम्बन्ध

➢ सूत्रों का स्पष्टीकरण :

कहानी में हर एक पात्र की जिजीविषा और मनोवृत्ति अलग–अलग होती है । कहानी में भिन्न–भिन्न मनोवृत्तिवाले पात्र होते हैं । तब उनके मनोभावों तथा क्रिया–कलाप को स्पष्ट करना आवश्यक प्रतीत होता है और यही उनका पारस्परिक संबंध कहलाता है । इस संबंध को कहानीकार संवादों के माध्यम से प्रकट करते हैं । ऐसे संवाद ही कहानीकार के मनोविज्ञान के परिचायक होते हैं ।

'जोत' कहानी की नायिका उत्तमी और उनका पति जानकू दोनों के बीच के संवाद दोनों के पारस्परिक सम्बन्ध–सूत्र को स्पष्ट करते हैं । जैसे –

"इस जमीन के बहुत छोटे–छोटे टूकड़े है उत्तमी, काम करते–करते हड्डियाँ टूट जायेगी ।"

“मैं तीन घड़े पानी को उठाकर पहाडी पर चढ सकती हूँ । मैं सब काम कर लूँगी । यहाँ हमें कोई देखेगा भी नहीं । जब चाहेंगे काम करेंगे जब चाहेंगे बैठे बात करेंगे । यहाँ तो गाँव के आदमी आते ही नहीं । तू कोठा बेचकर जमीन खरीद ले ।”[७७]

“‘डोरे’ कहानी में दो पात्रों के बीच के वार्तालाप के माध्यम से हमें पता चल जाता है, दोनों प्रेमी – प्रेमिका है, इनकी ग्रंथियों का परिचय भी मिल जाता है । जैसे –

“मेरा तुम पर कोई हक नहीं है ? तुम दो घडी मेरे साथ नहीं बैठोगे तो में सारी शाम कहाँ मारी–मारी फिरुँगी ? मैं अपने कमरे में नहीं जा सकती । मुझे किताबें पढ़ने के लिए मत कहा करो ।”

“यह क्या बचपना है अर्चना । तुम्हें स्थिति को समझना चाहिए – अब पंद्रह साल पहले वाली स्थिति नहीं रह गई है ।”

“मैं जानती हूँ तुम मेरे नहीं हो । मेरे नहीं हो । मेरे कभी हो नहीं सकते । पर क्यों मैं तुम्हें देख तक भी नहीं सकती ? – मैं स्थिति को नहीं समझती... ।”[७८]

➢ व्यंग्यप्रधान कथोपकथन :

साहनी की ज्यादातर कहानियाँ व्यंग्यप्रधान हैं । इनकी कहानियाँ के संवादों में व्यंग्य की छटा अधिक दिखाई देती है । साहनी की कहानियों में मध्यमवर्ग की चाह मिली है । साहनी बड़ी सरल और स्पष्ट भाषा में हमारी समाज–व्यवस्था, राजनीति, धर्म, गृहस्थ–जीवन आदि पर सचोट व्यंग्य करते हैं । व्यंग्यात्मक संवाद कहानी को पूर्ण सफल बनाने में सहयोग प्रदान करते हैं । ऐसे व्यंग्यात्मक संवाद से कहानी में रोचकता बढती है । साथ–साथ पाठक को आनंद भी मिलता है ।

‘प्रोफेसर’ कहानी के संवाद बड़े व्यंग्यपूर्ण है । जैसे –

“जी.. मगर वह कॉलेज में पढ़ने क्यों नहीं जाता ? क्या आपने उसे अभी से बिठा लिया है ?”

"मैंने उसे अंधेरी कोठरी में बन्द कर रखा है"

"अगर आप समझते हैं कि मार–पीट उसके शौक को कुचल सकती है तो वह भी कर देखिए ।"[७६]

'पिकनिक' कहानी में गौरी और वकील साहब की बीबी के बीच के संवाद बड़े व्यंग्यपूर्ण हैं । इससे मजदूर वर्ग की दयनीय स्थिति स्पष्ट होती है । जैसे –

"अब और बच्चा नहीं लेना गौरी, यही बहुत है ।"

"मैं कहाँ चाहती हूँ बीबी, पर मेरा घरवाला माने तो, ये लोग सुनते थोड़े ही हैं । तूने अपनी क्या हालत बना रखी है – कुछ तो साफ सुथरा रहा कर ।"

"बीबी, वक्त किस के पास है – मैली हूँ फिर भी मुझे इतना परेशान करते हैं, बन संवरकर रहूँ तो जीने ही नहीं देंगे ।"[८०]

'सिफारिशी चिटठी' कहानी के संवादों का व्यंग्य बड़ा स्वाभाविक है । जैसे –

"तुम रिश्वत भी लोगे न ?"

"कलर्की में से तो निकला नहीं हूँ कुन्तो, तुम्हें रिश्वत की सूझ रही है ।"

"खुद माँगने नहीं जाना, पर कोई दे दे तो इन्कार भी न करना ।"[८१]

साहनी ने व्यंग्यात्मक संवादों के माध्यम से अपने उद्देश्य की पूर्ति की है । व्यंग्य को सीधी सरल और स्पष्ट भाषा में कहना साहनी की अपनी निजी विशेषता है ।

➢ संक्षिप्तता :

कहानी में वर्णनात्मक लम्बे संवादों के साथ साथ छोटे–छोटे सरल और स्पष्ट संवाद रखना भी नितांत आवश्यक प्रतीत होता है । साहनी ने दोनों प्रकार के संवादों की रचना की है । ऐसे संवाद पाठकों को आकर्षित करने में पूर्ण

सक्षम है । 'अशान्त रुहें' कहानी में छोटे–छोटे कथोपकथन का प्रयोग हुआ है । जैसे –

"एक बात आप से पूछूँ ?"

"कहिए"

"क्या आप सत्यवादी है ?" तो उसने फिर से पुछा

"क्या आप दयानतदार हैं ?"[८२]

'अपने–अपने बच्चे' कहानी में छोटे बच्चे की चंचलता का चित्रण देखिए –

"अंकल, बाजा बजाओ"

पर बाजा नहीं है, रेडियो है ।"

"नहीं बाजा है इसमें लड़की गाती है ।"

"कोन लड़की गाती है ।"

"मोटरवाली लड़की गाती है ।"[८३]

'डोरे' कहानी में छोटे–छोटे संवादो के माध्यम से अर्चना की हीन भावना का परिचय मिल जाता है । जैसे –

"औरतो को बचकाने की बातें ही सूहाती हैं ।

"इसमें बचकाने की बात क्या है । हँस खेल है ।"

"मैने मेरा मर्द तो मेरे काबू में है ।[८४]

निष्कर्षतः साहनीने व्यंग्यात्मक संवादों का निरूपण किया है । उन्हें अपनी कहानी के पात्रों की जिजीविषा, विडम्बना, स्वार्थ, इच्छा, आकांक्षा, मजबूरी आदि का मनोवैज्ञानिक ढंग से निरूपण किया है । अधिकांशतः अपने उद्‌देश्य की पूर्ति संवादों के माध्यम से की हो पात्रों के चरित्रोदधाटन का काम संवादों के माध्यम से हुआ हो । इनके संवाद पात्र की आयु, शिक्षा, वातवरण, परिस्थिति आदि के अनुसार होते हैं । जिससे कहानी सजीव हो जाती है ।

८. देशकाल–वातावरण :

कहानी में वातावरण चित्रण का लक्ष्य स्थानीय विशेषताओं का समावेश और कथात्मक प्रभाव की सृष्टि करता है । देशकाल–वातावरण का चित्रण भावों को जागृत करने में विशेष सहायक होता है । गुलाबराय के शब्दों में "कहानी में उपन्यास की भाँति वातवारण के चित्रण के लिए अधिक गुंजाइश नहीं होती है । फिर भी कहानी में देशकाल की स्पष्टता लाने के लिए तथा कार्य से परिस्थिति की अनुकूलता व्यंजित करने के लिए इसका चित्रण आवश्यक हो जाता है ।"[८५]

❖ कहानी में देशकाल–वातावरण का महत्त्व :

"वातावरण की सफल 'अभिव्यकित कहानी का गुण है । डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा के शब्दों में – कहानीकार कहानी की कथावस्तु अथवा पात्रों द्वारा समाज के जिस अंग, जीवन के जिस पक्ष तथा मन की जिस स्थिति का परिचय होता है, उसका प्रत्यक्षीकरण पाठकों को यदि उसी रूप में नहीं हुआ हो, तो उसका सारा परिश्रम व्यर्थ है ।"[८६] कहानी में वातावरण–चित्रण के अनेक पक्ष हैं । इसके अंतर्गत प्रकृति–वर्णनों द्वारा मानसिक परिस्थितियों का वैषम्य या साम्य कथन कहानी की बीच–बीच में बाह्म वातावरण के संकेत और पात्रों की परिस्थितियों का चित्रण व्यापक अर्थ में परिस्थिति–योजना प्रकृति–सज्जा और देशकाल चित्रण तीनों को वातावरण कहा जाता है ।"[८७]

पाश्चात्य विद्वानों ने कहानी में वातावरण या स्थानीय चित्रण को विशेष महत्त्व दिया है । ए.एम. ग्लेन नामक विद्वान का विचार है कि – "स्थानीय चित्रण पाठक को विशेष रूप से प्रभावित करता है । वातावरण का चित्रण भावों को 'जागृत करने में विशेष सहायक होता है ।"[८८] क्षेमेन्द्र सुमन के शब्दों में 'कहानी में देशकाल तथा वातावरण के चित्रण बहुत स्वाभाविक, आकर्षक और यथा संभव पात्रों की मानसिक परिस्थिति के अनुकूल होने चाहिए ।"[८९]

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि कहानी की रचना का आधार मानवजीवन का धरातल होता है । जीवन की परिस्थितियाँ विभिन्न रूपों में

मिलती है । कहानीकार अपनी रचना से संबंध कथानक के अनुसार वातावरण की सृष्टि करता है । वातावरण के कारण ही पाठक का मन कहानी में रमता हे, इसी के फल स्वरूप उसका मन भूत से वर्तमान या भविष्य की ओर झुक जाता है । थोड़े समय के लिए पाठक कहानी में वर्णित स्थान या समय पर पहुँच जाता है । वातावरण का महत्त्व इतना अधिक होता है कि जिस प्रकार रात के अँधेरे में रस्सी में साँप की प्रतीति होती है । उसी प्रकार यथार्थ वातावरण के कारण एक कल्पित कथा भी सत्य की घटना प्रतीत होती है । वातावरण का कहानी की प्रभान्विति से सीधा संबंध है । देशकाल और वातवारण के अंतर्गत किसी भी राष्ट्र या समाज की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों, आचार, विचार, रहन–सहन, रीति–रिवाज तथा व्यक्ति का आंतरिक संसार–कुण्ठा, काम, भय, अहम् आदि जटिल परिवेश का परिचय मिलता है ।

इस तत्त्व के समुचित प्रयोग के बिना कहानी की मूल संवेदना से पाठक के मन मसितष्क पर केसा बिम्ब अंकित कर देता है कि वह मायाजाल, भ्रमित–पथिक सा उसमें खो जाता है । इसलिए वातावरण की सृष्टि के बिना कहानी में किसी भी उपकरण की सार्थकता संभव नहीं है ।

❖ साहनी की कहानियाँ में देशकाल और वातावरण : विशेषताएँ:

साहनी हिन्दी साहित्य के छठे दशक के प्रतिभाशाली कहानीकार हैं । उसी परिस्थिति जन्य कहानी को हमने नई कहानी की संज्ञा से विभूषित किया है । इस नयी कहानी की भूमिका में दो महायुद्ध एवं भारत–विभाजन जन्य विभीषिका, विषमता, मूल्य–विघटन, मोह–भंग तथा संत्रास है । राजेन्द्र यादव यार्थतः लिखते हैं ।[६१] आज का कहानीकार अपनी कला की प्रकृति के अनुसार नवयुगीन संवेदनाओं को प्राप्त करते हुए नवीन समस्याओं से लोहा लेते हुए, नित नवीन से जूझ रहा है । आधुनिक कहानी साहित्य को हम सुविधा की दृष्टि से दो भागों में बाँट सकते हैं । (१) समष्टिगत चिंतन की कहानियाँ और (२)

व्यक्तिगत चिंतन की कहानियाँ । ‘‘प्रथम वर्ग में सामाजिक, यथार्थवादी एवं प्रगतिशील भावना को लेकर चलनवाले कलाकार धर्मवीर भारती, अमरकान्त, भीष्म साहनी, सुरेश सिन्हा आदि का समावेश होता है ।’’[६२]

साहनी ने अपनी कहानियों में परिस्थिति जन्य अनुभव को जो स्वयं ने झेला है और भोगा है, इन्हीं अनुभवों से यथार्थ वातावरण की सृष्टि की है । उनकी कहानियों में मनुष्य के बाह्य एवं आंतरिक दोनों ही वातावरण की झाँकी मिलती है ।

साहनी की कहानियों में पाये जाने वाले वातावरण एवं देशकाल का अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत करेंगे ।

(१) आँचलिक वातावरण और (२) परिवेश

आंचलिक वातावरण :

साहनी ने अपनी कहानियों में शहरी और ग्राम्य दोनों परिवेशों को उठाया है, परंतु विशेषरूप से महानगरीय परिवेश को स्थान मिला है । वहाँ का रहन–सहन रीति–रिवाज, खान–पान एवं प्राकृतिक–परिवेश का समुचित चित्रण हुआ है ।

रीति–रिवाज :

शहरी परिवेश का मध्यमवर्ग के लोग जिजीविषाग्रस्त होते हैं । इस परिवेश में महेमानों का स्वागत किया जाता है, दावत दी जाती है । ‘चीफ की दावत’ कहानी में मि. शामनाथ के घर दावत है । इसका यथार्थ वातावरण निरुपित हुआ है जैसे ‘‘शामनाथ और उनकी धर्मपत्नी को पसीना पौंछने की फुर्सत नहीं । पत्नी ड्रेसींग गाऊन पहने, उलझे हुए बालों का जूंठा बनाएँ, मुँह पर फैली सुखी और पाऊडर की फूल – शामनाथ सिगरेट पर सिगरेट फूँकते कुर्सिया, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल सब बरामदे में पहुँच गए ।’’[६३]

गाँव में परिवार के सदस्यों के बीच खून का रिस्ता जुडा हुआ होता है, एक अजीब प्रकार की भाई–बन्दी होती है । सुख–दुख में आपसी सहयोग देने की ‘भाई–बन्द’ कहानी में इस वातावरण की सृष्टि हुई है – ‘‘तुम ही इसे

कुछ समझाओं, भय्या, देखो मेरे भाई की क्या हालत हो रही है ? मेरे पास उसकी दवाई भरके लिए पैसे नहीं है.. ।"[६४]

आजादी के इतने वर्षो के बाद भी छूत–अछूत की भेद–रेखा मिट्टी नहीं है । 'पहला–पाठ' कहानी में इस वातावरण की सजीव सृष्टि हुई है – "यह एक डोम है, इस डोम को कुएँ पर पानी पीने का अधिकार नहीं, । वहाँ ब्राह्मण पानी पी सकता है, पर डोम नहीं पी सकता, उनकी छाँया भी नहीं पड़ सकती ।"[६५]

शादी–ब्याह में प्रत्येक वर्ग–परिवेश के अलग–अलग रीति–रिवाज होते हैं । साहनीने 'पहिचान' कहानी में सुन्दर वातावरण की सृष्टि की है – "ब्याह हो गया – आनंद करात करवाया । मैंने निःसंकोच कन्यादान किया, मुँह मीठा करने के लिए परात में से आटे का हलुवा बाँटा गया । वरवधू को इकट्ठा बिठाकर, पहली शरारत भरी खेले करते हैं – बेटी के दिल में कोई अरमान बाकी न रह जाए ।"[६६]

दाम्पत्य–जीवन में पत्नी, पति को परमेश्वर मानने की एक रीति हैं । 'घर की इज्जत' कहानी में मनोरम्य वातावरण की सृष्टि हुई है – "प्रभात वेला में जब बड़े भाई–साहब की नींद टूटी तो नियमानुसार उनकी पत्नी उनके सिरहाने खड़ी थी । एक पानी का लोटा लिए कंधे पर तौलिया रखे, पति–सेवा का पुण्य यह अर्धांगिनी पिछले बीस साल से कमाती चली, आ रही थी ।"[६७]

हमारे समाज में प्रथानुसार रिवाज है । संस्कार–विधि का । 'शिष्टाचार' कहानी में इस रिवाज की सुन्दर सृष्टि हुई है । जैसे "प्रथामानुसार उसके मुंडन–संस्कार के दिन नजदीक आ रहे थे । चुनाँत्ते घर में बड़े उत्साह और प्यार से मुंडन की तैयारियाँ होने लगी – शामियाने और बाजे का प्रबंध होने लगा ।"[६८]

पंजाब के देहात से आनेवाला मक्खनलाल का यह गीत मन भावक वातावरण की सृष्टि करता है –

'सूहे व चीरे बालिआ, मैं कहानी आँ

कर छतरी दी छाँट, में छाबें बहनी औं ।"[९९]

इस प्रकार प्रसंगानुकूल रीति-रिवाजों, पर्व, उत्सवों का उत्सव कर साहनी ने वातावरण को जीवंत बना दिया है ।

रहन-सहन और वेश-भूषा :

साहनी की कहानियों में पात्रों की रहन-सहन वेश-भूषा, आयु आदिका सजीव आलेखन हुआ है । कुछ उदाहरण -

'चाचा मंगलसेन" कहानी में चाचा मंगलसेन की वेश-भूषा का चित्रण इन शब्दों में मिल जाता है । - "एक आँख बड़ी, एक छोटी, मूँछे सस्ते तम्बाकू के कारण पीली पड़ चुकी थीं और छाती धोंकनी की तरह चलती थी ।"[१००]

'सरदारनी' कहानी की नायिका सरदारनी के रहन-सहन, वेश-भूषा का पता यूँ ही चल जाता है "सरदारनी बड़ी हँसमुखी पँजाबिन थी । अनपढ, मुँहफट, सारा वक्त बतियानेवाली चौडी हडडी की काया, बाल उलझे रहते, छातियाँ उघडी रहती । न सरदारनी को पल्ले दुपटे का ध्यान रहता, न इस बात की परवाह कि कौन सुन रहा है ।[१०१]

स्कूल के मास्टर की प्रकृति का चित्रण इन शब्दों में हुआ है - 'सरदारनी' कहानी में 'स्कूल का मास्टर तो यों भी भीरु स्वभाव का दब्बू सा प्राणी होता है - न काहू से दोस्ती न काहू से बैर' - जो हर किसी की बातें सुन भी लेता है और विश्वास भी कर लेता है ।"[१०२]

'ललिता' कहानी में साँस-ससुराल का वर्णन सुंदर बन पड़ा है । जैसे - "दोनों काली है माँ, काली और मोटी और यूँ मटक मटक कर चलती है, कि दिनभर शीशे के सामने खड़ी रहती है और सास सारा दिन पलंग पर बैठी उर्दू की नावले पढती रहती है ।"[१०३]

छोटे बच्चों के रहन-सहन का मनोरम्य वातावरण निरुपित हुआ है । 'पाप-पुण्य' कहानी में - हाँ चड्ढी उतार दी तो बापूजी पीटेंगे । काकू पैर नंगा,

चड्डी भी नहीं पहनी – जो चड्डी पहने–पहने पेशाब करो तो माँ पीटती है, और जो उतार दो तो बाबूजी पीटते हैं ।"[१०४]

वर्तमान जीवन यंत्रवत बन गया है । किसी के पास बच्चों के लिए भी समय नहीं है । शहरी परिवेश का यथार्थ वातावरण साहनी ने 'खिलौने' कहानी में निरुपित किया है । जैसे – "इसके साथ लाड–प्यार करना हो तो छुट्टी के दिन कर लिया करो । बाकी दिन इसे पड़ा रहने दिया करो ।"[१०५]

इस प्रकार जीवन व्यवहार की पूरी सच्चाई के साथ साहनी ने पात्रों के रहन–सहन को प्रस्तुत किया है ।

प्राकृतिक वातावरण :

वातावरण में प्राकृतिक उपादानों का प्रयोग अर्थात् प्रकृति–चित्रण का भी एक विशेष स्थान है । साहनी इसमें भी निपुण हैं । इनका प्रकृति–चित्रण बहुत ही सुंदर है । कुछ उदाहरण –

"धीरे–धीरे शहर पीछे छूट गया । फिर पेड़ और खेत और हरियावाल भरे मैदान आँखों के सामने आज – पागलों के क्रन्दन में – धीरे–धीरे जब आसमान में से साज उतरने लगे और कहीं–कहीं इक्का–दुक्का तारे टिम–टिमाने लगे तो धूँधलाते अबूस आकाश के नीचे ।"[१०६] (पाली–पृ. १२)

"खेत तो कहना ठीक नहीं... एक के ऊपर दूसरा तलाई को ढँके हुए थे । कांगड़े के सुंदर पहाडो में जंगलात का जो रास्ता – ऊँचे पहाडा को कमरबंद की तरह घेरे हुए है ।"[१०७] (भाग्यरेखा–६)

"एक बाग है जिसमें शीशम और सफेद पेडों के अलावा तीसरी तरह का पेड नहीं.. पर शहरवाले उसे चमन कहते हैं ।"[१०८] (पहला पाठ पृ. ४५)

"सायँकाल की बढ़ती छाया और मनुष्य के बीते दिनों में एक अनूठा संबंध हैं । ज्यों ही रात के साज अपना अँधियारा आँचल कैलास सृष्टि पर उतरने लगते हैं, अतीत की स्मृतियाँ जाग उठती है ।"[१०९] (पहला पाठ–पृ. ८४)

इस प्रकार इनकी कहानियों में प्रकृति–चित्रण कथा–वस्तु का स्वाभाविक, रोचक, हृदयग्राही एवं गतिशील बनाने में अत्यन्त उपयोगी बन पाऐ हैं ।

परिवेश :

आजादी के बाद हमारे पारिवारिक और सामाजिक सम्बन्धों में आए परिवर्तन को नयी कहानी प्रामाणिकता के साथ रूपायित कर पाई है । परिवेश के प्रति प्रतिबद्धता का भाव नई कहानी में ही उत्पन्न हुआ है । इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में – "हिन्दी कहानी की रचना–प्रक्रिया देश या संदर्भों से अधिक गतिशील रही है, काल या उपधामो में कम – ।"[११०]

साहनी प्रगतिवादी कहानीकार हैं, लेकिन मानवता वाद में अटूट आस्था रखते हैं । आजादी के पश्चात् हमारे पारस्परिक संबंधों में परिवर्तिन आया है और नया दृष्टिबोध जाग्रत हुआ है । इन सबका इन्हों ने परिवेश के प्रति जागृत रहकर ईमानदारी एवं प्रामाणिकता से निरूपण किया है । रचनात्मक सार पर उन्होंने व्यक्ति के माध्यम से परिवेश की व्यापकता को पकडने की कोशिश की है तथा व्यक्ति को अपने समय के परिप्रेक्ष्य में देखा है । इनकी कहानियों के परिवेश को हम निम्न मुद्दों के अंतर्गत बाँट सकते हैं –

(१) सामाजिक, (२) राजनीतिक, (३) आर्थिक

सामाजिक परिवेश :

मानव–समानता के पक्षघर होने के कारण साहनी की कहानियों में सामाजिक परिवेश का यथातथ्य चित्रण हुआ है । पाश्चात्य जीवन–दर्शन के आकर्षक मोह में परंपरागत संस्कृति का विघटन हो रहा है । सामाजिक सम्बन्धों में बड़ा भारी परिवर्तन आया है । इन सब बदली हुई स्थितियों का साहनी ने युगीन परिवेश के अन्तर्गत वास्तविक चित्रण किया है ।

समाज–व्यवस्था में परिवार एक छोटा अंग गिना गया है, लेकिन स्वतंत्रता के बाद पारिवारिक सम्बन्ध बदल चुके हैं । 'चीफ की दावत' कहानी में आज के नये बेटे के लिए समस्या खड़ी होती है कि पुरानी माँ को केसे छिपाया जाय ? विडंबना यह है कि माँ–लड़के के इस व्यवहार को बुरा न मानकर अपने अस्तित्व से स्वयं ही सिमटी हुई अपने को यहाँ, वहाँ छिपाती फिरती है ।

परिवार का सम्बन्ध खून के रिश्ते के साथ जुडा हुआ है । बूढा मंगलसिंह विकलांग और गरीब होने के कारण पूरे परिवार में उपेक्षा का कारण बनता है । वर्तमान सामाजिक परिवेश के अन्तर्गत मंगलसेन के प्रति ये शब्द – ''अपने रईस भाइयों को छोडकर इस मरदूद को साथ ले जाये ?''[१११]

'डोरे' कहानी में स्त्री–पुरुष की काम–कुण्ठित मनोवृत्ति का चित्रण युगीन परिवशे के अन्तर्गत हुआ है । अर्चना स्वच्छंदी युवती है और विवाहेतर गिरीस से प्रेम करती है । प्रेमी के बच्चे को अपना बच्चा समझती है ।

इस तरह 'अपने–अपने बच्चे', 'शिष्टाचार', 'गंगोका जाया', 'पुण्य–लीला', 'त्रास' आदि कहानियों में वर्ग विशेष का अमानवीय व्यवहार युगीन परिवेश के अन्तर्गत चित्रित हुआ है ।

युगीन संदर्भ में नारी के लिए व्यकित–स्वातंत्र्य की भावना और जोर पकड़ा रही है । 'राधा अनुराधा', कहानी की राधा, 'विकल्प' कहानी की मुन्नी, 'ललिता' कहानी की ललिता' सरदारनी 'जोत' कहानी की उत्तमी आदि का चरित्रांकन युगीन परिवेश के अन्तर्गत ही हुआ हैं । 'घर की इज्जत' कहानी में सुनंदा के शब्द इस भावना को स्पष्ट करते है – ''मैंने सोच लिया है । शायद पहले मैं न भी खेलती । पर अब भारतीय नारी और भारतीय संस्कृति की प्रसंशा के बाद तो जरुर खेलूँगी ।''[११२]

वर्तमान संदर्भ में व्यक्ति के मन में जिजीविषा और लालसा की भावना तीव्रतर होती जा रही है । 'पट्टरियाँ' कहानी के केशोराम 'सिफारिशी चिटठी' कहानी के त्रिलोकनाथ', 'सिरका सटका' कहानी की इसरो आदि का चरित्रांकन युगीन परिवेश के अन्तर्गत हुआ है । त्रिलोकनाथ के शब्दों में युग सत्य स्पष्ट हुआ है – ''बात को ठीक कहती है, मै यों हीं ज्यादा सोचने लगता हूँ । पर सुपरिण्टेण्ड़ेण्ट रिपोर्ट तो खराब कर सकता है । मेरी चौदह साल की सर्विस धूल में मिला सकता है ।''[११३]

साहनी की कहानियों का सामाजिक परिवेश यथार्थता के धरातल पर खड़ा है । युगीन सामाजिक परिवेश का तटस्थ और प्रामाणिक चित्रण हुआ है ।

राजनीतिक परिवेश :

सवतंत्रता के बाद राजनीतिक परिदृश्य की सबसे बड़ी विसंगति राजनीतिक, व्यवस्था का भ्रष्ट होना है । साहनी ने 'मौका–परस्त' कहानी में राजनीतिक परिवेश का यथा–तथ्य चित्रण किया है । राजकीय कार्यकर शंभुनाथ की मृत्यु का मौका उठाकर चुनाव जीतने का माध्यमस बना लिया जाता है । उसकी अर्थी के सहारे विविध पक्ष के मुहल्लों में भी प्रचार कर लेते हैं । राजनीतिक सन्दर्भो पर केन्द्रित, 'गलमुच्छे', 'नया मकान', 'अमृतसर आ गाय है'' 'वाङ्‌चू', 'लीला नंदलाल की' अदि कहानियों' में राजनीतिक अंतर्विरोधों को खोलकर रखा गया है ।

'वाङ्‌चू कहानी में युगीन परिवेश का यथार्थ चित्रित हुआ है । वाङ्‌चू कहता है – "हमारे देश में न सही तुम अपने देश के जीवन में तो रुचि लो । इतना तो जानो समझो कि यहाँ पर क्या हो रहा है ।"[११४]

इस प्रकार साहनीजी ने इन कहानियों के माध्यम से राजनीतिक परिवेश को मूर्तिमंत बना दिया है ।

आर्थिक परिवेश :

स्वतंत्रता के बाद व्यक्ति अर्थतंत्र के शिकंजे में ऐसा जकडता जा रहा है कि हर समय और हर क्षेत्र में उसे आर्थिक प्रश्न और चिंताए मथती रहती हैं । जिसके कारण चाहे वे स्त्री–पुरुष सम्बन्धों का विवेचन कर रहे हैं, चाहे राजनीतिक समस्याओं पर लेखनी उठा रहे हो । नये कहानीकार के मानस पर अर्थ का दबाव छाया हुआ है । डॉ. पुक्षपाल सिंह के शब्दों में "आधुनिक कहानी व्यक्ति की आर्थिक समस्याओं, भूख, गरीबी और विभिन्न प्रकार के अर्थाभावों का बहुआयामी चित्रण करके, आज के सामाजिक परिवेश में गहरी पहचान स्थापित कराती है ।"[११५]

साहनी की कहानियों का क्षेत्र निम्न और मध्यम वर्ग है । इन दो वर्गो की अन्य समस्याओं के केन्द्र में आर्थिक समस्या होती है । जूझते हुए आर्थिक परिवेश का यथार्थ चित्रण हुआ है । कुछ उदाहरण

''पटरियां' कहानी के मुख्य पात्र केशोराम कहते हैं – ''सबसे बड़ी चीज दुनिया में पैसा है, पोजीशन है, बाकी सब ढकोसला है । सब बकवास हैं ।''[११६]

'राधा–अनुराधा– कहानी में स्वार्थी बाप के प्रति राधा के ये शब्द परिवेश की सच्चाई है – ''जवान लड़के के साथ मेरा ब्याह करेगा, तो उसे जेब से पैसे देने पड़ेंगे, बूढे के साथ करो तो उलटे पैसा मिलेंगे ।''[११७]

'जोत' कहानी में गरीब किसान जानकू के शब्दों में अर्थ के अभाव में बदतर जीवन का चित्रण हुआ है – ''पहले देवता का कूप दूर कर दे, फिर खेत में बरकत आएगी'' – ''बकरे के लिए पैसे कहाँ से लाते ? जानकू रुँधे हुए गले से पूछा... ।''[११८]

निष्कर्षतः साहनी ने युगीन परिवेश को जैसा का तैसा निरुपित किया है । काल–संयोजन के प्रति लेखक ने सचेत रहकर, सामाजिक परिवेश का अच्छा चित्रण किया है । युगीन परिवेश देशकाल के अनुरूप चित्रित किया गया है ।

६. भाषा–शैली :

❖ भाषा–शैली का महत्त्व :

भाषा तथा विचारों की अभिव्यक्ति के सर्वाधिक प्रभावशाली माध्यम के रूप में साहित्य मात्र की रचना के संदर्भ में भाषा का महत्त्व असंदिग्ध है । भाषा के बिना साहित्य–रचना की कल्पना भी नहीं की जा सकती । रचनाकार को कृति के अंतर्गत जो कुछ भी कहना होता है, वह भाषा के माध्यम से कहता है और इसी माध्यम का आश्रय लेकर पाठक रचनाकार के उद्देश्य को सामने लानेवाली उनकी समूची रचनात्मक सामग्री के साथ अपना अंतरंग सम्बन्ध स्थापित करता है ।

बाबू श्याम सुंदरदासजी भाषा को शब्दों का रचना–चमत्कार मानते हैं – ' 'भाषा ऐसे सार्थक शब्द समूहों का नाम है, जो एक विशेष क्रम से व्यवस्थित

होकर हमारे मन की बात दूसरे मन तक पहुँचाने और उसके द्वारा उसे प्रभावित करने में समर्थ होते हैं । अतएव भाषा का मूलाधार शब्द है ।"[११९]

कथा–साहित्य में भाषा की चर्चा करते समय भाषा की संवेदना का महत्त्व बढ़ जाता है । अगर लेखक जिस जीवन–परिवेश का चुनाव करता है, यदि उसकी प्रतीति पाठकों तक न हो सके, तो उनका महत्त्व क्या है ? मूल लक्ष्य की संवेदनशीलता संप्रेषित न हो सके, तो सफलता की कसोटी किस प्रकार निश्चित हो ? इन प्रश्नों का उत्तर भाषा की संवेदना में है ।

सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूतियों, जटिल से जटिल विचारों को निश्चय ही जब–तक सहज संवेध भाषा में व्यक्त कर सकने की शक्ति नहीं आगेगी तब तक संवेदना की दरिद्रता को मिटा पाना मुश्किल है ।

आज के लेखक का संसार विचारों का हैं, बुद्धि का हैं, जिसे यथार्थ की भाषा में अभिव्यक्त किया जा सकता है । वह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, यथार्थ, नित्य के प्रति कार्य–व्यापार की अपनी सर्जनात्मक मेघा से इतना परिवर्तित कर देता है, कि वे नया अर्थ और बोध ग्रहण कर लेते हैं । लेकिन जब भाषा सहज, सुस्पष्ट, सरल, अर्थगंभीर नहीं होती, तो इस संवेदना का रूप भी खंडित होता है । सारे के सारे अर्थ बदल जाते हैं या धूँधले पड़ जाते है ।"[१२०]

भाषा की तरह शैली के संबंध में हम विचार करें तो साहित्यकार के मानस पर जो चित्र स्वभावतः ही अंकित हो जाता है वह उसे पाठकों के सामने श्रेय और प्रेय रूप में जब शब्दार्थ के माध्यम से व्यक्त करता है, उसे अभिव्यक्ति या शैली कहा जा सकता है । साहित्यकार की शिक्षा–दीक्षा, उसके संस्कार उसके मानसिक संगठन का प्रभाव आदि शैली पर पड़ता है ।

शैली को पद्धति कहा गया है । शैली अभिव्यक्ति का ढंग है । बाबू गुलाबराय के शब्दों में – "मनुस्मृति के श्लोक पर कुन्तक भट्ट की टीका में शैली शब्द प्रणाली या 'पद्धति' अर्थ में आया है – वह श्लोक है –

'प्रायेण आचार्याणां इयं शैली यत्सामान्यनाभिधाय विशेषण विवृणोति"[१२१]

वस्तुतः साहित्यकार का व्यक्तित्व उसकी शैली में झलकता है । मनोगत विचारों का व्यक्तिकरण शैली में होता है । शैली ही वह सुंदर व्यवस्था है जिस के माध्यम से साहित्यकार के मनोगत विचारों तथा हृदय की गहरी अनुभूतियाँ रूप धारण करती हैं तथा उसकी रचना को विशिष्ट एवं महान बनाती है ।

डॉ. नगेन्द्र के मतानुसार – "शैली के दो मूल तत्त्व हैं – एक व्यक्तित्व और दूसरा वस्तु तत्त्व । .. वास्तव में शैली के व्यक्ति तत्त्व में व्यक्ति ही प्रधान है, उसी के द्वारा शैली के बाह्य उपकरणों का सम्बन्ध अनेकता में एकता की स्थाप्ना करता है ।"[१२२]

आचार्य नंददुलारे बाजपेयी ने लिखा है – "आज शैली का प्रयोग कला और शिल्प के समस्त उपकरणों की अभिव्यक्ति के लिए किया जाता है ।"[१२३]

शिवदानसिंह चौहान ने कहा है – "साहित्य में शैली का अर्थ है, शब्द चयन और वाक्य विन्यास का ऐसा ढंग-भाषा उसके विचारों के अनुरूप हो, उन्हें अधिक से अधिक मार्मिक और सुस्पष्ट ढंग से व्यक्त कर सके, उसी शैली को हम अच्छी या श्रेष्ठ शैली कह सकते हैं ।[१२४]

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि भाषा के मूलाधार शब्द को उपयुक्त रीति से प्रयुक्त करने के कौशल को ही शैली का मूलतत्त्व समझना चाहिए । "भाव या रूप चमत्कार या रचना-चमत्कार को ही शैली का नाम दिया जाता है । इस प्रकार व्यवस्थित कला-कौशल शैली है । भाषा और शैली दोनों का अविभाज्य और अभिन्न सम्बन्ध है ।"[१२५]

❖ कथा-साहित्य में भाषा-शैली का महत्त्व :

उपर्युक्त स्पणष्टीकरण से स्पष्ट हो जाता है कि भाषा और शैली दोनों का अटूट एवं अविभाज्य संबंध रहा है । इन दोनों का उपन्यास एवं कहानी की सफलता के लिए विशिष्ट स्थान है । दोनों विधा के सभी तत्त्वों को ठीक ढंग से आयोजित करने का कार्य भाषा-शैली द्वारा संपन्न होता है । जिस प्रकार भाव, संवेदना, अन्तर्पक्ष है उसी प्रकार भाषा-शैली बहिर्पक्ष के अंतर्गत आ सकती हैं ।

भाषा–शैली का उपन्यास और कहानी में वही स्थान हैं, जो मेरुदंड का माना जाता हैं, जो किसी खाके में रंग भरनेवाली तूलिका का है । भाषा को यदि साहित्य का शरीरी माने तो शैली को उस शरीर की गठन मानना होगा ।

इस प्रकार हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं भाषा–शैली द्वारा ही कथा–साहित्य में विचार एवं भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान की जा सकती है । किसी कृति को अधिक आकर्षक और प्रभावशाली बनाया जा सकता है ।

❖ भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में प्रयुक्त भाषा–शैली :

भीष्म साहनी के कथा–साहित्य से हमारा अभिमत उनके द्वारा रचित कहानियों एवं उपन्यासों से है । हमारा प्रतिपाध विषय भी कहानी एवं उपन्यास है । इसलिए इन दोनों विधाओं को केन्द्र में रखकर भाषा–शैली की चर्चा करेंगे ।

कथा–साहित्य की शिल्पविधि की संरचना में शैलीतत्त्व का विशिष्ट स्थान है । इसी के द्वारा साहित्यकार अपनी रचना को प्रभावपूर्ण और आकर्षक बना सकता है । भाषा भाव की अभिव्यक्ति का माध्यम के प्रयोग विधि का नाम शैली है । साहनी की कहानी एवं उपन्यास की भाषा सरल, सुबोध खड़ी बोली हैं । पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग कर लेखकने उर्दू, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, पंजाबी आदि भाषाओं पर अपने अधिकार को प्रमाणित किया है । साहनी भाषा की सहजता के समर्थक हैं । इस संदर्भ में श्याम कश्यप ने ठीक ही कहा है –

“भीष्मजी की भाषा की सबसे बड़ी खूबी है, उसकी सादगी । इस सादगी का अर्थ सरल और स्पष्ट भाषा का कतई नहीं है, जो अपनी कला–विहीनता के कारण अखबारी भाषा का कुछ जड रूप होती हैं । उनकी सादगी में भी जैसी कलात्मक वक्रता और गतिशील तरलता है, वह उनके समकालीनों में बहुत कम देखने को मीलेगी ।”[१२६]

अपनी इस सादगी का परिचय उन्होंने इन शब्दों में दिया है – ‘साहित्य के क्षेत्र में भी मेरे अनुभव वैसे ही स्पष्ट और सीधे सादे रहे, जैसे जीवन में

मैं समझता हूँ अपने से अलग साहित्य नाम की कोई चीज नहीं होती, जैसा मैं हूँ, वैसी मेरी रचनायें भी पाऊँगा, मेरे संस्कार, अनुभव, मेरा व्यक्तित्व, मेरी दृष्टि सभी मिलकर रचना की सृष्टि करते हैं, इनमें से एक भी झूठ हो तो सारी रचना झूठी पड जाती है ।"[१२७]

अध्ययन की सुविधा के लिए भाषा–शैली को दो अलग–अलग विभागो में विभाजित किया जा सकता है (१) भाषा–पक्ष और (२) शैली–पक्ष । हम यहाँ पर भीष्मजी की कहानियों में प्रयुक्त भाषा–शैली और उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा–शैली पर अलग अलग रूप से विचार करेंगे ।

❖ भाषा–पक्ष :

कहानी की भाषा साहित्यिक होते हुए भी जितनी सरल, स्पष्ट, सुबोध, धारावाहिक, भावामिव्यंजक और बुद्धिगम्य होगी : कहानी उतनी अधिक प्रभावशाली एवं लोकप्रिय बन सकेगी । जिस रचना में भाव और भाषा का ताल–मेल ठीक तरह से बैठ सकता है वही रचना श्रेष्ठ मानी जाएगी । साहनी लम्बे अर्से से कहानी लिखते रहने के कारण भाव और भाषा दोनों पर साहनी का पूर्ण अधिकार है । उन्होंने परिवेश–वातावरण, परिस्थिति अनुकूल, एवं पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है । भाषा को अधिक दुरुह बनाने के बजाय उन्होंने सादगी को आवश्यक माना है

विवेक द्विवेदी के शब्दो में – "प्रेमचंद कथाकार के रूप में इसीलिए उपस्थित होते हैं कि उन्होंने भारत के हृदय का चित्र भाषा के सहज और सरल धागे में पिरोया है । इसीलिए प्रेमचंद का कथा–साहित्य भारतीय जीवन का कंठहार बन गया है । कथाकार के रूप में भीष्म साहनी ने उनके पथ का अनुगमन करने का प्रयास किया है ।"[१२८]

साहनी की कहानियों की विषयवस्तु का सम्बन्ध अधिकांशतः मध्यमवर्ग है । इसीलिए उन्होंने विशेषरूप से पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है । उन्होंने वातावरण और परिवेश की सजीव सृष्टि के लिए हिन्दी, उर्दू, तत्सम, अंग्रेजी

आदि शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रामां किया है । जिससे कहानी की रोचकता में चार चाँद लग गये हैं ।

साहनी की कहानियों में प्रयुक्त भाषा को हम निम्न रूपों में विभाजित करके देखेंगे –

❖ प्रसंगानुसार भाषा :

साहनी ने अपनी कहानियों में शहर और गाँव दोनों को स्थान दिया है । ग्रामीण कथावस्तु के अनुसार उन्होंने ग्रामीण भाषा का प्रयोग किया है । शहर के शिक्षित नागरिक पात्रों की भाषा अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी है । साहनी ने प्रसंगानुसार भाषा का प्रयोग किया है, जिससे कहानी की शक्ति बनी रहती है । जैसे –

'चीफ की दावत' कहानी व्यंग्यात्मक है । जिस में माँ पुरानी पीढ़ी की अनपढ औरत है, जब कि बेटा पढ़ा लिखा शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधि है ।

इन दोनोंपात्रों की भाषा प्रसंग के अनुसार भी ठीक है –

"माँ आज तुम खाना जल्दी खा लेना, मेहमान साढे सात बजे आ जायेंगे ।

"आज मुझे खाना नहीं है, बेटा तुम जानते हो, माँस मछली बने तो मै कुछ नहीं खाती ।"

"जैसे भी हो अपना काम जल्दी निपटा लेना और माँ, हम पहले बैठक में बैठेंगे तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना ।"[१२९]

'कटघरे' कहानी की भाषा सर्वत्र वार्तानुकूल बन पाई है । देखिए –

"वह भयंकर रात थी । उसे याद करते धृणा और लज्जा से मेरा रोम–रोम काँप उठता है । बन्द दरवाजा हाथ जोडती हुई पद्मा जो भागकर कभी कमरे के एक कोने में तो कभी दूसरे कोने में जा खड़ी होती थी ।"

"आज के दिन मुझे कुछ न कहिये ।"[१३०]

'जोत' कहानी में गरीब किसान जानकू की दयनीय स्थिति का रूपण सुसंगत भाषा में होने के कारण कहानी सजीव और प्रभावशाली बन पाई है । जेसे –

"सिर्फ मन्नत मान लेने से या देवता की पूजा से काम नहीं चलेगा जानकू, खेत फिसल रहा है, अभी कुछ कर पाएगा तो बचेगा नहीं तो कल तक उसका निशान भी नहीं मिलेगा । यह सब पुरानी बातें हैं – तू रेंजर के पास चला जा । वह हाकिम है, मान जाल तो रातोरात मजूर लगा के जमीन के नीचे दीवार खड़ी कर देगा और कोई तरीका नहीं । जा, देर मत कर ।"[१३१]

'त्रास' कहानी की भाषा प्रसंगो के अनुरूप और वातावरण के अनुरूप रही है । जहाँ टेक्सीवाले बाबू जान बूझकर एक्सिडेंट कर देते हैं और निर्दोष होने का दावा करते हैं जैसे –

"यह क्या तरीका है साइकिल चलाने का ? चलते–चलते मुड़ जाते हो ? अगर मर जाते तो क्या होता ? उस काले कलूटे की गर्दन के नीचे हाथ देकर बैठा दिया । उसकी नजर में अब भी पहले–सी भ्रान्ति और त्रास था और वह बेसुध हो रहा था ।"[१३२]

'डोरे' कहानी में प्रेमी–प्रेमिका आपस में प्रेमालाप कर रहे हैं । यहाँ लेखक ने प्रसंगानुसार माधुर्यपूर्ण भाषा का प्रयोग किया है । जैसे –

"तुम चिन्ता नहीं करो । तुम्हें आसिस्टेंट मैनेजर बनाऊँगी । जब बन जाओगे, तो मुझे धन्यवाद कहने आओगे कि अर्चना तुम्हारी बदौलत से ही मुझे प्रमोसन मिला है, तुम मेरे जीवन में लक्ष्मी बनकर आई हो – तुम्हारी पन्द्रह साल की सर्विस है, तुम्हे नहीं लेंगे तो किसको लेंगे ।[१३३]

'पाप–पुण्य' कहानी चिंतन से भरी हुई है । इसीलिए यहाँ पर प्रसंग के अनुसार चिंतनयुक्त भाषा का प्रयोग हुआ है । जैसे –

"बापूजी बच्चों को जन्म से सद्‌शिक्षा देने के हामी थे । उनका कहना था कि बच्चे की शिक्षा यूँ तो गर्भ से ही शुरु हो जाती है – अभिमन्यु को चक्रव्यूह तोड़ने की शिक्षा गर्भ में ही मिली थी ।"[१३४]

'फूलाँ'' कहानी में निरुपित मनोव्यथा को प्रसंगानुरूप भाषा में व्यक्त किया गाय है । जैसे –

''मैं उसके कौन–कौन से गुण गिनाऊ बहिन जी, में उसे छाती से लगाकर सोती थी – दूध सामने पड़ा रहता, जब तक मैं न कहूँ मुँह न लगाती ।''[१३५]

इस प्रकार साहनीने कहानी की कथावस्तु के अन्तर्गत प्रसंगानुसार भाषा का सफलता से प्रयोग किया है ।

❖ सामान्य वर्ग की भाषा :

साहनीने ज्यादातर कहानियाँ पिछड़े वर्ग की समस्या या विडम्बना को लेकर लिखी हैं । सामान्य वर्ग की भाषा सीधी–सादी होती है, न तो इन लोगों की भाषा में व्यंग्यं है, न तो सौन्दर्य मूलकता होती है । इस वर्ग की भाषा के प्रयोग में लेखक ने छोटे–छोटे वाक्यों का प्रयोग किया है ।

'गंगो का जाया' कहानी में सगर्भा मजदूर औरत की भाषा देखिए –

'देखा है, इस हालत में काम कौन देगा ? जहाँ जाओं ठेकेदार पेट देखने लगता है ।''[१३६]

'चीफ की दावत' कहानी में अनपढ बूढी माँ की भाषा देखिए –

''क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा ? क्या तेरी तरक्की होगी ? क्या उसने कुछ कहा है ?

'मेरी आँखे अब नहीं है, बेटा, जो फुलकारी बना सकूँ । तुम कहीं और से बनवा लो, बनी बनाई लेलो ।''[१३७]

'ढोलक' कहानी में अनपढ चाची की भाषा में सरलता देखिए –

''लो और सुनो चाची हाथ पसारकर बोली हम गाएँ भी नहीं ? हमारे घर में खुसी का दिन आया है, हम क्यों न गाये ? गला फाड़–फाड़कर गायेंगी । तू सुनना न चाहता हो तो अपने कमरे में जाकर बैठा रह ।''[१३८]

'जोत' कहानी में गाँव के पटवारी की भाषा, देखिए पूर्णतः पात्रानुकूल भाषा है –

“फिसलती जमीन को कौन रोक सकता है जानकू, फिर जेठ की बारिस । तुझ पर देवता का कोप है । तेरी मदद कोई क्या करेगा ? पिछले साल तेरी भैंस हल चलाते मर गयी । कभी भैंस यू मरे है ? फिर सबके खेत कट जाते हैं, तो तेरे – कभी ऐसा भी हुआ है ?”[१३९]

‘बाप–बेटा’ कहानी में गरीब एवं अनपढ किसान की भाषा सामान्य बोल–चाल की भाषा का प्रयोग हुआ है । जैसे –

“फौज में सबके साथ भाई–भाई की तरह रहना । सच बोलना, सच सदाकत को नहीं छोडना, सुना रसिये.. पंडित को पैसे हर महीने भेजते रहना भूलता नहीं ।[१४०]

सामान्य अनपढ एवं गँवार लोगों की भाषा में कर्कशता का प्रयोग अधिक होता है । ‘माता–विमाता’ कहानी की मजदूर औरत की भाषा देखिए –

“कुल–मुँही बोलती क्यों नहीं ? मैं तेरे से छीन के ले जा रही हूँ ?

यह तो इसे जन कई घूरे पर फैंकने जा रही थी, मैंने कहा कि ला मुझे दे दे, मैं इसे पाल लूँगी । यहाँ आकर मुकर गयी ।”[१४१]

साहनी ने अनपढ गँवार और सामान्य वर्ग की भाषा में यथातथ्य भाषा का प्रयोग करके अपनी कलात्मकता का परिचय दिया है । सदा सामायिकता की सुरक्षा बनी रही है ।

❖ नागरिक पात्रों की भाषा :

वर्तमान संदर्भ में शिक्षित पात्र हिन्दी के साथ–साथ अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग बहुत मात्रा में करते हैं जैसे –

‘चीफ की दावत’ कहानी का उदाहरण देखिए –

“और जो सो गई तो ? डिनर का क्या मालूम कब तक चले ।

ग्याहर–ग्यारह बजे तक तो तुम ड्रिंक करते रहते हो ।”[१४२]

‘प्रोफेसर’ कहानी में – “क्या मैं नहीं जानता कि यह नकल है, यह मौलिक रचना नहीं । लड़का ड्राइंग अच्छी कर लेता है । बस ।”[१४३]

‘जख्म’ कहानी में अंग्रेजी, हिन्दी मिश्रित भाषा का प्रयोग हुआ है –

“गाड़ी के नीचे उन्होंने ट्रान्सफार्मर लगा दिए है, अब होता क्या है, ट्रान्समिशन लाईन ए.सी. में रहती है, जबकि ट्रान्सफार्मर लग जाने से इस्तेमाल डी.सी. होता है ।”[१४४]

भाव और भाषा का ताल–मेल तभी बैठ सकता है, जब कहानी में भावानुरूप भाषा का प्रयोग हुआ हो । भाषा पात्रानुकूल, देशकाल एवं प्रसंगानुसार होनी चाहिए । पढे–लिखे पात्र व्यंग्य का अधिक प्रयोग करते हैं । उनकी भाषा भी गूँढार्थ होती है । 'साममीट' कहानी का उदाहरण देखिए –

“जी क्यों, पैसा लुटाते हो, नौकर किसी के अपने नहीं होते ।

तू अपना काम देख, पानी निकालने से कुँए खाली नहीं होते । यह हमें साग–मीट खिलाता रहे, इस जैसा बावर्ची तो शहर भर में नहीं होगा ।”[१४५]

पुरुष और स्त्री के बीच शंका की दरार पड जाती है तो समझदारी से काम नहीं लिया तो वे शंकाऐं आजीवन बनी रहती है ।

'डोरे' कहानी का वार्तालाप देखिए –

“बकवास बन्द करो । जहाँ मन में आये जाओ । एकबार नहीं बीस बार जाओ । मैं क्यों तिल–तिल कर जलूँ ? बहुत जल चुकी । जब से ब्याह हुआ जल रही हूँ । अब नहीं जलूँगी मेरे बच्चे सलामत रहें... ।”[१४६]

'अशान्त रुहें' कहानी के रेल्वे सुप्रिंटेंड़ेट की भाषा में व्यंग्य का पुट छिपा हुआ है । देखिए –

“मैंने कहा जनाब मैं यह तरक्की नहीं चाहता । मेरी नजरों में सब कंगाल हैं, और महल माडियों वाले भी कंगाल हैं –

क्या दयानतदारी का इनाम पैसे में है ? नहीं रूपया आत्मा को भ्रष्ट कर देता है, क्या आप इतना भी नहीं जानते ?”[१४७]

इस प्रकार साहनी के शिक्षित पढे–लिखे पात्र प्रसंगानुसार अंग्रेजी मिश्रित आकर्षक हिन्दी भाषा का प्रयोग करते हैं ।

❖ पात्रानुकूल भाषा :

कहानी की रोचकता बनाए रखने के लिए भाषा पात्रों के स्तर के अनुरूप होनी चाहिए । कहीं ऐसा न हो कि अशिक्षित पात्र अंग्रेजी शब्दों और वाक्यों का प्रयोग करने लगे । ऐसा होने से कहानी की वास्तविकता नष्ट हो जाएगी । कहानी की सफलता के लिए प्रसंगानुसार एवं पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग होना चाहिए । साहनी ने इस का अच्छी तरह से निर्वाह किया है । जैसे –

'माता–विमाता' कहानी में अनपढ़ मजदूर औरत की भाषा उसके स्तर के अनुरूप ही है । देखिए –

''हरामजादी कुतिया, यहाँ आकर मुकर गयी । ले बगैर तले संभाल, फिर न कहना दूध पिलाने को, जहर पिलाएँगी, इसे भी और तुझे भी.. ।''[१४८]

'जोत' कहानी का नायक जानकू की भाषा बड़ी शानदार है –

'रेंजर साहब मेरे खेत में चीर आ गया है, जो ठीक न हुआ तो सारा खेत बह जाएगा । देखो महाराज आज मुझ पर मुसीबत आई है मेरी तरफ से आँख नहीं मोड़ो ऊपर भगवान है और नीचे तुम हो ।''[१४६]

'गंगो का जाया' कहानी में मजदूर की भाषा उनके स्तर के अनुरूप होते हुए भी गाम्भीर्य बना हुआ है ।

''छोटा है ? चंगे भले आदमी का राशन खाता है – इस जैसे लौड़े बूट पालिस करते हैं – मुझे कौन काम सिखाने आया था ? सभी गलियों में ही सीखते हैं । मरेगा नहीं, घीसू का बेटा है, कभी न कभी तुझे मिलने आ जाएगा ।''[१५०]

'त्रास' कहानी में गरीब अनपढ़ मजदूर की भाषा सरल होते हुए भी स्तर के अनुरूप ही है –

''मुझे मौत के मुँह से निकाल लाते हैं । सडक पर पड़े आदमी को कौन उठाता है ? यह मुझे उठा लाये है.. इस कलियुग में कौन किसी को सडक पर से उठाता है । आपके हाथ से बहुतों का भला होगा ।''[१५१]

'प्रोफेसर' कहानी में प्रोफेसर की भाषा बड़ी साहित्यिक और गाम्भीर्यपूर्ण है ।

''मैंने सबकी पीठ ठोकी है, क्योंकि पीठ ठोकने से बच्चे का मन खुलता है, उसमें आत्मविश्वास जागता है । हर आदमी सेक्सपियर नहीं बन सकता ।''[१५२]

'घर की इज्जत' कहानी में बड़े भाई कला और साहित्य के विद्वान है उनकी भाषा देखिए –

''हमारे नाटक हमारे देश के इतिहास और संस्कृति का गौरवमय अंग है । देश की कला देश की स्त्रीजाति पर अवलंबित है । उनका भाग लेना कला के लिए मंगलकारी है ।[१५३]

साहनी ने पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है । पात्र की आयु परिस्थिति, परिवेश स्तर आदि का भी अच्छी तरह से निर्वाह किया है ।

❖ भावानुकूल भाषा :

साहनी के पात्रों की भाषा भावानुरूप होती है । इसीलिए अधिक संवेदनशीलता एवं प्रभावपूर्णता आद्योपान्त बनी रहती है ।

'प्रणयलीला' कहानी में इसका अच्छा निर्वाह हुआ है –

''एक बात बतायेगा अशोक ? सच कह बतायगा – तेरे भाई क्या मुझसे नाराज हैं ? पहले तो इतने खत लिखता था ? क्या उसे इतना काम करना पड़ता है कि उसे खत लिखने की फुरसत नहीं ?''[१५४]

'कटघरे' कहानी में नयी–नयी शादी करके आये हुए दूल्हा–दुल्हन का वर्णन बड़ा ही भावपूर्ण है –

''काफी रात गये घर की स्त्रियों के इसारा करने पर मैं अपने कमरे में गया । कमरे में घूटन थी, हवा दहेज के कपड़ों, फूलों के गजरों से बोझिल हो रही थी ।''[१५५]

साहनी के नारी पात्रों की भाषा भी नारी चरित्र को स्पष्ट करने में यह भाषा अधिक सक्षम बन पाई है ।

'डोरे' कहानी में विवाहिता गिरीश की प्रेयसी अर्चना की भाषा में अत्यधिक कोमलता है "मौका ? कैसा मौका ? क्या मैंने जिन्दगी के मौके नहीं खोये ? तुम अपने माँ–बाप की इच्छा के खिलाफ मेरे साथ शादी करना चाहते थे ।... मैने ब्याह नहीं टूटने दिया, यह पाप मेरे प्यार को सिर पर चढता... ।"[१५६]

'सरदारनी' कहानी की नायिका अपने खानदानी होने का परिचय इस प्रकार देती है –

"हमारे सरदारजी घर में नहीं है । मिलना है तो हमारे सरदारजी से मिल लो । वह शाम को आयेंगे । काम पर गये हैं ।"[१५७]

साहनी की कहानियों की भाषा में अधिक बुद्धिगम्यता एवं कलात्मकता दिखाई देती है । कहानीकार जिस संवेदना तक पहुँचना चाहते है । उसमें भाषा ने अधिक सहयोग दिया है । अँचल विशेष के शब्दों का भी प्रयोग किया है । आवश्यकतानुसार उन्होंने संस्कृत, अंग्रेजी, एवं उर्दू, अरबी, फारसी, पंजाबी, आदि का भी प्रयोग किया है, परंन्तु इन शब्दों के प्रयोग से न तो कहानी की भाषा दुरूह बन पाई है और न ही बोझिल । यही इन की सबसे बड़ी विशेषता है ।

❖ साधारण बोल–चाल की भाषा :

भीष्म साहनी के कथा–साहित्य में तद्‌भव एवं अन्य भारतीय बोलियों एवं भाषाओं के शब्दों का सार्थक प्रयोग बहुत अधिक मात्रा में हुआ है । इससे भाषा की शकित बढी है और स्वाभाविकता की रक्षा हो पाई है ।

देशज भाषा के शब्द :

भीष्म साहनीने कहानियों में मजदूर, नौकर, भिखारी, गुण्ड़े, चोर धर्मगुरु, पुलिस अफसर जैसे विभिन्न कोटि के पात्रों का समावेस किया है । ऐसे सामान्य वर्ग के पात्रों के मुँह से सार्थक शब्दों के साथ निरर्थक शब्दो का भी प्रयोग करवाया है । उनकी कहानियों में ग्राम्य भाषा, विविध भाषा शब्दों के तद्‌भव रूप और स्थानीय जनभाषा का रूप पाया जाता है । इस तथ्य की पुष्टि निम्न लिखित उद्धरणों से हो जाती है ।

लाड–प्यार, साफ–सुधरी, देख–रेख, सज–धज, जानी–मानी, घूमते–फिरते, उबड–खाबड, अस्त–व्यस्त, उठता–बैठता, जैसे–तैसे, इर्द–गिर्द, दाये–बायें ताना–बाना, तितर–बितर, पढ़ाई–बढाई, गिरता–पड़ता, धन्धा–बन्धा, नन्हे–मुन्ने आदि हैं ।

संस्कृत ततसम शब्द :

अभक्ष्य, निर्धन, अनभिज्ञ, धारित्री, पतित, अवगति, रवि, सार्थक, प्राणघात, अनंत, कलेवर, दंपति, एकाधिक, अवकाक्ष, समर्पित, हृदयंगम आदि शब्द हैं ।

अंग्रेजी–उर्दू शब्द :

ट्रीजिडी, स्टीम, बेंच, इनकम, थर्मस, टाउन, डिसिप्लीन, मार्केट, कारएक्जीमा, स्कूटर, प्रेंजेण्ट, थिएटर, कलरफूल, ड्राइंग, मोर्निंग, हाउ नाईस, हाउ वन्डरफूल रिपोर्ट, गेट, रजिस्ट्रेशन, कॉलेज, स्कूल, ब्लेकबोर्ड, क्लब, इयरकंडीशन, ट्रान्सफर्मर, इंजीनियर, कोल–बेल, कोमेडी, रजिस्ट्रार, होस्टेल, होटल, मेट्रिक, डोक्टर,, एलाउन्स, होम्यौपैथ, स्टार्ट, ट्रेन, कोर्ट आदि हैं ।

तशरीफ, मुताबिक, इज्जाजत, दास्तान, मुजरिम, तहकीकात, पैरवी, कोफियत, हिफाजत, मशविरा, मुआवजा, गुलजार, इलीनाम, इत्तला, शिनाखत, संख्शसानिस, दहसत, गरीब, तबह, मुख्तलिफ, इसतझाल, अखबार, मुनासिब, निहायत, इत्यादि है ।

❖ भाषा की लाक्षणिकता :

मुहावरे – कहावते :

साहनी ने भावों को अधिक सजीव बनाने के लिए आवश्यकतानुसार मुहावरों–कहावतों का प्रयोग किया है । भावों को अधिक वास्तविक रूप देने के लिए मुँहावरों का प्रयोग आवश्यक रहता है । उनकी कहानियों में प्रयुक्त कुछ मुँहावरे –

मुँह में आग देना, दाँत तले होठ दबाना, पाँव पर कुल्हाडी मारना, खाक में मिलना, दिमाग पथ्थर होना, दाँत तले अँगुली दबाना, पल्ला खिसक जाना,

अपने पांव पर खड़ा होना, आँखो पर चंदन का लेपन होना, आंखे भर आना, टांग उठाना, जीभ जलाना, नशा हिरन होना, रागछैडना, चैन की साँस लेना, माँस पेशिया पीली पडना, हडडी पसली हिलना, चेहरा पीला पडना, इज्जत मिट्टी में मिलना, वीर निशान पर बैठना । न काहू से दोस्ती, न काहूँ से बैर पर जात–जलना आदि । इन प्रयोगे से भाषा में और प्रभान्विति हो जाती है ।

सूक्तियाँ :

साहनी ने अपीन कहानियों में व्यंग्य का निरूपण किया है । जहाँ कहीं पात्र के संवेदना के धरातल पर खड़ा करते है वहाँ इस व्यंग्य को अधिक यथार्थ रूप देने के लिए आवश्यकतानुसार सूक्तियों का भी प्रयोग किया है । कुछ सूक्तियों का उदाहरण प्रस्तुत है –

“एक पन्थ दो काज, जान है तो जहान है, दाने–दाने पर मोहर होती है, भगवान के घर में देर है – अंधेरे नहीं, मक्खियों से परेशान घोडा सिर पटकता है, इन्सान की साँस से ज्यादा कोई विषैली चीज नहीं, औरत का सब से बड़ा दुश्मन औरत खुद ही तो है, पराश्रय में कला का दम घुटता है, कला मरती नहीं अपना अवसर ढूँढ़ती रहती है, आदमी बदलता है – दुनिया नहीं बदलती, स्त्री झुकने से पहले सब दाव खेलती है, पानी निकालने से कुएँ खाली नहीं होता, क्यों हमारे मुँह पर कालिख पोतकर जायेगा : भगवान का हुकम हो, तो सब काम हो जाते हैं । भगवान में विश्वास होना चाहिए । भगवान खुद रास्ता दिखाते हैं खुद हुक्म देते हैं ।” इत्यादि

बिम्ब–विधान :

बिंब भाषा को सरल स्पष्ट और सम्प्रेषणीय बनाने में सक्षम होते हैं । डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने बिंब को भाषा और चिन्तन का मूल माना है । साहनी ने कथ्य और भाव को चित्रवत प्रकट करने के लिए विभिन्न उपमानों के माध्यम से बिंब–विधान का भी प्रयोग किया है । जिससे कहानी में निरुपित संवेदना

कलात्मक ढ़ग से पाठक के हृदय तक पहुँच सकती है । कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं –

"शहर के बीच में एक ऊँचा सा टीला है, जिस पर एक मन्दिर है और जिसके चारों तरफ सडकें उतरती है, जैसे शिवजी की जटा से एक की बजाय चार नदियाँ बह निकले ।"[१५८]

"मुन्नी पानी में से बाहर फेंकी हुई मछली की तरह छटपटाने लगी थी ।"[१५९]

"कहते–कहते अर्चना को लगा जैसे गिरीश अभी से घाट से छूटी नौका की भाँति दूर होता जा रहा है ।"[१६०]

"उसके होठ किसी प्रेत के होठों की तरह फड़फड़ाते जा रहे थे और उनमें क्षणसी... ।"[१६१]

"कोई दिशा या उपदिशा ऐसी न थी, जहाँ नई आबादियों के क्षुरमुट उठ रहे हों । नएं मकानों की लम्बी कतारें समुद्र की लहरों की तरह फैलती हुई अपने प्रसार में दिल्ली के कितने ही खण्डहर और स्मृति केवल रौंदती हुई बढ रही थी ।"[१६२]

❖ प्रतीक योजना :

"बड़े भाई पाँच भाइयों में धर्मराज युधिष्ठिर थे ।"

"उसके शरीर में तडपती मछली की तरह लहर दौड गई ।"

"वह चोर महाशय तो जरुर यहाँ पर होंगे । आखिर इस बारात के दूल्हा तो वहीं हैं ।"

"बड़े भाई भद्रसमाज के स्तम्भ नजर आ रहे थे "

"जैसे कोई रीछ मेरे ऊपर घूम रहा हो उबकाई आने को होती है ।"
"यह गुरु गोविन्दसिंह की तलवार है ।

"माँ का दूध पिया है, तो आओ ।"

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि साहनी ने बोलचाल में प्रयुक्त क्षेत्र और पात्र के स्तर के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है । कहानी को

अधिक कलात्मक बनाने की कोशिश में भाव को दुसह बनाने का प्रयास उन्होंने नहीं किया है । उन्होंने युग–सन्दर्भ में से उपजी हुई चेतना को समझा–परखा है और उसी के अनुरूप भाषा की सर्जना की है । साहनी के समक्ष जीवन का व्यापक बोध उसकी जटिलताएँ और संवेदनाएँ हैं । जिसके लिए उन्होंने सहज, स्वाभाविक भाषा को चुना है । अनुभव–संवेदना को संप्रेषणीय बनाने के लिए कथ्य के अनुरूप सहज भाषा की आवश्यकता होती है । इसीलिए घटना और पात्र के अनुरूप सहज भाषा का स्वाभाविक रूप से कहानी में समाजयोजन हुआ है । कहावतों–मुहावरों का प्रयोग करके उन्होंने कहानी की भाषा को प्रभावपूर्ण और प्राणवान बना दिया है ।

❖ शैलीपक्ष :

आधुनिक कहानीकारों ने कहानी को नयी संवेदनाओं से सुसज्जित किया है । शिल्प विषयक नवीनता भी नयी कहानी में आयी है, यह समय की मांग है । कहानीकार की शैल्पिक प्रक्रिया मात्र अभिव्यक्ति का साधन है, जिससे वह अपने कथ्य को अभिव्यंजित करता है । अतः प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति कभी वर्णनात्मक होती है, तो कभी यही अभिव्यक्ति प्रतीकों, बिंबो, संकेतों के माध्यम से भी व्यक्त होती है ।

साहनी की कहानियों का शिल्प प्रेमचंद की कहानी–कला बिखरे–सँवरे रूप को प्रस्तुत करता है । साहनी की कहानी सीधी–सपाट–रेखा पर दोड़ती है । वह सांकेतिक अभिव्यक्ति के गहरे राज से वाकिफ है । साहनी ने मुख्य रूप से वर्णनात्मक शैली, व्यंगयात्क शैली, नाट्यात्मक शैली, सांकेतिक शैली, व्यंग्यात्मक शैली, नाट्यात्मक शैली, सांकेतिकशैली, प्रत्यावलोकन शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, आदि शैलियों को अपनाया है ।

शैली के संबंध में भोलानाथ तिवारी का मत मान्य है कि "शैली शब्द आजकल STYLE का ही हिन्दी पर्याय के रूप में प्रचलित है ।"[९३] हम साहनी जी की कहानियों की प्रयुक्त शैलियों का थोड़ा विस्तार से विचार करेंगे ।

वर्णनात्मक शैली :

इस शैली में कहानीकार कहानी के चरित्रों और उनसे संबंधित घटनाओं का वर्णन अपनी कल्पना, अनुभूति और जानकारी के आधार पर करता है ।

साहनी की अधिकांश कहानियों में इसी शैली का प्रयोग हुआ है । जीवन के व्यापक क्षेत्र के चित्रण के कारण उनकी भाषा वर्णन–प्रधान हो गई है ।

'साग–मीट' कहनी पूर्णतः वर्णनात्मक है । वर्णन यहाँ प्रस्तुत है –

''मर्द लोग बड़े समझदार होते हैं, इन्हें तो दस बातों का ध्यान रहता है । अब तो मैं आगे क्या कहती, मैंने इतना भर कहा, आप इसके कान खींचते रहा कीजिए, जवानी बड़ी मस्तानी होती है । इस पर ये बिगड़ उठे ।''[९४] उसी प्रकार 'मालिक का बन्दा', 'अहं ब्रह्मास्मि', 'खण्डहर', 'क्रिकेट का मेच' आदि कहानियाँ सशक्त वर्णनात्मक कहानियाँ है ।

व्यंग्यात्मक शैली :

साहनी की वर्णनात्मक शैली की भाँति ही व्यंग्यात्मक शैली का उपयोग भी विभिन्न कहानियों में जगह–जगह देखने को मिलता है । साहनी ने सामाजिक, सांसकृतिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं अफसरशाही वर्ग हर क्षेत्र में फैली रुढ़िवादिता, भ्रष्टाचार, अनाचार, आर्थिक संकटों में पिसते मनुष्य आदि के जीवन रहस्यों को खोलकर उनके प्रति संवेदना व्यक्त की है । साहनी की अधिकांश कहानियों में व्यंग्य का सजीव चित्रण हुआ है । 'जख्म' कहानी में निरुपित व्यंग्य शैली यहाँ प्रस्तुत है – ''यही ठीक है ना ? उसने मुस्कराकर कहा – शायद तुम ठीक कहते हो, बूढ़ों को जिन्दगी से किनारा कर लेना चाहिए – फिर धीरे सो बोला मैं तो दो–तीन बरस में जाऊँगा । पर तुम... ? तुम्हारा क्या होगा ?''[९५] इसी प्रकार 'जोत' कहानी में निरुपित यह उदाहरण ''देवता और हाकिम दोनों एक ही चीज तृप्त कर सकते है और वह उसके पास

नहीं ।"[९६] इस प्रकार 'प्रादुर्भाव' 'सेमिनार', 'नौसिखुआ', 'झूमर', 'देवेन' आदि कहानियों में इसका पुट हम देख सकते हैं ।

नाटकीय शैली :

साहनी की कहानियों में नाटकीय शैली का प्रयोग पात्रों, परिवेश और परिस्थितियों के आवश्यक वार्तालाप और संवादो के कारण स्वाभाविक रूप से होता है । इसमें लेखक अदृश्य रहकर पात्रों को सांकेतिक रूप में मात्र दिशा निर्देश ही करता है । उदाहरण हम देख सकते हैं – "यह तेरे रिश्ते की है ।"

"रिश्ते की क्यों होगी जी, यह कठियावाड की है, हम बनजारे हैं ।"

"तू गाड़ी में कहाँ जा रही है ?' फीरोजपुर जी ।"[९७]

उसी प्रकार विकल्प, पहिचान, छिपे चित्र, खूँटे, खुशबू, नौसिखुआ आदि कहानियों में सशक्त नाटकीय शैली का प्रयोग हुआ है ।

सांकेतिक शैली :

साहनी ने अपनी कहानियों में मानसिक उहापोह और व्यस्त संकुल जीवन को नयी अर्थवता देने के लिए एवं मूलसंवेदना को अधिक सजीव रूप देने के लिए बहुत सी कहानियों में सांकेतिक शैली का प्रयोग किया है – "घृणा एक धुँध की तरह सड़कों पर तैरती रहती है । पिछले जमाने की घृणा कितनी सरल हुआ करती थी लगभग प्यार जैसी सरल ।"[९८]

'घर की इज्जत', 'त्रास', 'जख्म' 'ढोलक' कहानी में वर्तमान पीढ़ी पर सांकेतिक शैली के माध्यम से व्यंग्य किया गया है – "सारी बात संवेदन की है । इन लोगों में गहरी संवेदना नहीं है । जिसमें संवेदन है वह हँस नहीं सकता – हमारी पीढ़ी है, वह हँस नहीं सकती ।"[९९] इसी तरह सांकेतिक शैली द्वारा वस्तु स्थिति के नये संदर्भ खुलते हैं जिससे मार्मिक अर्थव्यंजना होती है ।

कहानी में कहानी कहने की प्रवृत्ति भी साहनी की कहानियों में देखने को मिलती है । इस प्रयोग के द्वारा कथा की मार्मिकता बढ़ती है । 'भटकती राख' कहानी लोक–कथा की पृष्ठभूमि में देश की सुख–समृद्धि की लालसा व्यक्त हुई है । इस कहानी में कहानी के बीच दूसरी कहानी शुरु होती है– एक वृद्ध दादी माँ शुरु करती हैं – "जब मैं छोटी थी, तो मैने अपनी दादी के मुँह से उसका किस्सा सुना था । बहुत पुरानी बात है... "कहते हैं किसी शहर में एक युवक रहा करता था – आशाएँ थी कि बड़ा होगा, माँ–बाप का नाम रोशन करेगा, बड़ा नाम कमायेगा ।" इस कहानी का अंत भी इस प्रकार से पूरा होता है – "रात भर बुढ़िया राजा की राख का किस्सा सुनाती रही – बलिदानों और संघर्षों की कहानी कहती रही ।"[११०]

मनोविश्लेषणात्मक शैली :

साहनी की सभी कहानियों में मनोविज्ञान का पुट तो है ही । उन्होंने अंतः मन की पीड़ाओं एवं त्रासदियों का चित्रण अपनी कहानियों में आह्लादक ढंग से निरुपित किया है । उदाहरण प्रस्तुत है – 'गल मुण्ठे' कहानी के अंतर्गत सूक्ष्म से सूक्ष्म मनोभावों और जटिल से जटिल स्थितियों का अंकन संभव हो सकता है – "मैं बीस बरस के बाद उससे मिलने जा रहा था – फिर आँखो के भाव में पुरानी सहजता के स्थान पर अनुभव का पैनापन आ चुका होता है – सारा उत्साह और स्नेह एक प्रकार की ठण्डी औपचारिकता में सिमटकर रह जाता है ।"[१११]

काव्यात्मक शैली :

साहनी में गद्य में काव्यत्व चलाने की क्षमता है । 'खूंटे' कहानी का एक स्थल दृष्टव्य है – "मंदिर तक पहुँचते–पहुँचते चार बज गये – पक्षी अपने पतले–पतले काले पंख फैलाये जैसे आग की लपटों से बच पाने के लिए भागे

जा रहे थे – किसी पक्षी की तीखी चीख सुनायी दे जाती – असह्य वेदना की भी ।"[१७२]

कभी–कभी साहनी ने एक या दो काव्यात्मक पंक्तियों से ही अपना काम चला लिया है । 'त्रास' कहानी में निरुपित ये पंक्तियाँ "घृणा एक धुँध की तरह सड़कों पर तैरती रहती है ।"[१७३]

साहनी की सभी कहानियाँ शैली की दृष्टि से सुगठित हैं । अपने इस रूपकी विशेषता यह है कि यह कहीं भी कृत्रिम नहीं है । कहानियों में यात्रा वृतांत (ओ हरामजादे), एकालाप (सागमीट) पूर्वदर्शन (खंडहर), संस्मरण (वाङ्चू) आदि की पद्धतियाँ स्वाभाविक रूप से अपनायी गयी हैं ।

साहनी की भाषा–शैली अत्यंत प्रभावशाली कही जा सकती है । उन्होंने मुँहावरों, सूक्तियों, प्रतीकों, बिंबो आदि लाक्षणिक प्रयोगों द्वारा अपनी भाषा को प्रभावपूर्ण बनाया है । सरलता, सहजता, सजीवता, पात्रानुकूलता, धारावाहिकता, भावानुरूपता, संगठितता एवं बुद्धिगम्यता उनकी भाषा के गुण कहे जा सकते हैं ।

साहनी की अधिकांश उल्लेखनीय और उत्कृष्ट कहानियाँ मिश्रित शैली में ही लिखी गयी हैं । इनकी बहु आयामी शैली में संवेदना का पुट और चेतना की अनुभवशीलता तथा मानव–समाज के प्रासंगिक मूल्य–बोध के साथ कलात्मक उपलब्धि के दर्शन होते हैं । उनकी भाषा–शैली में एक प्रकार का लालित्य, माधुर्य एवं काव्यात्मकता भी है ।

१०. उद्‌देश्य :

कहानी में कुछ लोग उद्‌देश्य को स्वीकार नहीं करते, पर प्रत्येक रचना में उद्‌देश्य छिपा रहता है और वह कहानी में रहना चाहिये । कहानी का उद्‌देश्य चरित्र–चित्रण का उद्‌घाटन हो सकता है या किसी विचार या दृष्टिकोण का

संप्रेषण भी । कुछ कहानियाँ सांस्कृतिक प्रेरणा को लेकर भी लिखी जा सकती हैं । कुछ में व्यंग्य और कुछ में मानव–जीवन का चित्रण रहता है ।

❖ *कहानी में उद्‌देश्य का महत्त्व :*

बिना लक्ष्य की कोई रचना नहीं होती, इसीलिए उद्‌देश्य को भी कहानी का एक अनिवार्य तत्त्व मानना उचित प्रतीत होता है । आज की कहानी एक सजग साहित्यिक विधा है और यह नहीं माना जा सकता कि कहानी का उद्‌देश्य केवल मनोरंजन है । डॉ. विजयपालसिंह के शब्दों में "कहानी के उद्‌देश्य का क्षेत्र बड़ा व्यापक होता है । कहानीकार का उद्‌देश्य सुधार का हो सकता है, उपदेश का हो सकता है, मनोरंजन का हो सकता है, अपने सिद्धांतों के प्रचार का हो सकता है या पाठकों को किसी यथार्थ स्थितियाँ विशेष सत्य से परिचित करा देने भर का भी हो सकता है । इन उद्‌देश्यों के अतिरिक्त अन्य अनेक ऐसे उद्‌देश्य हो सकते है, जिनको सामने रखकर कहानी की रचना होती है ।"[१७४]

मुंशी प्रेमचंद का यह कथन कहानी के उद्‌देश्य की सम्यक व्याख्या करता है – "वर्तमान आख्यायिका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन के यथार्थ और स्वाभाविक चित्रण को अपना ध्येय समझती है ।"[१७५]

❖ *साहनी की कहानियों के उद्‌देश्य–संदेश :*

साहनी प्रकृति से भी बहुत स्नेही और विनम्र है । उनमें 'सेन्स आफ ह्युमर' भी प्रचुर मात्रा में है । उनका यह गुण उनकी रचनाओं में भी विद्यमान है । सुप्रसिद्ध कहानीकार अमरकमान्त के शब्दों में – "भीष्म जी अपनी ओर से बहुत कम कहते हैं, कभी–कभी कुछ भी नहीं कहते, और हमें एक ऐसी जगह ले जाकर छोड़ते हैं, जहाँ हम आनंदित और आह्लादित होते हैं । वही हमारे अन्दर कुछ बदल जाता है, कुछ टूटता है और किसी दुर्लभ अनुभव के

एहसास से हमारे अन्दर एक गहन संतोष व सुख का भाव पैदा होता है ।''[१७८]

साहनी की कहानियों में साधारण लोगों की जीवन की विविध रंगोवाली जिजीविषा है, कुंठा है, हताशा और निराशा है, उनका दुःख और पीड़ा है, उनके सपने और आदर्श हैं । अति आधुनिकवाद और अस्तित्ववादी आतंक का उनकी कहानियाँ सचमुच दर्पण की तरह हैं । कपिल तिवारी के शब्दों में ''साहनी की कहानियाँ किसी खास घेरे के भीतर और खास वर्ग के संबंध रखने मात्र की लाचार से मुक्त है । वे भारतीय जीवन–शैली की रचनात्मक खोज करना चाहते हैं – उनकी कहानियाँ प्रेमचंद की कहानी परंपरा में एक सृजनशील विस्तार के साथ ही कलात्क मूल्य की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हो उठती है ।''[१७९]

कृष्णा सोबती के शब्दों में – ''भीष्म ने दर्जनों शेहतमंद कहानियाँ लिखी हैं, जो लगातार उस सत्य को उजागरकरती हैं, जो भीष्म के निकट मूल्यवान है । वे मूल्य और आस्थाएँ है जिन्होंने भीष्म का पूरा का पूरा दृष्टिकोण स्थिर किया है ।''[१८०]

साहनी की कहानियाँ मनोरंजन के साथ–साथ यथार्थता को स्पष्ट करते हुए उसमें छिपे सत्य से परिचित करा देने में सफल हैं । प्रगतिवादी कहानीकार होते हुए भी इनकी कहानियों में आक्रोश का बहुत तीव्र स्वर नहीं मिलता । उन्होंने प्रगतिवाद और मानवतावाद के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया है । उनकी कहानियों के उद्‌देश्य का क्षेत्र बड़ा व्यापक है । उनके अपने शब्दों में ''कलाकार का अपना, कलाकार के नाते स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है । उसका संवेदन कुछ बातों के नाते स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है । उसका संवेदन कुछ बातों को नकारता, कुछ को स्वीकारता, अंगीकार करता है – नैतिक अथवा सामाजिक उद्‌देश्यों को लेकर लिखी जानेवाली कहानियाँ अक्सर पात्रों के चरित्र का सरलीकरण कर देती है – कोई भी लेखक अपने काल की धड़कनों से अछूता नहीं रहता – यह उसके संवेदन और जीवन–दृष्टि पर निर्भर करता है ।''[१८१]

मानव समानता के हिमायती होने के कारण इनकी कहानियों में सर्वत्र किसी न किसी रूप से मानवतावादी दृष्टिकोण व्यक्त हुआ है ।

निष्कर्षतः साहनी ने विघटित दृष्टिकोणवाले कहानीकारों की तरह कहानी को नुस्खे या चोखटे से बाहर निकालने के नाम पर उसके रूप का विघटन नहीं किया है परंतु उसे विषय–वस्तु के अनुरूप शिल्प–कथ्य प्रदान किए है । उनकी कहानीं में सूक्ष्म से सूक्ष्म मनोभावों और जटिल से जटिल स्थितियों का अंकन हुआ है जो साहनी की ईमानदारी, सत्यता एवं पूर्ण स्वाभाविकता का परिचय देता है । साहनी जनवादी लेखक हैं इसीलिए उनकी कहानियों के उद्देश्य मानवतावादी दृष्टिकोण से व्याप्त है । साहनी ने मानव–प्रकृति और चरित्र, मानवमूल्यों, मनुष्य–मनुष्य के शाश्वत संबंधों, भावों और अनुभूतियों तथा उनके विविध रूपों की व्याख्या की है । इन सब के निरूपण में वे सिद्धहस्त हैं ।

११. उपन्यास : कला–वैभव :

कथानक :

❖ प्रस्तावना :

“उपन्यास आधुनिक गद्य–साहित्य की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं लोकप्रिय विधा है, क्योंकि वह मानव–जीवन के व्यापक एवं वैविधयपूर्ण चित्रण के लिए अधिक उपयुक्त सिद्ध हुआ है । ‘आत्मभिव्यक्ति’ और ‘आत्मरक्षा’ मानव–स्वभाव की चिरंतन विशेषताएँ हैं । मनुष्य मात्र का चित्र–विचित्र जीवन, उपन्यास में, देश काल के व्यापक आयाम में फैलकर कथाकृति बनता है और चरित्र–सृष्टि करता है । इस दृष्टि से उपन्यास एक विशद जीवन कथा है ।”[९२]

❖ उपन्यास–कला के तत्त्व :

उपन्यास अपने आधुनिक मानव जीवन का विश्लेषण करनेवाली सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कथात्मक विधा है । आगे हम उपन्यास शब्द एवं व्याख्याओं की विशद् चर्चा कर चुके हैं । विभिन्न विद्वानों ने उपन्यास को नानाविध शब्दावलियों में

परिभाषित किया है । किन्तु डॉ. गुलाबराय के शब्दों में उपन्यास की एक सर्वांग परिभाषा इस प्रकार है – "उपन्यास कार्य कारण श्रृंखला में बंधा हुआ वह गद्य कथानक है जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेचीदगी के साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्तियों से संबंधित वास्तविकता का काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानवीय जीवनके सत्य का रक्षात्मक रूप उद्घाटित किया जाता है ।"[८३]

डॉ. गुलाबराय की उपर्युक्त परिभाषा के प्रकाश में यदि साहनी के उपन्यासों को परखा जाय तो निःसंदेह ये एक सफल उपन्यासकार सिद्ध होते हैं ।

उपन्यास पाश्चात्य साहित्य की देन है । पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार उपन्यास के छः तत्त्व स्वीकारा गया है । (१) कथावस्तु, (२) चरित्र–चित्रण, (३) कथोपकथन, (४) भाषा–शैली, (५) देशकाल एवं वातावरण और (६) उद्देश्य । जिन उपन्यासों में इन तत्त्वों का यथोचित निर्वाह होता है । वे उपन्यास कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट कोटि के माने जाते हैं ।

❖ उपन्यास में कथानक का महत्त्व :

उपन्यास में वर्णित सभी घटनाओं, कार्य–व्यापारों का सन्निवेश कथानक के अंतर्गत होता है । कथानक के लिए प्रचलित शब्द हैं – " 'कथावस्तु', 'विषयवस्तु', 'इतिवृत', 'कथा', 'वस्तु', 'वृत्ति' आदि" ।[८४] कथानक अथवा कथावस्तु उपन्यास के मूल तत्त्व है । जिसका महत्त्व अन्य तत्त्वों की अपेक्षा निश्चित ही ज्यादा है । कथानक पर ही उपन्यास का भवन खड़ा होता है ।

क्षेमेन्द्र 'सुमन' के शब्दों में यदि हम कहें कि कथावस्तु (Plot) का उपन्यास में वही स्थान है कि शरीर में हड्डियों का तो इसमें कोई अत्युक्ति न होगी । उपन्यास कला में प्रयुक्त होने वाले साधनों में कथानक ही सर्वमान्य और

अधिक स्पष्ट है – क्योंकि उपन्यास या कथा का संपूर्ण ढाँचा कथानक के आधार पर ही खड़ा होता है ।"[९५]

उपन्यास में कथानक का प्रस्तुतिकरण वर्णनात्मक, आत्मकथात्मक, पत्रात्मक, डायरी जैसे अनेक शैलियों में किया जाता है । उपन्यासकार कथानक को चयन इतिहास, पुराण अथवा समसामयिक जीवन में से करता है । कौतूहल एवं जिज्ञासा उपन्यास की मुख्य विशेषताएँ हैं । इनके अभाव में अच्छे से अच्छे कथानक असफल हो जाते हैं । कथानक के क्रमिक विकास के आधार पर पाश्चात्य समीक्षकों ने 'प्रारंभ', 'विकास', 'चरमसीमा', 'निगति' और 'अन्त' नामक पाँच स्थितियों को स्वीकार किया है ।

"कथानक में जीवन की बिखरी हुई घटनाओं को कलाकौशल से एक सूत्र में बाँधा जाता है । जिस तरह नदी की लहरें एक दूसरे के साथ मिलकर नदी में प्रवाह और स्वाभाविक संगीत का समावेश कर देती है उसी तरह उपन्यासकार अपनी अनुभूति घटनाओं एवं प्रसंगों का आश्रयलेकर, जीवन की बिखरी लहरों को जीवन–सरिता का रूप प्रदान करता है । कथावस्तु के द्वारा घटनाओं का ही सुनियोजित एवं व्यवस्थित विवरण प्रस्तुत किया जाता है । जिसमें कारण और उसमें उत्पन्न परिणाम पर ही विशेष जोर दिया जाता है । साथ ही उपन्यासकार अपने कथावस्तु रूपी उद्यान की क्यारियाँ, पौंधें, कलमें, काट छाँटकर, सँवार–सुधार कर कथावस्तु का निर्माण करता है ।[९६]

"उपन्यासकार उपन्यास में आनेवाली घटनाओं की अपनी कल्पना से सजाता है । मुख्य कथा के साथ ही सहायक कथाएँ भी चलती रहती है, किन्तु उनमें परस्पर का मेल हो । ये कथाएँ श्रृंखलाबद्ध न होगी तो कथानक का आकर्षण जाता रहेगा । उपन्यास में कथा का विकास ठीक उसी तरह होता है जैसे मानव के अंगों का विकास होता है ।"[९७]

वर्ण्य–विषय की दृष्टि से कथावस्तु साहसिक प्रेम–प्रधान, तिलस्मी, जासूसी, ऐतिहासिक, पौराणिक और सामान्य जीवन से संबंधित आदि विभिन्न विभागों में

बंटी हुई पायी जाती है । कथावस्तु में वर्णित प्रत्येक घटना परस्पर संबंधित हो क्रमागत हो और उनमें संगति हो वे सब श्रृंखलाबद्ध हो । अनेक उपन्यासों में मुख्य कथाएँ तथा अन्य गौण कथाएँ साथ–साथ चलती रहती हैं, ऐसी अवस्था में कलाकार की कुशलता इसी में होती है कि वह संपूर्ण कथाओं और उपकथाओं को एकसूत्र में बाँध रखें । कथावस्तु के संगठन के साथ उसमें स्वाभाविकता का भी विचार करना नितांत आवश्यक होता है ।

कथानक का सुस्पष्ट, प्रवाहमय और सुंतुलित रूप कृति को सहज विश्वसनीयता प्रदान करता है । कथानक विकास की प्रमुख प्रक्रिया में प्रारंभ, मध्य, चरमोत्कर्ष और अंत का पूर्णतः निर्वाह होना चाहिए । इन चार चरणों में कृति का जिस रूप में विकास किया जा सकता है । वहीं से रचनाकार की कलात्मकता की कसौटी होती है । आधुनिक साहित्य में मनोविश्लेषणात्मक प्रक्रिया के फलस्वरूप कथा तत्त्व का उत्तरोत्तर ह्रास हुआ है । कथा तत्त्व के इस विश्रृंखलित रूप में भी कथानक की उपस्थिति इस महत्त्व को प्रमाणित करती है ।

१२. साहनी के उपन्यासों के कथानक की विशेषताएँ :

साहनी के उपन्यासों में कथानक के निरंतर विकास की प्रक्रिया को देखा जा सकता है । विकास की इस प्रक्रिया में कथानक में सूक्ष्मता, सांकेतिकता और कसाव के आर्विभाव से कृतियों की अभिव्यंजना और सौंदर्य में अभिॄद्धि हुई है । उनकी प्रारंभिक रचनाओं की तुलना में बाद की रचनाओं में संश्लिष्टता, संगुफन तथा संगठन को देखते हुए कहा जा सकता है कि कथाविन्यास की दृष्टि से उनकी कृतियों में निरंतर विकास हुआ है । 'झरोखे', 'कड़ियाँ', 'वसंती', ' मय्यादास की माड़ी' और 'कुंतो' आदि में इस विकास प्रक्रिया को साहजिक रूप में देखा जा सकता है ।

अब हम आगे साहनी के उपन्यासों के कथानकों के विभिन्न पक्षों की चर्चा करेंगे ।

साहनी के उपन्यासों को हम आकार की दृष्टि से निम्नलिखित वर्गो में रख सकते हैं

(१) **बृहदाकार उपन्यास :**

(१) तमस, (२) मय्यादस की माड़ी, (३) कुंतो

(२) **लघु आकार के उपन्यास :**

(१) झरोखे, (२) कड़ियाँ, (३) वसंती

बृहदाकार उपन्यासों में कथानक का फलक अपेक्षाकृत बड़ा है । उनमें जीवन के विविध पक्षों, सामाजिक विशेषताओं, सांस्कृतिक स्थितियों और राजनीतिक प्रभावों के परिदृश्य को व्यापकता प्रदान की गई है । जबकि लघु आकार के उपन्यासों में कथानक को कुछ प्रमुख घटनाओं और जीवन के कतिपय विशिष्ट पक्षों को रेखांकित करने का उद्देश्य दिखायी पड़ता है ।

आगे हम साहनी के उपन्यासों के वर्णित कथानक के विभिन्न पक्षों का अध्ययन करेंगे ।

❖ **सत्याधारित कथानक :**

उपन्यास एक कलाकृति है । उसमें सत्य का सुंदर रूप से प्रदर्शन किया जाता है । उसका सत्य अलौकिक सत्य है । कथानकों की सत्यता के विषय में एक सुप्रसिद्ध कहावत है – "इतिहास में तिथियों और नामों के अलावा सब सच है ।"[९८]

साहनी ने प्रामाणिक अनुभूतियों को ही अपने साहित्य का उपजीव्य बनाया है । उन्होंने इस बात को स्वयं स्वीकार किया है कि उनकी रचनाओं की संप्रेक्ष्य वस्तु उसके यथार्थ अनुभव पर ही आधारित है । उनके अपने शब्दों में

"मैं केवल लिखता हूँ, जिस आग्रह से लिखता हूँ, उसमें मेरे संस्कार भी हैं, मेरा अनुभव भी है ।"[१८६]

साहनी ने 'बंसी' उपन्यास में अपनी ईमानदारी और सच्चाई का परिचय दिया है । इस उपन्यास में एक ऐसी लड़की का चित्रण किया है जो मेहनत–मजदूरी करने के लिए महानगर में आज ग्रामीण परिवार की कठिनाइयों के साथ–साथ बड़ी होती है और निरंतर बड़ी होती जाती है । दिल्ली जैसे महानगर में नए–नए सेक्टर और कोलोनियाँ उठानेवालों की आज दिन टूटती झुग्गी–बस्तियों में टूटते गरीब लोगों, रिश्ते–नातों, सपनों और घरौंदों के बीच मात्र बसंती है जो साबूत नज़र आती है । वह अपने परिवार, परिवेश और परंपरागत नैतिकता से विद्रोह करती है और चाहे यह विद्रोह उसे दैहिक और मानसिक शोषण तक ही ले जाता है, पर उसकी निजता को कोई हादसा तोड़ नहीं पाता । 'प्रेमिका' और 'पत्नी' के रूप में कठिन से कठिन हालात को 'तो क्या बीबीजी' कहकर उड़ाने और खिलखिलाने में ही जैसे बसंती की सार्थकता है । दूसरे शब्दों में कहें तो यह युग का सत्य है और वह एक जीती–जागती जिजीविषा है ।

साहनी का इतिहास–बोध अत्यंत सशक्त और वैज्ञानिक है । वे न केवल काल की ऐतिहासिक विशेषताओं को प्रस्तुत करते हैं, अपितु काल में घटित घटनाओं के कारणों और परिणामों का भी वैज्ञानिक विश्लेषण करते हैं । यह भी स्पष्ट होता है कि साहनी इतिहास को अपनी रचनाओं का उपजीव्य बनाते हुए भी, उसे कलात्मक स्तर पर ही स्वीकार करते हैं । उनकी इतिहास–चेतना व्यापक मानवीय–बोध और मानवीय–मूल्यों से मंडित है । उनकी इतिहास–दृष्टि में एक ऐसी समग्रता का बोध मिलता है, जो अतीत, वर्तमान और भविष्य के समुच्चय का बोध दिलाती है । यही कारण है कि उनके उपन्यास 'तमस्', 'मय्यादास की माड़ी', 'कुंतो', 'झरोखे', 'कड़ियाँ' और 'बसंती' को चाहे अतीत

से संबंधित हो या वर्तमान से वे अपनी प्रामाणिकता और प्रभान्विति का स्वयं दस्तावेज बनकर हमारे सामने आते हैं ।

❖ संवेदनशील कथानक :

साहनी संवेदनशील कथाकार हैं । साहनी का स्पष्ट मत है कि – ‘‘साहित्य जीवन से ही जन्म लेता है । साहित्य का जीवन के साथ अटूट संबंध है, लेकिन जीवन कोई अमूर्त अवधारणा नहीं है, तरह–तरह के अनुभव, घटनाएँ, आपसी रिश्ते, मानव–समाज के भीतर चलनेवाले संघर्ष, विसंगतियाँ और अंतर्विरोधो, विडंबनाओं, आदि सभी जीवन की परिधि में आते हैं । ये सब लेखक के संवेदन को कहीं छूते हैं । उद्वेलित करते हैं । इन्हीं के आधार पर लेखक के संवेदन को अभिव्यक्त की दिशा मिलती है ।[९०]

साहनी चेतन मन की अपेक्षा अवचेतन मन की सक्रियता को महत्त्वपूर्ण मानते हैं । किसी भी रचनाकार के लिए उसके जीवनानुभव ही सबसे बड़ी पूँजी होती है ।

‘झरोखे’ उपन्यास में एक अबुध, छोटे से बालककी आँखो से एक परिवार में घटनेवाली छोटी–छोटी घटनाओं को देखने और उल्लेख करने की अविस्मरणीय कथा प्रस्तुत की है । उपन्यास में खास बात तो धर्मान्धता को लेकर चलती है । व्यापारिक वर्ग का धर्म हिन्दू और मुसलमान दोनों से भिन्न है । व्यापार की न कोई जाति होती है और न धर्म । हिन्दू परिवार के लोग मुसलमान के बच्चों से अपने बच्चों को दूर रखते हैं, क्योंकि उन्हें मुसलमान मलेच्छ लगते हैं । साहनी ने बहुत बारीकी से संवेदना के स्तर पर तथ्य को पकड़ा है । तुलसी का यह वाक्य संवेदना से भरा हुआ है – ‘‘क्या सारी उम्र में बरतन ही माँजता रहूँगा ... ।’’[९१]

इस प्रकार साहनी के अन्य उपन्यासों में संवेदना का यह पुट देखने को मिलता है । पुरुष एवं नारी पात्रों का संवेदनापूर्ण चित्रण हुआ है ।

❖ समस्या प्रधान कथानक :

साहनी के सभी उपन्यास समस्यामूलक है । इन्होंने आधुनिक समाज में विद्यमान लगभग हर समस्याओं को कथानक के रूप में उपन्यासों का विषय बनाया है । इनके उपन्यासों में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, अधार्मिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों की समस्याओं एवं इन क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्टाचारों का वर्णन बहुलता से मिलता है ।

भारत–विभाजन के दौरान हुए सांप्रदायिक दंगे शरणार्थियों के काफिले और पशुओं को लज्जित कर देनेवाली दानवी घटनाओं को उन्होंने करीब से देखा था । साहनी अतीत को स्मरण करते हुए कहते हैं – "मैं उन दिनों के बारे में इसलिए लिखने बैठा हूँ, कि मुझे मेरी वतन की याद सताने लगी है ? नहीं ऐसा नहीं है । लेकिन वतन की याद ने निश्चय ही मेरे अनुभवों को एक नया दर्द दिया, उन लोगों के उन स्थानों के साथ गहरे लगाव का दर्द । मैं उन लोगों की कहानी लिख रहा हूँ । जिनेके साथ मेरा बचपन बीता है ।"[१६२] इसी का परिणाम है कि सांप्रदायिकता की त्रासदी का दर्द २६ साल के बाद 'तमस' उपन्यास के रूप में व्यक्त हुआ है । वह पीड़ा उनके अवचेतन मन में कहीं पकती रही ।

साहनी ने बचपन में पाये संस्कार और अनुभव की विविध घटनाओं को आत्मकथात्मक उपन्यास 'झरोखे' में बड़ी मार्मिकता से चित्रित किया है ।

'कड़ियाँ' उपन्यास में तेजी से बदलते हुए समाजिक नैतिक मूल्यों ने आज विवाह की संस्था के लिए खतरा पैदा कर दिया है । कुछ पश्चिमी देशों के अनुभव से तो कई बार ऐसा लगने लगता है कि इस अंधानुकरण ने विमुग्ध कर दिया है । नये मूल्यों से उत्पन्न समस्या का समाधान कैसे हो सकता है । उसके लिए जरुरी हो जाता है कि हम इनसे ऊपर उठकर देश और काल के अनुरूप सोचे । यह उपन्यास सामाजिक और पारिवारिक उपन्यास है । पति–पत्नी और प्रेमिका के अंतः संबंधों को लेकर लिखा गया है । राजेश्वर

सक्सेना के शब्दों में ''कड़ियाँ'' उपन्यास में मध्यमवर्गीय संस्कार और संवेदन का संघर्ष, जो महेन्द्र के जीवन को बदल देता है । आधुनिकता की छाप ने महेन्द्र को विसंगतियों का नमूना बना दिया है । महेन्द्र अपनी मनोग्रंथियों के कारण स्वतः ही विडंबनापूर्ण परिस्थितियों को आमंत्रित करता है ।''[९३]

इस प्रकार देखा जा सकता है कि साहनी के प्रत्येक उपन्यास में विभिन्न समस्याओं का उल्लेख हुआ है ।

❖ कल्पना प्रधान कथानक :

'कल्पना' के महत्त्व को डॉ. श्यामसुन्दरदास जी कवि कल्पना में 'सत्यता' का नाम देते हुए कहते हैं – ''लेखक अपनी कल्पना–शक्ति से ऐसा जीता–जागता चित्र उपस्थित करे जो वास्तविकता के रंग से पूरा–पूरा रंगा हुआ ज्ञात हो ।''[९४]

एक ओर जहाँ साहनी ने सत्य पर आधारित कथानक को चित्रित किया है, वहीं दूसरी ओर उन्होंने 'कल्पना' को भी अपनी कृतियों में स्थान दिया है । प्रत्येक लेखक में कल्पना–प्रवणता होना आवश्यक है । कहा भी गया है कि 'उपन्यास मानव के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है । अतः यथार्थ चित्रों में कल्पना का रंग भर कर उसे सुंदर बनाना ही लेखक का कार्य है ।

साहनी के उपन्यासों के कथानक की एक विशेषता यह भी है कि वे वैयक्तिक अनुभव पर आधारित हैं । अपने आसपास के जीवन से प्राप्त अनुभवों को ही वे अपने कथानक का उपजीव्य बनाते हैं । कथानक का विकास क्रम भी प्रायः अनुभवों की क्रमिक श्रृंखला का अनुसरण करता है । यही कारण है कि उनका प्रत्येक पात्र अथवा प्रसंग अपनी–अपनी लघु अथवा विशद् भूमिकाओं में अपनी सार्थकता बनाए रहता है । 'तमस' की संरचना के संदर्भ में साहनी स्वयं कहते हैं – ''लिखते समय मेरे सामने मेरी यादें थी, दिल की बेचैनी थी, कुछ किरदार थे, जो उन दिनों सक्रिय रहे थे, कुछ प्रसंग थे, जिनसे

में परिचित था । लेकिन उन प्रसंगों को जोड़कर कथानक बुन ने का विचार मेरे मन में नहीं था । हाँ वह परेशानी जरुर थी कि इस घटना चक्र को कहाँ से शुरु किया जाए । अंत में, जहाँ से ये घटनाए शुरु हुई थी, वहीं से मैने उन्हें पकड़ा और दंगों के अंत तक की रूपरेखा इस तरह से बन गई थी ।"[९५]

इसका तात्पर्य यह है कि साहनी अपनी कल्पनाशक्ति के द्वारा अपनी रचनाओं को रोचक, सुंदर एवं यथार्थपूर्ण बनाने में पूर्णतः सफल रहे हैं ।

❖ घटना प्रधान कथानक :

साहनी के उपन्यासों में कथानक की एक विशेषता यह है कि प्रत्येक घटना अपने स्थान पर मूल कथा की सहयोगिनी है । अनावश्यक फैलाव अथवा अप्रासंगिक विस्तार कहीं भी नहीं है । यही कारण है कि उनके उपन्यासों में कथानक का विकास अत्यंत स्वाभाविक और प्रभावपूर्ण रीति से होता है । वे अनेक छोटी–मोटी घटनाओं के संगठन से कथा को एकसूत्रता प्रदान करते हैं । उनके कथानकों में व्यक्ति की अपेक्षा परिस्थितियों का चित्रण अधिक हुआ है, जिन्हें ऐतिहासिक अथवा सामाजिक आधारों पर खड़ा किया गया है ।

'तमस' उपन्यास का प्रारंभ नत्थू चमार के एक बदरंग कटीले और मोटे सुअर को मारने की लंबी, ऊबाऊ और थका देनेवाली प्रक्रिया से होता है । मुरादअली नाम का एक व्यक्ति नत्थू को पाँच का नोट देता है । बाद में वहीं सुअर एक मस्जिद के द्वार पर फिकवा दिया जाता है । सभी मुसलमान उत्तेजित हो जाते हैं । उसके तत्काल एक गाय काटी जाती है, जिससे हिन्दू उत्तेजित हो उठते हैं । संदेह, अविश्वास और असुरक्षा के भाव जोर पकड़ लेते हैं । तनाव की यह स्थिति शहर, कस्बे और गाँवों तक महामारी की तरह फैल जाती है । स्थिति संवाद–प्रतिक्रियाओं द्वारा यही दंगा एक बीभत्स और अमानवीय जन–संहार में बदल जाता है ।

'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास भी अनेको घटनायें साथ में लेकर लिखा गया उपन्यास है। वह उपन्यास उस काल खंड की कहानी कहता है। जब पंजाब की धरती पर सिख–अमलदारी के पाँव उखड़ँ रहे थे और ब्रिटिस हुकूमत अपनी जड़े गहरे तक फैलाती जा रही थी। भारतीय इतिहास के इस अहम् बहलाव को साहनी ने एक कस्बाई कथा–भूमि पर चित्रित किया है। वह एक तथाकथित ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है परंतु १६वीं शताब्दी में ब्रिवानी शासन व्यवस्था के मजबूत होने के साथ केवल पंजाब ही नहीं संपूर्ण भारतीय विकास का एक मानवीय दस्तावेज है। जहाँ महाराजा रणजीतसिंह ने ४० वर्ष तक शांतिपूर्ण शासन चलाया था।

'कुंतो' उपन्यास एक रंगीन मिजाज का उपन्यास है। कुंतो में एक रंग और है, और यह है देश की आज़ादी का। आज़ादी के दीवानों का। आज़ादी के लिए कई दिवानें अपना घर–बार छोड़कर क्रांतिपथ पर लहू–लुहान धरती पर एक नये रंग की तलाश में खुद को मिटा रहे हैं। जिसमें शामिल है हीरालाल, मनाहीवाला उसकी बीबी जानकी और माँ और ऐसे हजारों लोग हैं।

इस प्रकार साहनी घटनाओं के माध्यम से एक विस्तृत सामाजिक परिदृश्य प्रस्तुत करते हैं। 'तमस' की संरचना के संबंध में उन्होंने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि – ''ऐसे कथानक जिसमें हजारों लोगों का भाग्य जुड़ा हुआ है, जहाँ कोई भी केन्द्रीय पात्र न हो, वहाँ छोटी–बड़ी घटनाओं और प्रसंगों को लेकर आगे बढ़ना अनिवार्य है।''[९६] इस प्रकार 'बसंती', 'कड़ियाँ' और 'झरोखे' में कथानक का क्रमिक विकास हुआ है। इन सभी उपन्यासों की कथावस्तु जीवन की उन घटनाओं का उद्घाटन करती हैं, जो जीवन को छूने में अधिक समर्थ हैं।

१३. चरित्र–शिल्प :

कथानक के पश्चात् चरित्र–चित्रण ही उपन्यास का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व माना गया है, क्योंकि कथावस्तु के आगे बढ़ाने का कार्य पात्रों के माध्यम से ही होता है । पत्रों के चरित्र–चित्रण से ही उपन्यासकार समाज एवं मानव के नाना रूपों को उपस्थित करता है । चरित्रों को खोजना ही उपन्यासकार का उद्‌देश्य होता है । डॉ. रामलखन शुक्ल के अनुसार – ‘‘उपन्यासकार अपनी रचनाओं में पात्रों की खोज करता है, वह उसका निर्माण नहीं करता ।’’[१९७] सफल उपन्यासकार पूर्वग्रहों से मुक्त होकर, सामाजिक चेतना और समकालीन जीवन–बोध के परिप्रेक्ष्य में चरित्र–विकास को स्थापित करता है ।

❖ उपन्यास में पात्र–सृष्टि का स्थान एवं महत्त्व :

उपन्यास के प्रमुख तत्त्वों में चरित्र–चित्रण का महत्त्व अधिक है । कथावस्तु को वहन करनेवाले तत्त्व को पात्र कहा जाता है और उसके स्वरूप को पात्रों का चरित्र–चित्रण कहते हैं । डॉ. प्रताप नारायण टंडन के शब्दों में ‘‘एक मनुष्य के क्रिया–कलाप से किस सीमा तक उसके चरित्र का अनुमान लगाया जा सकता है ? सामाजिक परिस्थितियाँ कहाँ तक मनुष्य को उसके जीवन में प्रभावित करती है ।’’[१९८] पात्रों के माध्यम से उपन्यासकार जीवन की यथार्थ स्थिति का संवेदनशील एवं प्रभावपूर्ण अंकन करता है । चरित्र–चित्रण को उपन्यास का महत्त्वपूर्ण तत्त्व मानते हुए बाबू गुलाबराय का कहना है कि – ‘‘यदि उपन्यास का विषय मनुष्य है, तो चरित्र–चित्रण उपन्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व है, क्योंकि मनुष्य का अस्तित्व उसके चरित्र में हैं । चरित्र के कारण ही हम एक मनुष्य को दूसरे से पृथक् करते हैं एवं उसके व्यक्तित्व को प्रकाश में लाते हैं ।’’[१९९]

साहनी के उपन्यासों में पात्रों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है । उनमें ‘कड़ियाँ’ उपन्यास में पात्रों की संख्या सबसे कम है, फिर भी उसमें ४० पात्र

है । 'तमस' उपन्यास में अधिक पात्र है और उनकी संख्या १८५ है । पात्रों की संख्या की अधिकता का कारण यह है कि वे अपने उपन्यासों में समाज की विभिन्न प्रवृत्तियों, मानसिक स्थितियों, कथाओं, कोटियों, विसंगतियों, विद्रुपताओं, आशाओ–निराशाओं, आकाक्षाओ, जिजीविषाओं आदि को उद्घाटित करना चाहते हैं ।

साहनी की पात्र–सृष्टि व्यापक है । इनके उपन्यासों में भी काफी चरित्रों का चित्र खींचा गया है, लेकिन बहुत चरित्र ऐसे हैं, जो सिर्फ मनोभाव दिखाने के लिए एकत्रित हुए हैं । साहनी के पात्र मूलतः परिस्थितियों के दास हैं । परिस्थितियाँ उन्हें जहाँ ले जाती हैं, वे उनका अनुकरण करते चलते हैं । ये पात्र सभी अभिजातीयता का प्रतिनिधित्व करते हैं, तो कभी मध्यम या निम्न स्तरीयता भी धारण करते हैं ।

आज के गतिशील एवं परिवर्तनशील जीवन की ही भांति उनके पात्र भी गतिशील एवं परिवर्तनशील है । साहनी के सभी पात्र गतिशील हैं, उन्हें किसी एक वर्ग विशेष में बाँधा नहीं जा सकता । फिर भी अध्ययन की सुविधा के लिए हम इन पात्रों को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित कर सकते हैं ।

❖ पात्रों का वर्गीकरण :

उपन्यास के पात्रों का वर्गीकरण मुख्य रूप से इस प्रकार किया जा सकता है ।

(१) चरित्र के आधार पर :

इसमें दो प्रकार के पात्र आते हैं – (१) वर्ग प्रधान पात्र, (२) व्यक्तिप्रधान पात्र ।

(२) स्वभाव के आधार पर :

इसमें चार प्रकार के पात्र आते हैं । (१) स्थिर पात्र, (२) विचित्र पात्र, (३) गतिशील पात्र और (४) अधम पात्र

(३) अध्ययन की सुविधानुसार :

अध्ययन की सुविधा के लिए उपन्यास के पात्रों को निम्नलिखित दो भागो में बाँटा जा सकता है । (१) मुख्य पात्र और (२) गौण पात्र ।

मुख्य पात्र :

ये पात्र कथा का संचालक होता है । उसे ही केन्द्र में रखकर कथावस्तु का निर्माण होता है । वे मुख्यतः नायक या नायिका होते हैं ।

गौण पात्र :

गौण पात्र कथा विकास में सहायक होते हैं । अवसरानुसार कहानी में व्यापकता लाते हैं ।

१४. साहनी के उपन्यासों के पात्रों का वर्गीकरण :

साहनी के उपन्यासों के पात्र के रूप में पुरुष और नारी दोनों है, अतः इनका उल्लेख हम अलग–अलग शीर्षकों के अंतर्गत करेंगे ।

❖ प्रधान पुरुष पात्रों में निम्नलिखित पात्र मुख्य है :

(१) प्रमुख पात्र :

'झरोखे' उपन्यास में पिता श्री का पात्र महत्त्वपूर्ण है । 'कड़ियाँ' उपन्यास का मुख्य पात्र महेन्द्र हैं । 'तमस' उपन्यास में पात्रों की संख्या बहुत है, महताजी, जनरैल, रिचर्ड आदि महत्त्वपूर्ण पात्र हैं । 'बसंती' उपन्यास में प्रमुख पात्र चौधरी, बुलाकी, दीन, सूरी, साहब आदि हैं । 'मय्यादास की माड़ी' में दीवान मथरादास, दीवान मय्यादास, दीवान धनपत प्रमुख पात्र हैं ।

❖ प्रधान स्त्री पात्रों में निम्नलिखित स्त्री पात्र मुख्य है :

'झरोखे' उपन्यास में माँ और विद्या प्रमुख स्त्री पात्र हैं । 'कड़ियाँ' उपन्यास में प्रतिभा, सुषमा प्रमुख स्त्री पात्र हैं । 'मय्यादास की माड़ी' में दीवान मथरदास की पत्नी, दीवान मय्यादास की पत्नी, देवकी आदि प्रमुख स्त्री पात्र

है । 'कुंतो' उपन्यास में कुंतो प्रमुख स्त्री पात्र है । ये सभी पात्र मानवीय पात्र हैं जो अपनी विशेषता लिए हुए हैं ।

(२) गौण पात्र :

साहनी के उपन्यासों में गौण पात्रों के रूप में पुरुष एवं नारी दोनों को ही उभारा गया है । ये पात्र उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुए हैं । इन गौण पात्रों में निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं –

गौण पुरुष पात्र :

भाई बलदेव, वैधनी (झरोखे), भगवानदास नारंग, परशुराम, पप्पू (कड़ियाँ), वानप्रस्थजी, बख्सीजी, नत्थू, देवव्रत, रणवीर, हयात बख्श, इत्रफरोश, शहनवाज, रमजान अली, हरनामसिंह (तमस), राजा अमीरचंद, पुरोहित, मथरदास, दीवान हरनारायण, रोशनलाल, बालमुकुन्दु, कुन्दालाल, डिप्टी कमिश्नर हेनरी, लेखराख, मनोहर, वानप्रस्थी, लालसिंह, तेजसिंह, अंग्रेजी मास्टर, मंत्रीजी और गोकुलदास (मय्यादास की माड़ी), हरीलाल, गिरीश, दिलीप, रणवीर, रामनाथ, जगदीश, सहगल, लाला गोविंदराम, पिताजी और बख्सी (कुंतो) आदि हैं ।

गौण नारी पात्र :

देवकी और विमला (झरोखे), संतवत, गुणवती (कड़ियाँ), नत्थू की पत्नी, रघुनाथ की पत्नी, प्रकाशो (तमस), श्यामा की बीबी, रुकमी, बसंती की माँ (बसंती), चंद्रा, मोतियाँ, मोरा भागसुद्धी, सुमित्रा, ईशरादेई, रुकमणि, पुष्पा, वीरावली और परमेशरा (मय्यादास की माड़ी), जयदेव की माँ, सुषमा की माँ, गिरीश की मौसेरी बहन, क्रांतिकारी हरीलाल की पत्नी (कुंतो) आदि हैं ।

इन मुख्य और गौण पात्रों के साथ-साथ कुछ अन्य ऐसे पात्र भी हैं जिनमें से कुछ तो एक विशेष वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, तो कुछ पात्रों का व्यक्तित्व पूरे उपन्यास पर छाया रहता है । साहनी के उपन्यासों के कुछ पात्र अपने विचित्र स्वभाव को लेकर उपस्थित हुए हैं तो कुछ अद्भुत परा वैज्ञानिक

शक्तियों से सम्पन्न हैं । इन विभिन्न प्रकार के पात्रों का अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत करेंगे ।

❖ पात्रों का वर्ग–विभाजन :

वर्ग–विभाजन के आधार पर पात्रों को निम्नलिखित तीन विभागों में बाँटा जा सकता है ।

उच्च वर्ग :

इस वर्ग के अंतर्गत 'झरोखे' उपन्यास में खास किसी पात्र की सृष्टि नहीं हुई है । लैप्टन भगत की पत्नी मिसेज भगत, डिप्टी डायरेक्टर मि. वर्मा उच्चवर्ग के पात्र है । 'तमस' में उच्चवर्ग के पात्र धन और प्रतिष्ठा के बोझ से लदे हैं, अन्य वर्ग जिनके सम्मुख तुच्छ और हीन है । कुछ पात्र अपने अहंकार से मदमत्त हैं । इस वर्ग की नारियाँ भिन्न मनोवृत्ति की हैं । जिनमें प्रतिक्रियावादी भावना व्याप्त थी । इस वर्ग के अंतर्गत रिचर्ड, लीजा, वानप्रस्थीजी, शाह नवाज, मंत्रीश्री एवं उसकी पत्नी, लाला लक्ष्मीनारायण, मेहताजी अमरिली, प्रिन्सिपाल हर्षद आदि हैं । 'बसंती' उपन्यास में उच्च वर्ग के अंतर्गत साहनी ने दिल्ली की सरकार को दिखाया है । पूँजीपति लोग एवं पूँजीवादी व्यवस्था पहले किस तरह अपने स्वार्थ के लिए सर्वहारा वर्ग को बसाती है, फिर स्वार्थ की पूर्ति होते ही उन्हें घर–बेघर कर देती है । साहनी ने ऐसे पात्रों को एक तानाशाही, सामंतशाही और पूँजीपति के रूप में चित्रित किया है ।

उच्च और निम्नवर्ग के बीच मध्यमवर्ग का प्रतिनिधित्व करनेवाले अनेक पात्रों की सृष्टि की है । इसी वर्ग को लेकर साहनी ने अनेक समस्याओं का चित्रण और जर्जर मान्यताओं का उद्घाटन किया है । साहनी स्वयं इसी वर्ग के हैं । इसीलिए यह वर्ग सबसे अधिक उनका जाना–पहचाना है । मध्यमवर्ग के पात्र अपनी प्रकृति के अनुकूल समाज में आचरण करते हैं । 'झरोखे' उपन्यास में बख्शीजी, रामदास, जरनैल, कश्मीरीलाल, प्रो. रघुनाथ, लतीफा, हकीम,

हयातबख्श, अजीज, देवव्रत, रणवीर, धर्मदेव, हरनामसिंह, दंतो, जसवीर, इकबालहि, तेजसिंह, निरंगसिंह, विद्या, मनोहर, जोधसिंह आदि मध्यमवर्ग के पात्र हैं । 'बसंती' उपन्यास में बस्ती के ढेरो लोग । 'मय्यादास की माड़ी' में राम जवाया, रामदास पुरोहित, हरनारायण, मनोहर, लालसिंह, तेजसिंह, वानप्रस्थी, कुंदनलाल, रोशनलाल, बालमुकुन्द, रुकमणि, बीरावली, सुमित्रा, गोरा आदि । 'कुंतो' में गिरीश, रणवीर, रामनाथ, लाला गोविंदराम, ॠषिराम, सुषमा, विधा, धुकधुल और सुरस्ती आदि मध्यम वर्ग के पात्र हैं । इन सब की अपनी लाक्षणिकताएँ है ।

निम्नवर्ग :

निम्नवर्ग को ध्यान में रखकर लेनिन ने जो बातें कहीं है वे ध्यान देने योग्य है – "निम्नवर्ग के लोग छोटे कारखानोंदार, दुकानदार, दस्तकार, किसान ये सब अपने मध्यमवर्गीय अस्तित्व को बचाये रखने के लिए पूँजीपति वर्ग के खिलाफ, लड़ते हैं – वे क्रांतिकारी न होकर रुढ़िवादी होते हैं ।"[२००] निम्न मध्यवर्ग की बुरी दशा बहुत दिनों तक नहीं रहती । निम्न मध्यमवर्ग के कुछ लोग अपनी व्यवस्था के प्रति शीघ्र ही सचेत हो जाते हैं ।[२०१]

उपर्युक्त उदाहरणों से पता चलता है कि निम्नवर्ग की स्थिति अच्छी नहीं होती है । उसके पास सर पर छत है भी और नहीं भी । जीविका का कोई साधन निश्चित नहीं है । 'झरोखे' उपन्यास में तुलसीं, वेद, फैजअली, देवकी, गिरधरी, नवाबखान, करमखान और फरुहदीन इस वर्ग के पात्र हैं । 'कड़ियाँ' उपन्यास में बढ़ई, मिस्त्री, गाड़ीवान मेहरानी और नारे का नौकर । 'तमस' उपन्यास में नत्थू, मुरादअली, दर्जी, खुदाबख्श, रमज़ान, मुहसानअली, अंकरा, राजो, मीरदाद एवं गोपालसिंह आदि हैं । 'कुंतो' में हिरालाल, उसकी पत्नी जानकी, उसकी माँ, चुन्नी, किशनसिंह और मास्टर दयाल आदि इस वर्ग के पात्र हैं ।

इस प्रकार निम्नवर्ग प्रतिक्रियावादी है । क्योंकि वे इतिहास के पहियों को पीछे की ओर घुमाने की कोशिश करते हैं । वे अपने वर्तमान हितों की नहीं, परंतु भविष्य के स्वार्थों की रक्षा करते हैं ।

❖ पात्रों की चरित्रांकन विधियाँ :

(१) विश्लेषणात्मक प्रणाली :

इसके अंतर्गत उपन्यासकार स्वयं पात्र के व्यक्तिगत, उसके गुण, चरित्रिक विशेषताओं, भावों, मनोवृत्तियों और विचारों आदि का तटस्थ भाव से वर्णन करता है – "लेखक चरित्र और पाठक को जोड़ने की कड़ी होता है ।"[२०२]

(२) नाटकीय प्रणाली :

इसके अंतर्गत पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप या कथोपकथन द्वारा पात्र के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है ।

निष्कर्षतः सफल चरित्रांकन उसे कहा जा सकता है जिसमें सुसंगठितता हो । जिसमें पात्रों, मनोभावों आंतरिक एवं बाहय दोनों का यथायोग्य चित्रण हुआ है ।

❖ साहनी की चरित्र–सृष्टि–कला की विशेषताएँ :

साहनी की चरित्र–सृष्टि मुख्य रूप से यथार्थवादी है । अनेक पात्र इसी धरती के जीव हैं, वे न तो किसी देवलोक के देवता हैं, न राक्षसकुल के दानव । इनके पात्र मूलतः हैं मानवोचित्त गुण–अवगुणों से भरे हुए पात्र हैं । साहनी के आदर्श पात्रों में भी मानवोचित्त दुर्बलताएँ दिखाई देती हैं और बुरे से बुरे पात्र भी अपनी सुप्रवृत्तियों के आयाम अनुभव करते हैं । आंतरिक संघर्ष एवं द्वंद्व सभी पात्रों में पाया जाता है ।

'झरोखे' उपन्यास के 'पिताजी' आदर्श पात्र हैं । बड़े बेटे का घर छोड़ना उन्हें अच्छा नहीं लगता । उसका दिल दुःख से भर उठता है – "तेरे दिल में दर्द मर गया है । तू यह भी नहीं देख सकता ।"[२०३]

'तमस' उपन्यास का शाहनवाज एक उमदा इन्सान है । वह मानव–मूल्यों की रक्षा के लिए जाति और धर्म से ऊपर उठकर थोथे आदर्शों को अपने जीवन में उतारता है । वह इसारों से कह रहा है – "माना हिन्दू दोषी हैं, लेकिन तुम कितने शरीफ हो देख फकीरी दोनों कान खोलकर सुन के अगर मेरे मार के घर को किसी ने बूरी नज़र सेदेखा तो मैं तुझेही पकईगा ।"[२०४]

साहनी के चरित्रांकन की यह विशेषता है कि वे अपनी परिस्थितियों के टकराहट के साथ विकसित होते हैं । औपन्यासिक संदर्भ में उनकी मानसिकता नितांत स्वाभाविक प्रतीत होती है । यदि कोई पात्र परिस्थितियों के सम्मुख पराजित या विवश है, तो उसकी पृष्ठभूमि उसका साक्ष्य प्रस्तुत करती है । हरनामसिंह, बंतो, इकबालसिह, इत्रफरो, बुलाकीराम, गरीब मजदूर, प्रमिला, मेघादास आदि इस तरह के पात्र हैं ।

'मय्यादास की माड़ी' की रुकमणि अपने आपको फटकारती हुई कहती है कि – "मैं किनीं पापिन हूँ । मुझे उसे वहाँ नहीं छोड़ना चाहिए था । रुकमणि एक चट्टान के ऊपर बेठी यह सब सोच रही थी कि अचानक उसे लगा जैसे खाई के उस पार भगावन कृष्ण नाच–नाच कर मुझे बुला रहे हो.... रुकमणि की इहलीला वहींपर समाप्त हो गई ।"[२०५]

इन पात्रों की विवशता अथवा पराजय उनकी विकल्पहीन स्थिति के कारण है, किन्तु जो पात्र अपनी मूल्य–धर्मी निष्ठा के कारण आद्योपान्त संघर्षशील बने रहते हैं उनके शील और संस्कार को साहनी ने ठोस आधार पर प्रस्तुत किया है । उनकी नैतिकता, निष्ठा, देश–प्रेम, मूल्यधर्मिता इतनी सशक्त होती है कि किसी भी कीमत पर वे उससे विरत नहीं होते हैं ।

'तमस' उपन्यास की राजों की मूल्यनिष्ठा का यह पता चलता है कि वह एक सामान्य गृहिणी है । उसके हृदय में कितनी सहनुभूति भरी पड़ी है – "न जाओ जी, रुक जाओ, तुमने घर का दरवाजा खटखटाया है, दिल में कोई आस लेकर आये हो ... ।"[२०६]

हीन प्रकृति के पात्रों के रूप में रमजाना, अफर्रा, बलवाई, तेजासिंह, लालसिंह, बैरिस्टर, हकुमतराय, अंग्रेज अधिकारी गिरीश, दीनू आदि को देखा जा सकता है । साहनी के उपन्यासों में समाज के प्रत्येक वर्गों का प्रतिनिधित्व करनेवाले पात्र जो जीवन के क्षुद्र स्वार्थो से अलग रहकर आदर्श भावना का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं । यह भी महत्त्वपूर्ण है कि उन्होंने बाह्य कार्य कलापों की भाँति ही अपने चरित्रों के मानसिक अंतः द्वंद्व को भी बड़ी सफलता के साथ अंकित किया है ।

जयदेव, सुषमा, प्रोफेस्साब, नत्थू, वानप्रस्थी, रुकमी, लेखराज आदि इसी प्रकार के पात्र हैं, जो अपनी व्यावहारिक क्रियाओं के साथ आत्ममंथन की गहन प्रक्रिया से गुजरते है ।

चरित्र विकास का एक मनोवैज्ञानिक आधार यह होता है कि उसे आरंभ में जिन मानसिक स्थितियों और संस्कार के साथ प्रस्तुत किया जाता है, उनका निर्वाह आद्योपान्त होना चाहिए । इसी प्रक्रिया से चारित्रिक अन्विति सिद्ध हो पाती है । साहनी इस दृष्टि से एक चारित्रिक कलाकार हैं । वे अपने पात्रों की मूलभूत विशेषताओं का आद्योपांत निर्वाह करते हैं । कुछ पात्र आजीवन अपने नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति समर्णित रहते हैं ।

साहनी अपने उपन्यासों में चरित्रांकन के प्रति न केवल अत्यधिक सावधान है, परंतु उनके महत्त्व पर भी अत्यधिक बल देते हैं । इसका एक पुष्ट प्रमाण यह भी है कि उन्होंने अपने उपन्यासों का नामकरण पात्रों के नाम पर किया है । सारांशतः कहा जा सकता है कि चरित्र–चित्रण की दोनों पद्धति का विशेष प्रयोग किया है । साहनी ने औपन्यासिक चरित्रों में अनुकूलता, स्वाभाविकता, सप्राणता, सहृदयता और मौलिकता आदि गुणों का पूर्ण रूप से पालन किया है ।

१५. कथोपकथन (संवाद–कला) :

उपन्यास के पात्र जिस पारस्परिक वार्तालाप द्वारा कथावस्तु को आगे बढ़ाते हैं, और अपने चरित्र को प्रकाशित करते हैं, उसे कथोपकथन कहते हैं । उपन्यास में दो या दो से अधिक पात्रों के वार्तालाप को कथोपकथन कहते हैं ।

कथोपकथन मूलतः नाटक का प्रमुख अंग है, किन्तु आज साहित्य की अनेक विधाओं में उसका वैविध्यपूर्ण प्रयोग होता दिखाई देता है । मनुष्य का व्यवहार सुबह से शाम तक वार्तालाप से ही करता है । इसीलिए साहित्य की गद्य रचनाओं में विशेषतः संवाद आवश्यक एवं अनिवार्य प्रतीत होता है ।

❖ उपन्यास–रचना में कथोपकथन का महत्त्व :

“उपन्यास में कथोपकथन की योजना विभिन्न उद्देश्यों से की जाती है । कभी कथा–विकास के लिए, कभी पात्रों के अंतर और बाह्य व्यक्तित्व के उद्घाटन के लिए, तो कभी लेखकीय विचारों की नाट्यात्मक अभिव्यक्ति के लिए, कथोपकथन का उपयोग आवश्यक बन जाता है ।”[२७७]

“संवाद कथा–साहित्य के अपरिहार्य अंग होते हैं । चरित्रों की चारित्रिक विशेषताएँ उनके मनोभाव और विचार कथोपकथन के द्वारा ही संप्रेषित होते हैं । कथा–साहित्य में जहाँ ये संवाद वर्णनात्मक होते हैं, नाटक में ये अभिनयात्मक, रंगमंचीयता के उपकरण रूप होते हैं । पात्रों के सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति उसके संभाषणके उतार–चढ़ाव, लय–प्रवाह और लहजे से ही सफलतापूर्वक की जा सकती है । संवाद सटीक, संक्षिप्त, सरल, मार्मिक, शब्दावली से युक्त कथ्य को अर्थवत्ता देनेवाला बोधगम्य होने चाहिए । संवाद नाटक का प्राण तत्त्व है परंतु उपन्यास में भी उसका महत्त्व रहता है । संवादों में न केवल संक्षिप्तता, प्रभावोत्पादकता, रोचकता की वृद्धि होती है, अपितु कथानक में निहित विषय की गंभीरता और पात्रों की मनोविज्ञानिकता का भी

सफल निदर्शन संभव होता है । उसमें नाटकीय प्रभाव उत्पन्न करने की क्षमता होती हैं । डॉ. प्रतापनारायण टंडन ने 'उपयुक्तता', अनुकूलता, संवंद्धता स्वाभाविकता, संक्षिप्तता, उद्देश्य पूर्णता को अच्छे कथोपकथन के गुण माने हैं ।"[२०८]

कथोपकथन के मूल तत्त्वों के संबंध में डॉ. श्याम सुंदरदास लिखते हैं कि "कथोपकथन स्वाभाविक, उपयुक्त और अभिनयात्मक होना चाहिए । साथ ही वह बात–चीत में सुबोध, सरस, स्तष्ट और मनोहर होना चाहिए ।"[२०९]

"मनुष्य जीवन के व्यावहारिक एवं सैद्धांतिक दोनों रूपों का चित्रण संवाद द्वारा होता है । इस प्रकार कथोपकथन एक ओर जीवन प्रसंगों को स्वाभाविक बनाते हैं तो दूसरी ओर उनके समावेश से प्रबंध में रोचकता की वृद्धि होती है ।"[२१०]

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि उपन्यास में कथोपकथन का महत्त्वपूर्ण स्थान है । कथाकार के लिए यह अत्यावश्यक हो जाता है कि पात्रों के कथोपकथन स्वाभाविक एवं प्रभावशाली हो और पाठकों के हृदय पर अपनी छाप छोड़ सकें । कथोपकथन के द्वारा ही उपन्यास में कौतूहल पैदा किया जा सकता है । यही एक परिच्छेद को दूसरे परिच्छेद से जोड़ता है ।

❖ साहनी के उपन्यासों में प्रयुक्त कथोपकथन का स्वरूप :

साहनी के साहित्य में लम्बे, ऊबाऊ तथा व्यर्थ संभाषणा नहींवत् है । उनके संवादों की व्यंजना अर्थगर्भित शब्दावली से युक्त संक्षिप्त और प्रवाहमय गति में पाठकों को रचनाओं के उद्देश्य तक पहुँचाने में मदद करती है । साहनी के कथोपकथन तिक्ष्ण व्यंग्य करनेवाले होते हैं । उनके अधिकांश संवाद स्वाभाविक सरल, स्पष्ट, स्वाभाविक, चुस्त और पात्रानुकूल कहे जा सकते हैं । प्रायः संवादों में एक प्रकार की व्यंजकता उभर आयी है । पर कहीं–कहीं वह अधिक तीव्र और तिक्ष्ण बन गई है ।

साहनी ने संवादों का सार्थक उपयोग अपने उपन्यासों में किया है । वे संवादों के माध्यम से अनेक अवसरों पर गंभीर और निगूढ़ विषय को नाटकीय रोचकता के साथ अभिव्यक्त करते हैं । साहनी के उपन्यास के पात्रों के कथोपकथन का स्वरूप इस प्रकार है –

❖ पात्रानुकूल कथोपकथन :

उपन्यास की सफलता के लिए पात्रों के भाव–भाषा, वर्तन–व्यवहार के अनुकूल कथोपकथन का एक विशेष महत्त्व रहता है । साहनी के उपन्यासों में पात्रों के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग मिलता है । पढ़े–लिखे पात्रों की भाषा उनके शिक्षित रूप के परिचायक हैं तो ग्रामीण अँचल विशेष के पात्रों की भाषा में लटकों के दर्शन भी होते हैं । संवाद में परिवेश–विशेष की भाषा का पुट होने से संवाद में सहजता आ जाती ह । 'तमस' के संवाद पूर्णतः पात्रानुकूल बन पड़े हैं । हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्मावलंबियों के पात्र अपने–अपने स्तर और तरीके के संवाद बोतले हैं । प्रशासक वर्ग इन दोनों से अलग हैं । नेता के संवाद जैसे आम जनता से पृथक् होते हैं । फतहदीन अपने पड़ोसी लालाजी से बोलता है – "बेखबर रहो बाबूजी, आपके घर की तरफ कोई आंख उठाकर भी नहीं देख सकता । पहले हम पर कोई हाथ उठाएगा, फिर आप पर उठने देंगे ।"[२११]

दंगाइयों के संवाद का दृष्टांत प्रस्तुत है –

"देखो रमजान भाई, किसी ने मुझे पीछे से ढोंगा मारा है ।"

इकबालसिंह रुक गया और बोलता है – "ठहर ओये"

"इसकी सलवार उतार दो । इसे नंगा गाँव में ले चलो । यह हम से बहुत छिपता था ।"

"खबरदार ओये, किसी ने सलवार उतारी तो ... ।"

"अभी इसने कलमा नहीं पढ़ा है... फाकिर है मुसलमान नहीं है । उतारा इसकी सलवार ।"

'बसंती' उपन्यास के मजदूरों के संवाद भी बड़े रोचक हैं –

"इधर तेरे पास भगवान जी की मूर्ति है –

भगवान जी की मूर्ति ?" – "क्या बोले जा रही हो बसंती"

"ऐसा नहीं कहते । भगवानजी के सामने हम दोनों खड़े होंगे तू मेरे माथे पर टीका लगाना, मैं तेरे माथे पर टीका लगाऊँगी "यह खिलवाड़ नहीं है ।" कभी ब्याह भी ऐसे हुए हैं ।"[२१२]

❖ दीर्घ कथोपकथन :

भीष्म जी ने अपने उपन्यास की जीवंतता और पात्रों के व्यक्तित्व को लम्बे कथोपकथन के द्वारा भी स्वाभाविक बना दिया है । साथ ही ये कथोपकथन पाठकों की जिज्ञासा एवं पात्रों के प्रति सहानुभूति बटोरने में सक्षम है । उन्होंने अपने उपन्यासों में लंबे कथोपकथन द्वारा भी पात्रों के मानसिक क्रिया व्यापारों को चित्रांकित किया है ।

'कुंतो' उपन्यास का उदाहरण दृष्टव्य है :

"हमारे ननिहाल में आम का एक पेड़ था । तुम तब बहुत छोटे थे, शायद तुम्हें याद न हों । खूब बड़ा विशाल, घना पेड़ था । बैसाख महीने में उस पर बौर पड़ता था । देखते ही बनता था जैसे सारा पेड़ खिल उठता । नया जीवन उस पेड़ के रोएँ–रोएँ में जैसे अँगडाइयाँ लेने लगता । उन दिनों यों भी चारों ओर कली–कली फूट रही होती हैं । पर मैं देखता, कभी जोरो की हवा बहती तो बैर झर–झरकर नीचे गिरने लगते । अगर यह बैर नहीं गिरता तो पेड़ की टहनियाँ फलों से लद जाती । टहनियाँ भी फल के बोझ से टूट–टूट जातीं ।..."[२१३]

'कड़ियाँ' उपन्यास के संवाद भी बड़े लंबे हैं । "अगर आजाद बनकर रहना चाहता है तो अपना घर बनाए रख और सब काम छिपकर करता जा । इश्क के कारण तो साले, तब भी घर नहीं टूटेंगे जब दुनिया बदल जायगी । तब घर न बनेंगे न टूटेंगे । तू प्रेम के कारण घर तोड़ँ रहा है, तेरे जैसा पिछड़ा हुआ इन्सान दुनिया में नहीं है । हम तो औरत के शरीर के पुजारी है..."[२१४]

❖ संक्षिप्त कथोपकथन :

भीष्म जी ने कथोपकथन के समन्वित विधान का सफल प्रयोग किया हैं । कहीं–कहीं उन्होंने पात्रों के कौतूहल और रुखाई को संक्षिप्त कथोपकथनों द्वारा व्यक्त किया हैं । उन्होंने अपने उपन्यासों में संक्षिप्त कथोपकथन भी स्वाभाविक सहज, कलात्मक एवं अर्थपूर्ण रूप में मिलते हैं । इनमें न कहीं कृत्रिमता है और न कथा–प्रवाह में ही व्याघात पड़ता हैं ।

'बसंती' उपन्यास में बसंती और दीनू के बीच निरुपित संवाद संक्षिप्त होते हुए भी जिज्ञासावर्धक है –

"क्या नाम है तेरी घरवाली का ?"

"रुकमी"

"कितनी बड़ी है । क्या मुझसे बड़ी है ?"

"तुझसे बड़ी है"

"कितने बच्चे हैं तेरे ?"

"कोई बच्चा नहीं है, क्यों ?"

"मेरी माँ के तो सात बच्चे हुए थे, उसका एक भी नहीं हुआ ?"[२१५]

'कड़ियाँ' उपन्यास के सुषमा और महेन्द्र के बीच का संवाद स्वभाविक है –

"कभी आइए । प्रमिला जी को भी लाइए ।"

"आप भी आइए ना ! प्रमिला बहुत पूछ रही थी"

"मैं जरुर आऊँगा । पप्पू कैसा है ? उसे देखे बहुत दिन हो गए हैं ।"

"ठीक है स्कूल जाता है ।"[२९६]

❖ भावानुकूल कथोपकथन :

साहनी ने रोचक, सजीव, स्वाभाविक एवं कुतूहलवर्धक संवादों की रचना की है । संवाद यदि भावानुकूल नहीं होंगे तो पात्रानुकूल होने पर भी चरित्रों के स्वाभाविक विकास में सहायक नहीं होंगे ।

'तमस' उपन्यास का उदहरण दृष्टव्य है –

"नत्थू के दिल में से गहरी हूक सी उठी । पत्नी ने आँख उठाकर नत्थू की ओर देखा । वह उठकर नत्थू के पास जा बैठी और उसका हाथ पकड़कर बोली – "तभी तो मैं कहूँ यह इतना परेशान क्यों है । मुझे क्या मालूम तुने मुझे बताया क्यों नहीं ? अपना दुःख मन के अंदर नहीं रखते ।"

"मुझे मालूम होता तो मैं यह काम क्यों करता ? – कल रात मुरादअली को मैंने देखा था ... उसने मेरे साथ बात तक नहीं की... ।"[२९७]

'मय्यादास की माड़ी' के ये संवाद भावानुकूल है जो गरीब किसान की मनोव्यथा व्यक्त करते हैं

"इसमें इन्साफ – पसंदगी क्या हुई ... और खायेगा क्या ?"

"मगर दीवान ने हमदर्दी तो दिखायी ना.. उसे तो वसूलना बनता था ।"

"सब वक्त–वक्त की बात है... ।"[२९८]

❖ व्यंग्यात्मक कथोपकथन :

साहनी के उपन्यासों में व्यंग्यात्मक संवादों का भी अंकन हुआ है । उनका व्यंग्य बहुत चोटदार होता है ।

'बसंती' उपन्यास में जब बस्ती तोड़ी जा रही थी, उस वक्त का एक दृश्य दृष्टव्य है –

"अपने ही बस्ती के घर तोड़ रहा है, हरामजादे । सारी सरम बेच खाई है । तुझे कोढ़ पड़े ।"... "अब अपनी कहाँ है । अब सरकार की है । हम नहीं तोड़ेगे तो कोई दूसरा आकर तोड़ेगा ।" "सारी शर्म, हया बेच खाई है, अपने ही लोगों के घर तोड़ रहा है ।"[२१९]

'कड़ियाँ' उपन्यास में व्यंग्यात्मक कथोपकथन का उदाहरण –

"हाय, मैं कहाँ और यह कहाँ..."

"कुछ समझा करो । सुषमा भले घर की लड़की है... बुरी औरत नहीं है । यह हम लोगों का दंभ है कि हम काम करनेवाली स्त्रियों को बुरा समझते हैं, यहाँ मजबूरी में पड़ी है, वरना अपना घर छोड़कर कौन आता है ?"[२२०] इन पंक्तियों में पारिवारिक जीवन, दाम्पत्य–जीवन की विडंबना पर करारा व्यंग्य किया गया है ।

❖ नाटकीय कथोपकथन :

साहनी के उपन्यासों में नाटकीय कथोपकथन भी स्वाभाविक एवं कलात्मक रूप में मिलता हैं । भाषा को, चमत्कारिक बनाने के लिए नाटकीयता बहुत आवशयक है । 'झरोखे' उपन्यास में तुलसी जब इस परिवार में रहते–रहते शिक्षित हो जाता है । उसे लगने लगता है मुझे अच्छा कार्य नहीं मिल सकता जैसे –

"माताजी ? सहसा अँधेरे में से तुलसी की आवाज़ आती है ।"

"क्या है तुलसी ?..."

"क्या सारी उम्र मैं बरतन ही माँजता रहूँगा ?"

"बरतन नहीं माँजेगा तो क्या करेगा ? सभी नोकर बरतन माँजते हैं या नहीं ? तेरे हाथों पर महेंदी लगी है ?"[२२१]

'तमस' उपन्यास का कथोपकथन दृष्टव्य है –

"हाँ मुझे क्या ! भाड़ँ में जाये मुरादअली और उसका सुअर !"

"अब पूरे पंद्रह मेरे पास हो गये... कुछ ले लेना ।"

"मुझे कुछ नहीं चाहिए ।"

"जिसका दिल साफ होता है उसे भगवान कुछ नहीं कहता ।"[२२२]

❖ ह्रास–परिहासपूर्ण कथोपकथन :

साहनी के उपन्यासों में हास–परिहास पूर्ण एवं रसिकता भरे संवादों की भी सुन्दर और स्वाभाविक योजना हुई है । बसंती उपन्यास में बसंती अपने पिता की मंशा के खिलाफ बगावत करती है । दीनू के साथ साइकिल पर भागती है, लेकिन वह अपने सगे–संबंधियों के सामने से गुजरना चाहती है ।

"किधर जा रहा है ? अभी इधर और घूमेगा । उधर से चल ।"

"किधर से ?"

"टेक्सियों के अड्डे की तरफ से ।"

"पागल हो गई है क्या ? तेरे बाप ने देख लिया तो ?"

"कुछ नहीं होगा । उधर से ही चल ।"[२२३]

परस्पर वार्तालाप में कहने का ढंग का विशेष महत्त्व है ।

❖ स्वार्थपूर्ण कथोपकथन :

साहनी ने अपने उपन्यासों में स्वार्थपूर्ण कथोपकथन का अंकन किया है, जो चरित्र–चित्रण में सहायक होते हैं । 'बसंती' उपन्यास का उदाहरण दृष्टव्य है –

"तूने बरडू से पैसे लिए थे ?" "कौन से पैसे ? क्या बक रही है ?"

"वह कहता था तू मुझे उसकी रखैल बना गया था ?" पर बसंती आपे से बाहर होती जा रही थी – "तू भी हरामी, वह भी हरामी । खबरदार जो

मेरे बच्चे को हाथ लगाया । मेरे पेट में अपना बच्चा लेकर मुझे बेचने चला था, हरामी, बेशर्म, बदजात ।"[२२४]

'कड़ियाँ' उपन्यास में सतवंत और प्रमिला का संवाद –

"मैं कुछ नहीं कहती सतवंत तो झट से मेरे मुँह पर चाँटा दे मारा, तू कौन होती है मेरे साथ सवाल–जवाब करनेवाली ?"

"कितनी निरीह सी है, यह मेरी सहेली, निरीह और गरीब और निःसहाय । अब वह जानता है कि प्रमिला उसी पर निर्भर है, वह जो चाहे कर सकता है ।"[२२५]

❖ प्रसंगानुकूल कथोपकथन :

साहनी परिस्थिति और प्रसंग के अनुसार संवाद प्रस्तुत करने में भी कुशल हैं । 'कुंतो' में कई जगह ऐसे संवाद आते हैं जिसमें परिस्थिति का वर्णन होता है । पाठक विस्मितसा मंत्र मुग्ध हो जाता है । जयदेव और प्रोफेसर के बीच का वार्तालाप देखिए – दोनों एक सँकरी गली से आगे बढ़ रहे थे, तभी बुढ़िया तो खाट पर बैठी हुक्का गुडँगुड़ा रही थी, प्रोफेसर को देखते ही बोल उठी थी ।

"साबिहजी कैसे हैं, नसीबो तो तुम्हे बहुत याद करती है उसकी आँखे ही 'तरस गई' साहिबजी... ।"

"ऐसी बेरुखी भी क्या हुई, साहिबजी दो मिनट मिल ही लेते दुआ सलाम हो जाती ।" "आप इसे जानते है ।"

"कल तू भी इधर से आएगा तो यही औरत तुमसे भी वही कुछ कहेगी, नसीब पलकें बिछाए तुम्हारी राह देख रही है ।"

"बला की खूब सूरत है, लड़की, है तो वेश्या, पर बड़ी सुंदर है ।"[२२६]

'तमस' उपन्यास में –

“हरनामसिंह गोद में रखे हाथ जोड़ देता और कहता “जिसके सिर उपरि तुं सुआमी सो दुःख कैसा पावै ।”

“आराम से बैठे रहो, तुम्हारी तरफ कोई आँख उठाकर भी नहीं देखेगा – इन्हें गैरत नहीं आयेगी कि हम निहत्थे बूढ़ों पर हाथ उठायेंगे ।”

“यहाँ मर जाना अच्छा है, परदेशो की खाक छानने से ।”[२२७]

❖ उद्देश्यपूर्ण कथोपकथन :

कथोपकथन की सोद्देश्यता अनिवार्य शर्त मानी गई है । साहनी की यह कोशिश रहती है कि संवाद जब भी बोले जाएँ, उसके पीछे एक उद्देश्य अवश्य परिलक्षित हो । ‘झरोखे’ उपन्यास में एक दृश्य उपस्थित होता है । पंडित जी दोनों भाइयों को पढ़ाते वक्त छोटे–छोटे वाक्यों के माध्यम से उस तथ्य तक पहुँचते हैं । जिन्हें बताना उनका खास मकसद था । देखिए –

उदाहरण :

“मुझे कुल मिलाकर ग्यारह रूपए तनख्वाह मिलती है ।” पंडित जी हर दूसरे–तीसरे दिन यह वाक्य दोहरा दिया करते हैं ।

“श्लोक याद किये हैं ?” – “मा भ्राता भ्रतरं द्रिशन मा स्वसारयुत स्वसा ।”

“क्या अर्थ है ?” – “भाई–भाई से द्वेष नहीं करे, बहन–बहन से द्वेष नहीं करे ।”

“शाबास ! तुम दोनों भाई एक थाली में खाना खाते हो ?”

“तुम आगे–आगे चला करो, तुम्हारा छोटा भाई पीछे–पीछे चला करे राम–लक्ष्मण ऐसे ही चला करते थे ।”[२२८]

“दीवान धनपत की मृत्यु हो गई । रुक्मणी तीर्थयात्रा के दौरान स्वर्गवासी हो गई काले और मझले काल कवलित हो गए । माड़ी में दीवान धनपत का तीसरा बेटा बैरिस्टर हकूमतराय की हुकूमत आ गई थी । परंतु माड़ी खंडहर में

बदलती जा रही थी और उल्लू का बैठना शुरु हो गया था । कुछ लोग कहते मियाँगी चला गया है – "माँ सिरहिलाकर बोली" "सब मर खप गए, अब यहाँ कौन बैठा है ।"

"उल्लू नहीं बैठेगा उस घर पर तो क्या तोता मैना बैठेगी ।"[२२९]

❖ पात्रों के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति में प्रयुक्त संवाद :

"कथोपकथन के द्वारा उपन्यासकार अपनी कृति के चरित्रों की व्याख्या करता है और उन्हें विकास की ओर अग्रसर करतना है ।"[२३०] साहनी जहाँ कथोपथकन के विस्तार में पर्याप्त योगदान देते हैं, यहां भूत, भविष्यत् तथा वर्तमान का भी संकेत देना नहीं भूलते । 'बसंती' उपन्यास का उदाहरण –

"कहाँ से आई है ? तूने क्या सूरत बना रखी है ?" बसंती मुस्करा रही थी अंतर्मुखी सी मुस्कान जो जिंदगी के थपेड़े खाने के बाद इन्सान के चेहरे पर अपने आप आ जाती है । "सच बता ? इधर तेरा बाप मेरे घर के बीसियों चक्कर काट चुका है –"

"श्यामा ने देखा लिया कि बसंती पहले की तरह नहीं रही है । बसंती का चेहरा थका–थका सा था । कुछ ही महीनों में मानो इसका सारा लड़कपन झर गया हो, गृहस्थिन बन गई हो । बसंती पहलेवाली बसंती नहीं रह गई थी । आँखे पहले जैसी ही बड़ी–बड़ी थी पर जैसे उनकी नजर अंदर की ओर मुड़ गई थी ।"[२३१]

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि साहनी के उपन्यासों के कथोपकथन संक्षिप्त एवं प्रभावात्मकता की वृद्धि के साथ ही तत्कालीन अनुकूल प्रतिकूल परिस्थितियों का भी सहज परिचय मिल जाता है । कथोपकथन कलात्मक ढंग का है । साहनी कथोपकथन द्वारा अंतद्वंद्व का प्रत्यक्ष बोध कराते हैं । साहनी ने उपन्यास में आनेवाले पात्रों के स्वभाव, सामाजिक स्तर तथा वातावरण को संवादों के माध्यम से मुखरित किया है । विशेष रूप से पात्र ही कथोपकथन

द्वारा अपनी विक्षेपताएँ पाठकों को अवगत करवाते हैं । साहनी को पात्रों के विकास के द्वारा तथा उनकी मनोगतियों को उभारकर, एक नई सृष्टि में पूर्णतः सफलता मिली है । साहनी जी के संवाद मूलतः सरल, सुबोध, पात्रानुकूल, परिस्थिति के अनुकूल, रोचक, आकर्षक, स्वाभाविक बन पड़े हैं । ये संवाद पात्रों के व्यक्तित्व को उभारने में विशेष रूप से सफल रहे हैं ।

❖ देशकाल–वातावरण :

देशकाल और वातावरण उपन्यास–रचना–विधि का महत्त्वपूर्ण अंग है । पात्रों के चरित्र को यथार्थ और जीवंत रूप प्रदान करने के लिए देशकाल वातावरण की नितांत आवश्यकता होती है । देश, काल वातावरण के अंतर्गत आचार–विचार, रीति–रिवाज, रहन–सहन और राजनीतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का वर्णन आ जाता है । सामाजिक, ऐतिहासिक और राजनैतिक उपन्यासों में देश, काल वातावरण का चित्रण अधिक आवश्यक होता है । उपन्यास की विषयवस्तु जिस युग, समाज जीवन तथा काल से संबंध रखती है । उसका यथार्थ बोध कराने के लिए तत्कालीन परिवेशिका वातावरण आवश्यक होता है । ऐतिहासिक उपन्यासों में देशकाल और वातावरण का विशेष महत्त्व होता है । उपन्यासकार सामाजिक स्थिति, रीति–रिवाज, वेश–भूषा, पात्रों का जीवनगत स्तर उनकी शिक्षा संस्कृति आदि का चित्रण करता है । उपन्यासकार परिवेश के अंतर्गत पात्रों की मनोदशा का भावात्मक स्वरूप प्रस्तुत करता है । देश–काल वातावरण एक साधन के रूप में स्वीकार किया जाता है, उपन्यासकार जहाँ पर वातावरण के चित्रण को साध्य बना लेता है, वहीं कथाका स्वाभाविक विकास रुक जाता है । उपन्यास में सजीवता और स्वाभाविकता का समावेश या अंतर्भाव के लिए देश और काल का ध्यान रखना आवश्यक है । इसी के चित्रण से रचना में पूरी सापेक्षता आ पाती है ।

१६. उपन्यास में देशकाल वातावरण और स्थानीय रंग का महत्त्व :

देश और काल का विवेचन करते हुए डॉ. श्याम सुन्दरदास ने लिखा है कि – "उपन्यास के देश और काल से हमारा तात्पर्य उसमें वर्णित आचार–विचार, रहन–सहन और परिस्थिति आदि से है, जिसका उपन्यास में विशेष महत्त्व रहता है ।"[२३२] डॉ. गुलाबराय जी ने लिखा है कि – "देश काल का वर्णन कथानक को स्पष्टता देने के लिए होना चाहिए, न कि उसकी गति में बाधा डालने के लिए । देशकाल वातावरण का बाहरी रूप है वातावरण मानसिक भी हो सकता है । आदमी जिस प्रकार के समाज में रहता है, वैसा ही काम करने लग जाता है । प्राकृतिक चित्रण भी उद्दीपन रूप से पात्रों की मानसिक स्थिति का सामंजस्य पाठक पर अच्छा प्रभाव डालता है और उपन्यास में काव्यत्व भी ले आता है, जैसे किसी के मरते समय दीपक का बुझ जाना, सूर्य का अस्त हो जाना, अथवा घडी का बंध हो जाना । वातावरण में अनुकूलता उत्पन्न कर शब्दों को एक विशेष शक्ति प्रदान कर देता है ।"[२३३]

उपन्यास में वातावरण की योजना रचना को स्वाभाविकता एवं यथार्थता का पथ प्रदान करती है । उपन्यासकार के लिए परिवेश या वातावरण की पूरी जानकारी रखना भी अत्यंत अनिवार्य है । देश–काल कथा को संबल देता है और उसे प्रभावी बनाना ही उपन्यासकार का उद्‌देश्य होता है । रुमिल जोला का कथन है – "मानव का समाज से पृथक कोई अस्तित्व नहीं है, वह सामाजिक वातावरण में जीता है और जहाँ तक उपन्यासकार का उससे संबध है, यह वातावरण निरंतर उसकी घटनाओं का रूप परिवर्तित करता है ।"[२३४]

"वातावरण की प्रभावपूर्ण सृष्टि औपन्यासिक सहानुभूति एवं संवेदना उत्पन्न करने में सफल होती है । वातावरण के सफल तथा मनोरम चित्रण का कहानी के लिए मूल्य होता है । कभी–कभी सामान्य सड़कों, गलियों तथा बरसात में टपकनेवाले घरों के साधारण वर्णन से भी कथा में विलक्षण मोहकता आ जाती

है । तथा कौतूहल की वृद्धि होती है ।"[२३५] इससे और स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यास में देशकाल और वातावरण का विशेष महत्त्व है ।

❖ भीष्म साहनी के उपन्यासों में देशकाल और वातावरण :

साहनी ने अपने उपन्यासों में पंजाब की सीमा से जुड़े गाँवों, दिल्ली जैसे महानगरों को अपने कथानक का आधार बनाया है ।

'मय्यादास की माड़ी' का कथा–क्षेत्र पंजाब और आसपास के परिवेश को चित्रित करता है । उनके 'तमस' उपन्यास के साथ अन्य उपन्यासों में अंग्रेजों की कूटनीति, काँग्रेस कमेटी के आंतरिक कलह, प्रभात मंडली का अभियान, सांप्रदायिक दंगे, शरणार्थियों के काफिले, देशविभाजन–पूर्व एवं बाद की स्थिति का यथार्थ वर्णन हुआ है । विस्थापित लोगों की दुर्दशा, खालसा राज्य, सिख सालारों की गद्दारी, फिरंगी फौजों का खालसा राज्य पर हमला, युद्ध का वर्णन सचमुच एक ऐतिहासिक दस्तावेज के रूप में हैं । मूलतान–गुजरात की लड़ाई, अंगेजों की दमनकारी नीति, मध्यमवर्गीय पारिवारिक घूटन जैसे विविध प्रसंगों का चित्रण करते समय साहनी ने तत्कालीन वातावरण को बड़ी सहजता के साथ अंकित किया है और वातावरण के प्राणवान साक्ष्य पर प्रसंगों की विश्वसनीयता को प्रमाणित किया गया है ।

'कड़ियाँ' उपन्यास में बड़े महानगरों में तेजी से बदलते हुए सामाजिक नैतिक–मूल्यों ने आज विवाह की संस्था के लिए खतरा पैदा कर दिया है । कुछ पश्चिमी देशों के अनुभव से तो कई बार ऐसा लगने लगता है कि यह बालू की भीत है, जो हल्का–सा स्पर्श पाते ही भरभराकर ढ़ह जाती है । इसमें नायक और नायिका के मानसिक उहापोह का यथार्थ युगीन परिवेश का सजीव चित्रण है

'बसंती' उपन्यास में साहनी ने चमक–दमक दिल्ली जैसे बड़े महानगरों में देखने को मिलती है । यहाँ पर एक लड़की 'बसंती' अपने परिवार, परिवेश

और परंपरागत नैतिकता से विद्रोह करती है और जटिल त्रासदी में फँस जाती है ।

'झरोखे' उपन्यास में साहनी ने मध्यमवर्ग के वातावरण का यथार्थ चित्र बनाया है । यहाँ पर युगीन परिवेश के संदर्भ में सामाजिक परिवेश में जीवित एवं व्यावहारिक मान्यताओं का विश्लेषण किया है ।

'कुंतो' उपन्यास स्वतंत्रता के पच्चीस वर्ष पूर्व स्वतंत्रता के ठीक कुछ दिनों बाद तक के बीच की कहानी है । देश आज़ादी की और आज़ादी मिलने पर स्थायित्व की ओर शनैःशनैः आगे बढ़ रहा था । वही आपसी रिश्ते, सामाजिक मूल्य–विघटन की संक्रामक परिस्थिति का जीता–जागता दस्तावेज है ।

साहनी के कथानक उनके व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित होने के कारण तथा अधिकांश परिस्थितियों में उनके सहभोक्ता होने के कारण वातावरण का चित्रण स्वाभाविक और विश्वसनीय बन पड़ा है । अनेक स्थलों पर ऐसा आभास होता है कि लेखक वातावरण की सूचना न देकर चल–चित्र की भाँति–पाठकों के सामने उनकी समग्रता प्रस्तुति कर रहे हैं । यह विशेषता उनके सभी उपन्यासों में समान रूप से पायी जाती है ।

साहनी के उपन्यासों में पाये जानेवाले वातावरण एवं देश–काल का अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षको के अंतर्गत करेंगे –

(अ) आँचलिक वातावरण

(ब) शहरी वातावरण

(क) मानसिक वातावरण

❖ आँचलिक वातावरण :

साहनी ने अपने उपन्यासों में पंजाब के आसपास के गाँवों को अपनी कथा का विषय बनाया है । चीफ की पार्टी, ग्राम संस्कृति, मृत्यु–संस्कार, मुंडन संस्कार, फसल की कटाई, सगाई का प्रसंग शासकीय कचेरी, पूजा–पाठ, विवाह

का प्रसंग, नाट्यशाला, न्याय मंदिर, शोभायात्रा जैसे प्रसंगों को उन्होंने अपने उपन्यासों में बड़ी प्राणवत्ता के साथ चित्रित किया है । इन संदर्भों से संबंध परिवेश का चित्रण अपनी स्वाभाविकता और यथार्थता के कारण पाठक के सामने सगुण साकार हो जाता है ।

❖ रीति–रिवाज :

साहनी ने रीति–रिवाज के कई चित्र खींचे हैं । 'मय्यादास की माड़ी' में स्थानीय प्रथा के अनुसार जिसकी शादी होती है, उसे एक घेरे में खड़े साँड (दुबे) को घूँसे मार–मार कर गिराना पड़ता है । जो मारकर उस दुबे को गिरा देता है, उसे यह माना जाता है कि वह अपनी होनेवाली औरत को अपने काबू में रख सकेगा । कुछ दृश्य देखिए –

"दायरा बंद करो । इसे बाहर निकलने दो" फिर कल्ले को संबोधन करते हुए बालमुकुन्द बोला – "अब दूल्हे की बारी है । चल मझले ।"[२३६] रोशनलाल ने चिल्लाते हुए कहा ।मझला अपनी पूरी ताकात के साथ दुबे के पीठ पर घूँसा मारने लगा । दुबे काढ के पुतले सा गोल दायरे में खड़ा था, परंतु उस पर इतने घूंसे पड़ चुके थे कि वह अपने आप को सँभाल न सका और तड़ से बाएँ बाजू गिर पड़ा – उसका पेट धोंकनी की तरह चल रहा था, फूल सिकुड़ रहा था, अब बिलकुल स्थिर हो गया ।

"हो गई रीति हो गई रीति ।" सभी एक साथ चिल्लाए । "तू तो छिपा रुस्तम है, ओए ।" बालमुकुन्द ने दूल्हे की पीठ थपथपाते हुए कहा – "तेरे में सचमुच बड़ा दम है । घरवाली को काबू में रखेगा ।"[२३७]

इसी तरह एक दृश्य उस समय का जब भाग–सुदी विधवा हो गई थी । दृश्य प्रस्तुत है –

उसी शाम भाग सुदी दीवान राम लुमाया की ड्योढी में अपनी ससुराल की औरतों के बीच बैठी अपने बाल नुचवा रही थी

"हाय हाय मंगली

खा गई मंगली

छांतियाँ पीटती और लय–ताल में बैठा करती औरतें, बार–बार रुककर आगे को झुकती और भागसुद्धि के बाल नोचने लगती । कस्बे भर में बात फैल गई थी कि – कि भागसुद्धि 'मंगली' थी और मंगली औरतें पतियों को खा जाती है ।"[२३८]

"भगवानजी के सामने हम दोनों खड़े होंगे – तू मेरे माथे पर टीका लगाना, मैं तेरे माथे पर टीका लगाऊँगी – हाथजोड़ – यह फूल मेरे बालों में लगा दे । एक फूल तो हर औरत लगाती है, मेरा तो ब्याह हो रहा है । तू एक फूल मेरे बालों में लगा दे । अब तू मेरी माँग भर, आज से मैं तेरी घरवाली, तू मेरा घरवाला ।"[२३९]

इस तरह दिल्ली और पंजाब के आसपास सामाजिक कई रीति–रिवाजों एवं परंपराओं का प्रचलन हैं, जो आँचलिक वातावरण को सजीव रूप से प्रस्तुत करने में सक्षम है ।

❖ रहन–सहन और वेश भूषा :

साहनी ने अपने उपन्यासों में पंजाब एवं दिल्ली के आसपास के गाँवों एवं शहरी क्षेत्रों में रहनेवाले लोगों के रहन–सहन, वेश–भूषा आदि का वर्णन किया है ।

"हरनारायण का पुस्तैनी घर सराफों की चौड़ी गली लाँघ चुकने पर एक सँकरी गली में पड़ता था – और कस्बे की गलियों में प्रवेश करने का एक रास्ता यह भी था । गली के सिरे पर ऊँचा मेहराबदार फाटक था... छोटी–छोटी कोठरियाँ नीचे एक कोठरी ऊपर बनी थी । घर में हरनारायण उसकी विविध बेटी और बारह–तेरह साल की उसकी दोहती रहते थे ।"[२४०]

“यों भी कमरे के वातावरण में अलसाहट थी, विलास का भास मिलता था – सामने सोफा कुर्सी की पीठ पर सुषमा की साड़ी अस्त–व्यस्त सी पड़ी थी एक सोफे पर ग्रामोफोन रेकार्ड बिखरे पड़े थे – ड्रेसिंग टेबल भी था इस घर में पालतू बिल्ली भी होनी चाहिए ।”[२४१]

“साहनी ने ग्राम्य एवं शहरी लोगों के वेश–भूषा की झाँकी भी प्रस्तुत की है – “मोटी थोबड़ी नाक, धूप में सँवलाए चेहरे बड़ी–बड़ी लटकती मूँछे, नीचे पजामा ।।”[२४२]

“सैर–सपाटे की पोशाक नीचे नीकर और ऊपर सफेद कमीज–घुँघराले बाल उनकी गोरी गर्दन, उनके नाजुक से हाथ ।”[२४३]

“साँप कीसी छोटी–छोटी पैनी आँखे और फटीली मूँछे और घुटनों तक लम्बा खाकी कोट और सलवार और सिर पर पगडी–अगर हाथ में पतली छडी... ।”[२४४]

“क्या यहाँ के लोगों को तुमने ध्यान से देखा है – एक ही नस्ल के लोग हैं । नाक–नक्श सबके एक जैसे हैं – यहाँ के लोगों की आँखे ब्राउन रंग की है – एक तरह के नाक, होंठ ।”[२४५] इस प्रकार साहनी जी ने बालों के रहन–सहन, वेश–भूषा का बड़ा यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है ।

❖ *प्राकृतिक वातावरण :*

उपन्यास के अंतर्गत प्राकृतिक वातावरण का एक अलग विशेष महत्त्व रहता है । साहनी ने वातावरण की सृष्टि में प्राकृतिक उपादानों का प्रयोग निपुणता के साथ किया है । इनका प्रकृति–चित्रण बड़ा आह्लादक बन पड़ा है ।

“खेत–खलिहान देखलो, दूर खड़े पहाड़ देख लो, प्रकृति का सौंदर्य तो तथा जिसे प्रोफेस्साब प्रकृति का ‘मौन संगीत’ कहा करते थे । हवा में अभी से लाल मिट्टी की सोंघी–सोंघी गंध आने लगी थी । यहाँ छोटी–छोटी झांड़ियाँ थी

कीकर और पलाश के पेड़ थे, नीले आकाश का असीम वितान जो दूर–उत्तर पश्चिम में सैयदपुर की पहाड़ी पर झुका हुआ था – पगडंडियों का जाल भी साफ दिखाई दे रहा था – प्रोफेस्साब के मुँह से ये शब्द निकल जाते हैं –

आँखे जो कुछ देखती हैं, लब पे आ सकता नहीं,

महव ए हैरत हूँ कि दुनिया, क्या से क्या हो जाए है ।"[२४६]

"दिन के उजाले में शहर अघमरा सा पड़ा था, मानो उसे साँप सूंघ गया हो । मण्डी अभी भी जल रही थी – उसमें से उठनेवाले घुएँ से आसमान में कालिमा पुत रही थी, जब कि रात के वक्त आसमान लाल हो रहा था ।"[२४७]

"उस पहाड़ की तलहटी पर पानी के झरने हैं, और धन पेडों के झुरमुट हैं । जल के सोते नीचे तक पहुँचकर पहाड़ में फूटे हैं एक–एक मुखरित हो रहा था ।"[२४८]

कथावस्तु को रोचक एवं आकर्षक बनाने के लिए लेखक ने स्वाभाविक प्राकृतिक वातावरण का निर्माण किया है ।

❖ शहरी वातावरण : बदलते परिवेश :

साहनी ने अपने उपन्यासों में ग्राम्य अथवा आँचलिक वातावरण के साथ–साथ शहरी वातावरण का भी सूक्ष्मता एवं कुशलता से वर्णन किया है । उन्होंने अपने उपन्यासों में शहरी वातावरण का वास्तविक चित्रण किया है ।

वर्तमान युग में स्त्री घर की चार दिवारों से बाहर निकलकर शिक्षा एवं व्यवसाय में जुड़ गई है इसका वर्णन हमें 'कुंतो' उपन्यास में मिलता है – "लाहौर तो बहुत बड़ा शहर है, वहाँ तो अब लड़कियाँ भी कालिजों में पढ़ने लगी हैं – एक बार मैं बाल कटवाने एक हेयर–ड्रेसर की दूकान पर गया था । वहाँ एक ऐंग्लो इंडियन लड़की बाल बनाती थी ।"[२५०]

'शहरों के बदलते परिवेश का अध्ययन हम 'कड़ियाँ' उपन्यास में करते हैं – "महेन्द्र विचलित हो उठा । यह औरत, जो अभी–अभी यहाँ से होकर गई

है, यहीं क्यों सड़क पर चलनेवाली प्रत्येक स्त्री की स्वच्छ सरल, चमकती आँखों के पीछे अभिसरों की स्मृतियाँ बंद पड़ी रहती है, किसी को पता नहीं चल पाता कि उस स्त्री ने किस-किस के साथ छल किया है ।"[२५१]

"चलते-चलते ही बसंती ने घूमकर कहा – "जमुना जी में जाकर डूब मर, इधर नीचें गंदे पानी का ताल है, उसी में डुब मर, अपने दोस्त की घरवाली को उठाने आया है ।"[२५२]

शहरी परिवेश में तथाकथित समाज-सेवक और राजकीय कार्यकर स्वार्थ से भरे हुए हैं । यथा 'तमस' उपन्यास में वर्णन हुआ है –

"कुछ समझा कर शंकर यह हमारी देश-भक्ति का चिन्ह है । क्या गरीबों में काम करने जाओगे तो पतलून पहनकर जाओगे ? झाडू लेकर या खादी पहनकर जाते हो तो लोग तुम्हें अपना समझते हैं ।"[२५३]

इस प्रकार साहनी ने यह बताना चाहा है कि पाश्चात्य प्रभाव के कारण शहर की हवा गाँवों तक पहुँच गई है । विवाह और तलाक, पारिवारिक वातावरण एवं मोहभंग का चित्रण उनके उपन्यासों में मिलता है । साहनी के उपन्यासों में सामाजिक, राजनीतिक आदि हरेक क्षेत्र में बदलते परिवेश का यथा तथ्य वर्णन मिलता है ।

❖ मानसिक वातावरण :

मनोविज्ञान मन में उत्पन्न विकारों का अध्ययन करता है । मनुष्य के चेतन, अचेतन और अवचेतन मन की भ्रांतियों को खोलकर रख देता है । आधुनिक मनोविज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य के अधिकांश शारीरिक रोग और मानसिक विकास संवेगात्मक कारणों से होते हैं । कथा साहित्य का क्षेत्र विस्तृत है । आधुनिक जीवन की भागदौड़ के बीच जटिलतर होते जा रहें । जीवन की जितनी यथार्थ अभिव्यक्ति कथा-साहित्य में संभव है, उतनी अन्य किसी विधा में नहीं होती है । डॉ. मिथिलेश के शब्दों में "जन मन के

अश्रुहास, विवशता, सामर्थ्य, करुणा–निर्ममता, तनाव–तृप्ति, व्यर्थता अर्थवत्ता, अवसक्रियता तथा संवेदना भाव–बोध की सार्थकता से इसमें अभिव्यक्त है ।"[२५४] इन्हीं मनोवैज्ञानिक सूत्रों के आधार पर रचनाकार अपनी कृति को मनोवैज्ञानिक स्तर भी सूक्ष्मता से विश्लेषित करते हैं । साहनी ने अपने उपन्यासों में ऐसे अनेक स्थलों पर कलहपूर्ण, कुण्ठित एवं उन्मादी वातावरण की सृष्टि की है । जो इस प्रकार है –

"अंग्रेजों ने यह लड़ाई कूटनीति से जीती थी । सिक्ख सेना के दोनो झालार लालसिंह अंदर तेजसिंह और ही अंदर फिरंगियों से मिले हुए है – हर लड़ाई मात्र शक्ति का प्रदर्शन भी नहीं होती, हर लड़ाई एक संघर्ष होता है, जिसके साथ कहीं स्वार्थ तो कहीं हित और कहीं आदर्श जुड़े होते हैं ।"[२६५]

"घर लौटकर महेन्द्र देर तक पप्पू के बारे में सोचता रहा । घर का यह वातावरण बच्चे के लिए घातक सिद्ध हो रहा है । जिसकी माँ घर की चार दीवारी के बाहर न देख सकती है, वह क्या सिखेगा ? सभी ओरतें घर का काम करती हैं, बच्चों की और घरवाली की देखभाल भी करती, पर उनके दिमाग में धुंध नहीं छाई रहती ।"[२५६]

"चौधरी अपनी पत्नी के सर पर सामान लादे जा रा था और वह नीचे खड़ीं–खड़ी रोये जा रही थी । ओजारों का थैला रखते ही उसके घुटने बैठ गए मार डालो मुझे ? मुझसे नहीं उठेगा । तू नहीं उठायेगी तो यहाँ तेरा बाप सारा सामान उठाने आएगा ।"[२५७]

इस तरह साहनी के उपन्यासों में मानसिक वातावरण की सफल एवं यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है

१७. भाषाशैली :

उपन्यास विराट चित्रफलक पर यथार्थ परिवेश में मानव–जीवन की अभिव्यक्ति है । वह मनुष्य की आंतरिकता का अन्वेषण है और मानवीयता की

प्रतिष्ठा तथा मानव–मूल्य की मर्यादा निश्चित करता है । वह मनुष्य की अंतर्निहित सामर्थ्य की पहचान है । वह मानव–जीवन के तथा विभिन्न सामाजिक संदर्भों के नए आयाम देता है ।[२५८]

अनुभूति की प्रामाणिकता एवं कथ्य की यथार्थता तभी अर्थवान हो सकती है, जब भाषा उन्हें बिना किसी अवरोध के गहराई में ले जा सके । स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास में शिल्प का अलग सा कोई रूप शेष नहीं रह गया है । महत्त्व कथ्य का मानव परिस्थितियों का, यथार्थ परिवेश का और उसके परिप्रेक्ष्य में मनुष्य को देखने, उसकी आंतरिकता को स्पष्ट करने का है । जिसे भाषा की संवेदना नए धरातल पर प्रतिष्ठित करती है ।

भाषा–शैली का महत्त्व हम इस अध्याय की भूमिका में स्पष्ट कर चुके हैं । इसलिए हम साहनी के उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा–शैली पर सीधे विहंगावलोकन करेंगे ।

किसी भी उपन्यासकार की सफलता एवं कलात्मकता तभी मान सकते है कि उन्होंने अन्य भाषाओं के शब्दों को किस प्रकार अपनाया है और उसे अपनी भाषा की प्रकृति में किस प्रकार सँजोया है ।

❖ भीष्म साहनी के उपन्यासों में प्रर्युक्त भाषा–शैली :

साहनी के उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा का खड़ीबोली का मानक रूप नहीं मिलता, परंतु भाषा का सरल और सहज रूप प्रस्तुत करके, अपने मूल कथ्य और संवेदना तक सरलता से पहुँच सके हैं । उनके उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा शैली को हम अध्ययन की सुविधा के लिए दो अलग–अलग विभागों में विभाजित करके देखेंगे ।

(१) भाषा–पक्ष और

(२) शैली–पक्ष

❖ भाषा–पक्ष :

साहनी ने अपनी भाषा को सीधे जन–जीवन से उठाया है । उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों की यथार्थ पहचान प्रस्तुत कराने में पूर्णतया समर्थ है, किन्तु अपनी स्वाभाविकता के साथ ही उसमें असीम रचनात्मक साम्थर्य भी विद्यमान है । उन्होंने मुँहावरों, कहावतों, सूक्तियों और वैविध्यपूर्ण व्यंजक शब्दों से अपनी भाषा को समृद्ध और सार्थक बनाया है । यहाँ पर उनकी भाषा से सम्बद्ध इन्हीं कतिपय मुदों पर विचार करना हमारा अभीष्ट है ।

साहनी ने स्वाभाविकता, लाक्षणिकता, हास्य–व्यंग्य का मधुर पुट आदि आदर्श रूप को अपनाया है । वह उनकी कलादक्षता एवं सौंदर्य को स्पष्ट करता है । साहनी की भाषा के ये स्पष्ट रूप लक्षित होते हैं ।

साधारण बोल–चाल की भाषा :

साहनी के उपन्यासों में तद्‌भव एवं देशज शब्दो के साथ–साथ अंग्रेजी, उर्दू, अरबी, फारसी एवं कभी–कभी मिश्रित भारतीय भाषाओं के शब्दों का प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ है । इससे भाषा–सौंदर्य की शक्ति बढ़ी है ।

शब्दों का प्रयोग :

साहनी ने अपने उपन्यास में पूँजीपति, नौकर, महंत, किसान, मजदूर, पुलिस, नेता, समाज–सेवक जैसे विभिन्न समाज के पात्रों को स्थान दिया है । पात्रों के स्वर के अनुरूप शब्द एवं भाषा का प्रयोग करने में वे सिद्धहस्त कलाकार हैं । उनके उपन्यासों में ग्राम्य–परिवेश, शहरी–परिवेश एवं मिश्रित परिवेश को स्थान मिला है । इसीलिए उनके उपन्यासों में ग्राम्य–अँचल विशेष की भाषा एवं विविध भाषा शब्दों के तद्‌भव रूप और स्थानीय जनभाषा का रूप पाया जाता है । इस तथ्य की पुष्टि निम्नलिखित उद्धरणों से हो जाती है ।

तन–बदन, बेला–वक्त, ठाट–बाट, आड़े–तिरछे, लाड–प्यार, सुआमी–भरम, सज–धज, आरिया समाज, मदनिया, धंधा–बंधा, चूडियाँ–बूड़ियाँ, नाटक, धोती, टेढ़ी–मेढ़ी, साफ–सुथरा, सच्चा–झूठा, धर्म–करम, सुआमी–अता–पता, छिन्न–भिन्न अलग–अलग, काम–काज, अनरथ, चांडाल, ठारब, लच्छी, इकन्नी–दुअन्नी, दबी–कुचली, खटर–फटर, यथा, तड़क, लपका, छिनाक, तहमद, चुगद आदि ।

आँचलिक बोली के शब्द :

साहनी के उपन्यासों में आवश्यकतानुसार आँचलिक शब्दावली का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है । उनके उपन्यासों में प्रयुक्त बोलियों के कुछ शब्दों को देखा जा सकता है । उदाहरणार्थ :

धरम, परभाव, लहास, चुपड़ती, परेम, पठाने, थोबड़ा, वस्तर, डगेर, बहरे, ढंगरी, बहुरे, दुखेशी, कपड़ेलते, अनरथ, छाता, रजा, हून्या, सास्तरार्थ, मेह, खेद, भूत–परेत, तुई कोटीश, आसून, मन्सा, आनबो, लिवा, दुरगत आदि हैं ।

अरबी शब्द :

अरबी शब्द हिन्दी–भाषा के साथ ऐसे हिल–मिल गये हैं कि उनका प्रयोग सहज ही हो जाता है । साहनी के उपन्यासों में भी कुछ प्रचलित अरबी शब्दों का प्रयोग आवश्यक हुआ है । जैसे –

जाहिल, मुआयना, कब्ज, दीवान, मिल्कयत, अजाब, तफरीह, रियासत, हिमाक्त, तवारीख, कानूनगा, नमकहलाल, मुवंशी, तहमीद, गदर, निजारत, मजार, मोहताज, मुतालबा, फोक, तालीम, तौहीन, हुलाल, अमानत, लूकसा हजाजत, मुकर्रर, मरतबा, तकसीम, रहम, कयाम, ऐबी–बंल्दियत, सूरखाब, दीन, एहतियात, शका, नकाब, उसूल, इल्म आदि हैं ।

फारसी शब्द :

गुस्ताखी, सरगना, खानसामा, नालिश, बंदापखर, नुमाइदा, हरजाई, बेतकल्लूफी, कारिदा, जौहर, पैगम्बर, सब्जबाग, पनाह, कलपाई, हमवार, सौदागर, फरेब, शाहजादा आदि हैं ।

अंग्रेजी शब्द :

साहनी एवं जाकिर हुसेन कॉलेज दिल्ली में अंग्रेजी के प्राध्यापक थे । इसी कारण उनके उपन्यासों में अंग्रेजी शब्दों का होना स्वाभाविक है, परंतु यहाँ पर एक बात हम सविशेष रूप से उल्लेखित करेंगे कि अंग्रेजी में उन्होंने शिक्षा–दीक्षा प्राप्त की थी, प्राध्यापक थे । इसलिए अपनी रचनाओं में अंग्रेजी का खुलकर प्रयोग करते हैं, ऐसा नहीं है । उन्होंने स्थिति की स्वाभाविकता बनाए रखने के लिए अंग्रेजी भाषा के शब्दों और वाक्यों का प्रयोग किया है । उदाहरण के लिए निम्नलिखित शब्दों को देखा जा सकता है ।

लेम्प, मैनेजर, स्कूल, नेकटाई, ब्लेजर, हिस्टीरिया, लारहमैन, सैन्डल, कैरियर, केशियर, प्रमोशन, डारमिट्री, मेट्रन, कैम्प, हैल्प, ओफिसर, रिफ्युजी, म्युनिसिपल, कमेटी, बट, नाट, राइट, ट्रंक, ड्रेसिंग, थैंक यू, बिल, डार्लिंग, मार्की, नेपकीन, टेबल, क्राटियर गोल्डन, सूटकेश, ग्रामोफोन, क्रासिंग, सिग्नल, फाउन्टेनपेन, क्रीम आदि हैं ।

'मय्यादास की माड़ी' में अंग्रेजी शब्दो, प्रयुक्त भाषा–कौशलता का आदर्श उदाहरण है –

"हैलोहेनरी" चबूतरी पर से उतरते हुए दीवान बोला "See as it of the Indian not have not you ? their lines.... "[२५६]

पंजाबी शब्द :

साहनी के उपन्यासों में आवश्यकतानुसार पंजाबी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है । कुछ उदाहरण प्रस्तुत है –

उड़ी–उड़ी, जावा, डॉटे थे, खावो नाल, मांजी, रवाणा, रखदागे, शारुकार, दंदगुलबन्द, माये, पुवर, गुरोरी, सौंदगुराद आदि ।

कुछ गीतों के माध्यम से भी साहनी ने आह्लादक ढंग से अपनी भाषा के रचना कौशल्य का परिचय दिया है ।

'झरोखे' उपन्यास के अंतर्गत मोतीराम के बारहमासा जब माँ अपने छोटे बेटे को सुनाती है । तब पंजाबी भाषा के शब्दों का गीत क्लात्मक ढंग से प्रस्तुत हुआ है । जैसे –

"इस माया दा झण न करिए, माया काय बंदेरेदा,
पिल बिच आके छिन बिच जावे,
सेर करे चोफेरे दा... ।।"[२६०]

इसी प्रकार रल्वा, भणां, चानणां, विच, कदीयाणा, वेदणी, वेदणा, खुराका, रविश, परोदा, मुआ, पंगी, कराडा, सुण, कडंढ, साहिब आदि शब्दों का सशक्त ढंग से प्रयोग हुए है ।

उर्दू शब्द :

उर्दू शब्दों का प्रयोग भी अपने उपन्यासों में लालित्य पैदा करने के लिए किया है । कुछ प्रयुक्त शब्द उदाहरणार्थ –

नजूमी, हुक्का, शुक्रगुजार, शरबत, कब्रिस्तान, नमाज, मयल, दिलासा, पेशाब, रोशनी, सलामत, इम्तहान, बुत, लहज, बल्गीर, नमदार, तमाशा, गरीबनवाज, तकिया, कलाम, महेरबान, गहीन, इन्तर्जा, लज्जत, बुर्जुगवार, बुगुनाह, मजलिस, बाखरर, मशवरा, मुजाहिद, मुराद, नेकबरज, पर्दाफाश, तजवीज, तौहीन, जालिम, दूरअंदेश, तजवीन, कुतुबमीनार, खुमारी, खबरदार, कपास, नमूदार, कारदार, जानशन, हैवतनाक, गबन, मुसाफिर, ताजादम, मरजाणी, अहवाल, फबेगी, खुशनसीब, हिमाकत, आदि हैं ।

साहनी ने उर्दू के कुछ शेर भी प्रयुक्त किये हैं । 'तमस' उपन्यास का यह शेर हम देख सकते हैं । उदाहरणार्थ –

"मुल्ला, मियाँ, मिशालची, तीनों एक समान,
लोका नूं दस्सण चाणना आप हतो जाण ।।"[२६१]

❖ साहित्यिक परिष्कृत भाषा :

भाषा में विलक्षणता और विभिन्न गुणों की स्थापना के लिए लेखक ने तत्सम्, तद्भव और ग्रामीण शब्दों का भी बखूबी इस्तेमाल बड़ी सहजता, सरलता के साथ किया है । भाषा भावों की संवाहिनी होती है । एक सफल कथाकार यह सदैव ध्यान में रखता है कि भाषा इतनी सरल हो कि मूल भाव–संवेदन पाठक के हृदयगत कर सके । कथाकार साहनी ने अपने उपन्यासों में यह ध्यान रखा है, जो उनके विचारों, भावों और उद्देश्य को स्पष्ट करने में सफल सिद्ध हुए हैं ।

" 'मय्यादास की माड़ी' का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है –

"दिन के उज्जाले में शहर अधमरा सा पड़ा था । मानो उसे साँप सूंघ गया हो । मण्डी अभी जल रही थी, म्युनिसिपैल के फायर ब्रिग्रेड ने उसके साथ जूझना कब का छोड़ दिया था । उसमें उठनेवाले धुएँ से आसमान ने कालिमा पुत रही थीं, रात के वक्त आसमान लाल हो रहा था । सत्रह दूकाने जलकर राख हो चूकी थी ।"[२६२]

"कन्हैया थे । वही मुकुट पर मोरपंख, होठो पर बाँसुरी, नीलवर्ण, झील की लहरों पर बंसी बजा रहे थे, और थिरक–थिरक कर नाच रहे थे । पतली कमर होठों पर दैवी मुस्कान रुकमणि को देख–देखकर ही जैसे मुस्करा रहे थे, उसी को जैसे रिझाने अपना रूप दिखाने चले आए थे । उसका मन हुआ वह उठ खड़ी हो और स्वयं नाचती हुई उनसे जा मिले । ब्रह्मांड के विराट नृत्य में लीन हो जाए ।"[२६३]

❖ तत्सम् शब्द एवं वाक्यांश :

शब्दों एवं साहनी के उपन्यासों में तत्सम्, अर्द्ध तत्सम् वाक्याशों का सुंदर एवं सफल प्रयोग हुआ है । साहनी संस्कृत के भी अच्छे जानकार हैं । उनकी हिन्दी–संस्कृत की शिक्षा घर पर हुई थी । उनका संस्कृत पर भी उतना ही अधिकार हैं, जितना अन्य भाषाओं पर उपन्यासों में प्रयुक्त कुछ श्लोकों को देखा जा सकता है ।

"पोशोष्य एवं चेति मध्याभ्याम् नमः
नित्य र्स्वगत्ः स्याराचलोयं सनोतन्
इत्यनामि काम्यान् नमः दृश्य में पार्थ
नू पाणि शत रोच सहस्त्रर्शः इति
कनिष्ठ काभ्याम् नमः ।"[२६४]

"शूरोडसि कृत विघोडसि दर्शनीयों सि पुत्रक
यस्मिन कुले त्वमुत्यत्रः सिहस्नव्र न इन्दते"[२६५]

"ॐ धो शान्ति पृथ्वी, शान्तिरायः
शान्तिरौषधयः शान्ति वनस्पतिः"[२६६]

अपने विचारों की संपुष्टि–हेतु साहनी ने इन श्लोकों का प्रयोग किया है ।

❖ भाषा की लाक्षणिकता :

साहनी ने अपनी भाषा को सीधे जन–जीवन से उठाया है । उनके द्वारा रचित उपन्यासों की प्रयुक्त भाषा विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों की यथार्थ पहचान प्रस्तुत कराने में पूर्णतया समर्थ हैं किन्तु अपनी स्वाभाविकता के साथ ही उसमें असीम रचनात्मक सामर्थ्य भी विद्यमान है । उन्होंने मुहावरों, कहावतों, सूक्तियों और वैविध्यपूर्ण व्यंजक शब्दों से अपनी भाषा को समृद्ध एवं सार्थक बनाया है ।

यहाँ पर उनकी भाषा से समृद्ध इन्हीं कतिपय मुद्दों पर विचार करना हमारा अभीष्ट है ।

(१) मुहावरें :

साहनी ने अपने उपन्यास की भाषा को प्राणवान बनाने के लिए मुहावरों का आवश्यकतानुसार प्रयोगकिया है । साहनी के उपन्यास में प्रयुक्त मुहावरें उनके अर्थ संप्रेषण की क्षमता को बढ़ाते हैं । उनके मुहावरें जीवन के सभी क्षेत्रों और समाज की सभी श्रेणियों से लिए हुए हैं । उनके द्वारा प्रयुक्त किए गए कुछ मुहावरें नीचे दिए जा रहे हैं । यथा –

तुम्हारी न रन्न–न–कन्न, दिल बैठ जाना, काठ मार जावा, पानीअपानी होना, मुँह में ऊँगली दबाना, आपे से बाहर होना, पत्थर की लकीर होना, घोड़े बेचकर सोना, दाल में काला होना, अक्कल का दुश्मन, ओखली में सिर देना, खुशामदी टट्टू, फूला नहीं समाना, गुलछरें उडाना, टाँग अडाना, हाथ मतले रह जाना, रंगे हाथ पकडँ जाना, टेढ़ी खीर, लुटिया डुबोना, रोम–रोम पुलकित हो उठना, लोटपोट होना, दिल टूट जाना, आँखों में खून उतर आना, न तीन में न तेरह में, मुँह में कालिख लगना, रोटियाँ तोड़ा, चेहरा पीला पड़ना, मुँह ताकना न घर देखा न वह, टाँगों में पानी भर आना, मनके लडडू खाना, अश–अश करना, ड़ेरा डालना, धक–धक होने लगना, न हूँ न ही, अमन–अमान होना, न काम न काज इत्यादि हैं ।

(२) कहावतें :

कहावतें लोकानुभूति का प्रमाण होती हैं । ये मानव की मौखिक संपति हैं । कहावतों में जीवन सत्य बड़ी खूबी से प्रकट होता है । कहवातों में भावों की गंभीरता और मार्मिकता अधिक गहरी होती है । उसमें गागर में सागर भरने की क्षमता होती है । साहनी ने अपने उपन्यासों मं कहावतों का बड़ा सार्थक

प्रयोग किया है । उपन्यासों में प्रयुक्त कहावतों का बड़ा सार्थक प्रयोग किया है । उपन्यासों में प्रयुक्त कुछ कहावतें निम्नलिखित हैं ।

नदी में रहकर मगर से बैर करना, जैसी करनी वैसी भरनी, जितना गुड डालोगे उतना ही मीठा होगा, अपनी चादर देखकर पैर फैलाओं, भगवान के घर देर है अंधेर नहीं, अपनी गली में कुता भी शेर, देर आया दुरुस्त आया इस हाथ दें उस हाथ ले, कच्चा चिट्टा खोलना, कलेजा, टूकटूक होना, खाक छानना, जान बच्ची लाखो पाए, पल में मसा पल में तोला, ढौंक के तीन पात, सिर पर सवार होना, शैतान के कान कतरना, सहज पके सो मीठा होय, न दीन के रहे न जहान के आदि हैं ।

(३) सूक्तियाँ :

साहनी ने अपने उपन्यास साहित्य में अपने जीवनगत निष्कर्षों को सूक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है । साहनी की सूक्तियों ने उनकी शैली में और भी जान डाल दी है । इन सूक्तियों में उनका चिन्तन, उनकी कल्पना और अनुभव स्पष्ट हो उठता है । जीवन के मार्मिक तथ्यों का ऐसा मनोहारी उदभावनादक्ष उपन्यासकार की तुलिका से ही संभव हो सकता है । उनकी सूक्तियाँ अनुभव-निष्कर्षो पर आधारित होने के कारण अत्यंत प्रभावी और प्रेरक हैं । उनकी सूक्तियों के कुछ उदाहरण दृष्टव्य है –

- पत्थर पर भी बूँद-बूँद पानी गिरे, तो कटने लगता है । (कड़ियाँ ६०)
- इन्सान के बहुत से फैसले उसकी तात्कालिक परिस्थितियाँ करती है (बसंती-१५२)
- एक-एक दंगा राष्ट्र के शरीर पर गहरा जख्म है । (तमस-११६)
- भाग्य सबसे बड़ा हकीम है । (तमस-१४८)
- कंचन आग में तपकर सोना बनता है । (झरोखे-७६)

- जीवन में त्रासदी इस बात में नहीं होती कि हम किसी को खो देते है । (कड़ियाँ–४०)
- त्रासदी इसमें होती है कि खो चुकने के बाद हम उसे पहचान पाते हैं । (कड़ियाँ–४५)
- इन्सान का शरीर भूखा नहीं होता, भूखी तो उसकी आत्मा होती है । (बसंती–७८)
- तालीम इन्सान का जेवर होता है । (तमस–१६०)
- जिसमें मोह होता है उसी पर सबसे ज्यादा गुस्सा आता है । (बसंती–१६)
- उल्लू नहीं बैठेगा तो उस घर पर क्या तोता मैना बैठेगी । (तमस–१६)
- नसीब पलकें बिठाए राह नहीं देखती । (कुंतो–३६)
- दुःखी आदमी की जगह दुःखी आदमियों के बीच ही होती है । (कुंतो–३१६)
- हमें भी तो अपना भाग्य की मिल रहा है (कुंतो ३१७)
- जिंदगी जमीन के ऊपर है उससे दुगुना जमीन के नीचे है । (मय्यादास की माड़ी, पृ. ११)
- सभी साफ मालिक के दरगाह में होते हैं (मय्यादा की माड़ी, पृ. ११)
- नौजवान लड़की आगे होती है, आग (कुंतो पृ. ५६)

❖ हास्य–व्यंग्य :

हास्य और व्यंग्य के संबंध में बालेन्दु शेखर तिवारी का कहना है हास्य और व्यंग्य दोनो विसंगति की संताने हैं । हास्य का जन्म पहले हुआ है, इसलिए व्यंग्य की अग्रजो है ।

हास्य में गहरे अनुभव की जरुरत होती है ।[२६७]

साहनी के उपन्यासों में हास–परिहास एवं व्यंग्य के भी कुछ पुट हैं । इस कला में भी भीष्म जी माहिर हैं । साहनी ने अपने उपन्यास साहित्य को एक ओर हास–परिहास की रसिकता से सजाया है तो दूसरीऔर समाज के पाखंड ढोंग एवं विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्टाचार पर कस कर व्यंग्य प्रहार किया है ।

'मय्यादास की माड़ी' में प्रयुक्त संवाद मजाक के साथ पाखंड पर कटाक्ष किया गया है ।

"पहले बताओं माड़ी में क्या करने गया था ।"

"तुम्हें पुरोहितायन की सौगन्ध, सच बताना ।"

"जल्दी होगा, दीवानजी राम भली करेंगे ।"

"लड़की गोरी है या काली ।"

"ऊँची है या मजदूरी "मीठी है या नमकीन ।"[२६८]

'बसंती' उपन्यास में विवाहिता दीनू के साथ बसंती चूपकी दी से भगवान जी के सामने शादी कर लेते हैं । दोनों आपस में हँसी मजाक करते हैं । जैसे –

"तूने लड़के को देखा हैं ?" बसंती बोली ।

"कौन से लड़के को ?"

"अरे, दूल्हे को जिसकी शादी हो रही है ।" "नहीं तो !"

मैंने देखा है । तेरे से कुछ मिलता है – तेरे जैसा ही मरियल सा है, पीला–पीला और बड़ी–बड़ी आँखें हैं, उल्लू की आँखों जैसी ।

"तेरे लिए खाना लाऊँ ?" जूठन के टोकरे की ओर इशारा करते हुए बसंती ने कहा ।"

"एक झाँपट दूंगा तेरे मुँह पर । ये बड़े–बड़े दाँत सब बाहर निकल आएँगे ।"

और जवाब में मैं एक झाँपड दूँगी, तो तेरे सारे दाँत पेट के अंदर पहुँच जाएँगे ।" (बसंती पृ. ६३)

❖ शैली–पक्ष :

शैली शब्द की व्युत्पति संस्कृत के 'शील' (शील) से मानी जाती है । शील के अनेक अर्थ है – स्वभाव, लक्षण, झूकाव, आदत, चरित्र आदि ।

साहनी एक अनोखे शब्द–शिल्पी हैं । उनकी भाषा–शैली के वे बहुत चर्चित रहे हैं । उनकी लेखनी में एक प्रकार का जादू है, अतः उनको कलम का जादूगर कहा जाता है । शैली की दृष्टि से उनकी रचनाएँ समृद्ध हैं । जिस प्रकार उनके विचारों में विविधता है, अनेक रूप है, उसी प्रकार इनका शिल्प–विधान का गुलदस्ता भी विविध रूप–रंगों से सजा हुआ है । लिखने में उनकी शैली उछल–कूदकर फूदकनेवाली है ।

वास्तव में साहनी जनता के लेखक थे । अतः वे सरल और सुबोध शैली में लिखा करते हैं । उनकी भाषा की सरलता शैली की प्रांजलता और भावों की गंभीरता से कोई भी पाठक प्रभावित हो सकता है ।

शैली के संबंध में विस्तृत चर्चा इस अध्याय की प्रस्तावना में हम कर चुके हैं इसलिए अब हम साहनी के उपन्यासों में प्रयुक्त कुछ प्रमुख शैलियों की चर्चा करेंगे ।

उपन्यासकार साहनी के अपने उपन्यासों में विशेषरूप से इन शैलियों का प्रयोग देखने को मिलता है –

❖ वर्णनात्मक शैली :

वर्णनात्मक शैली के द्वारा लेखक के अपेक्षाकृत विषय–विस्तार के लिए अधिक भूमिका मिल जाती हैं । उपन्यास की शैली विशेष रूप से वर्णनात्मक होती है । विस्तार के अनुकूल वर्णनों की प्रधानता देश–काल का सुन्दर चित्र तो उपस्थित करती है, रस, भाव और संवेदना की सृष्टि में भी सहायक सिद्ध होती

हैं । शिल्प की दृष्टि से देखा जाय तो 'वर्णन' कथानक के उन तत्त्वों को हटाता है या जोड़ता है, जिनकी तत्कालीन आवश्यकता समाप्त हो जाती है ।

साहनी के अधिकतर उपन्यासों में इसी शैली का प्रयोग हुआ है । 'तमस' उपन्यास में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है, देखिए –

"शंकर ने तीर छोड़ दिया । आम तौर पर शंकर इस ढंग से लगाकर बात नहीं करता था । मुँहफट आदमी था, जली–कटी मुँह पर सुनाता था । मेहताजी छोटी हस्ती नहीं थे । कुल मिलाकर सोलह बरस जेलों में काटकर आए थे । इसके एवज में महेता जी सेठी को चुनावों में काँग्रेस को टिकिट मिलने वाली है ।"[२६९]

'कुंतो' उपन्यास का उदाहरण – "दोपहर को वे लोग, बड़े वृक्ष से कुछ दूर, छोटे से पहाड़ी नाले के किनारे खेलते रहे थे । वहाँ पर इन लोगों के अलावा दिलीप भी था । पहाड़ी के दामन में झरने ही झरने थे और शीतल छायावाले घने घने, ऊँचे–ऊँचे पेड़ ।"[२७०]

" 'मय्यादास का माड़ी' की ये पंक्तियाँ "बरसो बरस इसी तरह बीत गये थे । स्कूल के आँगन के चारों और अब पक्की दीवार बन चुकी थी । जहाँ खाट पर बैठकर वे भजन गाया करते थे ।"[२७१] ये सारे उदाहरण वर्णनात्मक शैली के उदाहरण हैं ।

❖ मनोविश्लेषणात्मक शैली :

इस शैली के अंतर्गत पात्रों के मानसिक अंतः द्वंद्वों के चित्र प्रस्तुत करने के लिए भावात्मक रूप से प्रयोग किए जाते हैं 'झरोखे' उपन्यास में मनोविश्लेषण शैली का सुन्दर प्रयोग हुआ है ।

'वैद्य जी कभी पढ़ाते हैं, कभी नहीं पढ़ाते । मुझे तो वक्त ही नहीं मिलता फिर मानों अपने आपसे बातें करता हुआ कहे जाता है । देवकी को मैं

छोड़ जाऊँगा । अपने लिए दो रोटियाँ सेंक लिया करूँगा । फिर शायद पढ़ पाऊँगा ।"[२७२]

'बसंती' उपन्यास में बसती को ब्याह कर लाने बुलाकी का मनोविश्लेषण इस तरह से प्रकट हुआ है – "मैं कहूँ बसंती रानी आयेगी, एकदिन जरुर आयेगी... बिरादरी के सभी मर्द कहते हैं उस पर हुक्म चलायेगा अपना अधिकार दिखादेगा । पर यह तो उसके तलवे सहला रहा है ।"[२७३] इस प्रकार के प्रसंगों द्वारा लेखक ने पात्रों की मानसिक गुत्थियों को खोलने का प्रयत्न किया है ।

❖ **स्मरण शैली :**

इस शैली का प्रयोग कर लेखक पात्र विशेष के दोहरे मनोभावों के प्रवाह सरलता से दिखाता है । अतीत से जीता हुआ पात्र न केवल उन भावनाओं और विचारों का विश्लेषण करता चलता है, जिनका तत्काल संबंध परिस्थिति से था, बल्कि भावना का भी आरोप करता है । जिसका उस परिस्थिति को पुनः सोचते हुए तो यह होना स्वभाविक है । पात्र की स्मृति में कुछ घटनाओं को दिखाकर उसकी याद को ताजा करने के लिए इस शैली का प्रयोग किया जाता है ।

हिन्दी उपन्यासों में विशेषतः 'शेखर एक जीवनी', 'त्यागपत्र', 'कल्याणी' आदि में इस शैली का सफल प्रयोग हुआ है । साहनी के उपन्यासों में भी इसका प्रयोग हुआ है ।

"माड़ी की पिछली कहानी अतीत के धुंधलके में खोयी हुई है । कस्बे में तरह–तरह की कहानियाँ भी माड़ी को लेकर प्रचलित है । जैसे–जैसे अमलदारी टलती गयी या माड़ी के अंदर बसनेवाला भाग्य बदलता गया... ।।"[२७४]

❖ सांकेतिक शैली :

सांकेतिक शैली द्वारा पात्रों के स्वभाव आदि विशेषताओं को संकेतों के द्वारा दिखाया जाता है । 'मय्यादास की माड़ी' में इसका प्रयोग देखिए – "फल्ला, दहलीज पर खड़ा धीमे–धीमे मुस्करा रहा था । उसके पीले चेहरे पर पसीने की परत थी, पर उसकी आँखों में हल्की सी चमक भी थी । मानो सकनो के मिल जाने पर उसकी आंखों में यह चमक आ गयी हो । उसके होठों के एक कोने में लार बह–बहकर उसके बायें कन्धे पर गिर रही थी ... ।"[२७५]

❖ रेखाचित्र शैली :

साहनी ने अपने उपन्यासों में पात्रों को सजीव व्यक्तित्व होने के लिए इस शैली को अपनाया है । इस शैली में पात्रों के आधार–प्रकार, रूप–रंग, व्यवहार को चित्रित किया जाता है । इसमें पात्रों का बाहय आकार–प्रकार व्यक्तित्व साकार हो उठता है । कुंतो उपन्यास में साहनी ने प्रोफेसर साहब का रेखाचित्र इस प्रकार किया है –

"प्रोफेसर साहब अनुभवी थे, जयदेव से लगभग सोलह वर्ष बड़े थे तीन बच्चों के बाप थे, जिन्दगी के बारे में गहरी जानकारी रखते थे, जो बात कहते उसमें बड़ा वजन होता । उसमें उनकी सूझ, उनके अनुभव, उनकी संतुलित दृष्टि और उनके दार्शनिक सारतत्त्व झलकते थे ।"[२७६]

❖ भावात्मक शैली :

भावात्मक शैली में विषय–विकास मन के तद्नुकूल भाव दशा के अनुसार होता है । तभी पाठक लेखक और पात्रों के हृदय की सूक्ष्म भावनाओं को समझ सकता है । 'कड़ियाँ' उपन्यास की प्रमिला एक गृहस्थ महिला है । उसकी मनोव्यथा का सूक्ष्म चित्रण हुआ है – "नहीं, प्रमिला, इसमें कुछ भी बुरा नहीं हैं, तुम मेरी पत्नी हो तो हो.. नहीं जी बस यह बेशर्मी है, मैंने कह दिया ।

मुझे हाथ नहीं लगाना । तुम गंदी किताबे पढ़ते रहते हो, इसलिए ऐसा करते हो ।"[२७७]

❖ कथोपकथन प्रधान शैली :

संवादों का मुख्य उद्देश्य पात्रों के स्वभाव का विश्लेषण करना घटनाओं को आगे बढ़ाना और उनमें सजीवता उत्पन्न करना माना जाता है । वर्णनों के लगातार चलने से कथा एक जीवन–चरित्र का सा रूप धारण कर लेती है । संवाद–कथा में गति उत्पन्न कर, इस ऊब को दूर करने में सफल रहते हैं । साहनी के अधिकांश उपन्यासों में इस शैली का प्रयोग हुआ है कुछ उदाहरण –

'कुंतो' उपन्यास में जयदेव और सुषमा के बीच सशक्त संवाद शैली का प्रयोग हुआ है –

"तुम कब आए, भइया ?"

"साहलिक पर बैठे तुम दाएँ–बाएँ देखते ही नहीं हो ?"

तुम कहाँ थी ?

"मंदिर के सामनेवाला, चौक लाँध रही थी ।"

"मुझे बुलाया क्यों नहीं ?"

"ऐसे ही"[२७८]

❖ तर्क प्रधान शैली :

इस प्रकार की शैली में दर्शन एवं चिंतन की प्रधानता होती है । इस शैली के माध्यम से जटिलता और गंभीरता आ जाती है । जैसे 'तमस' उपन्यास में कालिज के दो चपरासी के माध्यम से हमारे सामने कुछ तर्क उपस्थित होता है –

"हम जाहिल लोग लड़ते हैं, समझदार खानदानी लोग नहीं लड़ते । यहाँ सभी आए है, हिन्दू भी, सिख भी, मुसलमान भी, मगर कैसे प्यार–मुहब्बत से बातें कर रहे हैं ।"[२७६]

'तमस' उपन्यास का यह उदाहरण पूर्णतः चिंतन से भरा हुआ है । जैसे प्लेटो ने ठीक ही कहा है कि "जब विचार को तात्विक रूपाकार दिया जाता है तो शैली का उदय होता है ।"[२८०] उदाहरण दृष्टव्य है –

"हमारा अंग्रेज ने क्या बिगाड़ा है ओये ? हिन्दू–मुसलमान की अदावत पुराने जमाने से चली आ रही है । काफिर काफिर है और जब तक दीत पर ईमान नहीं लायेगा वह दुश्मन है । काफिर को मारना सवाब हो ।"

"राज किसका है ?"

"अंग्रेज का है और किसका है ।"

"तो अगर वह लड़ाई रोकना चाहे तो रोक नहीं सकता ?"

"रोक सकता है, पर वह हमारे मजहबी मामलों में नहीं पड़ता ।"

"मतलब, कि हम एक–दूसरे का सिर काटे और वह मजहबी मामला कहकर तमाशा देखता रहे फिर वह हाकिम कैसा हुआ ?"[२८१]

निष्कर्षतः साहनी की भाषा–शैली अत्यंत प्रभावशाली कही जा सकती है । एक सच्चा कलाकार अपने लक्ष्य तक पहुँचने की खोज करता है, नये रास्ते बनाते वहाँ तक पहुंचने के कला अंत नहीं है – अंत तो है गहराई, कला एक सहारा है, एक तरीका है संवेदना तक पहुँचने का कला कला को लिए नहीं है । कला लक्ष्य नहीं है । कला सांधन है, उस खोज की ।[२८२] लम्बे अर्से से लिखते रहने के कारण साहनी ने मुहावरों, कहावतों, प्रतीकों, बोध सूक्तियों, व्यंग्य एवं शब्दों के लाक्षणिक प्रयोग द्वारा अपनी भाषा–शैली को बोधगम्य और प्रभावपूर्ण बनाया है । सहजता प्रवाहमयता भावानुरूपता, धारावाहिकता सरलता एवं पत्रानुकूलता आदि उनकी भाषा के गुण कहे जा सकते हैं । इनके उपन्यासों में परिस्थितिनुसार भावपूर्ण स्थलों पर भावात्मक शैली, घटना

वर्णन में सरल कथात्मक शैली, हास्य के प्रसंग पर हास्यपूर्ण शैली, दर्शन–चिंतन के समय पर तर्कप्रधान शैली का समावेश मिलता है । इनकी भाषा–शैली में विभिन्न देशज शब्दों के साथ अंग्रेजी भाषा का भी सफल प्रयोग देखने को मिलता है । साथ ही उसमें निरसता नहीं बल्कि माधुर्य, लालित्य एवं काव्यात्मकता भी है । साहनी का कलाकार के रूप में यही दायित्व है कि भाषा शैली के माध्यम से पात्र की संवेदना, लेखकीय संवेदना एवं पाठक की संवेदना तीनों की सवेदना का संगम करके, रचनाकार के रूप में अपना दायित्व पूर्णरूप से निभाया है । इसलिए हम कह सकते हैं कि साहनी सिद्धहस्त कलाकार हैं । शिल्प सौष्ठव की दृष्टि से इनके उपन्यास सफल कहे जा सकते है ।

१८. उद्देश्य :

"समाज से प्रेरित प्रत्येक साहित्यकार अथवा उपन्यासकार अपने क्षेत्र में कृतियों की रचना–हेतु किसी न किसी उद्देश्य के साथ अवतरित होता है । उसके जीवन का लक्ष्य अपनी कृति में ही केन्द्रित हो जता है । उपन्यास उसके विचारों का यथार्थ बिंब है । वह ब्रह्मा की तरह अपने संसार का सृष्टा ही नहीं, अपनी साहित्य–सृष्टि में लीन रहनेवाला प्राणी भी है । उपन्यास कैसा भी क्यों न हो, वह समाज एवं मानव–जीवन के किसी न किसी मार्मिक सत्य का चित्र प्रस्तुत करता है । कारण कि कथाकार उस दार्शनिक विचारक की भाँति है, जो नग्न सत्य तथा गंभीर जीवन–दर्शन का प्रतिपादक है ।"[२८३]

साहित्य मानव जीवन का दर्पण है । उपन्यास में मानव–जीवन के विविध पहलुओं को देखने–परखने की सोद्देश्य चेष्टा की जाती है ।

अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि कोई भी उपन्यास निरुद्देश्य नहीं होता । उपन्यास साश्वत है, उपन्यासकार का जीवन चिरंतन है, उसका उद्देश्य भी अजर–अमर है । वह मानव–जीवन की समस्याओं को विविध रूपों में रंगकर समाज तथा जग के सम्मुख प्रस्तुत करता है ।

❖ उपन्यास में उद्‌देश्य का महत्त्व :

उपन्यास के उद्‌देश्य में मानव–समाज का हित समाविष्ट है । उपन्यास में मानव–समाज की मौलिक प्रवृत्तियों और विभिन्न शाश्वत समस्याओं का पर्दाफाश एवं उनके समाधान का चित्रण है ।

डॉ. प्रतापनारायण टंडन के शब्दों में आज उपन्यास को केवल एक मनोरंजन के साधन के रूप में ही पाठक ग्रहण और स्वीकार नहीं करना चाहते । वे एक प्रखर और स्पष्ट जीवन–दर्शन की माँग कहते हैं ।"[२८४]

क्षेमेन्द्र 'सुमन' के शब्दों में "उपन्यास का उद्‌देश्य मनोरंजन तो अवश्य है – उत्कृष्ट उपन्यास तो वही है जो किसी न किसी विशिष्ट उद्‌देश्य का प्रतिपादन करते है, और जीवन की अपने दृष्टिकोण के अनुसार व्याख्या करते है ।"[२८५]

हेनरी जेम्स का कथन उद्‌देश्य के संबंध में महत्त्वपूर्ण है – "जीवन यथार्थ का चित्रण उपन्यास की सर्वोपरि विशेषता है, जिस पर अन्य सभी विशेषताएँ विवश बन निर्भर करती है ।"[२८६]

❖ साहनी के उपन्यासों के उद्‌देश्य–संदेश :

साहनी के उपन्यासों का मुख्य उद्‌देश्य मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और उसके द्वारा मानवमन के गहनतम स्तरों की, सूक्ष्म तलकी, अवचेतन मन की, बारिकी से व्यख्या की है । साहनी के उपन्यास बदलती परिस्थितियों को आत्मसात करते चलते हैं । स्थितियों के साथ–साथ बदलती मानसिकता को बहुत सहज रूप में इन उपन्यासों में देखा जा सकता है । भारतीय इतिहास में यह मूल्य संक्रमण का युग है । औद्योगिकरण ने जहाँ देश के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, वहाँ एक नई जीवन–दृष्टि को भी जन्म दिया । भौतिकता जीवन की सहज प्रवृत्ति बन गई । पूँजीवादी व्यवस्था में गरीब अधिक गरीब, अमीर अधिक अमीर होते चले गये । सुखलिप्सा की दौड में नैतिक मूल्य बूरी तरह

कुचल गये । मूल्यहीनता के संकट ने सारी मानवता को ग्रस लिया । राजनीतिक अशृंखलता ने स्थितियों को और भी भीषण बना दिया । राजनीति स्वार्थ–सिद्धि का साधन बन गई । मुट्ठी भर लोगों ने जीवन की सारी सुविधा को हथिया लिया और आम आदमी के हाथ निराशा लगी तथा एक अंतहीन अभावग्रस्तता इन परिवर्तित स्थितियों ने उपन्यासकार की संवेदना को झकझोर दिया । उसे यह सब असह्य हो उठा । इसीलिए साहनी के उपन्यासों में आम आदमी की पीड़ा का सटीक अंकन हुआ है । विकृतियों के विरुद्ध आक्रोश का स्वर एक सामान्य विषय बन गया है ।

साहनी एक दायित्ववान रचनाकार हैं । उन्होंने अपनी प्रामाणिक अनुभूति को ही साहित्य का उपजीव्य बनाया है । समाज की अन्यान्य समस्यायें उनकी रचनाओं के वस्तु तत्त्व के रूप में निरुपित हुई हैं । सामाजिक विषयवस्तु के अतिरिक्त मध्यवर्ग के खोखलापन, आर्थिक अभावों से उपजी अमानवीयता, मतवादी कट्टरता, विवाहित स्त्री की समस्याएँ, अनैतिक संबंधों की समस्या, विधवा–स्त्री–समस्याएँ, वैश्या–जीवन की समस्याएँ, वृद्धों की समस्याएँ, सौत की समस्या, नौकर–मजदूर की समस्या, शोषकवर्ग की दयनीयता, महानगरीय जीवन की त्रासदी, अँधी क्रूर सांप्रदायिकता, उपोगितावादी युग में मूल्यों की निरर्थकता एवं वर्ग की समस्याओं का निदान देखने को मिलता है ।

अब हम आगे साहनी के उपन्यासों में निरुपित उद्देश्य को क्रमानुसार देखेंगे ।

'झरोखे' उपन्यास में साहनी ने एक छोटे से बालक की आँखों से एक परिवार में घटनेवाली छोटी घटनाओं और उसका अविस्मरणीय प्रयोग किया है । बच्चों के समक्ष घटनेवाली प्रत्येक घटना चाहे जितनी क्षणिक और साधारण हो संस्कारों के रूप में उसका महत्त्व असाधारण होता है । उसके सामने घटनेवाली प्रत्येक घटना उसके कोमल मानस पर गहरा असर करती है ।

साहनी ने इस उपन्यास में धार्मिक आडंबरों, मिथ्याआदर्श, झूठे सिद्धांतों और रुढि–परिपाटियों के विरुद्ध एक गैर सांप्रदायिक सामाजिक दृष्टिकोण की खोज की है । उनके अपने शब्दों में "जिंदगी पर के कुछेक 'झरोखे' लगता है, अपने हाथों से खोल खड़ा हूँ क्यों जीवन की गतिविधि को सूत्र बद्ध करनेवाले कोई तंतु हुआ भी करते हैं या नियमितता की भूखी हमारी कल्पना ही उन्हें कोई सुसंगत रूप देने की चेष्टा करती रहती है ।"[२९७]

'झरोखे' उपन्यास में बाल मनोविज्ञान के परिस्थितिगत विकास की भूमिका यथार्थ है । साहनी ने छोटे बच्चों के कोमल मन का मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया है । जैसे पिताजी कहते हैं "हजार बार मना किया कि बच्चों के सामने विराग के गीत नहीं गाया पर तू ऐसी हुडमत है कि मानती ही नहीं – ये निराशा के गीत हैं, बच्चों को अच्छे–अच्छे गीत सुनाने चाहिए इनके कान में वेद मंत्र पढ़ने चाहिए-बच्चों के दिल पर बुरा असर पड़ता है ।"[२९८]

सामाजिक परिवेश में जीवित और व्यावहारिक मान्यताओं का विश्लेषण किया गया है । हमारे नैतिक–बोध–धर्म पर किस तरह हावी होते है । बाह्य आडंबर के चले व्यक्ति वास्तविक सामाजिक गुणों से वंचित हो जाता है । घर के प्रत्येक सदस्यों के बीच होनेवाली हर गतिविधि पर बच्चे की नज़र रहती है । जैसे – "बलदेव की माँ थोड़ा दही भेज दो, मैं नहा लूं – देखो स्वामी जी किसी से नहीं डरते थे, शेर से भी नहीं, चिते से भी नहीं ।"[२९९]

मध्यमवर्गीय परिवार में अनुशासन इतना हावी होता है कि शायद कुंठा और मार्बिडता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । माँ–बाप और बच्चों को विद्या–शिक्षा देनेवाले पंडित धर्म, योग, ब्रह्मचर्य के बहाने उनकी मानसिकता में कुठाराघात करते हैं । जैसे "हमारे पंडितजी कहते हैं स्त्रियों के चेहरे की ओर देखना पाप होता है – पर तुम तो स्त्री नहीं हो । तुम तो लड़की हो ।"

इस प्रकार किसी भी बालक को ज्यादा धर्मभीरु बनाने का परिणाम यह होता है कि बालक के मन में औरतों के प्रति, लिंग के प्रति घृणा और भय पैदा हो जाता है ।

साहनी ने इस उपन्यास में निम्न और मध्यमवर्गीय परिवेश को सशक्त ढंग से अभिव्यक्त किया है । गरीब–गरीब ही रह जाता है और अमीर आगे बढ़ता जाता है । बालक तुलसी के बहाने उस पूँजीवादी मानसिकता का चित्रण प्रस्तुत हुआ है – जैसे "तू दिनभर सेरों पर चढ़ा रहता है और तेरे साथ तुलसी भी निकम्मा हो रहा है – यह खाता बहुत है – ये लोग गंदे बहुत होते है ।"[२६०] पूँजीपतियों का गरीबों के प्रति अमानुषी व्यवहार की पोल साहनीने खोल दी है । जैसे "पढ़–लिख जायेगा तो तुलसी क्या बेंक में मेनेजर बन जाएगा ? यह वर्तन ही माँजेगा और क्या करेगा ? उसे जैसा है वेसा ही रहने दो । क्यो इस की जिन्दगी बर्बाद करते हो ।"[२६१] यह है वर्गीय मानसिकता । उच्च वर्ग उसके प्रति करुणा या सहानुभूति से कुछ नहीं करता । इस वर्ग की करुणा और सहानुभूति भी छंद्म होती है ।

साहनी ने इस उपन्यास में अमीर–गरीब शोषक के बीच स्पष्ट विभाजक रेखा खींची है । तुलसी के माता–पिता उन्हें प्यार तो करते हैं परंतु हर वक्त इस बात का एहसास होता रहता है कि तुलसी गरीब है, नौकर है । जिसे न पढ़ने का अधिकार है और न बलदेव की तरह घूमने और खेलने कूदने का । जैसे तुलसी की माँ कहती है – "घंटा भर से यहाँ बैठा किताब पढ़ मर रहा है और इसे ढूँढ–ढूँढ कर मेरी टाँगे टूट गई है । ... नौकरों को पढ़ाई से क्या मतलब ? जो पढ़–मरना था तो यहाँ क्यों आया ?"[२६२] साहनी ने अशिक्षा और उसका परिणाम–निदान किया है ।

साहनी ने अन्य उपन्यासों की भांति इस उपन्यास में भी सांप्रदायिक संकीर्णता को संवेदनशील धरातल पर व्यक्त किया है । हिन्दू परिवार के लोग

मुसलमान बच्चों से अपने बच्चो को दूर रखते हैं क्योंकि उन्हें मुसलमान मलेच्छ लगते हैं । साहनी सूक्ष्म दृष्टा हैं । इस उपन्यास में दोनो धर्मावलंबी हिन्दू और मुसलमान अपनी कुंठाओ के शिकार हैं । इन विकृतियों का चित्रण माँ अपने बेटे को पंजाबी गीत सुनाती है ।

'कड़ियाँ' उपन्यास सामाजिक और पारिवारिक उपन्यास है । यह उपन्यास पति–पत्नी और प्रेमिका के अंतः संबंधों को लेकर लिखा गया है । इस उपन्यास का घटना स्थल दिल्ली है । दिल्ली जैसे बड़े महानगर में त्रिकोणीय प्रेम के फलने–फूलने के लिए उपयुक्त वातावरण सर्वत्र व्याप्त है । "कड़ियाँ" उपन्यास के प्रथम पक्ष में महेन्द्र, द्वारा प्रमिला को बूरी तरह से प्रताडित किया जाता है । उपन्यास के सभी पात्र मिलकर भी प्रमिला के परिवार को टूटने से नहीं बचा पाते । दूसरे पक्ष में प्रमिला स्वयं संघर्ष करती है । इस उपन्यास की कथावस्तु मानवीय संबंधों के टूटते–जूड़ते रिश्तों पर आधारित है ।

शहरी परिवेश में मध्यमवर्गीय परिवार ने पाश्चात्य सभ्यता के अनुकरण में अपने परंपरागत नैतिक मूल्यों को उखाड़ फेका है । जिसका परिणाम यह हुआ है कि कुंठा, संत्रास, त्रासदी, संघर्ष आदि मनोविकारग्रस्त वृत्तियों में मनुष्य पिसता चला जा रहा है । यह विसंगतियाँ ऐसी है, जिसका न तो उसके पास कोई हल है, न तो कोई समाधान । विवाहित पुरुष महेन्द्र जब भी अपनी ओफिस की केशियर सुषमा को उनके घर पर मिलने जाता है, तब सुषमा कहती है – "मैं तुम्हें किसी से छीन तो नहीं रही हूँ – मैं तुमसे कुछ नहीं माँगती महेन्द्र । केवल कभी–कभी तुम्हारे साथ दो घड़ियाँ बिताना चाहती हूँ इसमें किसी को क्या एतराज होना चाहिए ?"[२६२]

साहनी ने इस बात को बड़े सूक्ष्म ढंग से पकड़ने की कोसिस की है कि पाश्चात्य विचारों का अंधानुकरण मनुष्य के लिए खतरे के रूप में है । जैसे विवाहित महेन्द्र सोचता है – "मैं परहेज करुँ । मैंने कुछ भी बुरा नहीं किया

है । ये मेरे संस्कार है, जो मुझे परेशान कर रहे हैं । जवानी के पाँच–सात साल बाकी रह गए हैं, और जिन बातों में मेरा विश्वास नहीं है, उनसे मैं चिपटा नहीं रहूँगा जहाँ से मिलेगा लूँगा ।"[२६४] जैसे प्रमिला महेन्द्र को कहती है – "नहीं जी बस यह बेशर्मी है, मैंने कह दिया । मुझे अब हाथ नहीं लगाना गंदी किताबे पढ़ते रहते हो इसीलिए ऐसा करते हो ।"[२६५] महेन्द्र सुषमा के प्रति अधिक आकृष्ट होकर प्रमिला को तलाक देना चाहता है 'मैं तुम्हारे साथ नहीं रह सकता, यह शादी भूल थी । मैंने फैसला कर लिया ।"[२६६]

साहनी ने प्रस्तुत उपन्यास में स्त्री का दायित्व बोध भी स्पष्ट किया है कि पुरुष अपनी पत्नी को छोड़कर अन्य स्त्री के पास जाता है तो थोड़े बहुत अंश में पत्नी भी जिम्मेदार होती है । महेन्द्र के ये शब्द इसी युग की सच्चाई है – "औरतों पर बहुत कुछ निर्भर करता है, प्रमिला । औरत चाहे तो मर्द को अपनी मुट्ठी में रख सकती है और सच कहू प्रमिला, मर्द मुट्ठी में रहना चाहता है ।"[२६७] साहनी ने प्रमिला को जिस वातावरण में प्रस्तुत किया है उससे प्रकट होता है कि नारी में अपार धैर्य होता है वह सहनशीलता की प्रतिमूर्ति है । जैसे प्रमिला कहती है –

"मैं क्या जानूँ संतो–बच्चे बड़े होंगे तो क्या कहेंगे ? रुखी–सुखी खिलाकर पाल लूँगी ।"[२६८]

'कड़ियाँ' उपन्यास पर टिप्पणी करते हुए राजेश्वर सक्सेना ने ठीक ही कहा है – "कड़ियाँ उपन्यास मध्यमवर्गीय संस्कार और संवेदन का संघर्ष है – महेन्द्र अपने भीतर की हीनताओं को तोड़ डालता है ।"[२२९] साहनी के शब्दों में "एक अनुभव है जों पुराने लोगों का है और उसके आधार पर सीख देते हैं – पर स्त्री से प्रेम न तो नया अनुभव है, न नई समस्या है, न नई स्थिति है । सहस्त्रो वर्षो से ऐसा होता आया है, उस काल में भी जब पुराने मूल्य

टूट रहे थे और नये मूल्य मनुष्य के मन पर अपना अधिकार जमाने लगे थे ।"[३००]

'तमस' उन्यास साहनी का बहुत चर्चित उपन्यास रहा है । उद्‍देश्य की दृष्टि से 'तमस' उपन्यास में हमें एक साथ कई उद्‍देश्य मिलते हैं । काल विस्तार की दृष्टि से यह केवल पाँच दिनों की कहानी है लेकिन इन पाँच ही दिनों की कथा में जो प्रसंग-संदर्भ और जो निष्कर्ष उभरते हैं, उनके कारण यह पाँच दिनों की कथा ६० वर्षों की कथा हो जाती है । इस उपन्यास की कथा जाति-प्रेम, धर्म, संस्कृति, परंपरा, इतिहास और राजनीति जैसे संकल्पनाओं की आड़ में शिकार खेलनेवाली प्रतिगामी शक्तियों के दुःसाहस भरे जोखिमों का खुलासा पेश करती है ।

'तमस' उपन्यास के उद्‍देश्य को हम तीन भेदों के अंतर्गत विभक्त करके देख सकते हैं –

(१) सांप्रदायिक तनाव का चित्रण :

'तमस' उपन्यास लिखने का प्रथम उद्‍देश्य रहा है – 'सांप्रदायिक तनाव का चित्रण । भारत-विभाजन से पूर्व और पश्चात् व्याप्त सांप्रदायिक तनाव की परिस्थितियाँ और घटनाओं को दोहराना नहीं है । उन भयानक परिस्थितियों से अवगत कराना है, जिनसे होकर हमारा देश देख चुका है । 'तमस' में व्यक्त सांप्रदायिकता की प्रासंगिकता के विषय में डॉ. प्रेमकुमार ने लिखा है " 'तमस' नया टोनिक या व्यायाम नहीं है, पर एक बीमारी सी, उसकी भयंकरता से, अच्छी तरह परिचित कराते हुए सावधान करने का प्रयत्न अवश्य है ।"[३०१]

सांप्रदायिकता के शिकार अधिकांशतः गरीब-वर्ग के असहाय लोग ही हुए हैं । जो अमीर और समुद्र वर्ग है वह सांप्रदायिक दंगो से साफ बचा है । 'तमस' में सांप्रदायिक तनाव से सर्जित वातावरण को पढ़कर पाठक के रोंगटे खड़े हो जाते हैं । नत्थू चमार की विवशता और गरीबी का लाभ उठाकर

मुरादअली उससे एक सुअर मरवाता है जो बाद में मस्जिद के सामने पाया जाता है । मुसलमान भड़क उठते हैं, वे एक गाय की हत्या कर देते हैं । और इस तरह पूरे शहर में दंगे–फासद शुरु हो जाते हैं । शहर में दंगे फैलाने में डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड का भी हाथ है । लीजा कुतूहलवश रिचर्ड से पूछती है कि यदि १०३ गाँव जल जायें तो भी क्या आप भावुक नही होंगे ? तो रिचर्ड उत्तर देता हुआ कहता है – "तो भी नहीं... यह मेरा देश है नहीं ये मेरे देश के लोग हैं – सिविल सर्विस हमें तटस्थ बना देती है ।"[३०२]

मीरदाद जब मुसलमानों से कहता है कि हम लोगों को आपस में मिलकर रहना चाहिए, अंग्रेज हमें लड़वाता है । तब एक तरफ से आवाज़ आती है – "ओ चुप ओये अंग्रेज किसने देखा है ? शहर में कितने मुसलमान हलाल हुए हैं – मस्जिद के सामने सूअर फैंका है, वह भी अंग्रेज फेंक गया है ओये ?"[३०३]

मोटे कसाई ने कहा – "हमारा अंग्रेज ने क्या बिगाडा है ओये ? हिन्दू–मुसलमान की अदावत पुराने जमाने से चली आ रही है ।काफिर काफिर है – काफिर को मारना सवाब है ।"[३०४]

यहाँ पर साहनी ने स्पष्ट किया है कि मुट्ठी भर लोग अपने निजी स्वार्थ के लिए हिन्दू–मुसलमानों में धार्मिक विद्वेष फैलाकर अपने स्वार्थ की पूर्ति करते हैं ।

(२) राजनीति में फैले भ्रष्टाचार का चित्रण :

साहनी का अन्य महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है राजनीतिक भ्रष्टाचार का चित्रण । रिचर्ड ऐसा शासक है, जो भारत में दंगे–फसाद करवाकर चुपचाप रोम के क्रूर शासक की भाँति सहर्ष तमाशा देखता है । रिचर्ड कहता है कि – "अगर प्रजा आपस में लड़े तो शासक को किस बात का खतरा हो सकता है – लडाओ

और राज करो ।"[३०५] दंगे–फसाद हो जाने के बाद सर्वेक्षण करते हुए देवदत कहता है "दोनो ओर के गरीब कितने । अमीर कितने मरे । इससे भी तुम्हें कई बातों का पता चलेगा ।"[३०६] बहुत सीधे–सादे ढंग से राजकीय परिवेश की भ्रष्टता का पता चल जाता है । समाज–सेवा के नाम प्रभात फेरी का आयोजन महज एक खिलवाड बनकर रह गया है । इस प्रकार अंग्रेज सरकार और उससे मिले कुछ हिन्दुस्तानी तथा कांग्रेसी सदस्य, मुस्लिम लीग के लोगों के कुरूप चेहेरों को लेखक ने बेनकाब कर दिया है ।

(३) धार्मिक अंधविशवास का चित्रण :

साहनी ने विवेच्य उपन्यास में स्थान–स्थान पर अंधविश्वास का भी चित्रण किया है । यह धार्मिक अंधविश्वास नहीं है तो और क्या है कि एक सूअर की लास मस्जिद के सामने देखकर मुसलमानों ने एक गाय की हत्या कर दी । यहाँ लगता है जैसे आदमी के लिए धर्म सब–कुछ है और जीवन मूल्य कुछ नहीं । दूसरी ओर समाज में फैले अन्य कितने ही अंधविश्वासों का चित्रण मिलता है – जैसे नत्थू के प्रसंग में देखा जा सकता है – कुछ कदम आगे बढ़ने पर उसके पैर को ठोकर लगी – एक घर के सामने कोई औरत 'टोना' कर गयी थी । नत्थू ने अपशुकन समझा आमतौर पर ये दोनों बच्चों पर से ग्रह टालने के लिए किये जाते है... ।"[३०७]

"मुहल्ले में मनचले लड़के टूटे घड़े में गोबर और गाय–घोड़े का मूत्र इकट्टा करके किसी मूजी के घर की ड्योढ़ी पर फेंक आये थे । इसे बारिश बुलाने का सगुन माना जाता था ।"[३०८]

इस प्रकार 'तमस' उपन्यास का उद्‌देश्य पाठक के मनमस्तिष्क पर इसका प्रभाव एक लंबे समय तक बना रहता है ।

साहनी ने जहाँ अपनी धरती के लोगों के चेहरे से पर्दा उठाया है, वहीं अंग्रेजों की नीति को पूरी तरह से उजागर किया है । जैसे बहादुर हिन्दुस्तानियों के प्रति क्या सोचता है । इसकी मानसिकता का वर्णन – "इन हिन्दुस्तानियों का कोई भरोसा नहीं, कब कोई इन्हें बरगला ले, पीछले बीस साल से हम इन्हें बर बरगला ही तो रहे हैं । कभी इनके हाकिमों को बरगलाओं साहूकारों को बरगलाओं खूब बरगलाओं ।"[३०९]

अंग्रेजी हकूमत बड़ी जालिमशाही थी । जैसे "एक किसान औरत बीस सेर गेहूँ की बोरी सिर पर उठाए हुए थी बेचेगी तो ले लूँगा पर इसे लेकर बदले में तुम्हें भी कुछ लेना होगा – दीवानजी, यह व्यापार है ।"[३१०]

इस प्रकार इस उपन्यास का उद्देश्य तत्कालीन राजनीतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में अंग्रेजी हकूमत की तबाही एवं कूटनीति का चित्रण करना ही प्रधान लक्ष्य रहा है ।

'कुंतो' उपन्यास की कथा का आधार लाहौर शहर है । यह उपन्यास स्वतंत्र भारत की युगीन परिस्थितियाँ, परिवेश का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है ।

साहनी, जयदेव और सुषमा के माध्यम से उस प्रेम–प्रसंग की चर्चा करते हैं जो बचपन में साथ–साथ हँसते–खेलते उपजते हैं और धीरे–धीरे मन में अपना स्थायी प्रभाव छोड़ता जाता है । जिन्दगी की कडवी सच्चाई को समझाते हुए प्रोफेसर साब कहते हैं – "इन्सान जिस ओर अपनी वृत्तियों को मोड़े वे मुड जाती हैं मुख्य बात सही समझ की है, विवेक की सही द्रष्टि की मनुष्य की वृत्तियों के ऊपर उसका विवेक होता है होना चाहिए ।"[३११]

आलोच्य उपन्यास में प्रेम का मर्म स्थापित किया गया है कि यह तो एक कच्चा धागा है, एक बार टूटने के बाद फिर जुड़ नहीं पाता । समग्र विश्व प्रेम

के धागे से बंधा हुआ है और यह एक भीतर की ऊर्जा है । प्रोफेसर साहेब के शब्दों में "मैं वृत्तियों को दबाने का समर्थन नहीं करता पर मैं उनका बेशक अनुसरण करने के खिलाफ हूँ ।"[३१२]

साहनी ने अपने अन्य उपन्यासों की तरह नारी–मन का मनोविश्लेषण किया है । नारी का दृश्य पुरुषों की तुलना में अधिक संवेदनशील होता है । नारी महोबत को कभी ठुकरा ही नहीं सकता । जैसे कुंतो कहती है – "मैं इससे जो प्रेम करती हूँ क्या इसे रिझाने के लिए ? मैं इससे प्रेम करूँ ताकि यह मुझे ठुकराए नहीं ? अगर मेरा प्रेम इसके दिल को नहीं छूता तो क्या बन–सँवरकर आने पर छूने लगेगा ? ऐसे तो वेश्याएँ ग्राहकों के पास जाती है ।"[३१३] लेखक ने स्पष्ट किया है कि सेक्स मनुष्य के लिए निन्दनीय नहीं परंतु विकृतियाँ निंदनीय हैं । जयदेव, सहदेव से कहता है – "सेक्स से बड़ी शांति मिलती है । अंदर की सारी छटपटाहट शांति हो जाती है – दुनिया में क्या सबसे सुन्दर स्त्री ही है । संसार में स्त्री ही नहीं तो संसार कितना सूना–सूना लगेगा ।"[३१४]

निष्कर्षतः साहनी ने समाज की अनेक बुराइयों को अत्यधिक निकट से देखा है और पाठकों को देखने के लिए बाध्य भी किया है । सामाजिक रुढ़ियों का खंडन निम्न तथा मध्यवर्गीय जीवन की परेशानियों, समस्याओं तथा उनके जीवन के नग्न सत्य का चित्रण, मानव–जीवन की उलझने एवं यौन–कुंठाओं आदि का पूर्ण अनुभव प्राप्त करने के बाद ही उन्होंने लेखनी उठाई है । इनके उपन्यासों में व्यक्ति–हित तथा समाज–मंगल के भावों का गंगा–यमुना का संगम हमें देखने को मिलता है । मानव–जीवन और उसके पूर्ण परिवेश से ही उन्होंने सामग्री–ग्रहण की है । प्रेमचंद के पश्चात् निम्न तथा मध्यमवर्ग का जितना सफल चित्रण साहनी के उपन्यासों में हुआ है, वैसा प्रेमचंदोतर हिन्दी

उपन्यास–साहित्य के किसी अन्य उपन्यासकार की हृत्तियों में मिलना संभव नहीं है ।

"हमारे जीवन में रोज ही छोटी–छोटी बाते आती है – हमारा खाना–पीना, उल्लास, प्रेम, हँसी, निराशा, कुण्ठा, राग–द्वेष, संघर्ष और संकल्प हमारी जीत व हार । इन्हीं बातों से हमारा जीवन रुचिकर है । ये सारी बातें हमें जीन का एहसास दिलाती है । भीष्म जी की रचनाएँ भी उन्हीं की तरह हमें जीवित रहने का एहसास कराती है । हमें सुखी एवं तृप्त करती है, हमें समाज से जोड़ती है ।"[३१५] यही कुछ साहनी का उद्देश्य बोध एवं संदेश है ।

निर्मल वर्मा के शब्दों में "भीष्म साहनी के साहित्यिक जीवन की अद्भुत विशेषता थी जरुरी के दबाव तले, समय के तकाजों को झेलते हुए, अनेक भूमिकाएँ संपन्न करते रहना । एक पुराने मुहावरे का सहारा ले तो कह सकते है कि ऐसे लेखक थे जिन्होंने सात घाटों का पानी पिया था ।"[३१६]

संदर्भ–संकेत :

क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ क्रमांक
१	अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य	प्रकाशचंद्र मिश्र	२४०
२	मानवीकी पारिभाषिक कोश	सं. नगेन्द्र	२४२५
३	हिन्दी शब्द सागर	सं. श्याम सुन्दरदास	४७
४	हिन्दी–उर्दू उपन्यास बलदेव परिप्रेक्ष्य	डॉ. प्रेम भटनागर	६
५	हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास	डॉ. ओम शुक्ल	१७
६	कहानी : रचना विधा	जगन्नाथ शर्मा	४३
७	कथायात्रा	डॉ. कृष्णदेव शर्मा	७
८	काव्य रूप	गुलाबराय	१६८
९	कहानी कुंज	सं. डॉ. उमाकान्त शास्त्री	४
१०	कथायात्रा	डॉ. कृष्णदेव शर्मा	६
११	हिन्दी कहानिों का विवेचन	डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा	५०
१२	पहला पाठ	भीष्म साहनी	६
१३	कथापात्र	डॉ. कृष्णदेव शर्मा	६
१४	कहानी का रचना विधान	डॉ. जगन्नाथ शर्मा	६०
१५	निशाचर	भीष्म साहनी	१४०
१६	वाङ्चू	भीष्म साहनी	११८
१७	पाली	भीष्म साहनी	१५९
१८	वाङ्चू	भीष्म साहनी	१७३
१९	पाली	भीष्म साहनी	९९
२०	निशाचर	भीष्म साहनी	३७
२१	भाग्यरेखा	भीष्म साहनी	८४

२२	भटकती रेखा	भीष्म साहनी	१७७
२३	वाङ्चू	भीष्म साहनी	४६
२४	सोसायटी	आर. एम. मेकवर	३४२
		सी. एच. पे	३४७
२५	भारतीय मध्यवर्ग	डॉ. श्याम घोष	१०
२६	भाग्यरेखा	भीष्म साहनी	१२०
२७	भटकती राख	भीष्म साहनी	११५
२८	पहला पाठ	भीष्म साहनी	६५
२९	भटकती राख	भीष्म साहनी	१६०
३०	पहला पाठ	भीष्म साहनी	१०
३१	भटकती राख	भीष्म साहनी	१८३
३२	भाग्यरेखा	भीष्म साहनी	१३
३३	भाग्यरेखा	भीष्म साहनी	१२२
३४	पहला पाठ	भीष्म साहनी	२३
३५	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	७०
३६	निशाचर	भीष्म साहनी	१३३
३७	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	५७
३८	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	६१
३९	वाङ्चू	भीष्म साहनी	५३
४०	वाङ्चू	भीष्म साहनी	५४
४१	निशाचर	भीष्म साहनी	१६२
४२	भटकती राख	भीष्म साहनी	४५
४३	आक्सफोर्ड इलस्ट्रेड डिक्सनरी	सी. एस. पेज	१७९
४४	हिन्दी साहित्य कोश	सं. धीरेन्द्र वर्मा	४९

४५	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	८१
४६	भटकती राख	भीष्म साहनी	८६
४७	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१५७
४८	यज्ञदत शर्मा के उपन्यासों में मध्यमवर्ग	डॉ. संगीता गुप्ता	१३५-१३६
४९	भाग्यरेखा	भीष्म साहनी	८४
५०	कहानी और कहानीकार	मोहनलाल जिज्ञासु	२८
५१	साहित्य विवेचन	क्षेमचंद्र सुमन	२१०-२११
५२	काव्य के रूप	गुलाबराय	२०२
५३	कथाश्री	डॉ. विजयपालसिंह	१९-२०
५४	कहानी रचना विधान	डॉ. देवेन्द्र शर्मा	१३०
५५	कथायात्रा	डॉ. कृष्णदेव शर्मा	८
५६	पहला पाठ	भीष्म साहनी	१२
५७	भटकती राख	भीष्म साहनी	११
५८	भटकती राख	भीष्म साहनी	८१
५९	भटकती राख	भीष्म साहनी	१४२
६०	वाङ्चू	भीष्म साहनी	४४
६१	वाङ्चू	भीष्म साहनी	५२
६२	भटकती राख	भीष्म साहनी	१५
६३	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	३२
६४	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	८१
६५	निशाचर	भीष्म साहनी	१३२
६६	पहला पाठ	भीष्म साहनी	१९
६७	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	६२

६८	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१२८
६९	भटकती रेखा	भीष्म साहनी	८२
७०	भटकती रेखा	भीष्म साहनी	१०
७१	भटकती रेखा	भीष्म साहनी	१७
७२	भटकती रेखा	भीष्म साहनी	५१
७३	वाड्चू	भीष्म साहनी	१३५
७४	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	७५
७५	भटकती राख	भीष्म साहनी	६२
७६	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	११
७७	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१५६
७८	भटकती राख	भीष्म साहनी भीष्म साहनी	१६२
७९	वाड्चू	भीष्म साहनी	४६
८०	भटकती राख	भीष्म साहनी	४६
८१	भटकती राख	भीष्म साहनी	२५
८२	भटकती राख	भीष्म साहनी	१७६
८३	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१५३
८४	काव्यरूप	गुलाबराय	१०२
८५	हिन्दी कहानियों का विवेचन	ब्रह्मदत्त शर्मा	५३
८६	कथायात्रा	डॉ. कृष्णदेव शर्मा	१०
८७	ए. मेन्युल ओफ सोर्ट स्टोरी आर्ट	ए.एम. ग्लेन क्लार्क	७२
८८	साहित्य विवेचन	क्षेमचंद्र 'सुमन'	२१२
८९	साहित्य शास्त्र	डॉ. नवनीत गोस्वामी	८४

९०	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी	सं. डॉ. रामकुमार गुप्ता	३५
९१	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी	सं. डॉ. रामकुमार गुप्ता	३८
९२	पहला पाठ	भीष्म साहनी	६
९३	पहला पाठ	भीष्म साहनी	२४
९४	पहला पाठ	भीष्म साहनी	२८
९५	पहला पाठ	भीष्म साहनी	४१
९६	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	११३
९७	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	३१
९८	पाली	भीष्म साहनी	१०६
९९	निशाचर	भीष्म साहनी	१३
१००	निशाचर	भीष्म साहनी	१३८
१०१	निशाचर	भीष्म साहनी	१५६
१०२	पहला पाठ	भीष्म साहनी	७७
१०३	पहला पाठ	भीष्म साहनी	४४
१०४	शोभायात्रा	भीष्म साहनी	२६
१०५	पाली	भीष्म साहनी	१२
१०६	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	६
१०७	पहला पाठ	भीष्म साहनी	४५
१०८	पहला पाठ	भीष्म साहनी	८४
१०९	हिन्दी कहानी : एक नई दृष्टि	इन्द्रनाथ मदान	११५
११०	भटकती राख	भीष्म साहनी	५१
१११	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१२८

११२	भटकती राख	भीष्म साहनी	८५
११३	वाङ्चू	भीष्म साहनी	१०३
११४	समकालीन कहानी : युग–बोध का संदर्भ	डॉ. पुष्पाल सिंह	१२०
११५	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१३
११६	वाङ्चू	भीष्म साहनी	१३६
११७	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१४
११८	साहित्य लोचन	बाबू श्याम सुन्दरदास	१६३
११९	भाषा और संवेदना	डॉ. रामप्रसाद चतुर्वेदी	२००
१२०	भारतीय काव्य समीक्षा	डॉ. नगेन्द्र	३६
१२१	हिन्दी साहित्य का इतिहास	आ. नंददुलारे वाजपेय	१३०
१२२	आधुनिक साहित्य	शिवदानसिंह चौहान	१७६
१२३	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	बाबूश्याम सुन्दरदास	६८
१२४	साहित्य लोचन	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	१६३
१२५	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	सं. नामवरसिंह	१६३
१२६	सारिका अप्रैल १९७३	विवेक द्विवेदी	३३
१२७	भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य	भीष्म साहनी	२६६
१२८	पहला पाठ	भीष्म साहनी	१४
१२९	भटकती राख	भीष्म साहनी	१७२
१३०	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१४
१३१	वाङ्चू	भीष्म साहनी	१५२
१३२	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१५५
१३३	पहला पाठ	भीष्म साहनी	७०
१३४	पहला पाठ	भीष्म साहनी	९४

१३५	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१३
१३६	पहला पाठ	भीष्म साहनी	१३
१३७	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१३०
१३८	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१३
१३९	पहला पाठ	भीष्म साहनी	७२
१४०	भटकती राख	भीष्म साहनी	१७
१४१	पहला पाठ	भीष्म साहनी	११
१४२	भटकती राख	भीष्म साहनी	१६२
१४३	पट्टीरयाँ	भीष्म साहनी	७६
१४४	वाड्चू	भीष्म साहनी	३३
१४५	पट्टीरयाँ	भीष्म साहनी	१३७
१४६	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	२७
१४७	भटकती राख	भीष्म साहनी	१४
१४८	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१७
१४९	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	८७
१५०	वाड्चू	भीष्म साहनी	१५८
१५१	भटकती राख	भीष्म साहनी	१६२
१५२	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१२७
१५३	पहला पाठ	भीष्म साहनी	१३०
१५४	भटकती राख	भीष्म साहनी	१७०
१५५	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१५४
१५६	निशाचर	भीष्म साहनी	१६५
१५७	वाड्चू	भीष्म साहनी	४०
१५८	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१०

१५९	भटकती राख	भीष्म साहनी	१४
१६०	पट्टरियां	भीष्म साहनी	८४
१६१	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१७
१६२	शैली विज्ञान	भोलानाथ तिवारी	६
१६३	वाङ्चू	भीष्म साहनी	४६
१६४	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	८६
१६५	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१२
१६६	भटकती राख	भीष्म साहनी	७५
१६७	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	१२४
१६८	पट्टरियाँ	भीष्म साहनी	१७३
१६९	भटकती राख	भीष्म साहनी	९
१७०	वाङ्चू	भीष्म साहनी	६९
१७१	वाङ्चू	भीष्म साहनी	१६९
१७२	वाङ्चू	भीष्म साहनी	१४९
१७३	हिन्दी कहानी : एवं अंतरंग	उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	२५०
१७४	कथाश्री	सं. डॉ. विजयपालसिंह	२१,२२
१७५	कुछविचार	प्रेमचंद	४७
१७६	साहित्य विवेचन	क्षेमचंद्र 'सुमन'	२१४
१७७	उपन्यास साहित्य	डॉ. विवेक द्विवेदी	२४३
१७८	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१११
१७९	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	६४
१८०	आज के अतीत	भीष्म साहनी	२१,२,१३
१८१	साहित्य शास्त्र	डॉ. नवनीत गोस्वामी	७६
१८२	काव्य रूप	गुलाबराय	१६१

१८३	हिन्दी उपन्यास : अछूते संदर्भ	डॉ. रणवीर रांग्रा	१०८
१८४	हिन्दी उपन्यास रचना विधान और युगबोध	श्रीमती वसंतपंत	८
१८५	साहित्य विवेचन	क्षेमेन्द्र 'सुमन'	१७३
१८६	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	डॉ. त्रिभुवन सिंह	१२४
१८७	उपन्यासकार : उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	डॉ. कुलदीप चंद्रगुप्त	१२७
१८८	उपन्यास स्वरूप और संवेदना	राजेन्द्र यादव	२०१
१८९	मधुमती वर्ष १४, अंक १०, अक्तूबर १९७५	सं. वेदव्यास	२०
१९०	भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१०
१९१	झरोखे	भीष्म साहनी	४६
१९२	भीष्म साहनी : अपनी बात	राजेश्वर सक्सेना	१८६,१८६
१९३	भीष्म सहानी : व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	८६
१९४	साहित्य लोचन	डॉ. श्याम सुन्दरदास	१२१,१२२
१९५	आधुनिक हिन्दी उपन्यास	सं. भीष्म साहनी तथा अन्य	४३०
१९६	हिन्दी उपन्यास के सो वर्ष	सं. डॉ. रामदरशमिश्र	३८२
१९७	हिन्दी उपन्यास कला	डॉ. रामलखन शुक्ल	२४
१९८	हिन्दी उपन्यास में कथा–शिल्प का विकास	डॉ. प्रतापनारायण टंडन	७५
१९९	साहित्यिक निबंध	डॉ. राजेन्द्र चतुर्वेदी	२९२
२००	काव्य के रूप	गुलाबराय	४२
२०१	मार्कसवाद	यशपाल	१७३
२०२	भारतीय मध्यवर्ग	डॉ. श्यामसुन्दरदास	७१

२०३	शिवानी का हिन्दी साहित्य सामाजिक परिप्रेक्ष्य में	ज्योत्सना शर्मा	६६
२०४	झरोखे	भीष्म साहनी	१२६
२०५	तमस	भीष्म साहनी	१०१
२०६	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	२०५
२०७	तमस	भीष्म साहनी	१६४
२०८	साहित्यशास्त्र	डॉ. नवनीत गोस्वामी	७६
२०६	हिन्दी उपन्यास में कथाशिल्प का विकास	डॉ. प्रतापनारायण टंडन	६५
२१०	साहित्य लोचन	डॉ. श्यामसुन्दरदास	१२७
२११	साहित्य लोचन	डॉ. श्यामसुन्दरदास	१२६
२१२	तमस	भीष्म साहनी	११६
२१३	बसंती	भीष्म साहनी	२०४
२१४	बसंती	भीष्म साहनी	६७
२१५	कुंतो	भीष्म साहनी	१३६.१४०
२१६	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	६१
२१७	बसंती	भीष्म साहनी	८६
२१८	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	३५
२१६	तमस	भीष्म साहनी	१५५
२२०	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१७७
२२१	बसंती	भीष्म साहनी	२६
२२२	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	५४
२२३	झरोखे	भीष्म साहनी	७८
२२४	तमस	भीष्म साहनी	१५६

२२५	बसंती	भीष्म साहनी	६३
२२६	बसंती	भीष्म साहनी	१४०
२२७	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	५२
२२८	कुंतो	भीष्म साहनी	३४
२२९	तमस	भीष्म साहनी	१६२-१६३
२३०	झरोखे	भीष्म साहनी	३१
२३१	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	११८
२३२	हिन्दी उपन्यास में कथा शिल्प का विकास	डॉ. प्रतापनारायण टंडन	८४
२३३	बसंती	भीष्म साहनी	८६
२३४	साहित्य समीक्षा के सिद्धांत	चंद्रभानु मिश्र 'प्रभाकर'	१५३
२३५	काव्य के रूप	गुलाबराय	१७६
२३६	हिन्दी उपन्यास शिल्प और प्रयोग	डॉ. त्रिभुवनसिंह	४०६
२३७	हिन्दी उपन्यास	शिवनारायण श्रीवास्तव	४५३
२३८	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	५१
२३९	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	५४
२४०	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	२७६
२४१	बसंती	भीष्म साहनी	६८,६९
२४२	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१७
२४३	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१०
२४४	कुंतो	भीष्म साहनी	१६
२४५	कुंतो	भीष्म साहनी	१६
२४६	तमस	भीष्म साहनी	११
२४७	तमस	भीष्म साहनी	३६

२४८	कुंतो	भीष्म साहनी	८
२४६	तमस	भीष्म साहनी	१२१
२५०	तमस	भीष्म साहनी	३७
२५१	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१४५
२५२	कुंतो	भीष्म साहनी	१५
२५३	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१४
२५४	बसंती	भीष्म साहनी	४८
२५५	तमस	भीष्म साहनी	५२
२५६	मन्नू भंडारी का कथासाहित्य संवेदना और शिल्प	डॉ. श्रीमती सुषमा पाल	४६
२५७	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१५२
२५८	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	३०
२५६	बसंती	भीष्म साहनी	७६
२६०	हिन्दी उपन्यास	डॉ. सुरेश सिन्हा	३८
२६१	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	२५६
२६२	झरोखे	भीष्म साहनी	१०४
२६३	तमस	भीष्म साहनी	१७
२६४	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१२४
२६५	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१३०
२६६	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१२४
२६७	कुंतो	भीष्म साहनी	२६
२६८	तमस	भीष्म साहनी	५४
२६६	भारतीय साहित्य मिमांशा	बालेन्द्र तिवारी	४४६-४५०
२७०	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१६

२७१	तमस	भीष्म साहनी	
२७२	कुंतो		२६
२७३	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	२५३
२७४	झरोखे	भीष्म साहनी	६६
२७५	बसंती		१०४
२७६	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	८०
२७७	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	७७
२७८	कुंतो	भीष्म साहनी	११
२७९	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	७६
२८०	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१६०
२८१	तमस	भीष्म साहनी	२७
२८२	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	४८
२८३	कुंतो	भीष्म साहनी	५५
२८४	तमस	भीष्म साहनी	२४८
२८५	साहित्य की शैली	डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त	२१०
२८६	तमस	भीष्म साहनी	१७६
२८७	कला और आधुनिक प्रवृत्तियाँ	रामचंद्र शुक्ल	२
२८८	उपन्यासकार उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	कुलदीप चंद्रगुप्त	१६८
२८९	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिध्दांत	डॉ. राजकिशोरसिंह	३४३
२९०	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिध्दांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	३४३
२९१	साहित्य विवेचन	क्षेमेन्द्र 'सुमन'	१८५
२९२	साहित्य शास्त्र	डॉ. नवनीत गोस्वामी	८०

२९३	झरोखे	भीष्म साहनी	७
२९४	झरोखे	भीष्म साहनी	८
२९५	झरोखे	भीष्म साहनी	१६
२९६	झरोखे	भीष्म साहनी	४५
२९७	झरोखे	भीष्म साहनी	२६
२९८	झरोखे	भीष्म साहनी	४६
२९९	झरोखे	भीष्म साहनी	४८
३००	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	९
३०१	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१६
३०२	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	४५
३०३	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	३१
३०४	कड़ियाँ कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१९७
३०५	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	८६
३०६	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	५६
३०७	हिन्दी उपन्यास अंतरंग पहचान	डॉ. प्रेमकुमार	१८७
३०८	तमस	भीष्म साहनी	१४६
३०९	तमस	भीष्म साहनी	१५९
३१०	तमस	भीष्म साहनी	२०१
३११	तमस	भीष्म साहनी	१६३
३१२	तमस	भीष्म साहनी	२३५
३१३	तमस	भीष्म साहनी	२६
३१४	तमस	भीष्म साहनी	२७
३१५	मय्यासदास की माड़ी	भीष्म साहनी	१५५
३१६	मय्यासदास की माड़ी	भीष्म साहनी	१५२

३१७	कुंतो	भीष्म साहनी	२२
३१८	कुंतो	भीष्म साहनी	२२
३१९	कुंतो	भीष्म साहनी	२६७
३२०	कुंतो	भीष्म साहनी	१३१
३२१	कहानीकार भीष्म साहनी	डॉ. रीना पटेल	१२२
३२२	आजकल अंक–१०, फरवरी २००४, नई दिल्ली	सं. विश्वनाथ रामशेष	३०

🕮.....✍

पंचम अध्याय
कथाकार भीष्म साहनी की उपलब्धियाँ, सीमाएँ, संभावनाएँ

❖ उपलब्धियाँ

(१) कहानीकार के रूप में साहनी की उपलब्धियाँ
(२) नैतिकता
(३) मानवतावाद
(४) पाश्चात्य आधुनिकता के प्रति आक्रोश
(५) मध्यमवर्गीय एवं निम्नमध्यमवर्गीय जीवन का चित्रण
(६) घटना की सहजता
(७) विभिन्न सामाजिक समस्याओं का निदान
(८) शोषक-शोषित वर्ग का चित्रण
(९) धर्मान्धता-सांप्रदायिक संघर्ष
(१०) व्यंग्य की प्रधानता
(११) राष्ट्रीय स्वाभिमान की भावना

निष्कर्ष :

❖ उपन्यासकार के रूप में साहनी की उपलब्धियाँ

(१) अशिक्षा : परिणाम और निदान
(२) प्रेम–वैध–अवैध, यौन–कुंठा एवं दलित वासना के प्रति आक्रोश
(३) विविध समस्याओं से जूझती नारी एवं नारी की असहाय स्थिति का चित्रण
(४) सांप्रदायिकता एक विकार–तलाश
(५) पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक विचारों के बीच द्वंद्व–मानवीय मूल्यों के ह्रास का चित्रण
(६) शोषक–शोषित समाज और व्यवस्था के प्रति व्यंग्य
(७) राष्ट्रीय स्वाधीनता
(८) वैश्विक समस्या, जन–संख्या–विस्फोट एवं सांप्रदायिक संघर्ष
(९) यथार्थ चित्रण

निष्कर्ष :

(१) सीमाएं
(२) संभावनाएँ

पंचम अध्याय
कथाकार भीष्म साहनी की उपलब्धियाँ, सीमाएँ, संभावनाएँ

❖ उपलब्धियाँ :

साहनी जी प्रेमचंद के बाद की परंपरा के सबसे बड़े कथाकार एवं अप्रतिम साहित्यकार थे । वे प्रगतिशील साहित्यक आंदोलन के सक्रिय लेखक थे । परिणाम स्वरूप प्रेमचंद के बाद प्रेमचंद की परंपरा के सबसे बड़े साहित्यकार माने जा सकते हैं ।

साहनी का कथा–साहित्य उच्च कोटि का कहा जा सकता है । उनकी प्राथमिक शिक्षा रावलपिंडी में एम.ए. की पढ़ाई लाहौर में एवं हिन्दी–संस्कृत का अध्ययन घर पर होता रहा । भारत–पाक–विभाजन के कारण रावलपिंडी छोड़ना पड़ा । इस बँटवारे के बाद वे पंजाब के एक कॉलेज में अध्यापक हो गए । विभाजन की त्रासद परिस्थितियों ने उनकी लेखनी को सशक्त और रचनाओं को संवेदनशील बना दिया ।

साहनी नेकदिल इन्सान थे । उनका व्यक्तित्व यह प्रमाणित करता है कि – अच्छा साहित्य लिखने के लिए अच्छा इन्सान होना जरुरी है । जो विरल व्यक्ति में पाया जाता है । साहनी एक ऐसे अद्भुत लेखक थे जिन्होंने अपने जीवन में दो अंतीमों को समन्वित करने का प्रयास किया । यथार्थवादी ढाँचे में लिखने के कारण वह प्रेमचंद की परंपरा में खड़े दिखाई देते हैं तथा मनुष्य के स्वभावगत चरित्र, मध्यमवर्गीय मानस के भीतर छिपी गाठों तथा खोखली महत्त्वाकांक्षाओं को गहराई के साथ आंकते थे ।

साहनी जी की सूक्ष्म दृष्टि इस असाधारण सफलता का मुख्य कारण है । लेखक साहनी के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी बात यह थी कि उन्होंने संकीर्ण साम्यवादी विचारधारा को अपने उपन्यास एवं कहानी–साहित्य में सत्य की खोज में आड़े नहीं आने दिया । वे प्रतिबद्ध साम्यवादी चिंतक रहे । एक उदार किस्म की मानवीय संवेदनशीलता ने उनके चिंतन को कभी लेखकीय अथवा निजी व्यक्तित्व पर हाबी नहीं होने दिया । अनेक दक्षिणपंथी विचारधारा के लेखकों के बीच वे समान रूप से लोकप्रिय थे । साहनी सही मायनों में अजातशत्रु थे । प्रसिद्ध लेखिका कृष्णा सोबती ने साहनी जी के बारे में अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये हैं –

"भीष्म वह चेहरा है जो आप में से किसी का बेटा हो सकता, किसी का भाई, किसी का भतीजा और किसी का दोस्त । कहने का मतलब यह कि आप किसी भी कबीले में भीष्म जी जैसे बरखुरदार को मज़बूती से बँधा देख सकते हैं भीष्म जी जो हैं सामने हैं । जितनी आँख और सब्र आप के पास है, उतना ही सहजपन आप भीष्म के ईर्द–गीर्द देख सकते हैं, पा सकते हैं । भीष्म के पास कोई हाशिया नहीं है । कोई पर्दा नहीं । वह सादगी पसंद सादा मिजाज इन्सान है ।"[१]

डॉ. रीना पटेल, साहनी के साहित्यिक व्यक्तित्व की सराहना करते हुए लिखती हैं – "अपने व्यक्तिगत अनुभवों की कथा में ढाँलकर भीष्म साहनी ने हिन्दी–साहित्य को अधिक संपन्न किया है । उनके लिए जिन्दगी लगातार आदान–प्रदान का विषय बनी रही है । जिन्दगी से उन्होंने सच्ची घटनाएँ उठाई और जिन्दगी के विभिन्न पहलुओं को वे न सिर्फ गहराई से आँकने में सफल हुए बल्कि समकालीन भारतीय साहित्य की कुछ सर्वाधिक जीवंत कृतियाँ भी दे सकें ।"[२]

साहनी ने अपने कथा–साहित्य में परिवार–समाज एवं राष्ट्र की कई महत्त्वपूर्ण समस्याओं को कहानी एवं उपन्यासों के माध्यम से जन साधारण के

सम्मुख प्रस्तुत किया है और हमें सोचने के लिए मजबूर किया है । सुप्रसिद्ध आलोचक निर्मल वर्मा के शब्दों में –

"उनकी कहानियाँ, उपन्यासों में यदि अनूठे पात्रों की लंबी चित्र गैलरी दिखाई देती है, जहाँ हर व्यक्ति अपने वर्ग और परिवार शहर और कस्बे की व्यथा–कथाओं, विसंगतियाँ, विद्रूपताओं के पूरे संसार को लेकर उपस्थित होता है, तो इसलिए कि उनकी अनुभव–संपदा इतनी व्यापक और समृद्ध है ।"[३]

साहनी ने अपने जीवन के अनुभवों को यथार्थ का पुट दिया है । वस्तुतः यथार्थवाद एक गहरी सौंदर्य मूलक, संवेदनात्मक ऐतिहासिक दृष्टि होती है – जो रचनात्मक स्तर पर अपने इतिहास को मनुष्यता के इतिहास से जोड़ती है और दूसरी समसामयिक समाज की आशा–आकांक्षाओं, दुःख, पीड़ा, अभाव आंतरिक विरोध, जिजीविषा एवं संघर्षो तथा उसकी जीत पराजयों के चित्रण में भी परिवर्तन की प्रगतिशील शक्ति का अन्वेषण करती है और उनको बल प्रदान करती है ।

से. रा. यात्री के शब्दों मे – "एक लेखक के पास जब तक विविध अनुभवों का विशाल भंडारन हो वह स्वयं को बहुत जल्दी दुहराने लगता है । इस दृष्टि से देखें तो भीष्म जी के पास जीवनानुभव का अखूट भंडार है ।"[४]

कहानीकार अमरकान्त के शब्दों में "भीष्म जी की एक और विशेषता है उनकी अद्भुत–निरीक्षण शक्ति । इस मामले में उनमें अद्भुत जागरुकता है । आप पन्ने पर पन्ने उलटते जाइए आपका कहीं भी रस–भंग नहीं होगा । जिस तल्लीनता से रचनाकार ने अपनी रचना लिखी होगी, वैसी ही तल्लीनता में आप खो जायेंगे ।"[५]

हमारे शोध–प्रबंध का प्रतिपाद्य विषय 'भीष्म साहनी के साहित्य में युगबोध' है । इस अध्याय में साहनी की कहानियां एवं उपन्यासों को केन्द्र में रखकर उनकी उपलब्धियों, सीमाओं एवं संभावनाओं की चर्चा करेंगे ।

(१) कहानीकार के रूप में साहनी की उपलब्धियाँ

सामाजिक यथार्थ :

वास्तव में यथार्थ समाज और देश के यथार्थ के साथ जुड़ा हुआ होता है, हमें जो कुछ दिखाई दे उसका यथा तथ्य वर्णन मात्र यथार्थ नहीं होता ।

साहनी पर प्रेमचंद और यशपाल का गहरा प्रभाव है, जिसके कारण वह प्रगतिशील विचारधारा के प्रगतिशील कथा–साहित्य की परंपरा के लेखक हैं । उपन्यास तथा कहानी को युग–जीवन के साथ जोड़ने में प्रेमचंद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है । सामाजिक यथार्थ को केन्द्र में रखकर उन्होंने साहित्य की रचना की है । साहित्य में प्रगतिशील विचारधारा का विनियोग कर पक्षधर साहित्य के अगुआ कथाकार प्रेमचंद ही है । इस परंपरा को बनाये रखने में साहनी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । साहनी ने समाज के साधारण जनों को अपने कथा–साहित्य के केन्द्र में रखते हुए उन्हें पूरी संवेदना के साथ चित्रित किया है । कथाकार साहनी का भी ऐसा ही कुछ मत है – ‘‘वे उन थोड़े से लेखकों में से हैं जो अच्छी कहानियाँ लिखते हैं और लोगों को निराश नहीं करते । चलतऊ ढंग से उन्होंने कुछ नहीं लिखा है । बहुत साफ शब्दों में मैं एक बात कहना चाहूँगा कि मैं उनको जितना अच्छा कहानीकार समझता हूँ, उतना उपन्यासकार नहीं ।’’[६]

साहनी प्रेमचंद के बाद दूसरे ऐसे कहानीकार हैं जो कहानी को वास्तविक जगत से उठाते हैं । उनके पात्र हमारे इर्द–गीर्द दिखाई देते हैं । प्रेमचंद की तरह उनके भी पात्र एक पूरे वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं । साहनी किसी भी चरित्र के विकास के लिए प्रयास नहीं करते, बल्कि उन पात्रों के चरित्र का विकास अपने आप होता जाता है । मशहूर कथाकार विष्णु प्रभाकर भी साहनी के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि ‘‘भीष्म साहनी कहीं भी चरित्र के विकास के लिए प्रयास नहीं करते, वस्तुतः महान चरित्र वही होता है जो अपने आप ही आगे बढ़ जाता है । खासकर विभाजन की त्रासदी को

लेकर उन्होंने जिन चरित्रों का निर्माण किया है उसमें बड़ी खूबी के साथ सारी स्थितियाँ सहज भाव से आती हैं ।"[७]

साहनी स्वयं अपनी कहानी रचना–प्रक्रिया के संबंध में यथार्थ को महत्त्व देते हुए कहते हैं – "कहानी लिखते समय हम स्थितियाँ घटनाओं को वास्तविक जीवन में से अक्सर उठाते हैं, साथ–ही–साथ पात्रों को भी उठाते है, जहाँ कोई स्थिति कहानी में पनपने, अपने स्वरूप और आकार ग्रहण करने लगती है । घटना उस सक्रिय पात्र के साथ जुड़कर ही हमारा ध्यान आकृष्ट करती है ।"[८]

साहनी की कहानियाँ केवल मानसिक तृप्ति को साधन नहीं बल्कि वर्तमान, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक यथार्थ को समझने का माध्यम हैं । प्रगतिशील यथार्थवादी कहानीकार के रूप में साहनी का योगदान विशेष महत्त्व रखता है ।

साहनी के शब्दों में "मेरी अधिकांश कहानियाँ यथार्थपरक रही हैं मात्र व्यक्ति–केन्द्रित अथवा व्यक्ति के अंतर्मन पर केन्द्रित नहीं रही हैं । कहीं न कहीं मेरे पात्रों के व्यवहार तथा गतिविधि पर बाहर की गतिविधि का गहरा प्रभाव रहा है । बल्कि यदि कहें कि जिस विसंगति अथवा अंतर्विरोध को लेकर कहानी लिखी गई, वह मात्र व्यक्ति की स्थिति का अंतर्विरोध न होकर, उसके आसपास के सामाजिक जीवन का अंतर्विरोध होकर उसके व्यक्तिगत जीवन में लक्षित होता है । उसकी मानसिकता, उसकी दृष्टि उसका संघर्ष आदि मात्र उसका न रहकर आज के आदमी का बन जाता है । वह पात्र अपने काल का प्रतिनिधि बन जाता है । इसी कारण लोग इन कहानियों को पढ़ते भी हैं क्योंकि इनमें उन्हें अपने काल के सामान्य जीवन का बिम्ब देखने को मिलता है ।"[९]

वे लोग कहते हैं – "मेरा तो यह भी मानना है कि हमारे यहाँ भारत में साहित्य उन्नीसवीं शताब्दी से ही यथार्थोन्मुख और समाजोन्मुख होने लगा

था । इसकी एक कड़ी बंकिमचंद्र चटोपाध्याय, फिर भारतेंदु और फिर प्रेमचंद आदि थे ।"[१०]

साहनी की कहानियों का रचना–संसार गहरे रचनात्मक दायित्व बोध को स्वीकार करता है । सतही स्थिर यथार्थ के प्रति भी साहनी की प्रतिबद्धता नहीं है वे ऐसे यथार्थ के चितेरे हैं जो निरंतर गतिशील है । साहनी की ये सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जायेगी ।

प्रताप ठाकुर के शब्दों में "भीष्म की रचना का यथार्थवाद एक ओर तो सामाजिक जीवन की वास्तविकताओं को प्रभावशाली रूप प्रदान करता है, दूसरी ओर चेतना का संस्कार देता है । इनकी कहानियों के यथार्थ में वस्तुओं, घटनाओं और पात्रों के आंतरिक संबंधों का निर्वाह हो सका है । जनता के नैतिक संघर्ष के प्रति समाधान पैदा करना भीष्म साहनी के कथा–यथार्थवाद की एक विशेषता है ।"[११]

कह सकते है कि प्रेमचंद की भाँति साहनी जी ने भी जीवन को नज़दीक से देखने–परखने का काम किया है । उनके साहित्य में आकाश लोक की कल्पनाशीलता के स्थान पर यथार्थ जीवन की वह झाँकी है जो पाठक को उसकी जमीन से जोड़कर गहराई तक संवेदित कर देती है । एक कथाकार के रूप में यह उनकी बहुत बड़ी उपलब्धि कही जा सकती है ।

२. नैतिकता

वास्तव में नैतिकता का मूल्य मानव जीवन में सर्वश्रेष्ठ रहा है । "नैतिकता मानव जीवन का उच्चतम मूल्य है । यह कर्तव्य–बुद्धि की आधारशिला है । वही मानवसमाज को संगठित करती है । यही राजनैतिक जीवन को भी संचालित करती है ।"[१२]

नैतिकता का संबंध मूल्य से जुड़ा हुआ है – "अतः मूल्य व्यक्ति के जीवन, व्यक्तित्व और अस्तित्व का मुख्य केन्द्र है, लक्ष्य है, दृष्टिकोण है जो समाज द्वारा स्थापित और प्रत्येक व्यक्ति द्वारा मान्य होते हैं ।" [९३]

डॉ. अरुणा गुप्ता के शब्दों में – मूल्य लेखन के ऊपर आरोपित वस्तु नहीं है, वह उसके भीतर से पैदा होनेवाली जीवन शक्ति है । जैसे जीवन मूल्य–बोध के बिना निरर्थक है वैसे साहित्य भी ।" [९४]

साहनी ने सामाजिक परंपरा को एक नया रूप देने का प्रयास किया । उन्होंने व्यक्ति को समाज में बंधे आदर्शो से स्वतंत्र होने की प्रेरणा दी । जीवन के नए नैतिक मूल्य की स्थापना समाज की परिस्थियोँ की अपेक्षा व्यक्ति की ही परिस्थितियेँ के आधार पर करने का प्रयास किया । परिणाम स्वरूप उनकी कहानियों में परंपरागत सर्वथा बाह्य नैतिकता के स्थान पर व्यक्ति के महत्त्व के कारण सामाजिक मूल्यों में मनोवैज्ञानिक नैतिकता का समावेश हुआ ।

साहनी के शब्दों में – "प्रत्येक लेखक अंततः अपने संवेदन, अपनी दृष्टि, जीवन की अपनी समझ के अनुसार लिखता है । हाँ मैं इतना जरुर कहूँगा कि मात्र विचारों के बल पर लिखी गई रचना, जिस के पीछे जीवन का प्रामाणिक अनुभव न हो वह रचना अक्सर अधकचरी रह जाती है । मेरी धारणा है कि साहित्य के केन्द्र में मानव है, व्यक्ति है, परंतु व्यक्ति अलग–अलग नहीं है – अपने में संपूर्ण इकाई नहीं है । लेखक का कर्तव्य है कि जीवन की सच्चाई तक पहुँच पाये और उसे उघाडकर पाठक के सामने रख दें ।"[९५]

'"नैतिकता का हेतु अपने व्यापक स्वभाव का ज्ञान कराना है । नैतिकता अपने आपको वैयक्तिक जीवन से ऊपर उठाने का साधन है ।"[९६]

साहनी की कहानियों में उन्होंने यहीं अपनी विचारधारा व्यक्त की है कि मनुष्य के भीतर 'पशुत्व का दमन कर देवत्व' का विकास हो । उनकी संपूर्ण कहानियों में सेवा, प्रेम और त्याग, कर्तव्य से परिपूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है । उनके अपने शब्दों में "जीवन के यर्थाथ और साहित्य के यथार्थ में

एक अंतर होता है । वास्तविकता की झलक तो साहित्य में जरुर मिलती है, पर साहित्य नैतिकता एवं मूल्य से जुड़ा होता है । इसीलिए आदर्शवादिता के लिए साहित्य में तो बहुत बड़ा स्थान होता है, पर व्यावहारिक जीवन में नहीं, जहाँ हम यथार्थ जीवन की गतिविधि को मूल्यों की कसौटी पर आँकते हैं । जीवन को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखते हैं । इनमें सच्चाई के अतिरिक्त न्यायपरता, जनहित और मानवीयता आदि भी आ जाते हैं ।''[१७]

साहनी ने अपनी सभी कहानियों में नैतिकता एवं मानव–मूल्य पर सविशेष बल दिया है जो उनकी विशेष उपलब्धि मानी जायेगी । जनता के नैतिक संघर्षके प्रति समझदारी पैदा करना भी साहनी के कथा–यथार्थवाद की एक विशेषता है । आज भौतिकवादी जीवन ने जहाँ सारे मूल्यों को ध्वस्त कर दिया है, वहाँ नैतिकता और मूल्यों की बात बड़े साहस की अपेक्षा रखती है । फिर भी साहनी जी ने बड़ी हिम्मत के साथ यह कार्य किया है । तथा अपने कथा–साहित्य के माध्यम से उन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में नैतिकता का संदेश दिया है । यह उनके साहित्य की उपलब्धि ही मानी जायेगी । आज नैतिकता और आदर्श की बात करने में साहित्यकार हिचकते हैं क्योंकि कटु आलोचना का शिकार बन जाने का भय उन्हें सताता है । ऐसी स्थिति में साहनी जी ने नैतिकता और मूल्यों की बात करके एक ईमानदार सर्जक के व्यक्तित्व की सुरक्षा की है ।

३. मानवतावाद

साहनी की कहानियों में मानवतावादी दृष्टिकोण का परिचय मिलता है । मानवता एक ऐसा दृष्टिकोण है जो केवल मनुष्य तक सीमित न होकर जड़–चेतन सब की भलाई करना अपना धर्म समझता है । अतः कहा जा सकता है कि – ''मानवतावाद का संबंध नैतिकता से है और उसका उद्देश्य मानव का सामाजिक और मानसिक अभ्युत्थान है । यह मनुधय को बंधुत्व के

भाई–चारे के सूत्र में बाँधना चाहता है ।" 'चाचा मंगलसेन' कहानी में निरुपित मानवता के ये स्वर – "चाचा मंगलसेन उसका सगा चाचा भी नहीं था – वह सार उम्र गलियों में ही रहा था । किसी संबंधी ने उससे कहा था कि मंगलसैन खाट से जुड़ गया है । इलाज तक के लिए उसके पास पैसे नहीं है –अपने भतीजे को याद करता है – कहीं पुराने संस्कार उसके दिल को कचोटने लगे थे, और कुछ इस बात का डर भी कि लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे उसके रहते, मंगलसैन इस हालत में रह रहा है ।"[१९]

'सँभल के बाबू' कहानी में नौकर के प्रति अमानवीयतापर तुम तो पढ़े–लिखे हो, समझदार हो । तुम्हें झाँपट नहीं मारना चाहिए था । ये लोग दिन भर के थके होते हैं । इन्हें नींद लग जाती है – मैंने घूँसा एक दुश्समन को न मारकर किसी मिट्टी के लोंदे को मारा है जिसका कोई लाभ नहीं हुआ है ।"[२०]

साहनी, निर्मल वर्मा, कृष्ण बलदेव, वैद या उषा प्रियंवदा के वर्ग के कहानीकार नहीं है । यद्यपि उनका कक्षा क्षेत्र वही है जो इन कहानीकारों का है । किन्तु जहाँ तक दृष्टिकोण का प्रश्न है साहनी का दृष्टिकोण अलग है ।

डॉ. रीना पटेल के शब्दों में – "यह मानववादी दृष्टिकोण है, मानव विरोधी नहीं जो हमें पतनशील कहानीकारों में मिलता है । यहाँ यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि मानववाद भी कई तरह का होता है । साहनी का दृष्टिकोण का आधार जो मानववाद है वह पूँजीवादी या काल्पनिक समाजवादी न होकर मार्क्सवाद, लेनिनवाद पर आधारित समाजवादी है और इसे भीष्म जी ने अपनी रचनाओं में आरोपित न करके उसकी अंतरंगता में घुला–मिलाकर प्रस्तुत किया है ।"[२१] 'गंगो का जाया' कहानी में गंगो सगर्भा है, गर्भावस्था में लोगों द्वारा प्रताड़ित किये जाने पर साहनी की मानवता आक्रोश के साथ व्यक्त हुई है – "उड़ती हुई ईंट पेट पर आ लगे तो क्या होगा ।"[२२]

साहनी के मानववाद का आधार वैज्ञानिक समाजवाद है जो श्रमजीवी समुदाय को सामाजिक शोषण से युक्ति दिलाकर समानता पर आधारित उस समाज का निर्माण करता है जो सभी मनुष्यों के सामंजस्य पूर्ण विकास और सभी व्यक्तियों की वास्तविक स्वतंत्रता के लिए अनिवार्य है ।

नंद किशोर नवल के शब्दों में कहें तो ‘‘जिस तरह साहनी का मानवतवाद अन्य कहानीकारों से भिन्न है, उसी तरह उनका ढंग भी । चूँकि उनके पास एक सुसंगत दृष्टिकोण है, इसलिए उनकी कहानियाँ का रूप सुगठित है । उन्होंने विघटित दृष्टिकोण वाले कहानीकारों की तरह कहानी को नुस्खे या चौखटे से बाहर निकालने के नाम पर उसके रूप का विघटन नहीं किया है । बल्कि उसे विषयवस्तु अनुरूप अकृत्रिम रूप और शिल्प प्रदान किया है । स्वभावतः हमें उनकी कहानियाँ कहानी के रूप में प्रभावित करती है । यही साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि है ।’’[२३] प्रेमचंद जी और यशपाल जी की तरह साहनी भी मानते थे कि हिन्दू हो या मुसलमान, सिक्ख, ब्राह्मण हो या हरिजन मानव एवं मानवता के नाते सब बराबर हैं, और सभी को समान दर्जा मिलना चाहिए । मानव से बड़ी चीज़ मानवता है । इसी मंतव्य को उन्होंने अपनी ‘पहला पाठ’ कहानी में रचनात्मक ढंग से प्रसतुत भी किया है । आज जहाँ सारे मूल्यों का क्षरण होता जा रहा है – ऐसी स्थिति में मानवीय मूल्यों और मानवता की बात करना उसके अपूर्व साहस का प्रतीक है । साहित्य अंततोगत्वा मानवता का ही संरक्षक और संवर्धक माना जाता है । यह कार्य साहनी जी की लेखनी से संभव हो सका है ।

४. पाश्चात्य आधुनिकता के प्रति आक्रोश

’’मानव एक चेतनाशील बौद्धिकता युक्त प्राणी है जो नित नवीन की शोध करता है । यह प्रक्रिया आज से नहीं युग युगांतर से निरंतर चली आ रही है और आगे भी निरंतर चलती रहेगी । आधुनिकता का सीधा अर्थ तो एक प्रकार

की नवीनता या नएपन की परिस्थितियों से है जो कि पुराने की अपेक्षा कुछ परिवर्तित प्रतीत होती है और वे परिस्थितियाँ समय-समय पर परिवर्तित और पुनःपरिवर्तित होती रहती हैं । इसलिए आधुनिकता वस्तुतः निष्क्रिय समय-सीमा नहीं है ।'[२४] "आधुनिकता के साथ समय का संदर्भ विशेष जुड़ा हुआ है ।'[२५] हम जिस आधुनिकता की बात कर रहे हैं उसका संबंध अधिकांशतः पश्चिमीकरण से माना गया है, क्योकि आधुनिकता की परिस्थिति भारत में अंग्रेजी शासन के फलस्वरूप विकसित हुई जिसके कारण पश्चिमी देशो की सभ्यता, शिक्षा-व्यवस्था, राजनीति, आवागमन, एकता, राष्ट्रीयता, रहन-सहन, खान-पान, व्यवहार और संबंध आदि सभी का प्रभावअधिक या कम रूप से भारत की जनता और उसके जन-जीवन पर पड़ा ।

"भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों के अंधकार से घिरा आज का मनुष्य मूल्य-संक्रमण के उस भयानक दौर से गुजर रहा है जहाँ बिखराव, कुण्ठा, निराशा और संत्रास ही अधिक है । मनुष्य का संघर्ष आज न केवल प्रकृति से है और न ही मात्र मानव प्रकृति से है बल्कि मानव का स्वयं अपने आपसे संघर्ष जो आधुनिक युग की देन है ।'[२६]

साहनी की कहानियों में आधुनिकता के प्रति व्यक्त हुआ आक्रोश झलकता है । साहनी ने केवल आधुनिकता को अस्वीकार ही नहीं किया परंतु कुछ हद तक मनुष्य का मनुष्यत्व खत्म हो जाए ऐसी आधुनिकता के मोह को अनावश्यक समझा है । वे हमारी समकालीन पीढ़ी के लिए इस मायने में एक आदर्श लेखक हैं । वे निरंतर गंभीर और सार्थक लेखन एक स्तर पर लिखते हैं । उनकी समकालीनता आयु की नहीं, समकालीन दबावों को महसूस करने और अपनी चेतना को उसके अनुरूप परिवर्तित करने से संबंध रखती है । साहनी की अधिकांश कहानियाँ जीवन के गंभीर तनाव को स्पष्ट करने में सफल रही है और हमें फिर से परंपरित मूल्यों की ओर ले जाने के लिए आकृष्ट करती है । 'भाई-बन्द' कहानी का यह उद्‌गार हमारे परंपरित मूल्यों की ओर निर्देश

करते हैं – "नहीं साहब, यों भी कभी हुआ है । इससे इसकी क्या रह जाएगी – और मेरी क्या रह जाएगी ।'[२७]

वर्तमान युग की सबसे बड़ी विकट समस्या संस्कृति का ह्रास है । "मनुष्य के अंतर और बाह्य, वैयक्तिक और सामाजिक गुणों का विकास समाज–सापेक्ष होता है । यह विकास सांस्कृतिक चेतना और मूल्यों पर निर्धारित होता है । सामाजिक विकास के परिणाम स्वरूप मानव समाज की श्रेष्ठत्तम उपलब्धियाँ संस्कृति कहलाती है ।'[२८]

"आज जहाँ हमने सभ्य जीवन को अनेक नवीन उपलब्धियों से समृद्ध किया है वहाँ अपनी संस्कृति की अनेक पुरातन उपलब्धियाँ गँवा भी दी है ।'[२९] साहनी ने स्वान्तः सुखाय की हमारी मोहाधंता एवं मूल्य–संक्रमण की स्थितियों को बड़े आदर के साथ सामने रखा है । उन थोड़े से लेखकों में हम बेशक साहनी की गणना कर सकते हैं । जो उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

५. मध्यमवर्गीय एवं निम्न–मध्यमवर्गीय जीवन का चित्रण

मध्यमवर्ग :

अमरकान्त के शब्दों में – "भीष्म जी निम्न मध्यम वर्ग के एक समर्थ रचनाकार है ।"[३०]

साहनी की अधिकांश कहानियाँ मध्यमवर्गीय जीवन की विसंगतियों का उद्घाटन करती हैं । मध्यमवर्ग समाज का महत्त्वपूर्ण वर्ग है । संसार के सभी राष्ट्रों में मध्यमवर्ग की भूमिका गणनीय है । डॉ. राधाकमल मुखर्जी के शब्दों में "मध्यमवर्ग समाज का श्रेष्ठ अंग है जिसमें प्रेरकशक्ति, नेतृत्व भावना और भविष्य की चेतना विद्यमान रहती है ।"[३१]

हिन्दी साहित्य–कोश में मध्यमवर्ग के संबंध में लिखा है – "मध्यमवर्ग सामंतशाही व्यवस्था में नहीं पाया जाता क्योंकि उस समय जमींदार तथा किसान का संबंध था किन्तु पूँजीवादी व्यवस्था ने समाज को इतना जटिल बना दिया है

कि इस मध्यमवर्ग की भी आवश्यकता हुई – मध्यमवर्ग विशेषतः बुद्धिप्रधान वर्ग माना गया है और सामाजिक क्रांति प्रायः समस्त विचारों का सर्जन मध्यम वर्ग में होता है ।"[३२]

साहनी की कहानियों के अधिकांशतः मध्यमवर्गीय पात्र हैं । पूँजीवादी व्यवस्था के माहोल में सामान्यतः जीवन में जो अंतर्विरोध तथा मूल्यों के ह्रास दिखाई देता है, उसका संबंध विशेष रूप से मध्यमवर्गीय जीवन से भी है । मध्यमवर्गीय पात्रों को केन्द्र में रखकर साहनी ने पात्र की इस मूल्य–हीनता तथा अप–संस्कृति, उसका अवसरवाद, सुविधा–परस्ती तथा उसकी अमानवीयता के तह तक पहुँची स्वार्थ परकता ये सारी बातें साहनी की कहानियों का वर्ण्य विषय रहा है ।

मध्यमवर्गीय जीवन का दैन्य, कुण्ठा, विवशता तथा वर्गीय विसंगतियों के बावजूद उनकी अविशिष्ट मानवीयता पर भी साहनी की दृष्टि गई है और अपनी कहानियों में उन्होंने उसके दृढ़ पक्षों को भी समान महत्त्व प्रदान किया है ।

साहनी ने मध्यमवर्गीय जीवन को मानसिकता से चित्रित नहीं किया है । उनका प्रगतिशील विवेक, उनकी आलोचनात्मक दृष्टि उनके साथ रही है । यही कारण है कि वे मध्यमवर्ग की कमजोरियों को कमजोरियों के रूप में देख और दिखा सके । उन्होंने मध्यमवर्ग की कमजोरियों को न तो रेशनलाइज किया है और न ही उसका सहारा लेकर कथा–रस की सृष्टि की है । मध्यमवर्गीय जीवन को उसके समूचेपन में, उसकी कमजोरियों तथा उनकी अविशिष्ट मानवीयता के साथ उन्होंने चित्रित किया है और इस कार्य की सफलता उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जायेगी ।

निम्न मध्यमवर्ग :

निम्न मध्यमवर्ग के अंतर्गत साधारण–सामान्य लोग आते हैं । साहनी की कहानियों में साधारण लोगों के जीवन की विविध रंगोवाली कहानियाँ हैं । उनमें

इन लोगों की जिजीविषा है, कुंठा है, हताशा और निराशा है । उनका दुःख और पीड़ा है, उनके सपने और आदर्श है । साहनी ने मजदूर नौकर, किसान आदि सामान्य लोगों का चित्रण अपनी कहानियों में चित्रित करके उनका निदान भी प्रस्तुत किया है कि ये वर्ग ज्यादातर अशिक्षित एवं भाग्य पर विश्वास रखनेवाला होता है । फिर भी साहनी ने निराशावादी दृष्टिकोण नहीं रखा है । सुप्रसिद्ध कहानीकार अमरकान्त के शब्दों में "भीष्म जी की रचनाएँ भी, उन्हीं की तरह हमें जीवित रहने का एहसास कराती है, हमें सुखी व तृप्त करती है, हमें समाज से जोड़ती हैं । वस्तुतः वे हमारी कहानियाँ लगती हैं । जीवन से बेहद प्यार करके ही ऐसी रचनाएँ लिखी जा सकती हैं – ऐसा प्यार जो हम स्वयं अपने से व अपने जीवन से किया करते हैं ।"[३३]

सामान्य वर्ग एवं आम वर्ग का चित्रण काल्पनिक नहीं है परंतु परिस्थिति को बारीकी से परखा है । बलराज साहनी के शब्दों में –

"जो कुछ भी लिखा है ईमानदारी से लिखा है । उसकी कहानियाँ किसी भी सर्वोत्तम कहानी–संग्रह की शान धन सकती है ।"

६. घटना की सहजता

साहनी की कहानी कला की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि वह दैनदिन जीवन के यथार्थ को पकड़ते हैं । सामान्य सी लगनेवाली घटा रोजमर्रा के यथार्थ की सूक्ष्म से सूक्ष्म स्थिति को कहानीकार साहनी की दृष्टि पहचान लेती है और साहनी उनकी गहराई में जाते हैं । फिर एक सामान्य सी लगनेवाली घटना को केन्द्र में रखकर वे इस प्रकार कहानी का ताना–बाना बुन लेते हैं और देखी हुई सच्चाई को हमारे सामने जीवंत चित्र के रूप में खड़ा कर देते हैं । यदि इस प्रकार साहनी की कहानियों पर विहंगावलोकन करेंगे तो अपने मौजूदा जीवन का यथार्थ अपनी नारी विसंगतियों के साथ उसमें दिखाई पड़ेगा । यथार्थ का यह रूप जो अपने में विरूप तथा भयावह है, इस नाते

हमारे मन में कोई निराशा–मूलक प्रतियिा नहीं जगाता । यथार्थ के भीतर ऐसी विवेचनात्मक शक्तियों को गुण–अवगुणों को ऐसे पात्रों तथा स्थितियों से हमं परिचित कराते है, जो मूल्य–हीनता तथा ह्रास के वर्तमान माहोल में भी हमें नए मूल्यों की ओर मुखातीब करती है, और हमें मनुष्य की नियति के बोर में शंकालु नहीं होते देती । वहीं साहनी के कहानीकार की प्रगतिशीलता है ।

बलराज साहनी के शब्दों में – "भीष्म कहानी की कथावस्तु का चुनाव भी बड़े धीरज से करता है । साधारण लोगों के जीवन की छोटी–छोटी बातें वह खुदअपनी आँखों से देखता है, उन लोगों की सामाजिक व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करता है । पात्रों को कल्पना से नहीं जीवन से खोजता और चुतना है ।"[३५] यही साहनी की उपलब्धि है ।

रमाकान्त श्रीवास्तव के शब्दों में – "एक विचित्र सा ठंडापन और सपाट लहजा भीष्म साहनी की कहानियों में हमेशा रहा है – कहानी के कथातत्व को बनाये रखते हुए उसे पठनीय भी बनाए पहले भी जरुरी था और आज भी जरुरी है । साहनी की कहानियाँ इस मामले में आरवस्थ करती रही हैं ।"[३६]

मैं यह कहना चाहूँगा कि जटिल से जटिल समस्यापूर्ण कथावस्तु को उठाकर उन्होंने बड़ी सहजता के साथ उसे प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है । ऐसा प्रतीत होता है कि ये घटनाएँ मानो जीवन में सहज रूप से ही घटित होती रही है । उनमें कोई बनावटीपन नहीं दिखाई देता । यह कलाकार की विशिष्टता है ।

७. विभिन्न सामाजिक समस्याओं का निदान

साहनी की कहानियों में समाज की विभिन्न समस्याओं का चित्रण हुआ है, जिसमें संयुक्त परिवार की व्यवस्था की समस्या, मूलक–विघटन की समस्या, अनमेल–विवाह, बहु–विवाह, वैध–अवैध–प्रेम की समस्या, नारी की पराधीनता की समस्या, वृद्धों की समस्या, किसान–जीवन की समस्या आदि ।

इस अध्ययन में हम केवल इस बात का संकेत देना चाहेंगे कि साहनी ने केवल समस्याओं, संवेदनात्मक स्तर पर निरूपण ही किया परंतु उसका निदान भी प्रस्तुत किया है । आर्थिक विषमता, मूल्य–विघटन, असमानता, अशिक्षा, स्वार्थजन्य वृत्ति आदि सब समस्याएँ जड़ हैं । वास्तव में समस्याएँ जीवन और समाज की ही देन हैं । जहाँ जीवन या समाज नहीं है वहाँ समस्याएँ नहीं है । साहनी लिखते हैं –

''जहाँ तक साहित्य द्वारा सामाजिक परिवर्तन करने का प्रश्न है, यह प्रक्रिया जटिल और धीमी है । पाठक धीरे–धीरे सामाजिक स्थिति के प्रति सचेत होते हैं । उन्हें जिन्दगी को देखने का एक नज़रिया मिलता है, अपनी स्थिति को देखने का नज़रिया मिलता है, बाद में उसके परिणाम स्वरूप समाज में भी परिवर्तन आते हैं ।''[३७] यही साहनी की विशेष उपलब्धि है ।

कपिल तिवारी के शब्दों में ''नयी कहानी को जिस धारा के लिए हम रेखांकित करना चाह रहे हैं और जिसकी ऐतिहासिकता निरंतर बराबर अब भी प्रासंगिक रूप में बनी रही है, वह धारा और वह प्रवृत्ति सामाजिक चेतना की है । कहने की आवश्यकता नहीं कि भीष्म साहनी नयी–कहानी की उसी धारा और प्रवृत्ति के लिए गतिशील और यथार्थवादी कथाकार रहे हैं ।''[३८]

साहनी ने अपनी कहानियों में नारी के लिए सही न्याय की माँग की है । नारी–समस्या पर साहनी ने जो विचार प्रस्तुत किये हैं, वे उनकी मानवीय संवेदना तथा प्रगतिशील चिंतन के परिचायक हैं ।

८. शोषक–शोषित वर्ग का चित्रण

''मानव समुदाय का सांस्कृतिक जीवन मुख्य रूप से आर्थिक व्यवस्था पर निर्भर है । किसी भी समाज के संगठित एवं उन्नति का आधार उसकी अर्थ व्यवस्था पर निर्भर करता है । वैज्ञानिक प्रगति ने औद्योगिकरण को बढ़ावा दिया । औद्योगिक विकास ने पूँजीवाद को जन्म दिया । औद्योगिकरण ने जहाँ एक

ओर आर्थिक व्यवस्था को दृढ़ किया है, वहाँ दूसरी और सामान्य जन–जीवन में काफी परिवर्तन कर दिए ।"[३९]

साहनी ने जितना मध्यमवर्ग, निम्नवर्ग के सामाजिक पहलू पर ध्यान दिया है उतना ही आर्थिक पहलू पर । आर्थिक विषमता ने वर्ग–विषमता को जन्म दिया और शोषक–शोषित अस्तित्व में आए ।

साहनी ने अपनी कहानियों में मौकापरस्त, गंगो का जाया, घर बेघर, जोत आदि कहानियों में शोषक और शोषित वर्ग की चर्चा है । उन्होंने स्पष्ट किया है कि जब तक आर्थिक असमानता रहेगी तब तक यह समस्या कदापि मिटायी नहीं जा सकती । उनकी जड़ में पूँजीपतियों का स्वार्थ एवं हीन वृत्तियाँ जिम्मेदार हैं ।

रमाकमान्त श्रीवास्तव के शब्दों में "पूँजीवादी व्यवस्था में पनपती विषमता, अमानवीयता, शोषण और चरित्र संकट के विरुद्ध किसी प्रकार का फार्मूलाबद्ध रुमानी दृष्टिकोण न रखकर उनके विद्रूप को उजागर करने का काम भीष्म साहनी की कहानियाँ करती है ।"[४०] श्रीवास्तवजी के इन शब्दों से मैं पूरी तरह सहमत हूँ ।

६. धर्मान्धता–सांप्रदायिक संघर्ष

साहनी ने अपनी कुछ कहानियों में दंगे–फसाद एवं त्रासदी का चित्रण किया है । साहनी के शब्दों में 'मैं धर्म–निरपेक्ष संस्कृति का समर्थक हूँ जो हमें इतिहास से विरासत में मिली है – यह संस्कृति समानता और परस्पर सहयोग और सहनशीलता के आधार पर खड़ी है । इसमें एक भाषा दूसरी भाषा से बड़ी नही, एक धर्म दूसरे धर्म से बड़ा नहीं । इस साँची धर्मनिरपेक्ष संस्कृति के विकास में हमारे देश का कल्याण है, ऐसा मानता हूं ।"[४१]

इस प्रकार साहनी ने स्पष्ट करने की कोशिश की है कि धर्म से धर्मान्धता खतरनाक है । कोई भी धर्म–संप्रदाय मनुष्य को मरने–मारने के लिए

प्रेरित नहीं करता । उसके लिए जिम्मेदार है कुछलोगों का स्वर्था, जो अपना उल्लू सिधा करने के लिए तनाव खड़ा करते हैं, बुझाते भी वे स्वयं है । 'अमृतसर आ गया', 'वाङ्चू', 'पाली' आदि कहानियों में इसकी चर्चा हुई है । स्वार्थी, दंभी, बदमाश लोगों की पोल खोलने की उनकी विशेष उपलब्धि मानी जायेगी ।

डॉ. विवेक द्विवेदी के शब्दों में – "दरअसल भीष्म साहनी धर्म या मजहब के पंजे से मुक्त मनुष्य की कल्पना करते हैं । ठीक उसी तरह जैसे कबीर ने मध्यकाल में आवाज उठाई थी, जिसकी गूँज आज भी सुनाई पड़ती है । आज मजहबों से घिरा मनुष्य कितना दारुण, विवश और त्रस्त है, इसकी गहरी पीड़ा हमारे भीतर वे उतारते हैं ।"[४२]

इस प्रकार साहनी जी धर्म-संप्रदाय से परे रहकर साहित्य-सर्जन में लगे रहे । उनके लिए मानवता ही सबसे बड़ा धर्म था । वे मानवता को ही प्रस्थापित करने का प्रयत्न करते रहे ।

१०. व्यंग्य की प्रधानता

व्यंग्य, साहनी की कहानियों में बड़ी धार के साथ सामने आता है । वह बिहारी के दोहे की पंक्ति की भाँति देखने में छोटे लगे घाव करे गंभीर । सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों पर व्यंग्य वही रचनाकार कर सकता है जिनमें उन स्थितियों के भीतर व्याप्त विसंगतियों की पहचान हो तथा जिसके पास मूलवर्ती मानवीय संवेदना हो । कपिल तिवारी के विचार इसकी पुष्टि करते हैं – "अमरकान्त की कहानियों में व्यंग्य से जहाँ प्रायः करुणा से घना अवसाद पैदा होता है तो प्रायः लीखी समाप्त हो जाती है । उस अवसाद को धीरे-धीरे सहलाने की सी तबियत बनने लगती है । वे इस मामले में लेखक के बहुत निकट हैं । लेकिन भीष्म साहनी निर्मम चोट करते हैं । वे

इस मामले में कवि–कथाकार नागार्जुन और हरिशंकर परसाई के निकट बैठते हैं ।"[४३]

विवेक द्विवेदी के शब्दों में "निश्चित रूप से भीष्म साहनी एक सफल सार्थक सोद्देश्य कहानी लेखक के रूप में कथा–जगत में स्थापित हैं, जिनकी अपनी अलग पहचान है ।"[४४]

'चीफ की दावत' कहानी में वृद्ध माँ आधुनिक बेटे को कितना सार्थक व्यंग्य करती है – "चुड़ियाँ कहाँ से लाऊँ बेटा । तुम तो जनते हो, सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गये ।"

'मेरी जीभ जल जाय, बेटा, तुम से जेवर लूँगी । मेरे मुँह से यूँही निकल गया । जो होते तो लाख बार पहनती ।'[४५]

इस 'धर्म सनातन' कहानी में साढे नौ बजे अरथी उठी, और ठीक दस बजे, संस्कार विधि के पुनीत वैदिक मंत्रों और धृत–सामग्री की आहुतियों में शहर भर के धर्म–मित्रो के सामने बाबू अनंतकाम ने वैदिक रीति से मृत की आत्मा को सीधा स्वर्ग के द्वार पर पहुँचा दिया ।"[४६]

साहनी के निरुपित व्यंगय हमे नई दिशा और दृष्टि देते हैं एवं सोचने के लिए मजबूर कर देते हैं । यही साहनी की सबसे बड़ी उपलबिध है । उनकी कहानियों में जो व्यंग्य निरुपित हुआ है वह गहरी करुणा तथा मानवीयता से उपजा व्यंग्य है । इस व्यंग्य का आश्रय लेकर साहनी समाज में व्याप्त विरूपताओं को उभारते हैं । उसके लिए जिम्मेदार लोगों तथा संस्थाओं का पर्दाफास करते हैं तथा व्यापक मानव–स्थिति के बारे में चिंता का प्रकटीकरण करते हैं । प्रायः मध्यमवर्गीय जीवन की विसींगतियाँ ही साहनी के व्यंग्य का निशान बनी है । उन्होंने इस व्यंग्य के द्वारा यह स्पष्ट कर दिया है कि इन विसंगतियों का स्रोत हमारी वर्तमान व्यवस्था तथा पूँजीवादी व्यवस्था है ।

११. राष्ट्रीय स्वाभिमान की भावना

साहनी एक प्रतिबद्ध कलाकार हैं और कुछ आदर्शों के प्रति उनको शायद निर्ममता की सीमा तक मोह है । राष्ट्र के प्रति अनहद प्रेम 'रामचंदानी', 'नया मकान', 'मौका परस्त' आदि कहानियों में व्यक्त हुआ है । राष्ट्रीय आंदोलन और महात्मा गाँधी ने 'रामचंदानी' जैसे चरित्र का निर्माण किया है । उसमें जातीय व राष्ट्रीय स्वाभिमानी की आग है । होटल की अंग्रेज मालकिन जब रंग–भेद का परिचय देती है तो वह उसका भोजन खाने से इन्कार कर देता है ।

राष्ट्र के प्रति गौरव की भावना रखनेवाले स्वाभिमानी चरित्र तेजी से लुप्त होते जा रहे हैं । जहाँ साहनी अपने इतिहास की एक श्रेष्ठ परंपरा से अपने को जोड़ते हैं । 'नया मकान' का कामरेड क्रांतिकारी बनना चाहता है, परंतु भौतिक सुख–सुविधा की तृप्ति के लिए न होते हुए भी अपने को क्रांतिकारी मानना साहनी ने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया है कि क्रांतिकारी के लिए दोहरा जीवन राष्ट्र के लिए एक अभिशाप है और अक्षम्य भी है ।

'मौका परस्त' कहानी में एक राजकीय कार्यकर्ता ने चुनाव के चक्कर में सारी मानवीय संवेदनाओं को शून्य कर दिया है । साहनी जी का भावात्मक प्रेम है कि चुनाववादी की इस चक्कर में देश कहां जाएगा । इस देश में रहनेवाले करोड़ों गरीबों का क्या होगा ।

साहनी का अपने देश के प्रति गौरव है । उन्होंने अपनी कहानियों में स्पष्ट किया है कि राष्ट्र की गरिमा हम तब बचा सकेंगे जब हमारे भीतर राष्ट्रीय भावना हो । 'पोखर', 'ओ हराम जादे', 'आवाजे' आदि कहानियों में इनकी सशक्त अभिव्यक्ति हुई है ।

साहनी का आत्मविश्वास है कि अखंडित भारत को कोई तोड़ नहीं सकेगा । तोड़ने की बार–बार कोशिश की गई है और दुश्मनों को लालायित

करनेवाले ये राष्ट्र कभी भी मिटेगा नहीं । 'पोखर' कहानी में निरुपित कवि इकबाल की ये पंक्तियाँ राष्ट्र के गौरव को स्पष्ट करती है –

"कुछ बात हैं कि हस्ती मिटती नहीं हमारी
सदियों रहा है दुश्मन दोरे जहाँ हमारा ।"[४७]

निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि साहनी की कहानियाँ स्वातंत्र्यपूर्ण काल से लेकर समकालीन भारतीय समाज–जीवन के विविध पहलुओं और कोने को उजागर करती है । ये कहानियां कहीं विश्लेषण प्रस्तुत करती है, कहीं प्रश्न उठाती है, कहीं संकेत देती है । एक ओर तेज उफान और आवेग–उद्वेग से बचकर प्रगतिशील जीवन की सहजता प्रदान करने में साहनी का योगदान सराहनीय है ।

❖ उपन्यासकार के रूप में साहनी की उपलब्धियाँ

इस अध्याय की भूमिका में हम अन्य कथाकारों के बीच साहनी के साहित्यिक व्यक्तित्व की चर्चा कर चुके हैं । साहनी सफल कहानीकार की भाँति एक सफल उपन्यासकार भी हैं । उपन्यास विधा पर उनकी विशेष रुचि रही है । उनके अपने शब्दों में "व्यक्तिगत स्तर पर तो उपन्यास विधा मुझे बड़ी रास आती है । उसका फलक बड़ा होता है संभावनाओं के द्वार खुलते चले जाते हैं । कहानी और नाटक अधिक अनुशासनबद्ध विधाएँ हैं । उपन्यास का अपना अनुशासन रहता है जरुर, पर उसमें खुली छूट भी अधिक मिलती है ।"[४८]

उपन्यासकार कमलेश्वर जी के विचार बड़े महत्त्वपूर्ण हैं । साहनी की एक उपन्यासकार के रूप में सराहना करते हुए उन्होंने लिखा हे – "अनहोनी लोकप्रियता भीष्म साहनी ने प्राप्त की है । प्रत्येक तरह का पाठक उनकी रचना

की प्रतीक्षा करता था । ऐसा विरल पाठकीय सौभाग्य या तो प्रेमचंद को प्राप्त था या फिर हरिशंकर परसाई के बाद भीष्म साहनी को प्राप्त हुआ । और यह भी एक विरल घटना है कि भीष्म जी को जो यश हिन्दी में मिला वह उनके जीवित रहते हिन्दी का यश बन गया, भीष्म जी कालजयी रचनाकार थे ।"[४९]

हिन्दी साहित्य की स्वातंत्र्योत्तर धारा जिसको हमने अगले अध्याय में प्रेमचंदोत्तर धारा से विभूषित किया है । इस धारा के प्रमुख उन्यासकरों में प्रमुख हैं राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, फणीश्वरनाथ 'रेणु', मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, अमृलाल नागर, भैरवप्रसाद गुप्त, नागार्जुन, रांगेय राघव, अमृतराय, भीष्म सहनी, कमलेश्वर और विष्णुप्रभाकर आदि ।

उपन्यास-साहित्य में प्रेमचंद ने यथार्थ के जो बीज बोये थे उनका अनुसरण करते हुए ये सभी लेखक उनके पोषक स्वाधीनता-प्राप्ति के समय तक तो यह यथार्थ जीवन-दर्शन हिन्दी-साहित्य के एक व्यापक फलक के रूप में एक स्वीकृत दर्शन हो गये थे । प्रगतिवाद या मार्क्सवादी जीवन-दर्शन यथार्थवाद के अंतर्गत मान्य दर्शन है यह स्वीकारा गया है । जिनका साहित्य पूरी तरह से मार्क्सवादी जीवन-दर्शन से प्रभावित है और इन लेखको की परंपरा का निर्वाह करनेवालों में साहनी का योगदान विशिष्ट है ।

यथार्थ एवं साहित्य का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए प्रेमचंद ने कहा है कि - "आज साहित्यकार को जीवन में साहित्य रचना करना होगा । आज हमारी साहित्यिक रुचि बड़ी तेजी से बदल रही है । अब साहित्य केवल मन बहलाव की चीज नहीं है । मनोरंजन के सिवा उसका और भी कुछ उद्देश्य है - उसकी उत्कृण्ठता की वर्तमान कसौटी अनुभूति वह तीव्रता है, जिससे हमारे भावों और विचारों में गति पैदा करता है ।"[५०]

इस अध्याय की भूमिका में स्पष्ट कर चुके हैं कि साहनी प्रगतिशील लेखक हैं । साहनी का प्रगतिवादी दृष्टिकोण एवं कलाकार जिस दृष्टिकोण से जीवन, समाज और उनके विभिन्न अंगों-प्रत्यंगो को देखता है और उन्हें उसी

रूप में जनता के समक्ष प्रस्तुत करता है । साहनी के पास अपना दृष्टिकोण है, सिद्धांत है और निजी मान्यताएँ हैं, वे समाज में क्रांति लाकर इसे नवीन रूप देना चाहते हैं ।

साहनी ने जिन छः उपन्यासों को लिखा है उनके प्रत्येक उपन्यासों में नये–नये पात्रों की सृष्टि अलगअलग परिवेश में एक समाजवादी मनोवैज्ञानिक दृष्टि से की है । हिन्दी में समाजवादी उपन्यासों के संदर्भ में एन. रवीन्द्रनाथ ने लिखा है – "द्वंद्वात्मक जीवन विकास के विश्लेषण के संदर्भ में मार्क्सवाद से प्रभावित उपन्यासकारों ने उभरती हुई सामाजिक शक्ति, संघर्ष और आस्था पर बल देने के लिए सामाजिक विसंगतियों का पर्दाफाश भी किया है । इन्होंने सामंत, जमींदार, पूँजीपति, महंत, मठाधीश जैसे शोषक वर्ग की कुटिल नीतियों का तथा उनसे परिपीडित भारतीय ग्रामीण जनता के यथार्थ चित्र प्रस्तुत किये है ।"[५१]

अब हम साहनी के उपन्यासों में निरुपित उपलब्धियों की चर्चा करेंगे ।

१. अशिक्षा : परिणाम और निदान

साहनी ने अपने उपन्यासों में विभिन्न सामाजिक राजनैतिक, धार्मिक एवं आर्थिक समस्याओं को उठाया है । लेखकीय दायित्व केवल समस्याओं को प्रस्तुत कर देने तक सीमित नहीं होता बल्कि उनका निदान भी आवश्यक होता है । लेखक जब समस्या की जड़ तक नहीं पहुँच पाते तब तक अपने तथ्य को पूर्ण रूप से प्रकट नहीं कर सकते । साहनी ने अपने उपन्यासों में शिक्षा का महत्त्व समझा है और स्पष्ट करने की कोशिश की है कि मनुष्य की बहुत सारी समस्याओं की जड़ अशिक्षा है । 'झरोखे' उपन्यास का तुलसी थोड़ा ही पढ़ लेता है तो पूँजीपति लोगों की स्वार्थ भावना का शिकार बन जाता है । तुलसी के माता–पिता भी पुत्र को हीन–भावना से देखने लगते हैं, यह है हमारी वर्गीय मानसिकता ।

'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास में शिक्षा का महत्त्व निरुपित हुआ है । सुमित्रा का पति जब मृत्यु को भेटता है, तब उसके मन में एक बोझ है अशिक्षित होने का । सुमित्रा आक्रोश भरे स्वर में कहती है – "मैंने भी दो अक्षर पढ़ लिए होते तो क्या मालूम वह बच ही जाते ।"[५२]

उसीलिए वानप्रस्थजी लाख विरोधों के बावजूद भी स्कूल चलाते हैं और स्कूल चलाने मे अडिग रहते हैं ।

साहनी शिक्षा के सजग प्रहरी है । अशिक्षा किसी महामारी से कम नहीं है । 'कड़ियाँ' उपन्यास में भी हमारी मानसिक्ता का परिचय दिया है । प्रमिला के पिता के माध्यम से व्यक्त हुआ है – "क्यों इस जमातें पढ़ी हो, लड़कियों के लिए यहीं कुछ होता है और क्या ? औरत पढ़–लिख गई है इसलिए घर बरबाद हो रहे हैं ।"[५३] नारी शिक्षा के प्रति समाज की दकियानुसी विचारधारा व्यक्त है ।

शिक्षा संबंधी यही दृष्टिकोण अपने उपन्यासों में स्थापित करना साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

२. प्रेम–वैध–अवैध, यौन–कुंठा एवं दमित वासना के प्रति आक्रोश

मानव जीवन में प्रेम का प्रमुख स्थान होता है । बिना प्रेम के जीवन एक प्रकार से शुष्क मरुस्थल के समान होता है । जो प्रेम मनुष्य को विपरीत दिशा में ले जाए उसका कोई महत्त्व नहीं होता । प्रेम के इस धागे से पूरा विश्व बँधा हुआ है और संतुलित है । "वासना का पूर्व रूप भावना होता है । भावना में विकार पडँने पर वह वासना में रूपांतरित हो जाती है । काम अपने मूल स्वरूप में स्वस्थ है । विकार पड़ने पर वह विकृत हो जाता है । तब उसमें मानसिक दुर्बलता और स्वार्थ की सत्ता प्रधान हो जाती है ।"[५४]

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में प्रेम तत्त्व का गंभीर प्रभाव मिलता है । प्रेम के क्षेत्र में पुरुष और नारी की स्वतंत्रता का समर्थन करते हुए समाजवादी उपन्यासकारों ने प्रेम को भी अन्य तत्त्वों के समान ही द्वंद्वात्मक माना और अंततः जीवन की सिद्धि का प्रेरक सोपान स्वीकार किया है ।

साहनी के सभी उपन्यासों में प्रेम अपने विभिन्न रूपों में प्रकट हुआ है । प्रेमी–प्रेमिका, पति–पत्नी और पति–प्रेमिका और पत्नी के बीच त्रिकोणीय प्रेम का संचार भी हुआ है । पाश्चात्य प्रभाव एवं उसके अनुसरण से व्यक्ति की महत्त्वाकांक्षा एवं अंहग्रस्तता ने सात्विक प्रेम को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है । इसके कारण व्यक्ति के पारिवारिक एवं सामाजिक संबंधों में अलगावपन, विघटन, बिखराव आने लगा है । "अहम् पीड़ित व्यक्ति टूट जाता है झुकता नहीं और यह स्थिति न उसके लिए सुखकर होती है न दूसरों के लिए ।"[५५]

'कड़ियाँ' उपन्यास का महेन्द्र अपनी पत्नी प्रमीला को भी प्यार करना चाहता है और प्रेमिका सुषमा को भी । परंतु हमारा समाज विवाहित पुरुष के ऐसे संबंध को स्वीकार नहीं करता । अब परिस्थिति ऐसी निर्माण होती है कि वह कहीं का नहीं रहता । साहनी ने यहाँ बड़ी सतर्कता से काम लिया है । उपन्यास के अंत में महेन्द्र को सही परिस्थिति का भान हो जाता है और अफसोस होता है । साहनी प्रेम के आदर्श रूप को स्वीकारते हैं परंतु प्रेम स्वार्थ या वासना तक सीमित रह जाय इस बात के घोर विरोधी दिखाई पड़ते हैं ।

प्रेम में स्वार्थ भावना नहीं चलती । 'बसंती' उपन्यास में दीनू, बरड़ू के हाथ तीन सौ रूपये में बेचकर अपने गाँव चला जाता है । उपन्यासकार ने यौन कुण्ठा को स्पष्ट किया है – "व्यवहार में उसे किसी कोमल भावना का किसी आत्मीयता या अपनेपन का भास मिला हो ऐसा नहीं था दीनू तब भी इसका शरीर ही चिचोड़ता था । वह जब भी मना करती तो वह तमक कर बोलता एक झापड़ दूँगा । तुझे लाया किसलिए हूँ ।"[५६] साहनी ने बसंती के चारित्र्य

एवं शील की रक्षा भी की है । बसंती दीनू को अनहद चाहती है । दीनू विवाहित पुरुष है । बसंती जब तक विवाह न हुआ तब तक दीनू को हाथ भी नहीं लगाने देती उसका स्पर्श भी नहीं करती ।

'तमस' उपन्यास की प्रकाशो अल्लारखा को न चाहते हुए भी वह उसका अपहरण करके ले जाता है । शादी करने के लिए बाध्य करता है । यहां साहनी अनैतिकता पर नैतिक कार्य की मोहर लगा देते हैं । इस प्रकार के प्रेम को हम पूजनीय मानते हैं ।

'कुंतो' उपन्यास में सुषमा और जयदेव के बीच यौवन सहज आकर्षण है । एसे मौसेरे भाई–बहन के बीच के संबंध को हमारा समाज मान्य नहीं करता । यहाँ पर साहनी ने सुषमा के कौमार्य की भी रक्षा की है । और जयदेव को पतन के रास्ते से बचाया है । साहनी का वही लेखकीय दायित्व है ।

साहनी 'कड़ियाँ' उपन्यास में मानसिक कुण्ठाओं की प्रवृत्ति में बहे लेकिन जीवन के प्रति उनकी दृष्टि अंततः समाजवादी ही बनी रही । ''समाजवादी लेखक मनुष्य के इन्द्रियबोध को विकसित और परिष्कृत करता है । मनुष्य के भावबोध का विस्तार और संस्कार करता है । भावप्रवण और भाव संपन्न मनुष्य के निर्माण को संभव बनाता है । साहित्यकार संस्कृति का निर्माता है । वह मानव आत्मा का शिल्पी है । वह जीवन में उदात्त मूल्यों की स्थापना करता है । साहित्य मन को मानवीय, जन को जनवादी और मानव को मानवतावादी बनाता है ।''[५७]

'कुंतो' उपन्यास में प्रेम–मोह, वासना को स्पष्ट करते हुए प्रेम की आधारशिला साहनी ने प्रोफेसर साहब के माध्यम से व्यक्त की है – ''मनुष्य की वृत्तियों के ऊपर उसका विवेक होता है, होना चाहिए । इसी को यूनानी दार्शनिकों ने मध्यम मार्ग कहा है – ध फार एण्ड नो फर्दर । ध गोल्डन मीन ।''[५८]

साहनी ने यौन–आकर्षण का विरोध नहीं किया, परंतु जीवन का सहज एवं स्वाभाविक सत्य माना । परंतु यदि यह मानसिक कुंठा तथा दमित वासना के रूप में परिवर्तित होने लगे तो वहाँ पर विवेक के अंकुश की आवश्यकता बताते हुए मध्यम–मार्ग दिखलाया ।

साहनी का मानना है कि पुरुष पूर्ण नहीं है, स्त्री भी पूर्ण नहीं है । कोई अकेला नहीं रह सकता । सृष्टि का नियम ही यह है । सहयोग और संपर्क अनिवार्य है । जंगल में भागकर भी मन में चलनेवाली तस्वीरों को और सपनों को खत्म नहीं किया जा सकता । अपने उपन्यासों में प्रेम के आदर्श रूप की स्थापना करना साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

३. विविध समस्याओं से जूझती नारी एवं नारी की असहाय स्थिति का चित्रण

साहनी के उपन्यासों में विभिन्न समस्याओं से जूझती, संघर्षरत नारी के चित्रण मिलते हैं । पाश्चात्य प्रभाव के कारण नारी के परंपरित रूप में परिवर्तन आए हैं । जिसके मुताबिक नारी का जो यथार्थ रूप, नवीन चेतना तथा मनोवैज्ञानिक स्वरूप तथा ईर्ष्या–घृणा, द्वेष–प्रेम तथा वासना का स्पष्ट चित्रण होने लगा । डॉ. सुरेश सिन्हा के शब्दों में – ‘‘समाज में नैतिकता तथा सांस्कृतिक मर्यादाएँ खंडित हो रही थी तथा पश्चिमी प्रभाव से एक विचित्र उच्छृंखलता, नग्नता–प्रदर्शन, कामोत्तेजना, दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली के कारण नारियों का गलत दिशा में प्रयाण आदि ने परंपरित नायिका की परिकल्पना के संबंध में नई मान्यताएँ स्थापित की । इन्हें आत्मपीड़न सहन करने का भाव, विद्रोह का भाव, अतीव वासनात्मक वर्गो में विभाजित किया जा सकता है ।’’[५६]

साहनी में नारी–मन की पर्तों को खोलने की गहरी पकड़ है और वे अपनी सजग दृष्टि से परिवेश को यथार्थ धरातल पर अंकित करने में सक्षम है । साहनी के उपन्यासों में नारी–चरित्रों पर दृष्टिपात किया जाय तो उपयुक्त

तीनों स्वरूपों की झाँकी देखने को मिलती है । 'कड़ियाँ' उपन्यास की प्रमीला, ' बसंती' उपन्यास की 'बसंती', 'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास की 'रुकमणी' और 'कुंतो' आदि सब आत्मपीड़न का शिकार बनी हुई नारियाँ है । बाद में उनका विद्रोहात्मक स्वर भी देखने को मिलता है ।

श्याम कश्यप के शब्दों में ''बसंती दीनू से प्रेम करती है, जो वस्तुतः यौन–प्रेम का ही रूप है और उससे उसका विवाह भी इस यौन–प्रेम पर आधारित विवाह है, भले ही पूँजीवादी समाज में बर्बर युग के अवशेषों का प्रतीक दीनू इसे मान्यता न दे । पूँजीवादी एकनिष्ठ विवाह की दास्ता की तुलना में यौन–प्रेम पर आधारित विवाह निःसंदेह सच्चा, स्वतंत्र और वास्तव में नैतिक है ।''[६०]

'कुंतो' उपन्यास की नायिका सारी जिन्दगी ठोकर खाकर भी जयदेव की शरण में सुख का अनुभव करती है । कुंतो जयदेव के प्रति विद्रोह नहीं करती । सब कुछ सहना और कुछ भी नहीं कहना ये गुण उसमें देखने को मिलता है । ये शक्ति नारी के भीतर परंपरित रूप से मिली हुई है ।

'कड़ियाँ' उपन्यास में सुषमा के भीतर यह बात देखने को नहीं मिलती । वह तो महेन्द्र को मुँह तोड़ प्रत्युत्तर देती है । परंतु प्रमीला की स्थिति बड़ी ही दयनीय है । प्रमीला न केवल पढ़ी–लिख थी, बल्कि आर्थिक रूप से भी बहुत कमजोर थी । फिर भी आई हुई भयानक परिस्थितियों से वह भागती नहीं परंतु मुकाबला करती है और अंततः सफलता भी मिलती है ।

विवेक द्विवेदी के शब्दों में ''भीष्म साहनी ने कड़ियाँ और कुंतो के माध्यम से ऐसे दंपतियों की सहज अभिव्यक्ति की है जो क्रोध, ईर्ष्या और संदेह की पकड़ में पूरी तरह से जकड़े हुए हैं । जिन्हें सहज रागात्मकता, उष्मा और अर्थवत्ता की तलाश है । 'कड़ियाँ' के महेन्द्र प्रभीला और सुषमा, 'कुंतो' के जयदेव, कुंतो और सुषमा कुछ ऐसी ही ठोस जमीन की तलाश में भटक रहे हैं ।''[६१]

साहनी के शब्दों में – ''मैं जाँत–पाँत का विरोध करता हूँ । नारी को भी समाज में पूर्ण समानता के अधिकार मिले, इसका समर्थक हूँ ।''[६२] साहनी ने अपने उपन्यासों में नारी की असहायता का कारण उसकी आर्थिक निर्भरता एवं अशिक्षा को माना है । नारी के भीतर आत्मविश्वास की भी कमी है और भाग्य पर विश्वास कर बैठती है । 'बसंती' उपन्यास की बसंती न तो भाग्य पर विश्वास रखती है और न अपना आत्म विश्वास खो बैठती है । उसमें एक गजब प्रकार की जागृति है, विद्रोह की भावना है । वह परिवार, समाज परंपरा आदि का विरोध करके अपनी मर्जी के अनुसार विवाह करती है और विवाह–संस्था को भी चुनौती दे जाती है । साहनी की ये सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

४. सांप्रदायिकता एक विकार : तलाश

साहनी ने 'तमस' उपन्यास में सांप्रदायिकता की चर्चा की है । सुप्रसिद्ध कथाकार अमरकान्त के शब्दों में ''भीष्म साहनी ने सांप्रदायिकता जैसे नाजुक विषय पर सही दृष्टि से लिखने के लिए जिस अपरिसीम धैर्य की जरुरत है, उसका आभास इस रचना को पढ़कर ही हो सकता है ।''[६३]

साहनी सांप्रदायिकता की तह में अपने को धर्म–निरपेक्ष घोषित करते हुए लिखते हैं – ''मैं धर्म–निरपेक्ष संस्कृति का समर्थक हूँ, जो हमें इतिहास में विरासत में मिली है – सांप्रदायिकता की समस्या बँटवारे के साथ खत्म नहीं हो गई, वह मनोवृत्ति, वह रवैया आज भी हमारे समाज में रह–रहकर अपना भयावह रूप दिखाते हैं ।''[६४]

पूर्व पंजाब की धरती पर एवं भारत–पाक विभाजन को लेकर इस धरती पर हुए दंगों को लेकर अन्य कई उपन्यास लिखे गये हैं । परंतु 'तमस' उपन्यास को विशेष ख्याति प्राप्त हुई है । क्योंकि साहनी स्वयं उसके शिकार हुए थे और अपनी निगाहों से इन घटनाओं को एवं अमानवीयता को देखा था ।

श्री हरियश के शब्दों में कुल मिलाकर यह उपन्यास विभाजन से उत्पन्न तमाम संदर्भो को, मनःस्थितियों को, संवेदनाओं को अपनी पूर्ण पहचान के बाद साथ सामने रखता है ।"[६५]

'झूठा–सच' के बाद विभाजन का जितना प्रामाणिक चित्रण इस उपन्यास में हुआ है उतना अन्य किसी कृति में नहीं हो सका है । इसका कारण यह है कि भीष्म साहनी स्वयं विभाजन की यंत्रणा से गुजर कर निकले हैं और इसलिए उनके अनुभव इस उपन्यास को महत्त्वपूर्ण बनाते हैं ।"[६६]

साहनी ने 'तमस' उपन्यास में तीन स्थितियों को रेखांकित किया है । सांप्रदायिक तनाव का चित्रण, राजनीति में फैले भ्रष्टाचार का चित्रण, एवं धार्मिक अंधविश्वासों का चित्रण । भारत–विभाजन से पूर्व और पश्चात् व्याप्त सांप्रदायिक तनाव की परिस्थितियों और घटनाओं को दोहराना मात्र साहनी का अभिमत नहीं है । रक्तरंजित अतीत से परिचित कराना है । जो हमारा देश देख चुका है ।

साहनी ने स्पष्ट किया है कि धर्म से धार्मिकता खतरनाक है । असामाजिक तत्त्व केवल अपने निहित स्वार्थ के लिए हिन्दू–मुसलमानों में धार्मिक विद्वेष फैलाकर भयंकर तनाव खड़ा कर देते हैं । लोग एकदम अंधे होकर उसके शिकार हो जाते हैं ।

साहनी मानवीय संवेदना और जीवन की आस्था के रचनाकार है और इस अर्थ में वे छद्‌म संवेदना और छद्‌म आस्था के विरोधी हैं । 'तमस' के हरनामसिंह के साथ रमजान की यही मानवीय संवेदना है । "दो तीन बार रमजान ने कुल्हाडी उठाने की कोशिश की पर कुल्हाडी हाथ में रहते हुए भी उसे उठा नहीं पाया । फकीर को मारना और बात है, अपने घर के अंदर जान–पहचान के पनाहजीज को मारना, दूसरी बात ।"[६७]

साहनी ने सांप्रदायिकता के पीछे जिम्मेदार राजनीतिज्ञ लोगों में फैले भ्रष्टाचार को बखूबी से उद्‌घाटित किया है । अंग्रेज सरकार और उससे मिले कुछ हिन्दुस्तानी तथा कांग्रेसी सदस्य, मुस्लिम लोग, लोगों के कुरूप चेहरों को

लेखक ने बेनकाब कर दिया है । 'कुंतो' उपन्यास में क्रांतिकारी हीरालाल कहता है – "ओ बख्शी जी । वे तो हमें शहर में भून सकते हैं, भून डालेंगे । हम तो फक्त अपनी आवाज़ उठा सकते हैं । क्यों हम अपनी आवाज़ भी न उठाएँ ।"[६८]

'तमस' उपन्यास में धार्मिक अंधविश्वासों का भी यथा तथ्य चित्रण हुआ है । समालोचक राजेश्वर सक्सेना के शब्दों में – " 'तमस' में राजनीति और धर्म के अंतर्विरोध को स्पष्ट किया गया है – धर्म ने उन्मादियों को पैदा किया है । उसका पुराना इतिहास है, संस्कृति है, उनके अपने शास्त्र हैं । साहनी ने 'तमस' में राजनीति के निमित्त धर्म का पर्दाफाश किया है ।"[६९]

साहनी ने राष्ट्र की महत्त्वपूर्ण समस्या को चित्रित करके उनका निदान किया है और स्पष्ट किया है कि निरर्थक सांप्रदायिकता मनुष्य की प्रगति में अवरोधक है । ये साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

डॉ. रीना पटेल के शब्दों में – " 'तमस' उपन्यास मानवतावाद की अद्यतन सीमाओं का अतिक्रमण कर सांप्रदायिकता की समस्या और संपृक्त विचारधारात्मक संदर्भो को नये और वैज्ञानिक यथार्थवादी दृष्टिकोण के साथ व्याख्यायित करता है ।"[७०]

साहनी का स्थान हिन्दी कथा–साहित्य में पर्याप्त महत्त्वपूर्ण है । 'तमस' जैसी उनकी कृति हिन्दी कथा–साहित्य की तथा उन्हें अंतर्राष्ट्रीय स्तर की ख्याति देने में सक्षम रही हैं । इसे हिन्दी कथा–साहित्य के गौरव तथा साहनी की एकनिष्ठ साहित्य–साधना का प्रमाण माना जा सकता है । कमलेश्वर के शब्दों में – "साहनी ने बेचैन हो जाने का दर्द और दंश को पहचाना था और उन्होंने विभाजन की त्रासदी की घृणा, हिंसा और वैमनस्य के विषाक्त रक्त के सागर का मंथन करते हए संवेदना और इन्सानी सौहार्द्र के महामूल्य निकाले थे ।"[७१] अतः हम कह सकते हैं कि धर्म–निरपेक्ष होने का अर्थ है अपने भौतिक परिवेश

के प्रति बौद्धिक होना तथा सामाजिक–आर्थिक सहकार में कर्म की चेतना को ग्रहण करना ।

५. पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक विचारों के बीच द्वंद्व–मानवीय मूल्यों के ह्रास का चित्रण

'आवश्यकता अविष्कार की जननी है । इसलिए किसी वस्तु का अभाव या कमी होने पर उस वस्तु की आवश्यकता होती है और आवश्यकता होने पर उस वस्तु का अविष्कार किया जाता है । अतः अभाव या आवश्यकता होने पर ही मूल्यों की सृष्टि संभव होती है ।"[७२]

"मूल्य का तात्पर्य उन सिद्धांतों, विचारों, संभावनाओं और क्रियाओं से है जो व्यक्ति और समाज के मंगल के लिए होती हैं । कभी ये मूल्य हमें बने–बनाए रूप में परंपराओं से प्राप्त होते हैं और कभी हमें नए समय और समाज के संदर्भ में इन्हें तोड़कर कुछ नए मूल्यों की स्थापना करनी पड़ती है ।"[७३]

साहनी समाजवादी धारा के प्रगतिवादी लेखक हैं । प्रगतिवादी लेखक परंपरागत मान्यताओं का तीव्र विरोध कर नवीन मूल्यों तथा मान्यताओं की स्थापना करते हैं । साहनी की पात्र सृष्टि में कुछ पात्र परंपरागत मूल्यों का विरोध करते हैं और कुछ परंपरागत मूल्यों का आदर करते हैं । 'बसंती' उपन्यास की बसंती अपने पिता को चुनौती देकर अपनी मर्जी के अनुसार अपने मनपसंद युवक के साथ शादी कर लेती है । परंपरित मूल्यों को यह सबसे बड़ी चुनौती है ।

'कड़ियाँ' उपन्यास का महेन्द्र विवाहित है । प्रमिला महेन्द्र को परमेश्वर मानती है, गृहस्थी बनाये रखना चाहती है । साहनी का प्रश्नार्थ है कि इस प्रकार गृहस्थी कैसे तल सकती है । यह है पाश्चात्य प्रभाव का परिणाम यहाँ पर महेन्द्र की स्थिति भी द्वंद्व से घिरी हुई है । पत्नी–प्रेयसी किसी को भी वह

वफादार नहीं रह सकता । ऐसी ही स्थिति का निर्माण गाँवों को छोड़कर शहर में आए हुए लोग आधुनिकता के मोह में कन्या–विक्रय भ्रूण–विक्रय, पत्नी विक्रय आदि मूल्य ह्रास का ही परिणाम है । 'बसंती' उपन्यास में साहनी ने इस की चर्चा की है ।

इस प्रकार साहनी न तो नये मूल्यों के प्रति आस्था रखते हैं और न तो परंपरागत मूल्यों के प्रति । वह बीच के मानव कल्याणकारी मूल्यों की सराहना करते है । ये समाजवादी उपन्यासकार के रूप में साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि है । साहनी अपने उपन्यास साहित्य में जहाँ एक ओर लोकमंगल, समाज–सत्य का आग्रह दिखाई देता है वहाँ साहनी व्यक्ति–चेतना के साथ पूरी तरह से सामंजस्य स्थापित करते हैं । साहनी जीवन की वस्तुस्थिति तथा संस्थापित मूल्यों के प्रति आस्था रखते हैं परंतु समयानुसार बदलाव की मांग भी करते हैं । यह उनकी लेखकीय विशेषता है । 'तमस' उपन्यास में भी मानव मूल्यों की चर्चा की है ।

इन तथ्यों से यह संकेत मिलता है कि साहनी मनुष्य के विकास के प्रति विशेष प्रतिबद्ध है । कोई भी मूल्य या सिद्धांत जो मानव के कल्याण के लिए उपयोगी है उसे स्वीकार्य मानते हैं । इसे हम लेखक की प्रतगामी नहीं बल्कि प्रगतिशील विचारधारा कह सकते हैं ।

६. शोषक–शोषित समाज और व्यवस्था के प्रति व्यंग्य

मनुष्य के जीवन में सुख–सुविधा विकास एवं शांति के लिए अर्थ की प्रधानता रहती है । मानव–समुदाय का सांस्कृतिक जीवन मुख्य रूप से आर्थिक व्यवस्था पर निर्भर है । आर्थिक व्यवस्था उत्पादन–विधि पर निर्भर मानी जाती है । आर्थिक व्यवस्था और उत्पादन–विधि दोनों के बीच संतुलन का होना आवश्यक माना गया है । स्वतंत्रता के पश्चात् औद्योगिकरण की प्रक्रिया से प्राचीन समय की तरफ कुछ नये वर्ग का उदय हुआ । उन्हें समाजवादियों की

भाषा में पूँजीपति वर्ग के नाम से जाना जाता है । शोषक और शोषित वर्ग ये आर्थिक असमानता के कारण पैदा हुआ वर्ग है ।

आज़ादी के इतने वर्षो के बाद भी पूँजीवादी व्यवस्था में मील–मालिकों, पेशेवर सुदखोर एवं भ्रष्ट पदाधिकारी और श्रमिकवर्ग, मध्यमवर्ग, निम्नवर्ग का संघर्ष पहले से अधिक त्रासदी पूर्ण है । और निरंतर चल ही रहा है ।

साहनी ने अपने उपन्यास–साहित्य में मजदूर और पूँजीपति का संघर्ष चित्रित किया है । साहनी का संपर्क केवल नगर–जीवन के साथ ही रहा है । इसलिए किसान, जमींदार का चित्रण नहीं मिलता है । परंतु मजदूर, पूँजीपति के संघर्ष ही इनके उपन्यासों में चित्रित हुए हैं ।

'बसंती', 'झरोखे', 'तमस' आदि उपन्यासों में अभिव्यक्त मजदूर पूँजीपति संघर्ष यथार्थ ढंग से चित्रित हुआ है । 'बसंती' उपन्यास में पूँजीपति लोग गरीब लोगों की बस्तियाँ उजाड़ देते हैं, उनके लिए केवल मात्र वह तमाशा है । 'तमस' उपन्यास में पूँजीपति लोग अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए गरीब जनता को भड़काते हैं ।

'बसंती' उपन्यास में उपन्यासकार की टिप्पणि कितनी सटीक है –

''जितना जल्दी हो शके शुरु के तीस–तालीस घरों को तोड़ डालना जरुरी था, ताकि बस्ती रहने के लिए नकारा हो जाय और लोग वहाँ से निकल जाएँ बस्ती खाली कर दें ।''[७४] यह है हमारी वर्गीय मानसिकता । साहनी ने शोषक और शोषितों की मानसिकता अपने उपन्यासों में स्पष्ट की है । जब तक असमानता रहेगी तब तक उसमें कुछ भी सुधारा नहीं हो सकता । साहनी के उपन्यासों में शोषक और शोषित वर्ग–वैषम्य के धरातल पर चित्रित हए हैं जो साहनी की विशेष उपलब्धि है ।

साहनी का मजदूरों और पूँजीपतियों के साथ संघर्ष विशिष्ट प्रकार का है । यहां कोई नारेबाजी, हडताल जुलूस, सभा नहीं है, परंतु पात्रों के भीतर मनोवैज्ञानिक ढंग से शक्ति का स्त्रोत भर देते हैं । जो जीवन के प्रति अड़िग

आस्था रखते हुए निराश नहीं होते । भविष्य की क्रांति और जागृति के बीज़ उनके भीतर जो देते हैं । जिससे पूँजीपति लोग बहुत डरते हैं, भयभीत होते हैं । शोषितों में ये शक्ति का संचार करना साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाएगी ।

साहनी का लक्ष्य मानव की सामूहिक मुक्ति है । वे उन समस्त परंपरागत रुढ़ियों के विरोधी हैं, जो मनुष्य और मनुष्य के बीच भेद उत्पन्न कर उसका थोड़े से लोगों के हित में शोषण करती हो ।

साहनी ने शोषक और शोषित के बीच की भेदरेखा को अधिक स्पष्ट करने के लिए व्यंग्य का सहारा लिया है । व्यंग्य की यह परंपरा भारतेन्दु एवं प्रेमचंद में अधिक सशक्त ढंग से निरुपित हुई थी । व्यग्य के क्षेत्र में साहनी की भी अद्वितीय भूमिका रही है । साहनी का व्यंग्य चोटदार मार्मिक और गहरे सामाजिक आशयों से पूर्ण होता है । साहनी ने परंपराओं तथा रीति–नीतियों की खिल्ली उड़ाई है तथा उन्हें प्रश्रय देनेवाली शक्तियों पर भी कडे प्रहार किए हैं । व्यंग्य का यह सामाजिक रूप उनकी कला की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जायेगी ।

७. राष्ट्रीय स्वाधीनता

साहनी ने अपने उपन्यासों में राष्ट्रीय स्वाधिनता और उससे जुड़ी हुई समस्याओं को चित्रित करते हुए चर्चा की है, कि राष्ट्र के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है । राष्ट्र के गौरव, गरिमा एवं अखंडितता को हम कैसे बनाए रखेंगे ।

साहनी ने 'मय्यादास की माड़ी', 'तमस' और 'कुंतो' में राष्ट्रीय स्वाधीनता की चर्चा की है । इसमें कई पात्र ऐसे है जो राष्ट्र के लिए अपने आदर्श और सिद्धांत पर अड़िग रहे । 'कुंतो' उपन्यास के हिरालाल 'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास के लेखराज, दीवान धनपत आदि ऐसे पात्र हैं जो राष्ट्र के लिए प्राण

न्यौछावर करने के लिए भी तैयार है । राष्ट्रीय स्वाधीनता के नाम पर कितने लोगों ने अपने प्राणों की आहूति दी परंतु लेशमात्र किसी भी प्रकार की अपेक्षा नहीं रखी ।

देश के बँटवारे के समय का वातावरण चित्रित करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया है कि इस भाग–दौड़ में न जाने कितनी कत्ले हुई हैं कितने घर उज़डे है, बेघर हो गये हैं । आपसी कलह मिटाकर ही हम अपने देश की रक्षा एवं गरिमा को बनाए रखेंगे । हिन्दू–मुस्लिम एकता के संदर्भ में नाटक मंडली के माध्यम से गाया हुआ ये गीत आह्लादक है जो ‘कुंतो’ उपन्यास का है –

"सुनो हिन्द के रहनेवाले सुनो सुनो !
ये किन बच्चों की चीखें हैं, किस दुःखिया माँ की आहें हैं,
किस बेवा दुल्हन की फरियाद लिए, खामोश निगाहे हैं ।
हम हिन्दू हैं, हम मुस्लिम हैं हम सब गरीब दुखियारे
सब एक ही विपदा के मारे, बद करो, बंदकरो यह खून की होली ।"[७४]

इस प्रकार साहनी जी ने हिन्दू–मुस्लिम एकता को वापस रखते हुए यह बताने का प्रयत्न किया है कि चाहे ज्ञाति से ऊपर देश की सुरक्षा और मानवता की रक्षा है । मानवीय एवं राष्ट्रीय–चेतना का इससे उत्तम उदाहरण अैर क्या हो सकता है ?

८. वैश्विक समस्या जन–संख्या–विस्फोट एवं सांप्रदायिक संघर्ष

साहनी के उपन्यासों में बढ़ती हुई जनसंख्या को लेकर ‘बसंती’ एवं ‘मय्यादास की माड़ी’ उपन्यास में अंगुलि निर्देश किया है । बढ़ती हुई जनसंख्या सभी समस्याओं की जड़ है । यह समस्या केवल भारतदेश की ही नहीं परंतु पूरे विश्व की समस्या है । कई राष्ट्रों ने उन पर ध्यान देकर रोक लगाने की

कोशिश की है ऐसी समस्या पर विचार करना साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

सांप्रदायिक संघर्ष भी आज वैश्विक समस्या बनी हुई है । सारा विश्व आज इस समस्या से काँप रहा है । इसलिए यह साहनी की वैश्विक उपलब्धि ही मानी जायेगी ।

६. यथार्थ चित्रण

अपने सामाजिक उपन्यासों में साहनी ने यथार्थ चित्रण की भूमिका का सम्यक् निर्वाह किया है । यहाँ भी वे आधुनिक जीवन की विविध समस्याओं के उद्घाटन में प्रेमचंद की परंपरा का ही निर्वाह करते हैं । आधुनिक जीवन के वैषम्य का, उसकी विकृतियों का, उसकी समस्याओं तथा उसके भीतर पलनेवाले विविध वर्गो का उन्होंने बहुत ही सजीव तथा सशक्त चित्रण किया है । प्रेमचंद की ही भाँति साहनी ने सामान्य जन–जीवन और सामान्य भूमिका के पात्रों को अपनी मानवीय संवेदना के अधिकारी बनाया है । साहनी के उपन्यासों का प्रतिपाद्य विषय शहर के जीवन को केन्द्र में रखकर चित्रित हुआ है । साहनी के उपन्यासों में नागरिक जीवन की समूची घुटन के बीच किसी प्रकार आगे की ओर घिसटते हुए मध्यम वर्ग की उसकी सारी पीड़ा और सारी आशा–आकांक्षाओं के साथ अभिव्यक्ति दी गई है । यह यथार्थवाद साहनी के कृतित्व की बहुत बड़ी निधि है । सामाजिक यथार्थ के प्रति साहनी की यह निष्ठा उनकी सामाजिक–चेतना का ही प्रमाण मानी जाएगी । यह कहने में जरा भी अतिश्योक्ति नहीं है । 'तमस', 'बसंती', 'कड़ियाँ' एवं 'कुंतो' आदि सभी उपन्यासों में यथार्थ का ही पुट अधिक दिखाई देता है ।

साहनी की कृतियाँ प्रेमचंद–परंपरा के अन्य कथाकारों की भाँति उपन्यास की सहज रचना–पद्धति का आधार लेकर लिखी गई हैं । उनकी शिल्पगत ये भूमिकाएँ कहीं भी इतनी दुरुह नहीं हो पायी है कि वे साहित्य की वस्तुगत

क्षमता तथा संवेदनागत प्रभाव को कम करने में सहायक बन सकी हो । साहनी ने आधुनिक प्रयोगवादिता से अपने को पूरी तरह अलग रखा है । उपन्यास-रचना को एक गंभीर उद्देश्य के रूप में मान्यता दिये रहना साहनी की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाएगी । जनता के नैतिक संघर्ष के प्रति समझदारी पैदा करना भी साहनी के कथा यथार्थवाद की विशेषता है ।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि हिन्दी कथा-साहित्य की दो सशक्त धारा कहानी व उपन्यास में साहनी सिद्ध हस्ताक्षर हैं । प्रगतिवादी कथाकार होते हुए भी प्रेमचंद की परंपरा का पूरी तरह से उन्होंने निर्वाह किया है । समाज के तमाम वर्ग तथा सभी समस्याओं को चित्रित करके उनका निदान एवं समाधान दिया है । सचमुच साहनी एक मानवतावादी एवं जनवादी कथाकार रहे । परिवर्तित युगके साथ-साथ साहित्य के तथ्य को बनाए रखना साहनी के लेखकीय दायित्व की सबसे बड़ी विशेषता है । साहनी के लेखन से यह स्पष्ट हो सका है कि जीवन की वैचारिकता को सीमित ढंग से नहीं देखा जा सकता क्योंकि उनकी अनेक रचनाओं में ऐसी कलात्मकता है, ऐसा सोच एवं व्यापक चिंता है, जिससे वे हमारे हिन्दी साहित्य की विशेष उपलब्धियाँ बन गई हैं । मूल्यों के विघटन की पड़ताल एवं पूँजीवादी व्यवसथा में मध्यमवर्ग तथा निम्नवर्ग के द्वंद्वात्मक संघर्षरत जीवन को ईमानदारी से व्यक्त किया है, उनमें साहनी अग्रगण्य है ।

(१) सीमाएं

प्रत्येक महत्त्वपूर्ण कथाकार के संदर्भ में उपलब्धियों के साथ-साथ सीमाओं का भी एक छोटा अध्याय संलग्न रहा करता है । कथाकार साहनी ने कहानी व उपन्यास की कथावस्तु की सामग्री यथार्थ जीवन से ली है । उनके कथानक का आधार हमारा पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन

है । उन्होंने नगरीय परिवेश को माध्यम बनाकर उनकी समस्याओं को चित्रित किया, निदान किया और समाधान भी दिया । इसके बावजूद भी उनकी कहानियों एवं उपन्यासों की कुछ सीमाएँ हैं । यद्यपि ये सीमाएँ उनकी उपलब्धियों की तुलना में कोई विशेष महत्त्व नहीं रखती ।

यहाँ अपने कथाकार साहनी की कहानियों व उपन्यासों की इन सीमओं को प्रस्तुत करने का बाल–प्रयास किया है । जिससे हमारा मतलब केवल उनके साहित्य की कलागत सामान्य त्रुटियों का दिग्दर्शन कराने का नहीं रहा है । हम केवल साहनी के चिन्तन की उस सीमा का ही उल्लेख करना चाहेंगे जिसकी ओर प्रायः ही समीक्षकों ने संकेत किया है । और साहनी ने स्वयं भी स्वीकार किया है ।

योगेन्द्र बख्शी ने साहनी की कहानियों की समीक्षा करते हुए साहनी की सीमा–रेखा के प्रति इन शब्दों में संकेत किया है – ''मुझे लगता है कि भीष्म साहनी के समूचे कहानी साहित्य में सबसे ज्यादा मुखर किनारे–किनारे चलने की प्रवृत्ति है ।''[७६]

अपनी इस सीमा–रेखा की स्पष्टता करते हुए साहनी इन शब्दों में स्वीकार करते हैं – ''मेरे अध्यापक ने मुझे क्या दिया ! साहित्य–प्रेम । किनारे–किनारे चलने की प्रवृत्ति ।''[७७]

असगर वजाहत ने साहनी से साक्षात्कार के समय उनकी सीमा–रेखा के प्रति संकेत देते हुए साहनी से पूछा था कि – ''अक्सर आपकी कहानियों पर आरोप लगाया जाता है कि 'चीफ की दावत' से लेकर आपकी नवीनतम कहानी तक की बुनावट, पात्रों तथा परिस्थितियों के विश्लेषण की क्षमता और पूरी संवेदनात्मक दृष्टि में कोई परिवर्तन नहीं आया है, और सभी में एक प्रकार का सरलीकरण पाया जाता है ।''[७८]

साहनी ने प्रत्युतर देते हुए इन शब्दों में अपनी सीमा–रेखा को स्वीकार किया था – ''अगर कुछ लोगों को मेरी कहानियों में यह दोष दिखाई देता है

तो यह उनकी नज़र की गहराई और मेरी कहानियों का उथलापन ही दिखाता है .. हो सकता है यह मेरी सीमा हो... या असमर्थता हो... कोशिश तो सभी लेखक यही करते हैं कि जीवन के जिस प्रसंग पर वे लिख रहे हैं, उसकी गहराई में जाए, सतही पर न चलें । मैं भी यही कोशिश करता हूँ ।"[७९]

साहनी की विचारधारा को लेकर असगर वजाहत ने साहनी से साक्षात्कार करते हुए साहनी की सीमा–रेखा के प्रति संकेत दिया था – "वह सभी जानते हैं कि मार्क्सवादी दृष्टिकोण से आप जीवन को देखते हैं और साहित्य में लाते हैं । क्या आपकी विचारधारा में कहीं–कहीं पर कोई अनावश्यक दबाव तो नहीं डालती... जैसे आप लिखना कुछ चाहते हैं, पर विचारधारा के दबाव में लिखते कुछ और हों... कुछ लेखकों के साथ ऐसा हुआ है या होता भी है... क्या नई विचारधारा के प्रति अतिरिक्त अति उत्साह दिखाने का मोह तो नहीं रहा ।"[८०]

साहनी ने इसका प्रत्युतर देते हुए संकेत दिया था कि "ऐसी भूलें हो सकती हैं और विशेष दौर में हुई भी हैं कभी–कभी अत्यधिक उत्साह के कारण, पर यह विचारधारा का दोष नहीं है ।"[८१]

दिनेश शर्मा ने साहनी के साथ बात–चीत करते हुए इस प्रकार टिप्पणी की थी – "डॉ. साहनी आपके ज्यादातर उपन्यासों में मध्यमवर्ग की बदलती हुई प्रवृतियों का चित्रण है । आपने अपने लेखन को ऐसे विषय तक क्यों सीमित रखा ।"[८२]

साहनी ने प्रत्युतर देते हुए कहा था कि – "कोई भी उन्हीं चीजों के बारे में विश्वास के साथ लिख पाता है, जिन्हें वह जानता है या जिनका वह अन्य बातों के बजाय ज्यादा गहराई से अनुभव करता है । अपनी ज्यादातर जिंदगी मैंने छोटे शहरों या कुछ बड़े शहरों में गुजारी है और इसलिए मेरे अनुभव का दायरा भी मध्यमवर्ग निम्न मध्यमवर्ग और मध्यमवर्ग तक ही रहा है ।"[८३]

सुप्रसिद्ध लेखिका कृष्णा सोबती साहनी की सीमा–रेखा का इन शब्दों में संकेत देती हैं –

"भीष्म का पूरा व्यक्तित्व दाएँ–बाएँ का विस्तार नहीं । उनकी शख्सियत गहराई में बड़ी सादगी से अटी है । इसी से कई लोगों को भीष्म के लेखन की लकीर कुछ सपाट मालूम होती है । शायद इसलिए कि उनके समूचे लेखन में साधारण पात्रों की बहुलता है । अनोखापन नहीं ।"[८४]

सुप्रसिद्ध उपन्यासकार राजेन्द्रयादव ने साहनी से मुलाकात करते समय साहनी से प्रश्न किया था । जिसमें साहनी की सीमा–रेखा स्पष्ट होती है – 'तमस' बहुत कुछ पक्षीय और मैकेनिक उपन्यास है । इसमें सबसे अच्छा हिस्सा वहीं है, जहाँ सूअर मारा जाता है ।" भीष्म ने कहा था – "मैंने आज तक सूअर भारते नहीं देखा है, दरअसल भीष्म ने जहाँ सिर्फ अनुभव और स्मृति का सहारा लिया है, वहाँ वह कमजोर हैं । देखा हुआ यथार्थ प्रस्तुत करते समय रचनाकार छूट नहीं ले पाता ।"[८५]

दिनेश शर्मा ने साहनी के साथ बात–चीत करते यह संकेत दिया था कि – "समीक्षकों का कहना है कि (तमस) उसके तीन चरित्र–सिख, हिन्दू और मूसलमान जो शायद आपके विचारों के प्रवकता है ऊपर से थोपे हुए हैं । कहानी के साथ उनकी संगति नहीं बैठती ।"[८६]

साहनी के उपन्यासों में साहनी के चिंतन की एक सीमा यह भी है कि समस्या का समाधान मध्यम वर्ग से खोजते हैं । 'कड़ियाँ' उपन्यास का महेन्द्र जो विवाहिता होते हुए भी सुषमा को चाहता है । गृहस्थी टूट जाने की नोबत खड़ी हुई है । यहाँ पर साहनी इस समस्या का समाधान तीनों को साथ रहने का परामर्श देते हैं ।

वहीं चिंतन 'बसंती' उपन्यास में भी है जहाँ दीनू विवाहिता पत्नी एवं बसंती को एक घर में साथ रखता है । इस प्रकार के समाधान की हमारी

मानसिकता युगीन परिवेश में समझौतावादी नहीं रही है । यह समन्वयवादी चिंतन शायद अधिक व्यावहारिक नहीं लगता ।

(२) संभावनाएँ

जहाँ तक संभावनाओं का प्रश्न है तो हम इतना ही कहना चाहेंगे कि साहनी हिन्दी के उन थोड़े से कलाकारों में है जिन्होंने साहित्यिक जीवन का प्रारंभ 'नीली आँखें' कहानी से किया । उन्होंने आठ कहानी संग्रह एवं छः उपन्यास साहित्य रचना देकर के ११ जुलाई २००३ की शाम को नई दिल्ली में यों कहकर सदा के लिए बिदा हो गये –

"रात सारी तो हंगामा गुस्तरी में कही
सहेर करीब है, उल्लाह का नाम ले साकी ।"[८७]

युगीन परिवेश में एवं विज्ञान के युग में चारों ओर सुख, सुविधा और साधन की कमी नहीं है, फिर भी मनुष्य–बेचैन है, भटक गया है । ऐसी परिस्थिति में साहनी ने जिस मानवतावाद को स्वीकार किया है वह वैज्ञानिक समाजवाद है । जो श्रमजीवी–समुदाय को सामाजिक शोषण से मुक्ति दिलाकर क्षमता पर आधारित उस समाज का निर्माण करता है जो सभी मनुष्यों के सामंजस्यपूर्ण विकास और सभी व्यक्तियों की वास्तविक स्वतंत्रता के लिए अनिवार्य है । वही प्रेरणा हमें साहनी के कथा–साहित्य में मिलती है । एक नई दिशा–दृष्टि देने में उनका साहित्य समर्थ है ।

वर्तमान युग की सबसे जहरिली–समस्या, सांप्रदायिकता की है । आज भी हमारे भीतर में 'तमस' छाया हुआ है । स्वतंत्रता के पूर्व और आज भी सांप्रदायिकता का तमस दूर नहीं हुआ है । भारतीय जनता के मनोजगत पर अभी भी सांप्रदायिकता का तमस छाया हुआ है । सांप्रदायिकता के तमस को कम करने के लिए साहनी का 'तमस' उपन्यास प्रेरित करता है कि हिन्दी साहित्य में कम से कम दर्जनों उपन्यास लिखे जा सकते हैं ।

साहनी की कलम तो अब विराम ले चुकी है परंतु उनका साहित्य हमें कई प्रकार की संभावनाओं से प्रेरित करता रहेगा । साहनी से विपुल साहित्य सर्जन की संभावनाएँ थी पर काल के कठोर हाथों ने हिन्दी–जगत के एक जाज्वल्यमान सर्जक को समय के पहले ही दबोच डाला । यह हिन्दी–साहित्य जगत की एक अपूरणीय क्षति कही जाएगी ।

संदर्भ–संकेत :

क्रम	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ क्रमांक
१	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	६६
२	कहानीकार भीष्म साहनी	डॉ. रीना पटेल	२०
३	आजकल फरवरी २००४ अंक १०	सं. विश्वनाथ रामशेष	३०
४	आजकल फरवरी २००४ अंक १०	सं. विश्वनाथ रामशेष	५
५	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२४७
६	भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य	विवेक द्विवेदी	३६
७	सारिका १६६०		४३
८	भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य	विवेक द्विवेदी	३७
६	प्रतिनिधि कहानियाँ	भीष्म साहनी	३
१०	प्रतिनिधि कहानियाँ	भीष्म साहनी	६
११	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	३
१२	मनोवैज्ञानिक चिंतन	श्री रामलाल शुक्ल	१६०
१३	साठोत्तर हिन्दी कहानी : मूल्यों की तलाश	डॉ. वासुदेव शर्मा	६३
१४	छठे दशक की हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य	डॉ. अरुणा गुप्ता	१
१५	प्रतिनिधि कहानियाँ	भीष्म साहनी	६
१६	मनोविज्ञानिक चिंतन	श्री रामलाल शुक्ल	१५६
१७	प्रतिनिधि कहानियाँ	भीष्म साहनी	१०
१८	हिन्दी उपन्यास : सांस्कतिक एवं मानवतावादी चेतना	डॉ. सच्चिदानंद राय	१५४
१६	निशाचर	भीष्म साहनी	१०

२०	निशाचर	भीष्म साहनी	७६
२१	कहानीकार भीष्म साहनी	डॉ. रीना पटेल	११७
२२	भाग्य रेखा	भीष्म साहनी	८४
२३	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१००
२४	आधुनिक हिन्दी निबंध	डॉ. योगेन्द्र प्रतापसिंह	१२५
२५	आधुनिक हिन्दी निबंध	डॉ. योगेन्द्र प्रतापसिंह	१२५
२६	छठ्ठे दशककी हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य	डॉ. अरुणा गुप्ता	२७
२७	पहला पाठ	भीष्म साहनी	२६
२८	हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में सांस्कृतिक चेतना	डॉ. शिवशंकर द्विवेदी	६
२९	वातायन	शिवानी	६
३०	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२४६
३१	अरबन मिडिल क्लास क्लाडम्बर्स	डॉ. राधाकमल मुखर्जी	५
३२	हिन्दी साहित्य कोश	सं. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा	११
३३	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२५२
३४	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२४४
३५	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२४४
३६	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	९८
३७	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१०
३८	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१०६
३९	यज्ञदत्त शर्मा के उपन्यासों में मध्यमवर्ग	डॉ. संगीता गुप्ता	११६
४०	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	९५
४१	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२६

४२	भीष्म साहनी का उपन्यास साहित्य	विवेक द्विवेदी	४१
४३	भीष्म साहनी का उपन्यास साहित्य	विवेक द्विवेदी	४३
४४	भीष्म साहनी का उपन्यास साहित्य	विवेक द्विवेदी	४३
४५	पहला पाठ	भीष्म साहनी	११
४६	पहला पाठ	भीष्म साहनी	६३
४७	निशाचर	भीष्म साहनी	१५५
४८	आजकाल फरवरी, २००४, अंक–१०	सं. विश्वनाथ रामशेष	१२
४६	आजकाल फरवरी, २००४, अंक–१०	सं. विश्वनाथ रामशेष	३१
५०	कुछ विचार	प्रेमचंद	६
५१	आलोचना : हिन्दी समाजवादी उपन्यास उपलब्धियाँ एवं सीमाएँ जनवरी मार्च	सं. विश्वनाथ रामशेष	७६
५२	मय्यादास की माड़ी	भीष्म साहनी	१०
५३	कड़ियाँ	भीष्म साहनी	१०४
५४	आधुनिक हिन्दी कहानी में काममूलक संवेदना	डॉ. रामबा महाजन	११
५५	महासमरोतर हिन्दी उपन्यासों में जीवन दर्शन	कलावती प्रकाश	२१०
५६	बसंती	भीष्म साहनी	१३२
५७	कवि–कहानीकार संवेदना और दृष्टि	डॉ. भरतसिंह	१६
५८	कुंतो	भीष्म साहनी	२२
५६	हिन्दी उपन्यासों में नारी की परिकल्पना	डॉ. सुरेश सिन्हा	१११
६०	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१५१
६१	भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य	डॉ. विवेक द्विवेदी	३२७
६२	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	११३

६३	भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य	डॉ. विवेक द्विवेदी	३५२
६४	कहानीकार भीष्म साहनी	डॉ. रीना पटेल	२८
६५	भारत विभाजन और हिन्दी उपन्यास	श्री हरिधश	१०४
६६	आधुनिक हिन्दी उपन्यास	महीपसिंह	१३७
६७	तमस	भीष्म साहनी	१९७
६८	कुंतो	भीष्म साहनी	२६७
६९	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	८६
७०	कहानीकार : भीष्म साहनी	डॉ. रीना पटेल	१२०
७१	आजकाल – फरवरी २००१, अंक–१०	सं. विश्वनाथ रामशेष	३१
७२	रामदरशमिश्र की कहानियों में यथार्थ चेतना और मूल्य बोध	डॉ. राधेश्याम सास्वत	२३
७३	फणीश्वरनाथ 'रेणु' का साहित्य	डॉ. अंजली तिवारी	१०६
७४	बसंती	भीष्म साहनी	२५
७५	कुंतो	भीष्म साहनी	३०६
७६	कहानी और कहानी समीक्षा का मूल्यांकन	इन्द्रनाथ मदान	२२६
७७	सारिका अप्रेल–१९७३		१५
७८	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१७
७९	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१७
८०	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१८
८१	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	१८
८२	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२३
८३	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	२३
८४	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	६१

८५	आजकल – फरवरी २००४ अंक–१०	सं. विश्वनाथ रामशेष	३२
८६	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	राजेश्वर सक्सेना	४८
८७	आज के अतीत	भीष्म साहनी	३११

📖.....✍

षष्टम अध्याय
उपसंहार

षष्टम अध्याय
उपसंहार

जब हम मानव–जाति के उदभव–विकास पर अवलोकन करते हैं तो ज्ञात होता है कि मानव ने बड़ी विकट यात्रा करते हुए आज इस सुमन्नत अवस्था को प्राप्त किया है । जब मनोरंजन का कोई साधन नहीं था तब कथा वार्ताओं के द्वारा ही लोग मनोरंजन प्राप्त करते रहे होंगे । अर्थात् कथा कहने – सुनने की प्रवृत्ति मानव के आदि काल से ही चली आ रही हैं । जो परंपरा लोक–मुख तक सीमित थी वह क्रमशः साहित्य का रूप धारण करती गई और आज कथा–साहित्य, साहित्यिक दृष्टि से अपनी चरम सीमा पर है । कथा–प्रेम की प्रवृत्ति हमारे प्राचीनतम आर्ष ग्रंथों में भी दिखाई देती है । ऋग्वेद, ब्राह्मण ग्रंथों, बौद्ध ग्रंथों, जैन ग्रंथों में कथा–साहित्य के संकेत बड़ी आसानी से मिल जाते हैं । इन ग्रंथों में विभिन्न प्रकार की नीतियों, जैसे राजनीति, धर्मनीति, समाजनीति, दर्शन आदि की चर्चा की गई है, साथ ही गूढ़ विषयों को ग्राह्य बनाने के लिए सरल–सुबोध, मनोरंजन–प्रिय तथ्यों की भी चर्चा की गई है । इन्हीं सरल–सुबोध मनोरंजन–प्रिय कथा–साहित्य का विकसित रूप संस्कृत साहित्य के पंचतंत्र, हितोपदेश, कथासरित–सागर, बृहतकथा–मंजरी जैसे ग्रन्थों में दृष्टिगोचर होता है । परंतु यह भी स्वीकार करना होगा कि प्रारंभिक अवस्था में काव्य की प्रधानता थी, गद्य का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था । अतः कथा–साहित्य भी काव्यमय ही था । परंतु क्रमशः गद्य के प्रादुर्भाव एवं टंकन, प्रेस आदि की सुविधा के कारण कथा–साहित्य की रचना गद्य में होने लगी । इस प्रकार साहित्य के दो रूप बने पद्य और गद्य साहित्य ।

जब हम हिन्दी कथा–साहित्य पर विचार करते है तो ज्ञात होता है कि प्रारंभिक काल से लेकर मध्यकाल तक अर्थात् आदिकाल से लेकर भक्तिकाल,

रीतिकाल तक पद्य साहितय की ही प्रधानता रही । अतः गद्यात्मक कथा–साहित्य का अभाव दिखाई देता है । परंतु आधुनिककाल में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुख्यतः भारतेन्दुजी के आगमन से गद्य–साहित्य के उदभव–विकास की कथा बलवत्तर बनती हुई दिखाई देती है । इसी लिए भारतेनदु जी को हिन्दी–गद्य का जनक कहा जाता है । वैसे देखा जाय तो हिन्दी–कथा साहित्य का आभास हमें इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' में मिलता है ।

यदि गहराई से देखा जाय तो, उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विश्वस्तर पर अनेकानेक आंदोलन उठ खड़े हुए । इसी अर्से में हमारा संस्पर्श पाश्चात्य सभ्यता–संस्कृति से हुआ । एक तरह से भारत–वर्ष में नवयुग का आविर्भाव हुआ कहा जा सकता है । इस नवोत्थान युग के मानव में बौद्धिक उत्साह, कुतूहलताएँ, सुधारावादी प्रवृत्ति, आत्मविश्लेषण की प्रवृत्ति आदि दिखाई देती हैं । इस युग के लोगों ने नये–नये ढंग से सोचना शुरु किया तथा कुछ नया कर गुंजने का संकल्प किया । फलस्वरूप साहित्य को भी इसकी हवा लगी और हिन्दी साहित्य ही नहीं बल्कि विश्व–साहित्य गीतशील हुआ । इस युग में गद्य साहित्य को बहुत बल मिला और उसकी आश्चर्यजनक अभिवृद्धि हुई । अनेक गद्यात्मक साहित्यिक विधाओं का प्रचलन हुआ जिसमें कहानी और उपन्यास दो गद्यात्मक धाराएँ विशेष रूप से शक्तिशाली एवं लोकप्रिय होकर निकली । स्वतंत्रता के पश्चात् इन दोनों धाराओं का अभूर्तपूर्व विकास माना जा सकता है । इस का श्रेय भारतेन्दु जी, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मुंशी प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, जैनेन्द्र, उपेन्द्रनाथ अश्क, अमृतला नागर, वृंदावनलाल वर्मा, इलाचन्द्र जोशी, राहुल सांकृत्यायन जैसे अनेकनेक साहित्यकारों को जाता है । उन्होंने अपनी सशक्त लेखिनी से ऐसे उपन्यासों और कहानियों की सर्जना कि ये दोनों ही विधाएँ गद्य–साहित्य की श्रेष्ठ लोकप्रिय विधाएँ बन गई ।

भीष्म साहनी की परिगणना छठवें दशक के सशक्त रचनाकारों में की जाती है । आठ अगस्त सन् १८१५ में रावलपिंडी जो अब पाकिस्तान में हैं,

जन्में साहनी जी की प्रारंभिक शिक्षा रावलपिंडी में ही हुई । पिता जी व्यापारी थे । अतः बालक को भी अध्ययन के साथ–साथ पैतृक व्यवसाय में भी हाथ बटाना पड़ता था । अध्यवसायी स्वभाव के साहनी जी ने सन् १८७३ में गवर्नमेन्ट कॉलेज (लाहौर) से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की । तत्पश्चात् उन्होंने रावलपिंडी में ही डी.ए.वी. इण्टरमीडिएट कॉलेज में आनरेरी तौर पर अंग्रेजी अध्यापन–कार्य शरु किया । परंतु अध्यापन के साथ–साथ वे अपने पैतृक व्यावसय से भी जुड़े रहे । कुछ समय तक उन्होंने अंबाला कॉलेज तथा खालसा कॉलेज में भी अध्यापन–कार्य किया । सन १९५७ में उन्हें रुस जाने का अवसर प्राप्त हुआ । उसी समयावधि में उन्होंने सन १९५८ में पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़ से पीएच.डी. की उपाधि पाप्त की । कुछ समय तक वे एक सफल अनुवादक के रूप में भी कार्यरत रहे । सन् १९६३ में स्वदेश लौटने पर पुनः उन्होंने दिल्ली कॉलेज में अध्यापन कार्य शुरु किया और वहीं से सन् १९८० में वे सेवा निवृत हुए ।

जब हम साहनी जी के परिवार पर अवलोकन करते है तो ज्ञात होता है कि उनका परिवार पहले से ही साहित्यिक जगत से जुड़ा हुआ था । उनके पिता ने मैट्रिक परीक्षा पास करने के पश्चात् एक उपन्यास लिखा था । उनकी दो फुफेरी बहनें सत्यवती और पुरुषार्थवती भी साहित्य–सर्जन से जुड़ी हुई थी । पुरुषार्थवती जी के पति श्रीचन्द्रगुप्त विद्यालंकार तो ख्याति–प्राप्त सर्जक थे । बड़े भाई बलराज साहनी द्वारा लिखित कुछ कहानियाँ उपलब्ध है । इस प्रकार जिस वातावरण में साहनी का पल्लवन हुआ वह पूर्णरूपेण साहित्यिक था । अतः भीष्म साहनी का सर्जक बनना सरल–सहज हो गया । परंतु इसके साथ जो विशेषता जुड़ी थी वह यह रही कि वे अध्यापन तो अंग्रेजी साहित्य का करते रहे परंतु साहित्य–सर्जन हिन्दी भाषा में करते रहे । उन्होंने कहानी के माध्यम से हिन्दी साहित्य में पर्दापण किया । 'नीली आँखे' उनकी पहली कहानी है जिसे

उन्होंने अपने विद्यालयीय जीवन में लिखी थी । यह कहानी मुंशी प्रेमचंद जी द्वारा प्रस्थापित 'हंस' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी ।

साहनी जी के कुछ दस कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं जिनमें लग–भग सौ कहानियाँ संकलित है । इनका पहला कहानी–संग्रह भाग्यरेखा सन १९५३ में प्रकाशित हुआ । इनकी कहानियाँ जीते–जागते जीवन से सरोकार रखनेवाली कहानियाँ है जो गहरी मानवीय संवेदना से पूरी तरह संवेदित है । साहनी जी की परिगणना एक चर्चित सफल उपन्यासकारों में भी की जाती है । उनके कुल सात उपन्यास प्रकाशित हुए हैं । सन १९६७ में प्रकाशित 'झरोखे' उनका प्रथम उपन्यास है । इनके उपन्यास मानव–जीवन की विविध संगति विसंगतियों से जुड़े हुए हैं तथा मानवीय संवेदना को उजागर करनेवाले हैं जिनमें सांप्रदायिक विषाक्त वातावरण से त्रसित मानव–जीवन की कथा–व्यथा है ।

साहनी जी एक सिद्ध हस्त नाटक्कार भी थे । उनके प्रकाशित नाटकों में 'हानूश', 'कबिरा खड़ाबाजार में', 'माधवी', 'मुआवजे', 'रंगदे बसंती चोला' तथा 'आलमगीर' आदि उल्लेखनीय हैं । वे मात्र नाटकों की रचना ही नहीं करते थे बल्कि एक कुशल अभिनेता के रूप में रंगमंच पर अभिनय भी करते थे ।

साहनी जी के पास जीवनानुभवों का अखूट भंडार भरा बड़ा था । धाट–घाट का पानी पी कर उन्होंने जो अनुभव प्राप्त किया था वह उनके उपन्यासों और कहानियों में मूर्तिमंत हो उठा है । वे वर्षो तक काँग्रेस और साम्यवादी जैसे राजनीतिक दलों से बहुत गहरे तक सक्रिय रूप से जुड़े रहे जिसका प्रतिफलन उनके साहित्य में दिखाई देता है । लाखों लोगों की भाँति एक अचछे भले, खाते–पीते, सदगृहस्थ के पुत्र साहनी को देश के विभाजन के पश्चात् कितने कड़वे और अपमानजनक जीवन झेलने पड़े यदि इसका मूल्यांकन करना हो तो उनकी आत्मकथा 'आज के अतीत' में देखा जा सकता है । एक सधे, सशक्त सर्जक की भाँति उन्होंने सर्वत्र धर्मनिर्पेक्ष दृष्टि का परिचय दिया है । देश–विभाजन की विभीषिका को उन्होंने साक्षात् अनुभव किया । विभाजन

की त्रासदी और सांप्रदायिक विद्वेष का तांडव उन्होंने देखा जिसका आबेहूब चित्रण 'तमस' उपन्यास में किया है । उसका एक अभद्र रूप उनकी 'अमृतसर आ गया' कहानी में दिखाई देता है । वे आमूल चुल धर्म निर्पेक्ष व्यक्ति थे । वे कहते रहे – "मैं धर्म निर्पेक्ष संस्कृति का समर्थक हूँ जो हमें इतिहास से विरासत में मिली है – यह संस्कृति समानता और परस्पर सहयोग तथा सहनशीलता के आधार पर खड़ी है । इसमें एक भाषा दूसरी से बड़ी नहीं एक धर्म, दूसरे धर्म से बड़ा नहीं । इस साझी धर्मनिर्पेक्ष संस्कृति के विकास में हमारे देशका कल्याण है, ऐसा मैं मानता हूँ ।"[१] ऐसे विश्वास वाले साहनी जीवन भर सर्वसाधाण से जुड़े रहे, यह उनकी सर्व से बड़ी उपलब्धि है ।

साहनी ने अपने समय की लगभग सभी समस्याओं को अपनी अभिव्यक्ति का विषय बनाया है । जैसे राजनीतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, पारिवारिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, वैयक्तिक, तथा राष्ट्रीय चेतना संबंधी आदि विषयों पर प्रकाश डाला है । तत्कालीन समाज में परिव्याप्त विविध समस्याओं जैसे पारिवारिक–विघटन, मूल्य–विघटन, विधवा–जीवन की दयनीय स्थिति, वेश्यावृत्ति, छुआछूत, रखेल प्रथा, दहेज प्रथा, अनमेल–विवाह, कुंठा–ग्रस्त प्रेम आदि विषयों को उन्होंने अपने कथा–साहित्य में प्रधानता प्रदान की है । विभिन्न क्षेत्रों में परिव्याप्त भ्रष्टाचार, धार्मिक–पाखंड, खोखली राजनीति आदि को भी साहनी ने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों का विषय बनाया है । अर्थात् देश तथा सामान्य जन–जीवन की लगभग सभी छोटी–बड़ी समसयाओं को साहनी ने कथा–साहित्य में स्थान दिया है । इतना ही नहीं बल्कि, प्राचीन और नवीन दोनों प्रकार की मान्यताओं को जीवनोपयोगी बनाने हेतु जोड़ने का भी प्रयत्न किया है । प्राचीन–नवीन विचार–धाराओं के पारस्परिक संघर्ष के विरुद्ध जन–जागरण के आह्वान का स्वर भी अपनी कहानियों एवं उपन्यासों में उद्घोषित किया है । इस प्रकार इन विविध विषयों को अपनाकर उन्होंने अपनी अप्रतिम–अलौकिक प्रतिभा का परिचय दिया है ।

साहनी जी की सबसे बड़ी विशेष्ता तो यह है कि उनकी साहित्यिक–कला कल्पना के सुकोमल पखों पर उड़ती नज़र नहीं आती । उनका तो वास्तविक यथार्थ जगत से, व्यवहारिक जिन्दगी से विशेष सरोकार रहा है । उनकी रचनाएँ मानव–मूल्यों संरक्षण एवं संवर्धन तथा सामाजिक नवनिर्माण के उत्कट आकांक्षा की रचनाएँ हैं । अपने आस–पास के यथार्थ जीवन को बड़ी गहराई से उन्होंने देखा–परखा और भोगा है । इसीलिए वे मध्यमवर्गीय जीवन के तनाओं, जिजीविषा, अंतर्विरोधो एवं संक्रमण की स्थितियों को संवेदना के व्यापक–फलक पर उपस्थित करने में अधिक सफल हुए हैं । आज मूलतः देखा जाय तो मानव–मूल्यों का विघटन समाज की मुख्य समस्या बनी हुई है – साथ ही प्राचीन और नवीन विचारों एवं मूल्यों को अपनाने न अपनाने का बौद्धिक संघर्ष भी अपनी चरम सीमा पर है – जिसका बड़ा जीता–जागता चित्र उनके कथा–साहित्य में मिलता है । यदि ऐसा कहा जाय कि साहनी ने आधुनिक उत्पीड़ित मानवता के अंधकारमय जीवन में नव–चेतना का संदेश देनेवाली सबल एवं सशक्त रचनाएँ प्रस्तुत की हैं तो शायद अत्युक्ति न होगी ।

भारतीय जन–जीवन में एक प्रबल आकांक्षा थी कि आज़ादी के सूर्योदय के साथ ही जीवन की सारी विपदाएँ समाप्त हो जाएगी और एक सुखी–समुन्नत जीवन प्राप्त होगा । पर सब कुछ मृग–मरीचिका बन कर रह गई । स्वतंत्रता के पश्चात् मोहभंग की स्थिति उत्पन्न हुई । अतः चारों तरफ राजकीय उथल–पुथल हुई । नये विचारों की स्वीकृति होने लगी औद्योगिक क्रान्ति हुई । इन सारी नवीनताओं के बावजूद मनुष्य संवेदना–शून्य होता चला गया । क्रमशः भौतिक सुख–सुविधाएँ एवं ज्ञान–विज्ञान की उपलब्धियाँ प्राप्त होने लगी परंतु मनुष्य मानो भटक गया और उसका सुख–चैन समाप्त होता गया । जीवन की आस्था मिटती गई, बन्धुत्व, राष्ट्रीय अस्मिता तथा आदर्श सांस्कृतिक चेतना जो मिली थी उसका क्रमशः क्षरण होता गया । प्रतिभा–संपन्न सर्जकों के समक्ष यह एक पक्ष प्रश्न उत्पन्न हो गया कि आखिर मानवता की रक्षा कैसे की जाय ?

साहनी ऐसे ही सर्जकों में से थे । उन्होंने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों में मनुष्य की मनुष्यता को रेखांकित करते हुए उन्हें अपने समय और समाज के खतरों से आगाह किया है । साहनी ने अपने कथा–साहित्य में मनुष्य–जीवन की करुणा को प्रस्तुत करके मनुष्य की मनुष्यता को बचाते हुए परम अलौकिक सुख की कामना व्यक्त की है । उन्होने एक ऐसा माहौल बनाने का प्रयास किया है जहाँ मनुष्य बड़े प्यार और भाईचारे के साथ निश्छल हँसी हँस सके और एक खुशनुमा जिन्दगी जी सके ।

साहनी जी मूलतः मध्यमवर्ग और निम्नवर्ग के लोगों के प्रति अधिक करुणार्द्र दिखाई देते हैं । उनके कथा–साहित्य में ऐसे ही पात्रों की प्रधानता है । यह वर्ग पीड़ित, शोषित तथा उपेक्षित है, अनेक प्रकार की अतृप्त कुंठाओं से ग्रस्त है । इनके ऐसे – नरकागार जीवन ने साहनी को अधिक संवेदित किया है । अतः ऐसे पात्रों की उनके कथा–साहित्य में प्रधानता है । साहनी ने इस पीड़ित–उपेक्षित वर्ग की विविध समस्याओं को ही नहीं उभारा है या यथार्थवादी, सुधारावादी, आदर्शवादी, दृष्टिकोणको ही नहीं उभारा है बल्कि उन समस्याओं की जड़ में जाकर उनका स्थायी समाधान भी प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है ।

साहनी जी प्रेमचंद जी के पश्चात् की परंपरा के सबसे बड़े सर्जक माने जा सकते हैं । वे प्रगतिशील साहित्यिक आंदोलन के प्रमुख लेखक थे । अतः प्रेमचंद जी के पश्चात् प्रेमचंद जी की परंपरा के सब से बड़े साहित्यकार माने जा सकते हैं । वे भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के अतिरिक्त देश के साहित्यिक, सांस्कृतिक विकास में भी महत्त्वपूर्ण योगदान देते रहे । उनके लेखकीय जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि तो यह है कि प्रगतिवादी विचारधारा से प्रभावित होते हुए भी वे संकीर्ण साम्यवादी विचारधारा को अपनी कहानी के सत्य को ढूँढने में आड़ें नहीं आने दिये । एक उदार किस्म की मानवीय संवेदनशीलता ने उनके चिंतन को कभी भी लेखकीय अथवा निजी

व्यक्तित्व पर हावी नहीं होने दिया । उन्होंने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों में मानवीय करुणा को सामाजिक, राजनीतिक विसंगतियों के साथ चित्रित किया है ।

यदि सूक्ष्म निरीक्षण किया जाय तो ज्ञात होगा कि वास्तव में वही रचनाकार सफल होता है, जिस की रचनाओं में उसका पुरा युग–विशेष झाँकता हुआ दिखाई देता है । साहनी एक ऐसे ही साहित्यकार थे । शायद यही वजह है कि उनकी कृतियों के साथ पाठकों का गहरा रिश्ता बना रहता है । इसका एक कारण यह भी है कि जहाँ उन्होंने बड़ी–बड़ी समस्याओं को उठाया है वहीं रोजमर्रा के साधारण से साधारण प्रश्नें को भी मुखरित किया है । उनकी इन्हीं कुछ विशेषताओं के ही कारण उनका विरोधी भी उन्हें अपना समझने लगता था । शायद इस अपनेपन का बोध उनके सहज, सरल व्यक्तित्व के कारण ही होता है ।

हमने अपने तृतीय अध्याय में साहनी के युग–बोध पर बड़े विस्तार से चर्चा की है । उसमें हमने उन सारी युगीन समस्याओं का उल्लेख किया है । यहाँ हम उनकी कुछ चंद विशिष्टताओं पर ही प्रकाश डालना चाहेंगे । साहनी जी शोशित नारी के प्रति विशेष करुणार्द्र और संवेदनशील दिखाई देते हैं । उन्होंने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों में नारी की विवशता, उसकी परवशता इत्यादि पर बड़ी गहराई से विचार किया है । वे नारी की इस दयनीय दशा के प्रति अधिक संवेदनशील दिखाई देते हैं । 'नीली आँखें', 'अभी तो मैं जवान हूँ', 'गंगो का जाया', 'सरदारनी', 'खिलौने', पिकनिक', 'राधा अनुराधा' आदि कहानियों में एवं 'बसंती' तथा 'कड़ियाँ' उन्यासों में नारी की जिस अभिशप्त जीवन का चित्र प्रस्तुत किया है वह किसी भी सहृदय के दिल–दिमाग को झकझोर देता है । नारी के इन चित्रों में सर्जक की मानवीय संवेदना तथा प्रगतिशील चिंतन के दर्शन होते हैं ।

साहनी ने शिल्प को सदैव वस्तु की अभिव्यक्ति के प्रभावशाली माध्यम के रूप में स्वीकार किया है । शिल्प के स्तर पर वे किसी अनपेक्षित नवीनता के कायल नहीं रहे हैं । परंतु कला और शिल्पगत ये भूमिकाएँ कहीं भी इतनी प्रगल्भ नहीं हो पाई हैं कि वे साहित्य वस्तुगत क्षमता तथा संवेदनागत प्रभाव को कम करने में सहायक बन सकी है । उनके शिल्प की सबसे बड़ी विशिष्टता तो यह है कि उन्होंने सामान्य से सामान्य घटना को भी उठाकर उसमें इतनी संवेदना को भर दिया है जो पाठक को परिपूर्ण रूपेण अभिभूतकर जाती है । कई बार तो वे पात्रों को एक दूसरे के इतने नजदीक ला देते हैं कि उन्हें एक दूसरे के नजदीकी का संबंध आभाषित होने लगता है । उनमें अपनापन का बोध होने लगता है । इस प्रकर हम कह सकते हैं कि उनके कथा-साहित्य में संवेदना निरंतर प्रवाहित है तथा उनके शिल्प में आत्मीयता की पूरी गूँज है । उनके कथा-साहित्य में चाहे मानव-चरित्रों का चित्रण हो या उनके वार्तालाप, क्रिया-कलाप या उनकी मनोदशाओं का चित्रण या वातावरण का चित्रण हो या किसी घटना का वर्णन, साहनी की सधी हुई प्रवाहपूर्ण भाषा अपनी पूरी सादगी और सृजनशीलता के साथ गतिशील दिखाई देती है । इसके माध्यम से वे यथार्थ के अनेक अंधेरे कोनों को तो रोशन करते ही हैं साथ ही हमारी सभी जानी-पहचानी वास्तविकताओं को और भी पहचानी हुई बना देते हैं ।

साहनी की भाषा की सबसे बड़ी विशिष्टता है उसकी सादगी । इस सादगी का तात्पर्य सरल और सपाट भाषा से कतई नहीं है जो अपनी कलाविहीनता के कारण अखबारी भाषा को एक जड़ रूप दे देती है । उनकी भाषा की सादगी में भी जैसी कलात्मक वक्रता है, जैसी गतिशील तरलता हैं, वह उनके समकालीन सर्जकों में बहुत कम देखने को मिलती है । उनकी भाषा की सबसे बड़ी विशिष्टता यह है कि वह एकदम जन-साधारण के वार्तालाप के बीच से उठाई हुई भाषा का अत्यंत संवेदनशील और सृजनात्मक रूप है । साहनी एकदम बोल-चाल के सामान्य लहजे में कुछ शब्दों को दोहराकर कथन में जैसी

भंगिमा चाहते हैं, सफलतापूर्वक पैदा कर देते हैं । जटिल अनुभवों को व्यक्त करने के लिए वे व्यंग्य का समुचित उपयोग करते हैं । उनके व्यंग्य बड़े स्पष्ट और सचोट होते हैं । उसमें दुराव या छिपाव नहीं है । व्यंग्य के माध्यम से वे स्थितियों की विसंगतियों को उभारते चलते हैं । यह गुण सभी सर्जकों में प्राप्य नहीं होता ।

साहनी का दृष्टिकोण 'सहितस्य' की भावना से ओत–प्रोत है । उनके प्रेम का संदेश दैहिक या वासनात्मक नहीं बल्कि वैश्विक प्रेम, सात्विक प्रेम है । उनका प्रेम, दुनिया के हर व्यक्ति से जुड़ा हुआ है । आज का समाज यदि इस सात्विक वैश्विक प्रेम को स्वीकार करता है तभी सर्जक का प्रयत्न सार्थक हो सकता है । कोई भी प्रतिभा–सम्पन्न साहित्यकार जिस संवेदना को प्रस्तुत करता है, उसके लिए जिस शिल्प का निर्माण करता है, वह उसकी गहरी सामाजिक हिस्सेदारी, पीड़ा और संघर्ष से उपजा उद्योग होता है । साहनी एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी सर्जक थे । वे इस देश की एक बहुत बड़ी विरासत हैं, जिसे समझना, परखना और संभालना आजके मनुष्य का दायित्व है । साहनी ने समाज के जिन खतरों से मनुष्य को आगाह किया है, वह अपने आप में अति मूल्यवान हैं । साहनी ने युगों से चले आते हुए क्रूर शोषण के विरुद्ध पीड़ित मानवता के विद्रोह का चित्रण अपने कथा–साहित्य में किया है । पूँजीपतियों की स्वार्थवृत्ति का शिकार गरीब भोली–भाली जनता होती आई है । साहनी ने अपने साहित्य के माध्यम से यह प्रश्न उठाया है कि आखिर अमीर लोग और अधिक अमीर तथा गरीब और अधिक गरीब क्यों बनते जा रहे हैं ? उनका मानना है कि मनुष्य की स्वार्थवृत्ति के एवं संवेदना–विहीनता के ही कारण मानव का मानव से भावात्मक संबंध लुप्त होता चला जा रहा है । ऐसे अवसरों पर साहनी ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण अपना कर शोषक वर्ग को शोषितों के समक्ष घुटने टेकने के लिए विवश कर दिया है । यह तभी संभव हो सकता है, जब मनुष्य के भीतर संस्कार, सेवा, त्याग, परोपकार, नैतिकता, अहिंसा जैसे परंपरित

गुण हो । इन उदात्त मूल्यों को ही अपना कर पीड़ित मानवता की सेवा संभव हो सकती है । साहनी इसी मानवतावादी दृष्टिकोण के पक्षधर थे । वे शोषण–रहित समाज की रचना के लिए वैज्ञानिक समाजवाद की संस्तुति करते हैं । वे समता–आधारित समाज की संरचना पर भार देते हैं । यह तभी संभव हो सकता है जब पूँजीपति लोग स्वेच्छा से गरीबों के प्रति संवेदना, सहानुभूति रखें और उन्हें शोषण–मुक्त करने का हृदय से प्रयत्न करें । साहनी जी का मानना है कि सामंजस्यपूर्ण स्थिति में ही मानव का सही विकास संभव हो पाएगा तथा वास्तविक स्वतंत्रता फलीभूत हो पाएगी । परंतु शोषण से मुक्ति पाने के लिए खुद भी प्रयत्नशील होना पड़ेगा । अर्थात् जीने के लिए संघर्ष करने की प्रवृत्ति साहनी के कथा–साहित्य की प्रेरणा है । यह जीवन का एक प्रेरक बल है तथा स्वतंत्र रूप में जीने का एक अमोघ शस्त्र भी यही है ।

यह उक्ति सर्व स्वीकृत है कि – साहित्य समाज का दर्पण है । परंतु यह भी उतना ही सच है कि साहित्य में साहित्यकार के भोगे हुए जीवन का प्रस्तुतिकरण येन–केन–प्रकारेण उसके साहित्य में हो ही जाता है और जब भोगे हुए जीनव की सच्चाई को साहित्यकार वाणी प्रदान करता है तो वह शब्द–विधान पाठक के हृदय को आवर्जित करने में समर्थ हो जाता है । इसी लिए उनका कथा–साहित्य अधिक लोक–प्रिय एवं प्रभावक बन पाया है । साहनी सच्चे अर्थों में एक सशक्त, निर्भीक, एवं साहसी साहित्यकार थे । उनकी जिन्दगी निरंतर आदान–प्रदान की विषय रही है । इन विशेषताओं के ही कारण सहनी की स्वीकृति एक सफल, सार्थक, सोद्देश्यपूर्ण कहानी लेखकों तथा उपन्यास–जगत में प्रगतिशील परंपरा के शक्तिशाली हस्ताक्षरों में की जाती है । परिवेश की समग्रता में वस्तु और पात्र के अंतः संबंधों को किस तरह खोला जाय तथा इन संबंधों में जनता के मुक्तिकामी संघर्षों को कैसे प्रतिपादित किया जाय, यह शिल्प साहनी को प्रेमचंद के निकट पहुँचा देता है । यद्यपि साहनी ने प्रेमचंद की भाँति

ग्रामीण जीवन को नहीं पकड़ा फिर भी उनका मुहावरा प्रेमचंद से मिलता–जुलता है ।

साहनी जी अपनी अंतिम रचना, उपन्यास 'नीलू नीलिमा नीलोफर' एवं अपनी आत्मकथा 'आज के अतीत' शीर्षक से देकर ग्यारह जुलाई सन् २००३ के दिन पंचमहाभूत में बिलीन हो गये । डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन' कहा करते थे – "कवि मर जाता है, पर विश्वास अमर हो जाता है ।" यह उक्ति साहनी के लिए भी चरितार्थ होती है । वे इस भौतिक संसार में नहीं रहे पर उनकी रचनाएँ उन्हें सदा अमरत्व प्रदान करती रहेगी । उनका कथा–साहित्य सदा समाज के लिए उपयोगी बना रहेगा । मैत्रीभाव एवं विश्वबंधुत्व का संदेश देता रहेगा, अमर मानवता का पाठ पढ़ाता रहेगा । उनका कथासाहित्य सरस, रोचक, मनोरंजक फिर भी समाजोपयोगी है । उनका कथा–साहित्य अपने समय के समग्रजीवन को प्रस्तुत करने में सफल है । अर्थात् साहनी जी अपने युग के साथ कदम मिला कर चलते रहे । कहीं भी वे अपने युग से दरकिनार नहीं कर पाए हैं । उनका युग बोध बड़ा ही जीवंत और मार्मिक रहा है । उनके पास एक तीक्ष्ण दृष्टि थी जिससे वे अपने युग की सभी छोटी–बड़ी समस्याओं को बड़ी बारीकी से देखते रहे और उसे वाणी प्रदान करते रहे । अर्थात् मानव की हर दुःख–दर्द और पीड़ा के अनुभव की संवेदना ने साहनी की युगअसंवपृक्ति और कला–चेतना को एक विशेषता प्रदान की है । इन के साहित्य में मानवीय सँबधों के नए समीकरण व्याख्यायित हुए हैं । मानवीय संबंधों के समीकरणों की ये व्याख्याएँ न केवल समय–सापेक्ष हैं बल्कि युग–सापेक्ष भी हैं ।

इस लम्बे विवेचन के आधर पर मैं निष्कर्ष रूप में इतना ही कहना चाहूँगी कि प्रेमचंदोतर कथा–साहित्य में यथार्थवादी परंपरा के जो भी रचनाकार हैं, उनमें साहनी का स्थान किसी से भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । मूलतः वे अपेक्षाकृत प्रेमचंद जी के अधिक निकट थे तथा अन्य कथाकारों की भाँति वे

किसी प्रकार के विवाद के घेरे में नहीं रहे । वे किसी वाद या संप्रदाय या गुटबंदी में भी नहीं फँसे । उनका निश्छल व्यक्तित्व सदा साहित्य–सर्जन को समर्पित रहा । उनका साहित्य, उनका सात्विक जीवन, उनकी सरल सरस भाषा, उनकी मानवीय संवेदना, उनका स्वतंत्र चिंतन, उनकी सफल अभिव्यक्ति हिन्दी साहित्य की अभूल्य निधि तो है ही साथ ही वह आने वाली पीढ़ियों का पार्थेय भी बना रहेगा । हिन्दी कथा–साहित्य को गतिशील बनाने में उनका अपूर्व योगदान स्वीकार किया जाता रहेगा ।

📖.....✍

परिशिष्ट
सहायक ग्रंथ सूची

परिशिष्ट : सहायक ग्रंथ सूची
आधार ग्रंथ : कथाकार भीष्म साहनी की रचनाएँ

क्रम	कहानी संग्रह	प्रकाशक	संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष
१	भाग्यरेखा	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९५३
२	पहला पाठ	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९५७
३	भटकती राख	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९६६
४	पट्रियाँ	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९७३
५	वाङ्चू	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९७८
६	शोभायात्रा	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९८१
७	निशाचर	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९८३
८	पाली	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९८९

क्रम	उपन्यास	प्रकाशक	संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष
१	झरोखे	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९६७
२	कड़ियाँ	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९७०
३	तमस	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९७१
४	बसंती	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९८०
५	मय्यादास की माड़ी	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९८८
६	कुंतो	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. १९९३

आत्मपरक संस्मरण :

क्रम		प्रकाशक	संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष
१	आज के अतीत	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	प्रथम सं. २००३

भीष्म साहनी के कथा–साहित्य से संबंधित ग्रंथ :

क्रम		*लेखक*	*प्रकाशक*
१	भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना	डॉ. राजेश्वर सक्सेना	वाणी प्रकाश, दिल्ली, प्रथम सं. १९९८
२	भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य	डॉ. रमाशंकर (द्विवेदी ‘ विवेक’	वाणी प्रकाश, दिल्ली, प्रथम सं. १९९८
३	कहानीकार भीष्म साहनी	रीना पटेल	पार्श्व पब्लिकेशन, अहमदाबाद, २००१
४	तमस : एक अधययन	कु. अर्चना बी. जैन, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद	अप्रकाशित
५	भीष्म साहनी कृत तमस में युग–बोध	हेमंत जे. ओझा, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद	अप्रकाशित
६	भीष्म साहनी की कहानियों में यथार्थ बोध	के. एस. चोटलिया गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद	अप्रकाशित

संदर्भ ग्रंथ – हिन्दी संदर्भ ग्रंथ :

क्रम		*लेखक*	*प्रकाशक*
१	अभिनव साहित्यक निबंध	राजेन्द्र प्रसाद चतुर्वेदी	विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा द्वि. सं. १९८३
२	अग्नि सागर : संवेदना और शिल्प	डॉ. विरेन्द्र भारद्वाज	संजय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. २०००

क्रम		लेखक	प्रकाशक
३	अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य	प्रकाशचंद्र मिश्र	फसाहित्य भारती, कानपुर
४	आधुनिक हिन्दी उपन्यास में वस्तु विन्यास	डॉ. सरोजिनी त्रिपाठी	ग्रंथम, रामबाग, कानपुर १९७३
५	आधुनिक हिन्दी कहानी में काममूलक संवेदना	श्री रामबा महाजन	चिंतन प्रकाशन, कानपुर प्र. सं. १९८६
६	आधुनिक हिन्दी साहित्य	डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय	हिन्दी परिषद, विश्वविद्यालय प्र. सं. १९४१
७	आज का हिन्दी साहित्य : संवेदना और दृष्टि	डॉ. रामदरश मिश्र	अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, प्र. सं. १९७५
८	आधुनिक साहित्य : मूल्य और मूल्यांकन	निर्मला जैन	राजकमल प्रकाशन,नयी दिल्ली प्र. सं. १९८०
९	आधुनिक साहित्य	नंददुलारे वाजपेयी	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं. १९७१
१०	उपन्यासकार : उपेन्द्रनाथ अश्क	डॉ. कुलदीप चंद्रगुप्त	पंचशील प्रकाशन, जयपुर सं. १९८६
११	उपन्यासकार जगदीशचंद्र संवेदना और शिल्प	डॉ. कैलाशनाथ पाण्डेय	जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद प्र.सं. १९९२
१२	उपन्यास स्वरूप और संवेदना	राजेन्द्र यादव	वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्र. सं. १९९७

क्रम		लेखक	प्रकाशक
१३	कहानी और कहानीकार	मोहनलाल जिज्ञासु	आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली वर्ष १९६३
१४	कहानी कुंज	सं. डॉ. उमाकान्त शास्त्री	जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद प्र. सं. १९६८
१५	कहानी स्वरूप और संवेदना	राजेन्द्र यादव	नेशनल पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली तृ. सं. १९८८
१६	कहानी नयी कहानी	डॉ. नामवरसिंह	लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली वर्ष १९६६
१७	कहानी रचना–विधान	जगन्नथ प्रसाद शर्मा	रिगल बुक डिपो, दिल्ली वर्ष १९७८
१८	कहानीकार : अज्ञेय और मुक्तिबोध : संवेदना और शिल्प	डॉ. भरतसिंह	वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली प्र सं. १९९८
१९	कला और आधुनिक प्रवृतियाँ	आ. रामचंद्र शुक्ल	प्रकाशन शाखा सूचना विभाग, प्र. वर्ष १९५८
२०	कथाश्री	सं डॉ. विजयपालसिंह	जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद प्र. सं. १९६४
२१	काव्य के रूप	गुलाबराय	आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, वर्ष १९८२

क्रम		लेखक	प्रकाशक
२२	कुछ विचार	प्रेमचंद	सरस्वती केन्द्र, इलाहाबाद वर्ष १९९३
२३	खंजन नयन : संवेदना और शिल्प	प्रभा शर्मा	बोहरा प्रकाशन, जयपुर प्र. सं. १९९१
२४	चरित्र–निर्माण	सत्यकाम विद्यालंकार	राजपाल एण्ड संस, दिल्ली वर्ष १९९७
२५	तार सप्तक	सं. अज्ञेय	वाराणसी, वर्ष १९९६
२६	नये साहित्य का तर्कशास्त्र	विश्वनाथ प्रसाद तिवारी	दि. मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लि., प्र.सं.१९७५
२७	नई कहानी की भूमिका	कमलेश्वर	खुराना बुक बाइडिंग हाऊस, दिल्ली, वर्ष १९७८
२८	नयी कहानी	मीरा सीकरी	पराग प्रकाशन, दिल्ली वर्ष १९८४
२९	नयी कहानी : वैयक्तिक चेतना	डॉ. कु. प्रेमपाल	ए. का. का. वे. ट्रस्ट सौजन्य प्रकशित – १९८०
३०	नयी कहानी और मध्यमवर्ग	डॉ. कामेश्वर प्रसाद सिंह	विजय प्रकाशन मंदिर, सुडिया, वाराणसी, वर्ष १९८८
३१	प्रसाद और कामायनी मूल्यांकन का प्रश्न	डॉ. नगेन्द्र	नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नयी दिल्ली, वर्ष १९९०
३२	प्रेमचंद और उनकी कहानी कला	सत्येन्द्र	शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली प्र. सं. १९८४

क्रम		लेखक	प्रकाशक
३३	प्रेमचंद पूर्व हिन्दी उपन्यास	डॉ. कैलाश प्रकाश	हिन्दी साहित्य भंडार, चौपटिया रोड, लखनऊ १६८३
३४	पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. कृष्णदेव शर्मा	विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा तृ. सं. १६८६–६०
३५	भाषा और संवेदना	डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी	यात्री प्रकाशन, यमुना विहार, दिल्ली
३६	भाषा की भूमिका	डॉ. अरुणामिश्र	सांस्कृतिक प्रकाशन,अहमदाबाद प्र. सं. १६८६
३७	भारतीय मध्यवर्ग	डॉ. श्यामसुन्दर घोष	बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना–३, प्र.सं. १६७२
३८	भारतीय साहित्य की भूमिका	रामविलास शर्मा	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली प्र. सं. १६६६
३६	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत	डॉ. राजकिशोर सिंह	प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ वर्ष १६८७
४०	भारतीय सौंदर्य शास्त्र की भूमिका	डॉ. नगेन्द्र	राजपाल एण्ड संस, दिल्ली
४१	भारतीय काव्य शास्त्र	डॉ. माया अग्रवाल	अशोक प्रिन्टर्स, दिल्ली वर्ष १६८६

क्रम		लेखक	प्रकाशक
४२	मन्नू भंडारी का कथा–साहित्य : संवेदना और शिल्प	श्रीमती सुषमा पाल	लोकवाणी संस्थान, प्र. सं. २००२
४३	यज्ञदत शर्मा के उपन्यासों में मध्यमवर्ग	डॉ. संगीता गुप्ता	साहित्य प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. १९९५
४४	रामदरश मिश्र की कहानियों में यथार्थ चेतना और मूल्यबोध	डॉ. राधेश्याम सारस्वत	भारती साहित्य सदन, राजस्थान
४५	रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व	डॉ. कनैयालाल चौहान 'चिराग'	प्रियकांत प्रकाशन, अहमदाबाद, प्र.स.२००२
४६	वर्तमान हिन्दी महिला कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन	साधना अग्रवाल	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वि. सं. १९९५
४७	विचार और वितर्क	हजारीप्रसाद द्विवेदी	ग्रंथ रत्नाकर, बम्बई द्वि. सं. १९६३
४८	शिवानी का हिन्दी साहित्य : सामाजिक परिप्रेक्ष्य में	ज्योत्स्ना शर्मा	अन्नपूर्णा प्रकाशन, दिल्ली, प्र. सं. १९९४
४९	शैली विज्ञान	भोलानाथ तिवारी	शब्द प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. १९७७
५०	समकालीन कहानी युग–बोध का संदर्भ	डॉ. पुष्पालसिंह	नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, वर्ष १९८५
५१	समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि	श्रीपतराय सं. धनंजय	अभिव्यक्ति प्रकाशन, युनि. रोड, इलाहाबाद, वर्ष १९८६

क्रम		लेखक	प्रकाशक
५२	समकालीन हिन्दी कहानी और समाजवादी चेतना	डॉ. किरण बाला	अनुभव प्रकाशन, कानपुर, १९८८
५३	सर्जन और संप्रेषण	स. सच्चिदानंद वात्सायायन	नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, वर्ष १९८४
५४	साठोत्तरी हिन्दी कहानी मूल्यों की तलास	वासुदेव शर्मा	शारदा प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. १९८६
५५	साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना	कृष्ण कुमार विस्सा	दिनमान प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. १९८४
५६	साहित्य सिद्धांत और समालोचना	डॉ. देवीप्रसाद गुप्त	राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. स. १९८०
५७	साहित्य शास्त्र	डॉ. नवनीत गोस्वामी	पार्श्व प्रकाशन, अहमदाबाद प्र. सं. १९८८
५८	साहित्य विवेचन	क्षेमचंद्र ‘सुमन’	आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, सं. १९६७
५९	साहित्य समीक्षा के सिद्धांत	चंद्रभानु मिश्र ‘प्रमाकर’	हिन्दी साहित्य भंडार, सं. १९८४
६०	साहित्य का उद्देश्य	प्रेमचंद	भारतीय ग्रंथ निकेतन, दिल्ली, १९९२
६१	साहित्यालोचन	डॉ. श्यामसुन्दरदास	इन्डियन प्रेस, इलाहाबाद छठ्ठा सं. १९८१
६२	साहित्य सिद्धांत और अवधारणाएँ	डॉ. अरुण प्रकाश मिश्र	प्रतिभा प्रकाशन, इलाहाबाद प्र. सं. १९९४

क्रम		लेखक	प्रकाशक
६३	साहित्यिक निबंध	डॉ. गणपतिच्र गुप्त	लोकभारती प्रकाशन, कानपुर
६४	साहित्यि का समाजशास्त्र	डॉ. नगेन्द्र	राजकुमार एण्ड संस, दिल्ली, प्र. सं. १९८२
६५	सामाजिक यथार्थ और कथा भाषा	डॉ. सच्चिदानंद वात्सायायन	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८६
६६	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास का शिल्प विकास	डॉ. राधेश्याम कौशिक	मंगल प्रकाशन, जयपुर वर्ष १९७६
६७	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी	डॉ. रामकुमार गुप्त	चिन्ता प्रकाशन पिलानी राजस्थान, प्र. सं. १९८९
६८	संस्कृति और साहित्य	रामविलास शर्मा	लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं. १९६४
६९	हमारी सांस्कृतिक धरोहर	गुरुदत्त	हिन्दी साहित्य सदन, नई दिल्ली, प्र. सं. १९९५
७०	हजारीप्रसाद द्विवेदी चुते हुए निबंध	सं. मुकुन्द द्विवेदी	किताब घर, नई दिल्ली, प्र. सं. १९९६
७१	हिन्दी उपन्यासों में मध्यमवर्ग	डॉ. मंजुलतासिंह	साहित्य प्रकाशन, दिल्ली
७२	हिन्दी उपन्यास : अछूते संदर्भ	डॉ. रणवीर रांग्रा	साहित्य प्रकाशन, दिल्ली प्र.सं. १९८६
७३	हिन्दी उपन्यास में कथा शिल्प का विकास	डॉ. प्रताप नारायण टंडन	हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ वर्ष १९५६

क्रम		लेखक	प्रकाशक
७४	हिन्दी उपन्यास कला	डॉ. प्रताप नारायण टंडन	हिन्दी समिति लखनऊ वर्ष १९६५
७५	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	डॉ. त्रिभुवनसिंह	हिन्दी पुस्तकालय, वाराणसी वर्ष १९६५
७६	हिन्दी उपन्यास	डॉ. सुरेश सिन्हा	लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वि.सं.१९७२
७७	हिन्दी उपन्यास रचना विधान और युग–बोध	श्रीमती बसंती पंत	पंचशील प्रकामशन, जयपुर प्र. सं. १९७३
७८	हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा	डॉ. रामदरश मिश्र	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १९६९
७९	हिन्दी उपन्यास एक सर्वेक्षण	डॉ. महेन्द्र चतुर्वेदी	नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, दिल्ली, १९६२
८०	हिन्दी उपन्यास : सृजन और सिद्धांत	नरेन्द्र कोहली	वाणी प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. १९९९
८१	हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष	सं. डॉ. रामदरस मिश्र	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं. १९८४
८२	हिन्दी उपन्यास प्रेमचंदोतर काल	डॉ. राम शोभित प्रसादसिंह	ॠषभचरण जैन एवं संतति, दिल्ली, प्र. सं. १९८१
८३	हिन्दी उपन्यास स्वातंत्र्य संघर्ष के विविध आयाम	डी. डी. तिवारी	तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली प्र.सं. १९८५
८४	हिन्दी कहानी : एक अंतरंग पहचान	डॉ. रामदरश मिश्र	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली सं. वर्ष १९७७

क्रम		लेखक	प्रकाशक
८५	हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास	डॉ. सुरेश सिन्हा	अशोक प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. १९६७
८६	हिन्दी कहानी एक अंतरंग	उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद प्र.सं. १९८०
८७	हिन्दी कहानी का मूल्यांकन	कांता अरोडा	राजकमल प्रकाशन,नयी दिल्ली
८८	हिन्दी कहानी में युग–बोध	डॉ. मंजुलतासिंह	पराग प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. १९९४
८९	हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन	डॉ. ब्रह्मदत शर्मा	रिगल बुक डिपो, दिल्ली प्र. सं. १९७८
९०	हिन्दी कहानी : सामाजिक संदर्भ	डॉ. अश्वघोष	राजश्री प्रकाशन, मथुरा प्र.सं. १९८१
९१	हिन्दी कहानी : अपनी जबानी, सर्वेक्षण माला	डॉ. इन्द्रनाथ मदान	राजकमल प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं. १९७८
९२	हिन्दी काव्य : प्रमुखवाद एवं प्रवृतियाँ	डॉ. कृष्णदेव झाटी	शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली प्र. सं. १९८७
९३	हिन्दी का गद्य साहित्य	डॉ. रामच्रद्र तिवारी	विश्वविद्यालय, वाराणसी, तृ.सं. १९९२
९४	हिन्दी गद्य की प्रवृतियाँ	डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली द्वि. सं. १९५८
९५	हिन्दी भाषा का इतिहास	धीरेन्द्र वर्मा	हिन्दुस्तानी एकेडेमी प्रयाग, नवम् सं. १९७३
९६	हिन्दी महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना	डॉ. उषा यादव	राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली प्र. सं. १९९६

क्रम		लेखक	प्रकाशक
९७	हिन्दी साहित्य का इतिहास	आ. रामचंद्र शुक्ल	काशीनागरी प्रचारिणी सभा,सं. १९९९
९८	हिन्दी साहित्यिक निबंध	राजनाथ शर्मा	विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, बीसवाँ सं. १९८७
९९	हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास	राजनाथ शर्मा	विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा चतुर्थ सं. १९७८
१००	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली द्वि. सं. १९९१
१०१	हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास	गणपतिचंद्र गुप्त	लोकभारती प्रकाशन, सातवाँ सं. १९९९
१०२	हिन्दी साहित्य का इतिहास	श्रीशरण	प्रेमप्रकाशन मंदिर, दिल्ली प्र. सं. १९९६
१०३	हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास	रामस्वरूप चतुर्वेदी	लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र. सं. १९८६
१०४	हिन्दी साहित्य का इतिहास	नगेन्द्र	मयूर पेपर बैक्स, चौबीसवा सं. १९९७
१०५	हिन्दी साहित्य की भूमिका	आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. १९७९
१०६	हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	गुलाबराय	साहित्य रत्न भंडार, आगरा नवम् सं. १९५५
१०७	श्रीनिवास ग्रंथावली	सं. डॉ. कृष्णलाल	प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली सं. १९९६

शब्दकोश :

क्रम		संपादक	संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष
१	हिन्दी संस्कृत कोश	डॉ. रामस्वरूप रसिकेश	चौखंभा विद्याभवन, वाराणसी तृ. सं. १९८६
२	गुजराती साहित्य कोश	डॉ. चन्द्रकान्त टोपीवाला	गुजरात साहित्य परिषद, अहमदाबाद, प्र.सं. १९९०
३	नालंदा विशाल शब्द सागर	श्री नवलजी	न्यू इम्पीरियल बुक डिपो, नई सडक, देहली
४	भगवद्गौ मंडल (गुजराती)	भगवतसिंहजी	प्रवीण प्रकाशन, प्र. आ. १९५४ कर्ता : भगवतीसिंहजी
५	हिन्दी साहित्य कोश भाग–१	सं. धीरेन्द्र वर्मा	ज्ञानमंगल लिमिटेड, वाराणसी
६	दिनमान हिन्दी शब्द कोश	श्री शरण	दिनमान प्रकाशन, दिल्ली सं. १९९६
७	संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर	सं. रामचंद्र वर्मा	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

संस्कृत संदर्भ ग्रंथ :

क्रम		संपादक	संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष
१	कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्र	डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी	साहित्य रत्नालय, कानपुर प्र. सं. १९९९

२	नाट्यशास्त्र ऑफ भरतमुनि	डॉ. आर. एस. नागर	परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली वर्ष १९८२
३	श्रीमद् भगवद् गीता	डॉ. संबालाल एम. प्रजापति	पार्श्व प्रकाशन, अहमदाबाद वर्ष १९८८

अंग्रेजी संदर्भ ग्रंथ :

क्रम		*संपादक*	*संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष*
1	Society	R. M. Macever & C. H. Page	London / 1957
2	A Manual of Short Story Art	A. M. Glenn Clark	

पत्र–पत्रिकाएँ :

क्रम	*पत्रिका का नाम*	*संपादक*	*संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष*
१	सारिका	कनैयालाल मंदन	दिल्ली प्रकाशन, ३१ जनवरी १९८०, अंक २५४
२	सारिका	कनैयालाल मंदन	दिल्ली प्रकाशन, ३१ जनवरी १९८०, अंक २३०
३	मधुमती	वेद व्यास	साहित्य अकादमी, राजस्थान, २००३ अंक–७
४	आलोचना	सं. बच्चनसिंह	उपन्यास विशेषांक

क्रम	पत्रिका का नाम	संपादक	संस्करण एवं प्रकाशन वर्ष
५	समकालीन भारतीय साहित्य	गिरधर राठी	साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली, मार्च अप्रैल, २०००
६	आजकल	सं. विश्वनाथ राम	नई दिल्ली, ११ मार्च १६६४
७	संत्रास का आतंक आलोचना	केदारनाथसिंह	अक्टूबर–डिसम्बर – १६६२
८	हंस	सं. राजेन्द्र यादव	अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, सितम्बर २००३

☆☆☆